Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
R
029
E2.2
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R
०२१
८८.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
०८१
६८.2
109273
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

R पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या 089 / ८८.२ आगत संख्या 109273

पुस्तक-विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित ३० वे दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस आ जानी चाहिए। अन्यथा ५० पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब-दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

109273

नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—३२

तुलसी ग्रंथावली

द्वितीय खंड

(मानसेतर एकादश ग्रंथ)

109273

मूल संपादक

रामचंद्र शुक्ल भगवानदीन

ब्रजरत्नदास

पुस्तकालय

संपादकमंडल

कमलापति त्रिपाठी (अध्यक्ष)

हरवंशलाल शर्मा देवेंद्रनाथ शर्मा

विजयेंद्र स्नातक करुणापति त्रिपाठी

नागेंद्रनाथ उपाध्याय सुधाकर पांडेय (संयोजक)

सहायक संपादक

विश्वनाथ त्रिपाठी लालधर त्रिपाठी

नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक

नागरीप्रचारिणी सभा,
वाराणसी

सं० २०३१

R
०८१
६८.२

मूल्य

विशिष्ट संस्करण
लोक सं०
साहित्यिक सं०

नागरीप्रचारिणी सभा
मूल्य — ४५-००

मुद्रक

शंभुनाथ वाजपेयी
नागरी मुद्रण, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशकीय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी जिन ग्रंथमालाओं के द्वारा हिंदी को श्रीसंपन्न बनाने का प्रयत्न किया है उनमें नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला का विशिष्ट योगदान है। प्राचीन ग्रंथों के खोजकार्य का आरंभ होने पर खोजविवरण के प्रकाशन के साथ हिंदी ही के विशेष लाभ की दृष्टि से सभा ने यह भी अनुभव किया कि खोज में प्राप्त चुने हुए ग्रंथों का प्रकाशन भी हो। उसने संवत् १९५७ वि० (सन् १९०० ई०) से इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये नागरीप्रचारिणी ग्रंथ-माला का प्रकाशन आरंभ किया। उस समय इसकी पृष्ठसंख्या ६४ और मूल्य आठ आने स्थिर किए गए। वर्ष में इसके चार अंकों के प्रकाशन का भी निश्चय किया गया था। संवत् १९७६ तक इस ग्रंथमाला के ६४ अंक प्रकाशित हुए। इस समय तक इस ग्रंथमाला के संपादक क्रमशः श्रीराधाकृष्णदास (संवत् १९६१ तक), महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी (संवत् १९६५ तक), श्री माधव-प्रसाद पाठक (संवत् १९६७ तक) और श्री श्यामसुंदरदास (संवत् १९७६ तक) थे। प्रांतीय सरकार ने इस ग्रंथमाला की उपयोगिता के कारण ३००) रु० वार्षिक की सहायता पाँच वर्षों के लिये संवत् १९६१ में देना स्वीकार किया। फलस्वरूप इसकी पृष्ठसंख्या ८० कर दी गई। पर मूल्य आठ आने ही रहने दिया गया। इस ग्रंथमाला में तब तक ग्रंथ खंडशः प्रकाशित होते थे। संवत् १९७७ से इस ग्रंथमाला में पूरे ग्रंथों का प्रकाशन आरंभ हुआ। अलवर नरेश श्रीमंत महाराज सवाई जयसिंह ने इस ग्रंथमाला के लिये ६,००० रु० सभा को प्रदान किया, तब से यह ग्रंथमाला निरंतर प्रकाशित हो रही है और हिंदी के भंडार को संपन्न कर रही है।

इस ग्रंथमाला में अब तक ८४ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। पृथ्वीराजरासो जैसा बृहद् ग्रंथ सभा ने इसी माला में प्रकाशित किया। इसमें छपे अब निम्नांकित ग्रंथ ही प्राप्य :—

१. भक्त नामावली, २. हम्मीररासो, ३. भूषण ग्रंथावली, ४. जायसी ग्रंथावली, ५. तुलसी ग्रंथावली, ६. कबीर ग्रंथावली, ७. सूरसागर, ८. खुसरो की हिंदी कविता, ८. प्रेमसागर, १०. रानी केतकी की कहानी, ११. नासिकेतो-पाख्यान, १२. कीर्तिलता, १३. हमीरहठ, १४. नंददास ग्रंथावली, १५. रत्नाकर, १६. रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना, १७. हिंदी टाइप राइटिंग, १८. हिंदी साहित्य का इतिहास, १९. घनानंद : स्वच्छंद काव्यधारा, २०. प्रतापनारायण ग्रंथावली, २१. तुलसीदास, २२. हिंदी के मुक्तक काव्य का विकास, २३. रसरतन, २४, नाटक के तत्व : मनोवैज्ञानिक अध्ययन, २५. खालिकबारी, २६. हस्तलिखित हिंदी पुस्तकों का संक्षिप्त खोजविवरण (१९००–१९५५ ई०), २७. तोष और सुधानिधि, २८. द्विजदेव और उनका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काव्य, २९. नाटक और यथार्थवाद, ३०. उग्र और उनका साहित्य, ३१. भोंसला राजदरबार के हिंदी कवि, ३२. आचार्य शुक्ल के समीक्षासिद्धांत, ३३. कृपाराम और उनका साहित्य, ३४. बिलग्राम के मुसलमान हिंदी कवि, ३५. चिंतामणि भाग २, ३६. लक्षदास कृत कृष्ण रससागर, ३७. विडंबना, ३८. वेदांत दर्शन, ३९. हिंदी और मराठी के ऐतिहासिक नाटक, ४०. हिंदी और फारसी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन, ४१. फ्रेडरिक पिंकाट, ४२. हितचौरासी और उसकी प्रेमदास कृत ब्रजभाषा टीका, ४३. मधुस्रोत, ४४. भारतेंदु की खड़ी बोली का भाषाविश्लेषण, ४५. क्रोचे का कलादर्शन, ४६. आधुनिक हिंदी काव्य में अरविंद दर्शन का प्रभाव और ४७. भ्रमरगीतसार।

इस ग्रंथमाला का यह ३२वाँ पुष्प है। इसके प्रथम संस्करण का प्रकाशन सं० १९८० में सभा द्वारा किया गया था। तुलसी साहित्य का हमारे जीवन और साहित्य में अद्भुत् महत्व है। उसका साहित्यिक रूप में जो महत्व है—उससे कम उसका सांस्कृतिक महत्व नहीं है। वह शास्त्रज्ञों, पंडितों, भक्तों, समाज-सुधारकों, साहित्यिकों, संस्कृतिप्रेमियों में जितना आदृत और प्रिय है उससे संभवत अधिक ही लोकजीवन में भी प्रिय है। तुलसी का 'मानस' तुलसी ग्रंथावली प्रथम खंड में प्रकाशित हो चुका है। उनके शेष प्रामाणिक ११ ग्रंथों को तुलसी ग्रंथावली के इस दूसरे खंड में प्रकाशित करते हुए हमें परम हर्ष है और आशा है इससे तुलसी की पावन वाणी का स्वर घर-घर में पहुँचकर नव आलोक प्रकाशित करेगा।

तुलसी जयंती
(श्रावण शुक्ल ७)
सं० २०३१

करुणापति त्रिपाठी
प्रकाशनमंत्री
नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वक्तव्य

गोस्वामी तुलसीदासजी की प्रायः सभी रचनाएँ, विशेषकर रामचरितमानस, कितनी सर्वप्रिय है, इसे सभी जानते हैं; पर मानस के विविध प्रकार के जितने संस्करण निकाले गए, उतने उनके किसी अन्य ग्रंथ के नहीं निकले। संपादकों तथा प्रकाशकों की इनपर उतनी कृपा नहीं हुई क्योंकि जनता में इनकी माँग मानस के समान नहीं थी। बीसवीं शताब्दी विक्रमीय के उत्तरार्ध में शिक्षित समुदाय में कवियों के समग्र ग्रंथों के अनुशीलन का उत्साह बढ़ा, जिससे गोस्वामीजी की अन्य रचनाओं का प्रकाशन भी आवश्यक हो गया।

सं० १९८० में गोस्वामीजी की मृत्यु की त्रिशती मनाने का आयोजन काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने किया और उस अवसर पर गोस्वामीजी के समग्र ग्रंथों के प्रकाशन का निश्चय हुआ। इसी के अनुसार तीन भागों में तुलसी ग्रंथावली प्रकाशित हुई, जिसमें प्रथम में रामचरितमानस, द्वितीय में अन्य ग्यारह ग्रंथ और तृतीय में उनकी जीवनी, आलोचना आदि थे। यह प्रथम संस्करण विशेष शीघ्रता में किया गया था अतः कुछ अशुद्धियाँ रह गई थीं, जो नए संस्करण में यथासाध्य ठीक कर दी गई हैं।

गोस्वामीजी के जिन ग्यारह ग्रंथों का इसमें संग्रह है, उनका संनिवेश छक्कनलालजी के प्रमाण पर किया गया है। मिर्जापुर के प्रसिद्ध रामायणी तथा भक्त रामगुलामजी द्विवेदी ने गोस्वामीजी के ग्रंथों की खोज बड़े प्रयत्न के साथ की थी और अपने संग्रह में इन्हीं ग्रंथों को तुलसीकृत माना था। इन्हीं की परंपरा में छक्कनलालजी भी थे और स्वयं भी भक्त तथा रामायणी थे। ग्रंथों का वर्णन इस प्रकार है—

१. रामलला नहछू—सोहर छंद में बीस तुकों की यह एक छोटी सी रचना है। यह छंद पुत्रजन्म, विवाह आदि सभी शुभोत्सवों पर गाया जाता है। इसे सोहला या सोहलो भी कहते हैं। नहछू की प्रथा भारत के उत्तरी प्रांतों में दिल्ली से बिहार तक प्रचलित है, जो कर्णवेध,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारात आदि के पहले चौक बैठने के समय नाइनें करती हैं, जिसमें उन्हें नेग मिलता है। इसकी भाषा पूर्वी अवधी है।

रामचंद्रजी तथा लक्ष्मणजी मिथिला में थे और वहीं एकाएक विवाह निश्चित हो जाने पर अयोध्या से बारात वहाँ गई थी। अतः यह नहछू विवाह के समय का नहीं हो सकता। यह कर्णवेध या यज्ञोपवीत के समय का हो सकता है। कर्णवेध, यज्ञोपवीत या बारात के पहिले चौक बैठने पर नाइन बालक या वर के पैरों में महावर लगाती है और नहरनी को पैरों के नखों से इस प्रकार छुलाती है मानों नख काट रही है। इस प्रथा को नहछू कहते हैं।

२. वैराग्यसंदीपनी——यह दोहे चौपाइयों में छोटी सी रचना है। तीन प्रकाशों में संतस्वभाव, संतमहिमा तथा शांति का वर्णन किया गया है। इसमें कुल ६२ छंद हैं।

३. बरवै रामायण——उनहत्तर बरवों का यह एक छोटा सा ग्रंथ है, जो सात अध्यायों में बँटा है। गोस्वामीजी ने इसे ग्रंथ के रूप में निर्मित नहीं किया था, ऐसा स्पष्ट ही ज्ञात होता है। ये यथारुचि बने हुए स्फुट बरवै थे, जिन्हें बाद में स्वयं गोस्वामीजी ने या उनके किसी भक्त ने मानस के कांडक्रम से संग्रहीत कर दिया है।

४. पार्वतीमंगल——इस रचना में शिवपार्वती का विवाह वर्णित है। इसमें सोहर के १४८ तुक और १६ छंद दिए गए हैं। इसका निर्माण

जय संवत फागुन सुदि पाँचै गुरु दिनु।
अस्विनि बिरचेउँ मंगल सुनि सुख छिनु छिनु॥

यह जय संवत् महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी के अनुसार सं० १६४३ में पड़ता है। इसकी भाषा शुद्ध पूर्वी अवधी है।

५. जानकीमंगल——इसमें सोहर के १९२ तुक तथा २४ छंद हैं, और प्रति आठ सोहर पर एक एक छंद है। इसमें सीता-राम-विवाह का वर्णन है। यह पार्वतीमंगल के समय ही का बना ग्रंथ है और भाषा, छंद आदि सभी में उससे मिलता जुलता है। मानस की कथा से इसमें कुछ भेद किया गया है; जैसे——

(क) पुष्पवाटिका में रामचंद्र तथा सीता के एक दूसरे के देखने का वर्णन नहीं है। धनुषयज्ञ ही से कथा का आरंभ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) इसमें लक्ष्मण के क्रोध करने के बाद विश्वामित्र की आज्ञा पर रामचंद्र का धनुष तोड़ना नहीं दिया गया है प्रत्युत जनक के संदेह प्रकट करने तथा विश्वामित्र के राम की महिमा कहने पर रामचंद्र ने धनुष तोड़ा है।

(ग) इसमें विदाई के पीछे परशुरामजी आए हैं, धनुषभंग के बाद ही नहीं।

ये दोनों मंगल अपनी सुगठित वाक्ययोजना तथा शब्दविन्यास के कारण विशेष गौरवपूर्ण हैं। शैथिल्य नाम को भी नहीं है और ये कवि की प्रौढ़ रचनाएँ हैं।

६. रामाज्ञाप्रश्न––गोस्वामीजी ने इसे शकुन विचारने के लिये बनाया है और इसी बहाने रामचरित्र का वर्णन किया है। इसमें सात सर्ग हैं और प्रत्येक सर्ग में सात सात दोहों के सात सात सप्तक हैं। इसके बहुत से दोहे गोस्वामीजी के अन्य ग्रंथों से लिए गए हैं। सातवें सर्ग के अंतिम सप्तक में शकुन विचारने की विधि भी दी गई है। यह पूरा ग्रंथ दोहों में है।

७. दोहावली––इसमें ५७३ दोहे हैं, जिनमें २३ सोरठे हैं। ये भगवन्नाममाहात्म्य, धर्मोपदेश, नीति आदि पर हैं। इनमें से प्रायः आधे रामायण, रामाज्ञाप्रश्न तथा वैराग्यसंदीपनी में भी मिलते हैं। यह संग्रह, संभव है, तुलसीदास जी ने स्वयं किया हो या उनके पीछे किसी अन्य ने। पर इन दोहों में संसार की अनेक अनुभूत बातों तथा गूढ़ तत्वों का वर्णन है और प्रेम भक्ति का अच्छा निरूपण हुआ है।

८. कवितावली या कवित्तरामायण––इसमें कवित्त, घनाक्षरी, सवैये तथा छप्पय छंद हैं और भाषा शुद्ध ब्रज है। इसमें रामचरित्र कांडक्रम से वर्णित है। यह तो अवश्य कहा जा सकता है कि ये एक साथ इसी क्रम से नहीं बने हैं प्रत्युत बाद को इस क्रम से संगृहीत किए गए हैं। इनमें दरबारी तथा भाटों की शैली के कवित्त भी हैं और शृंगारिक भी। स्वजीवनसंबंधी भी कई पद हैं और महामारी से पीड़ित होने पर हनुमानबाहुक भी परिशिष्ट रूप में रचकर इसमें जोड़ा गया है।

९. गीतावली––यह रचना राग, रागिनियों में है और इसमें कांडक्रम से रामचरित्र वर्णित है। यह शुद्ध ब्रजभाषा में है। यह कृष्ण-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्त कवियों की शैली पर वैसा ही सरस तथा मनोरम है। वाललीला तथा रामराज्य के सुख, ऐश्वर्य का विस्तार से वर्णन है और अन्य का संक्षिप्त। कुछ पद ऐसे भी हैं, जो सूरदास की प्रतिलिपि मात्र हैं और केवल राम, श्याम, तुलसी, सूर आदि का हेरफेर है। हो सकता है, तुलसीभक्तों ने ऐसा किया हो।

१०. श्रीकृष्णगीतावली—इसमें ६१ पदों में श्रीकृष्णचरित्र का वर्णन है। इसमें कई पद सूरदासजी के भी छाप वदलकर मिल गए हैं। यह किसी क्रम से नहीं वना है प्रत्युत समय समय पर वने पदों का संग्रह है। श्रीकृष्ण की कुछ लीलाओं का वर्णन करने पर विरह, गोपी-उद्धव-संवाद, भ्रमरगीत तथा द्रौपदी के वस्त्र वढ़ाने की कथा है।

११. विनयपत्रिका—इसमें विनय के २७६ पद हैं। यह गोस्वामीजी की अंतिम रचना ज्ञात होती है और इसमें इनकी कवित्वशक्ति पूर्ण रूप से प्रकट हुई है। इसमें इनके अगाध पांडित्य, शब्दकोष, काव्यकौशल आदि का पूरा परिचय मिलता है। यह पत्रिका प्रार्थना के रूप में सजाई गई है और इतनी हार्दिक आस्था से लिखी गई है कि अवश्य ही भगवान् श्रीरामचंद्र ने इसे स्वीकार कर लिया होगा।

मानसचतुश्शती वर्ष के अवसर पर इस तुलसी ग्रंथावली संबंधी संकल्प को और अधिक प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करने का व्रत सभा ने लिया। सभा द्वारा प्रकाशित रामचरितमानस एवं मानसेतर एकादश ग्रंथों के संशोधित मूलपाठ के प्रकाशन के उपरांत अन्यान्य प्रयत्न भी इन ग्रंथों के शुद्ध पाठ के लिये किए गए। उन सवको ध्यान में रखकर और गंभीर अध्ययन मनन करने पर सभा इस निष्कर्ष पर पहुँची कि ग्रंथावली का अद्यतन पाठ जो सभा का है, उसे प्रामाणिक मानकर उपस्थित किया जाय और जो असंगतियाँ रह गई हैं उनका निराकरण यथाशक्ति पूर्ण रूप से कर दिया जाय।

सभा का यह कभी आग्रह नहीं रहा है कि जो कुछ वहाँ होता है केवल उसे ही प्रामाणिक माना जाय, वल्कि उसकी मान्यता है कि जितना अधिक कार्य हो सके उसे उतना ही प्रामाणिक माना जाय। सभा अपने कार्य को अंतिम नहीं मानती किंतु विद्वानों का श्रेय सभा के सत्कार्यों को प्राप्त रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी ग्रंथावली के दूसरे भाग में गोस्वामी तुलसीदास की त्रिशत जयंती के समय जो ११ ग्रंथ और दिए गए, उन्हें ही हिंदी जगत् आज भी प्रामाणिक मान रहा है। सभा के उस कार्य के वाद इस क्षेत्र में आज भी यह कार्य होना चाहिए था। किंतु तुलसी ग्रंथावली के दूसरे भाग में आज से लगभग ५० वर्ष पहले जो कार्य हुआ वही प्रामाणिक रूप से चल रहा है। किंतु हमारा अनुभव यह है कि जो विपुल साहित्य उपलव्ध हुआ है उसके प्रकाश में उनके अन्य ग्रंथों पर भी कार्य हो। तुलसी ग्रंथावली का यह द्वितीय खंड इसी दृष्टि से विद्वज्जनों के समक्ष उपस्थित किया जा रहा है।

ग्रंथावली प्रकाशन का हमारा उद्देश्य यह भी रहा है कि तुलसी का साहित्य घर घर पहुँचे। इसलिये, तुलसी ग्रंथावली के तीन संस्करण हम प्रस्तुत कर रहे हैं--एक लोक संस्करण, द्वितीय विशिष्ट संस्करण और तृतीय साहित्यिक संस्करण। साहित्यिक संस्करण में सारे पाठभेद आदि दे दिए गए हैं जिसमें वह शोधकार्य करनेवालों के लिये मूल्यवान् बने और नवीन शोधकार्य को दिशा प्रदान करे। इस कार्य में हमें सभा के साहित्यमंत्री डा० नागेंद्रनाथ उपाध्याय से वड़ी मूल्यवान् सहायता मिली है। पं० विश्वनाथ त्रिपाठी और पं० लालधर त्रिपाठी ने इस ग्रंथावली के प्रकाशन में, जहाँ तक उसके संपादन और प्रकाशन दोनों का संबंध है, वड़ी ही निष्ठा, गंभीरता और दूरदर्शिता के साथ कार्य किया है। इसके लियें उनके प्रति हम आभारी हैं। सभा के इस पुनीत संकल्प को साकार करने में सर्वश्री रामजन्म शर्मा, व्रजेंद्र पांडेय तथा मुद्रण-व्यवस्थापक पं० केशरीनारायण तिवारी का भी योगदान रहा है। हम इन सहयोगियों के भी कृतज्ञ हैं। ग्रंथावली का संपादन सहज कार्य नहीं है और जव इतने विस्तार में जाना होता है तो कार्य और कठिन होता है, इसका अनुभव वे ही कर सकते हैं जो इन कार्यों में रुचि रखते हैं। कागज के अकाल के समय यह कार्य संपन्न हो सका, यह तुलसी की ही कृपा का परिणाम है। इसके प्रकाशन में भारत सरकार ने जो योगदान दिया है उसके लिये सभा उसकी ऋणी है। संपादकमंडल के सदस्यों तथा सभा के मंत्रियों और कार्यकर्ताओं का अनुगृहीत हूँ जो इस कार्य में वरावर सहायता करते रहे। यदि इस ग्रंथावली में कोई त्रुटि है तो हम क्षमार्थी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे विश्वास है, अपने युगधर्म के कारण मानसचतुश्शती के अवसर पर तुलसी ग्रंथावली घर घर पहुँच जाएगी और तुलसी का संदेश लोकमंगल की प्रतिष्टा कर युग को चिरंतन आलोक प्रदान कर सकेगा।

तुलसी जयंती
(श्रावण शु० ७)
सं० २०३१

सुधाकर पांडेय
संयोजक
संपादकमंडल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रंथसूची

ग्रंथ		पृष्ठ
१. रामललानहछू	...	१–६
२. वैराग्यसंदीपनी	...	७–१४
३. बरवै रामायण	...	१५–२२
४. पार्वतीमंगल	...	२३–३६
५. जानकीमंगल	...	३७–५४
६. रामाज्ञाप्रश्न	...	५५–८४
७ दोहावली	...	८५–१२८
८. कवितावली	...	१२९–२१८
९. गीतावली	...	२१९–३५८
१०. श्रीकृष्णगीतावली	...	३५९–३७८
११. विनयपत्रिका	...	३७९–४९६
परिशिष्ट		
पाठभेद	...	४९७–५७५
प्रतीकानुक्रम	...	५७६–६०१०

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

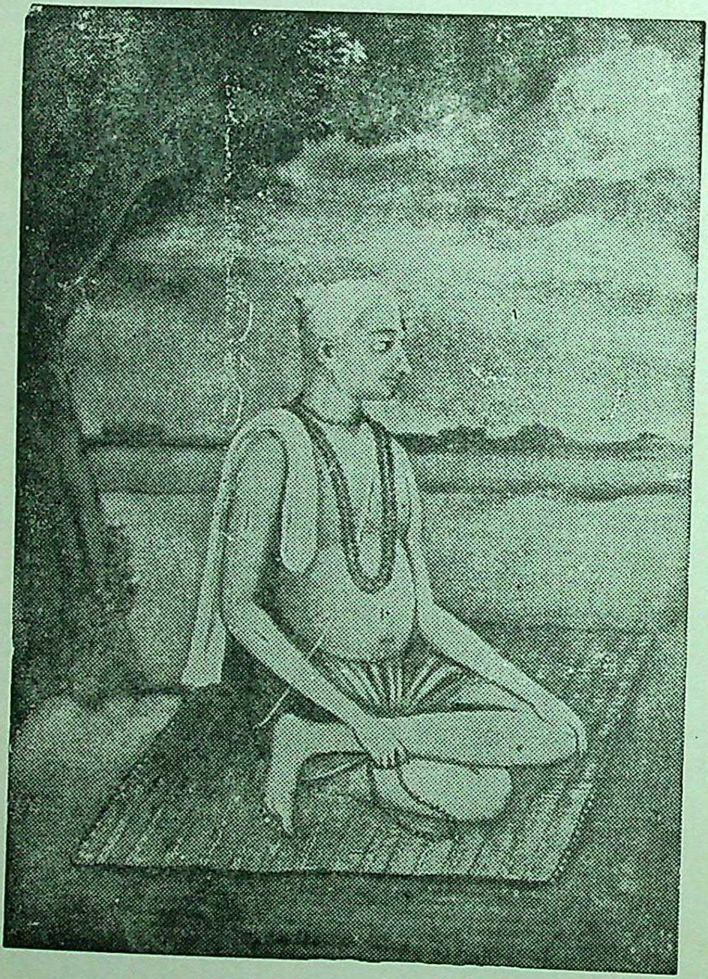

गोस्वामी तुलसीदास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामलला-नहछू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामलला नहछू

सोहर छंद

आदि सारदा गनपति गौरि मनाइय हो।
रामलला कर नहछू गाइ सुनाइय हो॥
जेहि गाये सिधि होय परम निधि पाइय हो।
कोटि जनम कर पातक दूरि सो जाइय हो॥ १॥

कोटिन्ह बाजन बाजहिं दसरथ के गृह हो।
देवलोक सब देखहिं आनँद अति हिय हो॥
नगर सोहावन लागत बरनि न जातै हो।
कौसल्या के हरष न हृदय समातै हो॥ २॥

आलहि बाँस के माँड़व मनिगन पूरन हो।
मोतिन्ह झालरि लागि चहूँ दिसि झूलन हो॥
गंगाजल कर कलस तौ तुरित मँगाइय हो।
जुवतिन्ह मंगल गाइ राम अन्हवाइय हो॥ ३॥

गजमुकुता हीरामनि चौक पुराइय हो।
देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइय हो॥
कनकखंभ चहुँओर मध्य सिंहासन हो।
मानिकदीप बराय बैठि तेहि आसन हो॥ ४॥

बनि बनि आवति नारि जानि गृह मायन हो।
बिहँसत आउ लोहारिनि हाथ बरायन हो॥
अहिरिनि हाथ दहेंड़ि सगुन लेइ आवइ हो।
उनरत जोबनु देखि नृपति मन भावइ हो॥ ५॥

रूपसलोनि तँबोलिनि बीरा हाथहि हो।
जाकी ओर बिलोकहि मन तेहि साथहि हो॥
दरजिनि गोरे गात लिहे कर जोरा हो।
केसरि परम लगाइ सुगंधन बोरा हो॥ ६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोचिनि बदन-सँकोचिनि हीरा माँगन हो ।
पनहि लिहे कर सोभित सुंदर आँगन हो ॥
बतिया सुघरि मलिनिया सुंदर गातहि हो ।
कनक रतनमनि मौर लिहे मुसुकातहि हो ॥ ७ ॥

कटि कै छीन बरिनिया छाता पानिहि हो ।
चंद्रबदनि मृगलोचनि सब रसखानिहि हो ॥
नैन बिसाल नउनिया भौं चमकावइ हो ।
देइ गारि रनिवासहि प्रमुदित गावइ हो ॥ ८ ॥

कौसल्या की जेठि दीन्ह अनुसासन हो ।
नहछू जाइ करावहु बैठि सिंहासन हो ॥
गोद लिहे कौसल्या बैठी रामहि बर हो ।
सोभित दूलह राम सीस पर आँचर हो ॥ ९ ॥

नाउनि अति गुनखानि तौ बेगि बोलाई हो ।
करि सिँगार अति लोन तौ बिहसति आई हो ॥
कनक-चुनिन सों लसित नहरनी लिय कर हो ।
आनँद हिय न समाइ देखि रामहिँ बर हो ॥१०॥

कानन कनक तरीवन, बेसरि सोहइ हो ।
गजमुकुता कर हार कंठमनि मोहइ हो ॥
कर कंकन, कटि किंकिनि, नूपुर बाजइ हो ।
रानि कै दीन्हीं सारी अधिक बिराजइ हो ॥११॥

काहे रामजिव साँवर, लछिमन गोर हो ।
कीदहुँ रानि कौसिलहि परिगा भोर हो ॥
राम अहहिं दसरथ कै लछिमन आन क हो ।
भरत सत्रुहन भाइ तौ श्रीरघुनाथ क हो ॥१२॥

आजु अवधपुर आनँद नहछू राम क हो ।
चलहु नयन भरि देखिय सोभाधाम क हो ॥
अति बड़भाग नउनियाँ छुऐ नख हाथ सों हो ।
नैनन्ह करति गुमान तौ श्रीरघुनाथ सों हो ॥१३॥

जो पगु नाउनि धोवइ राम धोवावइँ हो ।
सो पगधूरि सिद्ध मुनि दरस न पावइँ हो ॥
अतिसय पुहुप क माल राम-उर सोहइ हो ।
तिरछी चितवनि आनँद मुनि मुख जोहइ हो ॥१४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नख काटत मुसुकाहिं बरनि नहिं जातहि हो ।
पदुमराग-मनि मानहुँ कोमल गातहि हो ।।
जावक रचि क अँगुरियन्ह मृदुल सुठारी हो ।
प्रभु कर चरन पछालत अति सुकुमारी हो ।।१५।।

भइ निवछावरि वहु विधि जो जस लायक हो ।
तुलसिदास बलि जाउँ देखि रघुनायक हो ।।
राजन दीन्हें हाथी, रानिन्ह हार हो ।
भरिगे रतनपदारथ सूप हजार हो ।।१६।।

भरि गाड़ी निवछावरि नाऊ लावइ हो ।
परिजन करहिं निहाल असीसत आवइ हो ।।
तापर करहिं सुमौज वहुत दुख खोवहिं हो ।
होइ सुखी सव लोग अधिक सुख सोवहिं हो ।।१७।।

गावहिं सव रनिवास देहिं प्रभु गारी हो ।
रामलला सकुचाहिं देखि महतारी हो ।।
हिलिमिलि करत सवाँग सभा रसकेलि हो ।।
नाउनि मन हरषाइ सुगंधन मेलि हो ।।१८।।

दूलह कै महतारि देखि मन हरषइ हो ।
कोटिन्ह दीन्हेउ दान मेघ जनु वरखइ हो ।।
रामलला कर नहछू अति सुख गाइय हो ।
जेहि गाये सिधि होइ परम निधि पाइय हो ।।१९।।

दसरथ राउ सिंहासन बैठि बिराजहिं हो ।
तुलसिदास बलि जाहि देखि रघुराजहिं हो ।।
जे यह नहछू गावै गाइ सुनावइँ हो ।
ऋद्धि सिद्धि कल्यान मुक्ति नर पावइँ हो ।।२०।।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैराग्य—संदीपिनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैराग्य-संदीपिनी

दोहा

राम वाम दिसि जानकी, लषन दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
तुलसी मिटै न मोहतम, किये कोटि गुनग्राम।
हृदय-कमल फूलै नहीं, बिनु रवि-कुल-रवि राम ॥ २ ॥
सुनत लखत श्रुति नयन बिनु, रसना बिनु रस लेत।
बास नासिका बिनु लहै, परसै बिना निकेत ॥ ३ ॥

सोरठा

अज अद्वैत अनाम, अलख रूप गुनरहित जो।
मायापति सोइ राम, दास-हेतु नर-तनु धरेउ ॥ ४ ॥

दोहा

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान।
पाप पुन्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान ॥ ५ ॥
तुलसी यह तन तवा है, तपत सदा त्रय ताप।
सांति होहि जब सांतिपद, पावै रामप्रताप ॥ ६ ॥
तुलसी वेद-पुरान-मत, पूरन सास्त्र विचार।
यह बिराग-संदीपिनी, अखिल ज्ञान को सार ॥ ७ ॥

(संत-स्वभाव-वर्णन)

दोहा

सरल बरन भाषा सरल, सरल अर्थमय मानि।
तुलसी सरलै संतजन, ताहि परी, पहिचानि ॥ ८ ॥

चौपाई

अति सीतल अति ही सुखदाई। सम दम रामभजन अधिकाई।
जड़ जीवन को करै सचेता। जग माहीं बिचरत एहि हेता ॥९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोहा

तुलसी ऐसे कहुँ कहूँ, धन्य धरनि बहु संत।
परकाजै परमारथी, प्रीति लिये निबहंत ॥१०॥
की मुख पट दीन्हें रहै, यथा अर्थ भाषंत।
तुलसी या संसार में, सो बिचारयुत संत ॥११॥
बोलै बचन बिचारि कै, लीन्हें संत सुभाव।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पंथ देत नहिं पाव ॥१२॥
सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गने नहिं काहि।
तुलसी यह मत संत को, बोलै समता माहि ॥१३॥

चौपाई

अति अनन्य गति इंद्रीजीता। जाको हरि बिनु कतहुँ न चीता॥
मृगतृष्णा सम जग जिय जानी। तुलसी ताहि संत पहिचानी ॥१४॥

दोहा

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास।
राम-रूप-स्वाती-जलद, चातक तुलसीदास ॥१५॥
सो जन जगत-जहाज है, जाके राग न दोष।
तुलसी तष्ना त्यागि कै, गहउ सील संतोष ॥१६॥
सील गहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मख राम।
तुलसी रहिए एहि रहनि, संत जनन को काम ॥१७॥
निज संगी निज सम करत, दुर्जन मन दुख दून।
मलयाचल हैं संत जन, तुलसी दोषबिहून ॥१८॥
कोमल बानी संत की, स्रवै अमृतमय आइ।
तुलसी ताहि कठोर मन, सुनत मैन होइ जाइ ॥१९॥
अनुभव सुख उत्पति करत, भवभ्रम धरै उठाइ।
ऐसी बानी संत की, जो उर भेदै आइ ॥२०॥
सीतल बानी संत की, ससि हू ते अनुमान।
तुलसी कोटि तपनि हरै, जो कोउ धारै कान ॥२१॥

चौपाई

पाप ताप सब सूल नसावै। मोह-अंध रबि-बचन बहावै॥
तुलसी ऐसे सदगुरु साधू। बेद मध्य गुन बिदित अगाधू ॥२२॥

दोहा

तन करि मन करि बचन करि, काहू दूषत नाहिँ।
तुलसी ऐसे संतजन, रामरूप जग माहिँ ॥२३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख देखत पातक हरै, परसत कर्म बिलाहिं ।
बचन सुनत मन मोहगत, पूरब भाग मिलाहिं ।।२४।।
अति कोमल अरु विमल रुचि, मानस में मल नाहिं ।
तुलसी रत मन होइ रहै, अपने साहिब माहिं ।।२५।।
जाके मन ते उठि गई, तिल तिल तृष्ना चाहि ।
मनसा बाचा कर्मना, तुलसी बंदत ताहि ।।२६।।
कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पषान ।
तुलसी ऐसे संतजन, पृथ्वी ब्रह्म समान ।।२७।।

चौपाई

कंचन को मृतिका करि मानत । कामिनि काष्ठ सिला पहिचानत ।
तुलसी भूलि गयो रस एहा । ते जन प्रगट राम की देहा ।।२८।।

दोहा

आकिंचन, इंद्रियदमन, रमन राम इकतार ।
तुलसी ऐसे संतजन, विरले या संसार ।।२९।।
अहंवाद, 'मैं तै' नहीं, दुष्टसंग नहिं कोइ ।
दुख ते दुख नहि ऊपजै, सुख ते सुख नहि होइ ।।३०।।
सम कंचन काँचै गिनत, सत्रु मित्र सम दोइ ।
तुलसी या संसार में, कहत संतजन सोइ ।।३१।।
बिरले बिरले पाइए, माया त्यागी संत ।
तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनंत ।।३२।।
"मैं तै" मेटचो मोह तम, ऊगो आतम-भानु ।
संतराज सो जानिए तुलसी या सहिदानु ।।३३।।

(संत-महिमा-वर्णन)

सोरठा

को वरनै मुख एक, तुलसी महिमा संत की ।
जिन्हकें विमल बिबेक, सेष महेस न कहि सकत ।।३४।।

दोहा

महि पत्री करि सिधु मसि, तरु लेखनी बनाइ ।
तुलसी गनपति सों तदपि, महिमा लिखी न जाइ ।।३५।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन्य धन्य माता पिता, धन्य पुत्रवर सोइ ।
तुलसी जो रामहिँ भजै, जैसेहु कैसेहु होइ ।।३६।।
तुलसी जाके वदन तें, धोखेउ निकसत राम ।
ताके पग की पगतरी, मेरे तनु को चाम ।।३७।।
तुलसी भगत सुपच भलो, भजै रैनि दिन राम ।
ऊँचो कुल केहि काम को, जहाँ न हरि को नाम ।।३८।।
अति ऊँचे भूधरनि पर, भुजगन के अस्थान ।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ।।३९।।

चौपाई

अति अनन्य जो हरि को दासा । रटै नाम निसि दिन प्रति स्वासा ।
तुलसी तेहि समान नहिँ कोई । हम नीके देखा सब लोई ।।४०।।
जदपि साधु सबही विधि हीना । तद्यपि समता के न कुलीना ।
यह दिन रैनि नाम उच्चरै । वह नित नाम-अगिनि में जरै ।।४१।।

दोहा

दास रता एक नाम सों, उभय लोक सुख त्यागि ।
तुलसी न्यारे ह्वै रहै, दहै न दुख की आगि ।।४२।।

(शांति-वर्णन)

दोहा

रैनि को भूषन इंदु है, दिवस को भूषन भानु ।
दास को भूषन भक्ति है, भक्ति को भूषन ज्ञान ।।४३।।
ज्ञान को भूषन ध्यान है, ध्यान को भूषन त्याग ।
त्याग को भूषन सांतिपद, तुलसी अमल अदाग ।। ४४।।

चौपाई

अमल अदाग सांतिपद सारा । सकल कलेसन करत प्रहारा ।
तुलसी उर धारै जौ कोई । रहै अनंदसिंधु महँ सोई ।। ४५।।
बिबिध-पाप-संभव जो तापा । मिटहिँ दोष दुख दुसह कलापा ।।
परम सांति सुख रहै समाई । तहँ उतपात न भेदै आई ।। ४६।।
तुलसी ऐसे सीतल संता । सदा रहैं एहि भाँति एकंता ।
कहा करैं खल लोग भुजंगा । कीन्ह्यौ गरलसील जो अंगा।।४७।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोहा

अति सीतल अति ही अमल, सकल कामनाहीन ।
तुलसी ताहि अतीत गनि, वृत्ति सांति लयलीन ॥ ४८॥

चौपाई

जौ कोइ कोप भरै मुख बैना । सन्मुख हतै गिरा सर पैना ॥
तुलसी तऊ लेस रिस नाहीं । सो सीतल कहिए जग माहीं ॥४९॥

दोहा

सात दीप नव खंड लौं, तीनि लोक जग माहिं ।
तुलसी सांति समान सुख, अपर दूसरो नाहिं ॥५०॥

चौपाई

जहाँ सांति सतगुरु की दई । तहाँ क्रोध की जर जरि गई ॥
सकल कामवासना बिलानी । तुलसी यहै सांति सहिदानी ॥५१॥
तुलसी सुखद सांति को सागर । संतन गायो करन उजागर ॥
तामें तन मन रहै समोई । अहं-अगिनि नहिं दाहै कोई ॥५२॥

दोहा

अहंकार की अगिनि में, दहत सकल संसार ।
तुलसी बाँचैं संतजन, केवल सांति अधार ॥५३॥
महा सांतिजल परसि कै, सांत भए जन जोइ ।
अहं-अगिनि ते नहिँ दहैं, कोटि करै जो कोइ ॥५४॥
तेज होत तन तरनि को, अचरज मानत लोइ ।
तुलसी जो पानी भया, बहुरि न पावक होइ ॥५५॥
जद्यपि सीतल, सम सुखद, जग में जीवन प्रान ।
तदपि सांतिजल जनि गनौ, पावक तेज प्रमान ॥५६॥

चौपाई

जरै बरै अरु खीझि खिझावै । राग द्वेष महँ जनम गँवावै ॥
सपनेहु सांति नहीं उन देही । तुलसी जहाँ तहाँ ब्रत एही ॥५७॥

दोहा

सोइ पंडित सोइ पारखी, सोई संत सुजान ।
सोई सूर सचेत सो, सोई सुभट प्रमान ॥५८॥
सोइ ज्ञानी सोइ गुनी जन, सोई दाता ध्यानि ।
तुलसी जाके चित भई, रागद्वेष की हानि ॥५९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौपाई

राग द्वेष की अगिनि बुझानी। काम क्रोध वासना नसानी॥
तुलसी जबहिं सांति गृह आई। तब उरही उर फिरी दोहाई॥६०॥

दोहा

फिरी दोहाई राम की, ग कामादिक भाजि।
तुलसी ज्यों रबि के उदय, तुरत जात तम लाजि॥६१॥
यह विराग-संदीपनी, सुजन सुचित सुनि लेहु।
अनुचित वचन विचारि कै, जस सुधारि तस लेहु॥६२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरवै रामायण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरवै रामायण

बाल कांड

केस-मुकुत सखि मरकत मनिमय होत।
हाथ लेत पुनि मुकुता करत उदोत ॥१॥
सम सुबरन सुखमाकर सुखद न थोर।
सीय अंग, सखि! कोमल कनक कठोर ॥२॥
सियमुख सरद कमल जिमि किमि कहि जाइ।
निसि मलीन वह, निसि दिन यह बिगसाइ ॥३॥
बड़े नयन, कटि, भ्रकुटी, भाल बिसाल।
तुलसी मोहत मनहि मनोहर बाल ॥४॥
चंपक-हरवा अँग मिलि अधिक सोहाइ।
जानि परै सिय हियरे जब कुँभिलाइ ॥५॥
सिय तुव अंग-रंग मिलि अधिक उदोत।
हार बेलि पहिरावौं चंपक होत ॥६॥
साधु सुसील सुमति सुचि सरल सुभाव।
राम नीतिरत, काम कहा यह पाव? ॥७॥
कुंकुम तिलक भाल, स्रुति कुंडल लोल।
काकपच्छ मिलि, सखि! कस लसत कपोल ॥८॥
भाल तिलक सर, सोहत भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चंद समान ॥९॥
तुलसी बंक बिलोकनि, मृदु मुसुकानि।
कस प्रभु नयन कमल अस कहौं बखानि ॥१०॥
काम रूप सम तुलसी राम सरूप।
को कबि समसरि करै परै भवकूप ॥११॥
चढ़त दसा यह उतरत जात निदान।
कहौं न कबहूँ करकस भौंह कमान ॥१२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्य नेम-कृत अरुन उदय जब कीन ।
निरखि निसाकर-नृप-मुख भए मलीन ।।१३।।
कमठपीठ धनु सजनी कठिन अँदेस ।
तमकि ताहि ए तोरिहि कहव महेस ।।१४।।
नृप निरास भए निरखत नगर उदास ।
धनुष तोरि हरि सब कर हरेउ हरास ।।१५।।
का घूँघट मुख मूँदहु नवला नारि ?
चाँद सरग पर सोहत यहि अनुहारि ।।१६।।
गरब करहु रघुनंदन जनि मन माँह ।
देखहु आपनि मूरति सिय कै छाँह ।।१७।।
उठी सखी हँसि मिस करि कहि मृदु बैन ।
सिय रघुबर के भए उनींदे नैन ।।१८।।
सींक धनुष, हित सिखन, सकुचि प्रभु लीन ।
मुदित माँगि इक धनुही नृप हँसि दीन ।।१९।।

अयोध्या कांड

सात दिवस भए साजत सकल बनाउ ।
का पूछहु सुठि राउर सरल सुभाउ ।।२०।।
राजभवन सुख बिलसत सिय सँग राम ।
बिपिन चले तजि राज, सु बिधि बड़ बाम ।।२१।।
कोउ कह नर नारायन, हरिहर कोउ ।
कोउ कह बिहरत बन मधु मनसिज दोउ ।।२२।।
तुलसी भइ मति बिथकित करि अनुमान ।
राम लषन के रूप न देखेउ आन ।।२३।।
तुलसी जनि पग धरहु गंग साँच ।
निँगानाँग करि नितहिँ नचाइहि नाच ।।२४।।
सजल कठौता कर गहि कहत निषाद ।
चढ़हु नाव पग धोइ करहु जनि बाद ।।२५।।
कमल कंटकित सजनी, कोमल पाइ ।
निसि मलीन, यह प्रफुलित नित दरसाइ ।।२६।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(वालमीकि वचन)

द्वै भुज कर हरि रघुवर सुंदर वेष।
एक जीभ कर लछिमन दूसर शेष ॥२७॥

अरण्य कांड

बेद-नाम कहि, अँगुरिन खंडि अकास।
पठयो सूपनखाहि लषन के पास ॥२८॥
हेमलता सिय मूरति मृदु मुसुकाइ।
हेम हरिन कहँ दीन्हेउ प्रभुहिं देखाइ ॥२९॥
जटा मुकुट कर सर धनु, संग मरीच।
चितवनि वसति कनखियनु अँखियनु बीच ॥३०॥

(राम-वाक्य)

कनकसलाक, कला ससि, दीपसिखाउ।
तारा सिय कहँ लछिमन मोहिं बताउ ॥३१॥
सीय बरन सम केतकि अति हिय हारि।
किहेसि भँवर कर हरवा हृदय बिदारि ॥३२॥
सीतलता ससि की रहि सब जग छाइ।
अगिनि-ताप ह्वै तन कहँ सँचरत आइ ॥३३॥

किष्किंधा कांड

स्याम गौर दोउ मूरति लछिमन राम।
इनतें भइ सित कीरति अति अभिराम ॥३४॥
कुजन-पाल गुन-वर्जित, अकुल, अनाथ।
कहहु कृपानिधि राउर कस गुननाथ ॥३५॥

सुंदर कांड

बिरह आगि उर ऊपर जब अधिकाइ।
ए अँखियाँ दोउ बैरिनि देहिं बुझाइ ॥३६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डहकु न है उजियरिया निसि नहिँ घाम ।
जगत जरत अस लागु मोहिँ बिनु राम ।।३७।।
अब जीवन कै है कपि आस न कोइ ।
कनगुरिया कै मुँदरी कंकन होइ ।।३८।।
राम-सुजस कर चहुँ जुग होत प्रचार ।
असुरन कहँ लखि लागत जग अँधियार ।।३९।।

(कपि-वाक्य)

सिय-बियोग-दुख केहि बिधि कहउँ बखानि ।
फूलबान तेँ मनसिज बेधत आनि ।।४०।।
सरद चाँदनी सँचरत चहुँ दिसि आनि ।
बिधुहि जोरि कर बिनवति कुलगुरु जानि ।।४१।।

———

लंका कांड

बिबिध वाहिनी बिलसति सहित अनंत ।
जलधि सरिस को कहै राम भगवंत ।।४२।।

———

उत्तर कांड

चित्रकूट पयतीर सो सुर-तरु-वास ।
लषन राम सिय सुमरिहु तुलसीदास ।।४३।।
पय नहाइ फल खाहु , परिहरिय आस ।
सीयराम-पद सुमिरहु तुलसीदास ।।४४।।
स्वारथ ,परमारथ हित एक उपाय ।
सीयराम-पद तुलसी प्रेम बढ़ाय ।।४५।।
काल कराल बिलोकहु होइ सचेत ।
रामनाम जपु तुलसी प्रीति समेत ।।४६।।
संकट सोचबिमोचन, मंगलगेह ।
तुलसी रामनाम पर करिय सनेह ।।४७।।
कलि नहिँ ज्ञान, बिराग, न जोग-समाधि ।
रामनाम जपु तुलसी नित निरुपाधि ।।४८।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R
०८१
६८.2
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

रामनाम दुइ आखर हिय हितु जानु।
राम लषन सम तुलसी सिखव न आनु ॥४९॥
माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि वाम ॥५०॥
रामनाम जपु तुलसी होइ विसोक।
लोक सकल कल्यान, नीक परलोक ॥५१॥
तप, तीरथ, मख, दान, नेम, उपवास।
सब तें अधिक राम जपु तुलसीदास ॥५२॥
महिमा रामनाम कै जान महेस।
देत परम पद कासी करि उपदेस ॥५३॥
जान आदि-कबि तुलसी नामप्रभाउ।
उलटा जपत कोल ते भए ऋषिराउ ॥५४॥
कलसजोनि जिय जानेउ नामप्रतापु।
कौतुक सागर सोखेउ करि जिय जापु ॥५५॥
तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि।
बेद पुरान पुकारत, कहत पुरारि ॥५६॥
रामनाम पर तुलसी नेह निबाहु।
एहि ते अधिक, न एहि सम जीवनलाहु ॥५७॥
दोष - दुरित - दुख - दारिद-दाहक नाम।
सकल सुमंगलदायक तुलसी राम ॥५८॥
केहि गिनती महँ ? गिनती जस बनघास।
राम जपत भए तुलसी तुलसीदास ॥५९॥
आगम निगम पुरान कहत करि लीक।
तुलसी नाम राम कर सुमिरन नीक ॥६०॥
सुमिरहु नाम राम कर, सेवहु साधु।
तुलसी उतरि जाहु भव उदधि अगाधु ॥६१॥
कामधेनु हरिनाम, कामतरु राम।
तुलसी सुलभ चारि फल सुमिरत नाम ॥६२॥
तुलसी कहत सुनत सब समुझत कोय।
बड़े भाग अनुराग राम सन होय ॥६३॥
एकहि एक सिखावत जपत न आप।
तुलसी रामप्रेम कर बाधक पाप ॥६४॥

109273
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मरत कहत सब सब कहँ सुमिरहु राम ।
तुलसी अब नहिँ जपत समुझि परिनाम ॥६५॥
तुलसी रामनाम जपु आलस छाँडु ।
रामबिमुख कलिकाल क भयो न भाँडु ॥६६॥
तुलसी रामनाम सम मित्र न आन ।
जो पहुँचाव रामपुर तनु अवसान ॥६७॥
नाम भरोस, नाम बल, नाम सनेहु ।
जनम जनम रघुनंदन तुलसिहि देहु ॥६८॥
जनम जनम जहँ जहँ तनु तुलसिहि देहु ।
तहँ तहँ राम निबाहिब नामसनेहु ॥६९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पार्वती—मंगल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पार्वती-मंगल

विनइ गुरुहि, गुनिगनहि, गिरिहि, गननाथहिँ ।
हृदय आनि सियराम धरे धनु भाथहिँ ।।१।।
गावउँ, गौरि-गिरीस-बिवाह सुहावन ।
पापनसावन, पावन, मुनि-मन-भावन ।।२।।
कवितरीति नहिं जानउँ, कबि न कहावउँ ।
संकर-चरित सुसरित मनहिँ अन्हवावउँ ।।३।।
पर - अपवाद-बिवाद-बिदूषित बानिहि ।
पावनि करउँ सो गाइ भवेस-भवानिहि ।।४।।
जय संवत फागुन, सुदि पाँचै, गुरु दिनु ।
अस्विनि बिरचेउँ मंगल, सुनि सुख छिनु छिनु ।।५।।
गुननिधान हिमवान धरनिधर धुर धनि ।
मैना तासु घरनि घर त्रिभुवन तियमनि ।।६।।
कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर ।
लीन्ह जाइ जगजननि जनम जिन्ह के घर ।।७।।
मंगलखानि भवानि प्रकट जब तें भइ ।
तब तें ऋधि सिधि संपति गिरिगृह नित नइ ।।८।।
नित नव सकल कल्यान मंगल मोदमय मुनि मानहीं ।
ब्रह्मादि सुर नर-नाग अति अनुराग भाग बखानहीं ।।
पितु, मातु, प्रिय परिवार हरषहिँ निरखि पालहिँ लालहीं ।
सित पाख बाढ़ति चंद्रिका जनु चंद्रभूषन-भालहीं ।।९।।
कुँवरि सयानि बिलोकि मातु पितु सोचहिँ ।
गिरिजा-जोग जुरिहि बर अनुदिन लोचहिँ ।।१०।।
एक समय हिमवान भवन नारद गए ।
गिरिवर मैना मुदित मुनिहिँ पूजत भए ।।११।।
उमहिँ बोलि ऋषि - पगन मातु मेलति भइ ।
मुनि मन कीन्ह प्रनाम, वचन आसिष दइ ।।१२।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुँवरि लागि पितु काँध ठाढ़ि भइ सोहइ।
रूप न जाइ बखानि, जान जोइ जोहइ ॥१३॥
अति सनेह सतिभाय पाँय परि पुनि पुनि।
कह मैना मृदु वचन "सुनिय विनती, मुनि ॥१४॥
तुम तिभुवन तिहुँकाल विचार विसारद।
पारबती-अनुरूप कहिय वर, नारद" ॥१५॥
मुनि कह "चौदह भुवन फिरउँ जग जहँ जहँ।
गिरिवर सुनिय सरहना राउरि तहँ तहँ ॥१६॥
भूरि भाग तुम सरिस कतहुँ कोउ नाहिन।
कछु न अगम, सब सुगम, भयो बिधि दाहिन ॥१७॥

दाहिन भए विधि, सुगम सब, सुनि तजहु चित चिंता नई।
वर प्रथम बिरचि विरंचि बिरचो मंगला मंगलमई।
बिधिलोक चरचा चलति राउरि चतुर चतुरानन कही ॥
हिमवान कन्या जोग वर बाउर विबुध-बंदित सही ॥१८॥

मोरेँहु मन अस आव मिलिहि वर बाउर।"
लखि नारद-नारदी उमहिँ सुख भा उर ॥१९॥
सुनि सहमे परि पाइँ, कहत भए दंपति—
"गिरिजहिँ लागि हमार जिवन सुख संपति ॥२०॥
नाथ! कहिय सोइ जतन मिटइ जेहि दूषनु।"
"दोषदलनु" मुनि कहेउ "बाल विधुभूषनु ॥२१॥
अवसि होइ सिधि, साहस फलै सुसाधन।
कोटि कलपतरु सरिस संभु-अवराधन ॥२२॥
तुम्हरे आस्रम अबहिँ ईस तप साधहिँ।
कहिय उमहि मनु लाइ जाइ अवराधहिँ" ॥२३॥
कहि उपाउ दंपतिहि मुदित मुनिवर गए।
अति सनेह पितु मातु उमहि सिखवत भए ॥२४॥
सजि समाज गिरिराज दीन्ह सबु गिरिजहिँ।
वदति जननि, "जगदीस जुवति जिनि सिरजहिँ" ॥२५॥
जननि-जनक -उपदेस महेसहि सेवहि।
अति आदर अनुराग भगति मन भेवहि ॥२६॥

भेवहि भगति मन, वचन करम अनन्यगति हरचरन कीं।
गौरव सनेहु सँकोच सेवा जाइ केहि विधि बरन की ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुनरूप जोबन सींव सुंदरि निरखि छोभ न हर हिए।
ते धीर अछत बिकारहेतु जे रहत मनसिज बस किए ॥२७॥
देव देखि भल समउ मनोज बुलायउ।
कहेउ करिय सुरकाजु, साजु सजि धायउ ॥२८॥
बामदेव सन काम बाम होइ बरतेउ।
जग-जय-मद निदरेसि, पायेसि फर तेउ ॥२९॥
रति पतिहीन मलीन बिलोकि बिसूरति।
नीलकंठ मृदु सील कृपामय मूरति ॥३०॥
आसुतोष परितोष कीन्ह बर दीन्हेउ।
सिव उदास तजि बास अनत गम कीन्हेउ ॥३१॥
उमा नेहबस बिकल देह सुधि बुधि गइ।
कलपबेलि बन बढ़त बिषम हिम जनु हइ ॥३२॥
समाचार सब सखिन जाइ घर घर कहे।
सुनत मातु पितु परिजन दारुन दुख दहे ॥३३॥
जाइ देखि अति प्रेम उमहि उर लावहिं।
बिलपहिं बाम बिधातहि दोष लगावहिं ॥३४॥
जो न होहिं मंगलमग सुर बिधि बाधक।
तौ अभिमत फल पावहि करि स्रमु साधक ॥३५॥
साधक कलेस सुनाइ सब गौरिहि निहोरत धाम कों।
को सुनइ काहि सोहाइ घर, चित चहत चंद्रललाम कों ॥
समुझाइ सबहि दृढ़ाइ मन, पितु मातु आयसु पाइ कै।
लागी करन पुनि अगमु तपु, तुलसी कहै किमि गाइ कै ॥३६॥
फिरेउ मातु पितु परिजन लखि गिरिना-पन।
जेहि अनुराग लागु, चितु सोइ हितु आपन ॥३७॥
तजेउ भोग जिमि रोग, लोग अहिगन जनु।
मुनि मनसहु ते अगम तपहि लायउ मनु ॥३८॥
सकुचहिँ बसन बिभूषन परसत जो बपु।
तेहि सरीर हर हेतु अरंभेउ बड़ तपु ॥३९॥
पूजहि सिवहि, समय तिहुँ करहिं निमज्जन।
देखि प्रेम ब्रतु नेम सराहहिँ सज्जन ॥४०॥
नींद न भूख पियास, सरिस निसि बासरु।
नयन नीर, मुख नाम, पुलक तनु, हिय हरु ॥४१॥
कंद मूल फल असन, कबहुँ जल पवनहिँ।
सूख बेल के पात खात दिन गवनहिँ ॥४२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम अपरना भयो परन जब परिहरे।
नवल धवल कल कीरति सकल भुवन भरे ॥४३॥
देखि सराहहिँ गिरजहिँ मुनिवरु मुनि बहु।
अस तप सुना न दीख कबहुँ काहू कहुँ ॥४४॥
काहू न देख्यो कहहिँ यह तपु योगु फल फल चारि का।
नहि जानि जाइ, न कहति, चाहति काहि कुधर-कुमारिका ॥

बटुबेष पेषन पेम पन ब्रत नेम ससिसेखर गए।
मनसहि समरपेउ आपु गिरिजहिँ, वचन मृदु बोलत भए ॥४५॥
देखि दसा करुनाकर हर दुख पायउ।
मोर कठोर सुभाय, हृदय खसि आयउ ॥४६॥
बंस प्रसंसि, मातु पितु कहि सब आयउ।
अमिअ वचन बटु बोलेउ सुनि सुखदायक ॥४७॥
'देवि ! करौं कछु विनय सो बिलगु न मानव।
कहौं सनेह सुभाय साँच जिय जानव ॥४८॥
जनमि जगत जस प्रगटिहु मातु-पिता कर।
तीयरतन तुम उपजिहु भव-रतनाकर ॥४९॥
अगम न कछु जग तुम कहँ, मोहिँ अस सूझइ।
बिनु कामना कलेस कलेस न बूझइ ॥५०॥
जौं वर लागि करहु तपु तौ लरिकाइय।
पारस जौं घर मिलै तौ मेरु कि जाइय ? ॥५१॥
मोरे जान कलेस करिय बिनु काजहिँ।
सुधा कि रोगिहि चाहहि, रतन कि राजहिँ ?" ॥५२॥
लखि न परेउ तपकारन बटु हिय हारेउ।
सुनि प्रिय वचन सखीमुख गौरि निहारेउ ॥५३॥
गौरी निहारेउ सखीमुख, रुख पाइ तेहि कारन कहा।
"तप करहि हर हितु" सुनि बिहँसि बटु कहत "मुरुखाई महा।
जेहि दीन्ह अस उपदेस बरेहु कलेस करि बर बावरो।
हित लागि कहौं सुभाय सो बड़ बिषम बैरी रावरो ॥५४॥

कहहु काह सुनि रीझिहु बरु अकुलीनहिँ।
अगुन अमान अजाति, मातु-पितु हीनहिँ ॥५५॥
भीख माँगि भव खाहिँ, चिता नित सोवहिँ।
नाचहिँ नगन पिसाच, पिसाचिनि जोवहिँ ॥५६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाँग धतूर अहार, छार लपटावहिं।
जोगी, जटिल, सरोष, भोग नहिँ भावहिं ॥५७॥
सुमुखि सुलोचनि ! हर मुख पंच, तिलोचन ।
वामदेव फुर नाम, काम - मद - मोचन ॥५८॥
एकउ हरहि न वर गुन, कोटिक दूषन ।
नर कपाल गजखाल, ब्याल, बिष भूषन ॥५९॥
कहँ राउर गुन सील सरूप सुहावन ।
कहाँ अमंगल वेषु विसेषु भयावन ॥६०॥
जो सोचहि ससिकलहिँ सो सोचहि रौरेहिँ ? ।
कहा मोर मन धरि न वरिय वर बौरेहिँ ॥६१॥
हिये हेरि हठ तजहु, हठै दुख पैहहु ।
ब्याह समय सिख मोरि समुझि पछितैहहु ॥६२॥

पछिताब भूत पिसाच प्रेत जनेत ऐहैं साजि कै ।
जमधार सरिस निहारि सब नर नारि चलिहहिँ भाजि कै ॥
गजअजिन दिव्य दुकूल जोरत सखी हँसि मुख मोरि कै ।
कोउ प्रगट कोउ हिय कहहि 'मिलवत अमिअ माहुर घोरि कै ॥६३॥

तुमहिँ सहित असवार बसह जब होइहहिँ ।
निरखि नगर नर नारि बिहँसि मुख गोइहहिँ ॥६४॥
वटु करि कोटि कुतर्क जथारुचि बोलइ ।
अचल-सुता-मन-अचल बयारि कि डोलइ ? ॥६५॥
साँच सनेह साँचि रुचि जो हठि फेरइ ।
सावनसरित सिंधुरुख सूप सोँ घेरइ ॥६६॥
मनि बिनु फनि, जलहीन मीन तनु त्यागइ ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ॥६७॥
करनकटुक वटु वचन बिसिख सम हिय हए ।
अरुन नयन चढ़ि भ्रुकुटि, अधर फरकत भए ॥६८॥
बोली फिरि लखि सखिहि काँपु तनु थरथर ।
"आलि ! बिदा करु वटुहि बेगि, बड़ बरबर ॥६९॥
कहुँ तिय होहिँ सयानि सुनहिँ सिख राउरि ? ।
बौरेहि के अनुराग भइउँ बड़ि बाउरि ॥७०॥
दोसनिधान, इसानु सत्य सबु भाषेउ ।
मेटि को सकइ सो आँकु जो बिधि लिखि राखेउ ॥७१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को करि वादु बिबादु बिषादु बढ़ावइ ? ।
मीठ ताहि कवि कहहिँ जाहि जोइ भावइ ॥७२॥
भइ बड़ि बार आलि कहुँ काज सिधारहि ।
बकि जनि उठहि बहोरि, कुजुगुति सँवारहि ॥७३॥

जनि कहहि कछु बिपरीत जानत प्रीतिरीति न बात की ।
सिव-साधु-निंदकु मंद अति जो सुनै सोउ बड़ पातकी ॥
सुनि बचन सोधि सनेहु तुलसी साँच अबिचल पावनो ।
भए प्रगट करुनासिंधु संकर, भाल चंद्र सुहावनो ॥७४॥

सुंदर गौर सरीर भूति भलि सोहइ ।
लोचन भाल बिसाल बदनु मनु मोहइ ॥७५॥
सैलकुमारि निहारि मनोहर मूरति ।
सजल नयन, हिय हरषु, पुलक तनु पूरति ॥७६॥
पुनि पुनि करै प्रनाम, न आवत कछु कहि ।
"देखौं सपन कि सौंतुख ससिसेखर, सहि ।" ॥७७॥
जैसे जनमदरिद्र महामनि पावइ ।
पेखत प्रगट प्रभाउ प्रतीति न आवइ ॥७८॥
सफल मनोरथ भयउ, गौरि सोहइ सुठि ।
घर तेँ खेलन मनहुँ अबहिँ आई उठि ॥७९॥
देखि रूप अनुराग महेस भए बस ।
कहत बचन जनु सानि सनेह-सुधा -रस ॥८०॥
"हमहिँ आजु लगि कनउड़ काहु न कीन्हेउ ।
पारबती तप प्रेम मोल मोहिँ लीन्हेउ ॥८१॥
अब जो कहहु सो करउँ बिलंब न यहि घरि ।"
सुनि महेस मृदु बचन पुलकि पाँयन परि ॥८२॥

परि पाँय ससिमुख कहि जनायो आप बाप-अधीनता ।
परितोषि गिरिजहिँ चले बरनत प्रीति नीति प्रबीनता ॥
हर हृदय धरि घर गौरि गवनी, कीन्ह बिधि मनभावनो ।
आनंद प्रेम समाज मंगलगान बाजु बधावनो ॥८३॥

सिव सुमिरे मुनि सात आइ सिर नाइन्हि ।
कीन्ह संभु सनमानु जनमफल पाइन्हि ॥८४॥
"सुमिरहिँ सुकृत तुम्हहिँ जन तेइ सुकृतीबर ।
नाथ जिन्हहिँ सुधि करिअ तिन्हहिँ सम तेइ, हर !" ॥८५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनि मुनि-बिनय महेस परम सुख पायउ ।
कथा प्रसंग मुनीसन्ह सकल सुनायउ ।।८६।।
"जाहु हिमाचल-गेह प्रसंग चलायहु ।
जो मन मान तुम्हार तौ लगन लिखायहु ।।८७।।
अरुंधती मिलि मैनहि बात चलाइहि ।
नारि कुसल इहि काजु, काजु बनि आइहि" ।।८८।।
"दुलहिनि उमा, ईस बर, साधक ए मुनि ।
बनिहि अवसि यहु काज" गगन भइ अस धुनि ।।८९।।
भयउ अकनि आनंद महेस मुनीसन्ह ।
देहिं सुलोचनि सगुन कलस लिए सीसन्ह ।।९०।।
सिव सों कहे दिन ठाउँ बहोरि मिलनु जहँ ।
चले मुदित मुनिराज गए गिरिवर पहँ ।।९१।।

गिरिगेह गे अति नेह आदर पूजि पहुनाई करी ।
घरबात घरनि समेत कन्या आनि सब आगे धरी ।।
सुख पाइ बात चलाइ सुदिनु सोधाइ गिरिहिं सिखाइ कै ।
ऋषि सात प्रातहिं चले प्रमुदित ललित लगन लिखाइ कै ।।९२।।

बिप्रबृंद सन्मानि पूजि कुलगुरु सुर ।
परेउ निसानहिं घाउ, चाउ चहुँ दिसि पुर ।।९३।।
गिरि, बन, सरित, सिंधु, सर, सुनइ जो पायउ ।
सब कहँ गिरिवर-नायक नेवति पठायउ ।।९४।।
धरि धरि सुंदर बेष चले हरषित हिए ।
कँचन चीर उपहार हार मनिगन लिए ।।९५।।
कहेउ हरषि हिमवान बितान बनावन ।
हरषित लगीं सुवासिनि मंगल गावन ।।९६।।
तोरन कलस चँवर धुज बिबिध बनाइन्हि ।
हाट पटोरन्हि छाय, सफल तरु लाइन्हि ।।९७।।
गौरी नैहर केहि बिधि कहहुँ बखानिय ।
जनु ऋतुराज मनोज-राज रजधानिय ।।९८।।

जनु राजधानी मदन की बिरची चतुर बिधि और ही ।
रचना बिचित्र बिलोकि लोचन बिथक ठौरहि ठौर ही ।।
यहि भाँति ब्याहु समाजु सजि गिरिराजु मगु जोवन लगे ।
तुलसी लगन लै दीन्ह मुनिन्ह महेस आनँद-रँग-मगे ।।९९।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेगि बुलाइ बिरंचि बँचाइ लगन तव।
कहेन्हि 'बियाहन चलहु बुलाइ अमर सब' ॥१००॥
बिधि पठए जहँ तहँ सब सिवगन धावन।
सुनि हरषहिँ सुर कहहिँ निसान बजावन ॥१०१॥
रचहिँ बिमान बनाइ सगुन पावहिँ भले।
निज निज साजु समाजु साजि सुरगन चले ॥१०२॥
मुदित सकल सिवदूत भूतगन गाजहि।
सूकर, महिष, स्वान, खर बाहन साजहि ॥१०३॥
नाचहिँ नाना रंग, तरंग बढ़ावहिँ।
अज, उलूक, बक नाद गीत गन गावहिँ ॥१०४॥
रमानाथ, सुरनाथ, साथ सब सुरगन।
आए जहँ बिधि संभु देखि हरषे मन ॥१०५॥
मिले हरिहि हर हरषि सुभाखि सुरेसहिँ।
सुर निहारि सनमानेउ मोदु महेसहि ॥१०६॥
बहु बिधि बाहन जान बिमान बिराजहि।
चली बरात निसानु गहागह बाजहिँ ॥१०७॥
बाजहिँ निसान, सुगान नभ, चढ़ि बसह बिधुभूषन चले।
बरषहिँ सुमन जय जय करहिँ सुर, सगुन सुभ मंगल भले॥
तुलसी बराती भूत प्रेत पिसाच पसुपति सँग लसे।
गजछाल, ब्याल, कपालमाल बिलोकि बर सुर हरि हँसे ॥१०८॥
बिबुध बोलि हरि कहेउ निकट पुर आयउ।
आपन आपन साज सबहि बिलगायउ ॥१०९॥
प्रमथनाथ के साथ प्रमथगन राजहिँ।
बिबिध भाँति मुख, बाहन, बेष बिराजहिँ ॥११०॥
कमठ खपर मढ़ि खाल निसान बजावहिँ।
नरकपाल जल भरि भरि पियहिँ पियावहिँ ॥१११॥
बर अनुहरत बरात बनी हरि हँसि कहा।
सुनि हिय हँसत महेस, केलि कौतुक महा ॥११२॥
बड़ बिनोद मग मोद न कछु कहि आवत।
जाइ नगर नियरानि बरात बजावत ॥११३॥
पुर खरभर, उर हरषेउ अचलु-अखंडलु।
परब उदधि उमगेउ जनु लखि बिधुमंडल ॥११४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रमुदित गे अगवान बिलोकि बरातहि ।
भभरे, बनइ न रहत, न बनइ परातहि ॥११५॥
चले भाजि गज बाजि फिरहिँ नहिँ फेरत ।
बालक भभरि भुलान फिरहिँ घर हेरत ॥११६॥
दीन्ह जाइ जनवास सुपास किए सब ।
घर घर बालक बात कहन लागे तब ॥११७॥
"प्रेत बैताल बराती, भूत भयानक ।
बरद चढ़ा बर बाउर, सबइ सुबानक ॥११८॥
कुसल करइ करतार कहहिँ हम साँचिय ।
देखब कोटि बियाह जियत जो बाँचिय" ॥११९॥
समाचार सुनि सोचु भयउ मन मैनहिँ ।
नारद के उपदेस कवन घर गे नहिँ ? ॥१२०॥
घरघाल-चालक कलहप्रिय कहियत परम परमारथी ।
तैसी बरेखी कीन्हि पुनि मुनि सात स्वारथ सारथी ॥
उर लाइ उमहिँ अनेक बिधि, जलपति जननि दुख मानई ।
हिमवान कहेउ "इसान महिमा अगम, निगम न जानई" ॥१२१॥
सुनि मैना भइ सुमन, सखी देखन चली ।
जहँ तहँ चरचा चलइ हाट चौहट गली ॥१२२॥
श्रीपति, सुरपति, बिबुध बात सब सुनि सुनि ।
हँसहिँ कमलकर जोरि, मोरि मुख पुनि पुनि ॥१२३॥
लखि लौकिक गति संभु जानि बड़ सोहर ।
भए सुंदर सतकोटि मनोज मनोहर ॥१२४॥
नील निचोल छाल भइ, फनि मनिभूषन ।
रोम रोम पर उदित रूपमय पूषन ॥१२५॥
गन भए मंगल बेष मदन-मनमोहन ।
सुनत चले हिय हरषि नारि नर जोहन ॥१२६॥
संभु सरद राकेस, नखतगन सुरगन ।
जनु चकोर चहुँ ओर बिराजहिँ पुरजन ॥१२७॥
गिरिबर पठए बोलि लगन बेरा भई ।
मंगल अरघ पाँवड़े देत चले लई ॥ १२८॥
होहिँ सुमंगल सगुन, सुमन बरषहिँ सुर ।
गहगह गान निसान मोद मंगल पुर ॥१२९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिलिहि पँवरि सुसामध भा सुखदायक ।
इत विधि उत हिमवान सरिस सब लायक ।।१३०।।
मनि चामीकर चारु थार सजि आरति ।
रति सिहाहिँ लखि रूप, गान सुनि भारति ।।१३१।।
भरी भाग अनुराग पुलक तनु मुद मन ।
मदनमत्त गजगवनि चलीं बर परिछन ।।१३२।।
बर बिलोकि बिधुगौर सु अंग उजागर ।
करति आरती सासु मगन सुखसागर ।।१३३।।

सुखसिंधु मगन उतारि आरति करि निछावरि निरखि कै ।
मगु अरघ बसन प्रसून भरि लेइ चली मंडप हरषि कै ।
हिमवान दीन्हेउ उचित आसन सकल सुर सनमानि कै ।
तेहि समय साज समाज सब राखे सुमंडपु आनि कै ।।१३४।।

अरघ देइ मनिआसन बर बैठायउ ।
पूजि कीन्ह मधुपर्क, अमी अँचवायउ ।।१३५।।
सपत ऋषिन्ह बिधि कहेउ, बिलंब न लाइय ।
लगन बेर भइ बेगि बिधान बनाइय ।।१३६।।
थापि अनल हर बरहि बसन पहिरायउ ।
आनहु दुलहिनि बेगि समउ अब आयउ ।।१३७।।
सखी सुवासिनि संग गौरि सुठि सोहति ।
प्रगट रूपमय मूरति जनु जग मोहति ।।१३८।।
भूषन बसन समय सम सोभा सो भली ।
सुखमा बेलि नवल जनु रूपफलनि फली ।।१३९।।
कहहु काहि पटतरिय गौरि गुनरूपहिँ ।
सिंधु कहिय केहि भाँति सरिस सर कूपहिँ ।।१४०।।
आवत उमहिँ बिलोकि सीस सुर नावहिँ ।
भये कृतारथ जनम जानि सुख पावहिँ ।।१४१।।
बिप्र बेद धुनि करहिँ सुभासिष कहि कहि ।
गान निसान सुमन झरि अवसर लहि लहि ।।१४२।।
बर दुलहिनिहि बिलोकि सकल मन रहसहिँ ।
साखोच्चार समय सब सुर मुनि बिहँसहिँ ।।१४३।।
लोक-बेद-बिधि कीन्ह लीन्ह जल कुस कर ।
कन्यादान संकलप कीन्ह धरनीधर ।।१४४।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूजे कुलगुरु देव, कलसु सिल सुभ धरि।
लावा होम विधान बहुरि भाँवरि परि ॥१४५॥
बंदन बंदि, ग्रंथिविधि करि, ध्रुव देखेउ।
भा बिबाह सब कहहिँ जनमफल पेखेउ ॥१४६॥

पेखेउ जनमफल भा बियाह, उछाह उमगहिँ दस दिसा।
नीसान गान प्रसून झरि तुलसी सुहावनि सो निसा॥
दाइज वसन मनि धेनु धनु हय गय सुसेवक सेवकी।
दीन्हीं मुदित गिरिराज जे गिरिजहिँ पियारी पेवँ की ॥१४७॥

बहुरि बराती मुदित चले जनवासहिँ।
दूलह दुलहिनि गे तब हास अवासहिँ ॥१४८॥
रोकि द्वार मैना तब कौतुक कीन्हेउ।
करि लहकौरि गौरि हर बड़ सुख दीन्हेउ ॥१४९॥
जुआ खेलावत गारि देहिँ गिरिनारिहिँ।
अपनी ओर निहारि प्रमोद पुरारिहिँ ॥१५०॥
सखी सुवासिनि, सासु पाउ सुख सब विधि।
जनवासहिँ बर चलेउ सकल मंगलनिधि ॥१५१॥
भइ जेवनार बहोरि बुलाइ सकल सुर।
बैठाए गिरिराज धरम-धरनी-धुर ॥१५२॥
परुसन लगे सुवार, बिबुध जन जेंवहिँ।
देहिँ गारि बर नारि मोद मन भेंवहिं ॥१५३॥
करहिँ सुमंगल गान सुघर सहनाइन्ह।
जेइँ चले हर दुहिन सहित सुर भाइन्ह ॥१५४॥
भूधर भोर बिदा करि साज सजायउ।
चले देव सजि जान निसान बजायउ ॥१५५॥
सनमाने सुर सकल दीन्ह पहिरावनि।
कीन्हि बड़ाई विनय सनेह सुहावनि ॥१५६॥
गहि सिवपद कह सासु बिनय मृदु मानवि।
गौरि सजीवनि मूरि मोरि जिय जानवि ॥१५७॥
भेंटि बिदा करि बहुरि भेंटि पहुँचावहिँ।
हुँकरि हुँकरि सु लवाइ धेनु जनु धावहिँ ॥१५८॥
उमा मातुमुख निरखि नयन जल मोचहिँ।
'नारि जनमु जग जाय' सखी कहि सोचहिँ ॥१५९॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भेंटि उमहिँ गिरिराज सहित सुत परिजन।
बहु समुझाइ बुझाइ फिरे बिलखत मन ॥१६०॥
संकर गौरि समेत गए कैलासहिँ।
नाइ नाइ सिर देव चले निज बासहिँ ॥१६१॥
उमा महेस बियाह-उछाह भुवन भरे।
सबके सकल मनोरथ बिधि पूरन करे ॥१६२॥
प्रेमपाट पटडोरि गौरि-हर-गुन मनि।
मंगल हार रचेउ कबि मति मृगलोचनि ॥१६३॥
मृगनयनि बिधुबदनी रचेउ मनि मंजु मंगल हार सो।
उर धरहु जुवती जन बिलोकि तिलोक सोभा-सार सो।
कल्यान काज उछाह ब्याह सनेह सहित जो गाइहैँ।
तुलसी उमा-संकर-प्रसाद प्रमोद मन प्रिय पाइहैँ ॥१६४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानकी-मंगल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानकी-मंगल

मंगल छंद

गुरु गनपति गिरिजापति गौरि गिरापति ।
सारद सेष सुकवि स्रुति संत सरल मति ॥ १ ॥
हाथ जोरि करि बिनय सबहिँ सिर नावौं ।
सिय-रघुबीर-बिबाहु जथामति गावौं ॥ २ ॥
सुभ दिन रच्यौ स्वयंबर मंगलदायक ।
सुनत स्रवन हिय बसहिँ सीय-रघुनायक ॥ ३ ॥
देस सुहावन पावन बेद बखानिय ।
भूमितिलक सम तिरहुत त्रिभुवन जानिय ॥ ४ ॥
तहँ बस नगर जनकपुर परम उजागर ।
सीय लच्छि जहँ प्रगटी सब सुखसागर ॥ ५ ॥
जनक नाम तेहि नगर बसै नरनायक ।
सब गुन अवधि, न दूसर पटतर लायक ॥ ६ ॥
भयउ न होइहि, है न, जनक सम नरवइ ।
सीय सुता भै जासु सकल मंगलमइ ॥ ७ ॥
नृप लखि कुँवरि सयानि बोलि गुरु परिजन ।
करि मत रचेउ स्वयंबर सिवधनु धरि पन ॥ ८ ॥

पन धरेउ सिवधनु रचि स्वयंबर अति रुचिर रचना बनी ।
जनु प्रगटि चतुरानन देखाई चतुरता सब आपनी ॥
पुनि देस देस सँदेस पठयउ भूप सुनि सुख पावहीं ।
सब साजि साजि समाज राजा जनक-नगरहिँ आवहीं ॥ ९ ॥

रूप सील बय बंस बिरुद बल दल भले ।
मनहुँ पुरंदर निकर उतरि अवनी चले ॥१०॥
दानव देव निसाचर किन्नर अहिगन ।
सुनि धरि धरि नृपबेष चले प्रमुदित मन ॥ ११॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक चलहिँ, एक बीच, एक पुर पैठहिँ ।
एक धरहिँ धनु धाइ नाइ सिर बैठहिँ ॥१२॥
रंगभूमि पुर कौतुक एक निहारहिँ ।
ललकि लोभाहिँ नयन मन, फेरि न पारहिँ ॥१३॥
जनकहिँ एक सिहाहिँ देखि सनमानत ।
बाहर भीतर भीर न बनै बखानत ॥१४॥
गान निसान कोलाहल कौतुक जहँ तहँ ।
सीय-बियाह-उछाह जाइ कहि का पहँ ? ॥१५॥
गाधिसुवन तेहि अवसर अवध सिधायउ ।
नृपति कीन्ह सनमान भवन लै आयउ ॥१६॥
पूजि पहुनई कीन्हि पाइ प्रिय पाहुन ।
कहेउ भूप " मोहि सरिस सुकृत किए काहु न ॥१७॥
'काहू न कीन्हेउ सुकृत' सुनि मुनि मुदित नृपहिँ बखानहीं ।
महिपाल मुनि को मिलनसुख महिपाल-मुनि-मन जानहीं ॥
अनुराग भाग सोहाग सील सरूप बहु भूषन भरीं ।
हिय हरषि सुतन्ह समेत रानी आइ ऋषिपायन्ह परीं ॥१८॥
कौसिक दीन्हि असीस सकल प्रमुदित भईं ।
सींची मनहुँ सुधारस कलपलता नई ॥१९॥
रामहिँ भाइन्ह सहित जबहिँ मुनि जोहेउ ।
नैन नीर, तनु पुलक, रूप मन मोहेउ ॥२०॥
परसि कमलकर सीस हरषि हिय लावहिँ ।
प्रेमपयोधि मगन मुनि, पार न पावहिँ ॥२१॥
मधुर मनोहर मूरति सादर चाहहिँ ।
बार बार दसरथ के सुकृत सराहहिँ ॥२२॥
राउ कहेउ कर जोरि सुवचन सुहावन ।
"भयउँ कृतारथ आजु देखि पद पावन ॥२३॥
तुम्ह प्रभु पूरनकाम, चारि-फल-दायक ।
तेहि ते बूझत काजु डरौं मुनिनायक" ॥२४॥
कौसिक सुनि नृपबचन सराहेउ राजहिँ ।
धर्मकथा कहि कहेउ गयउ जेहि काजहिँ ॥२५॥
जबहिँ मुनीस महीसहिँ काज सुनायउ ।
भयउ सनेह-सत्य-बस उतर न आयउ ॥२६॥
आयउ न उतरु बसिष्ठ लखि बहु भाँति नृप समुझायऊ ।
कहि गाधिसुत तपतेज कछु रघुपतिप्रभाउ जनायऊ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरजु धरेउ गुरुबचन सुनि कर जोरि कह कोसलधनी ।
"करुनानिधान सुजान प्रभु सों उचित नहिँ विनती घनी ॥२७॥

नाथ मोहिँ बालकन्ह सहित पुर परिजन ।
राखनहार तुम्हार अनुग्रह घर वन" ॥२८॥
दीन वचन वहु भाँति भूप मुनि सन कहे ।
सौंपि राम अरु लखन पाँयपंकज गहे ॥२९॥
पाइ मातु-पितु-आयसु गुरु पाँयन परे ।
कटि निषंग पट पीत, करनि सर धनु धरे ॥३०॥
पुरवासी नृप रानिन संग दिये मन ।
बेगि फिरेउ करि काज कुसल रघुनंदन ॥३१॥
ईस मनाइ असीसहिँ जय जस पावहु ।
न्हात खसै जनि वार, गहरु जनि लावहु ॥३२॥
चलत सकल पुरलोग वियोग विकल भए ।
सानुज भरत सप्रेम राम पाँयन नए ॥३३॥
होहिँ सगुन सुभ मंगल जनु कहि दीन्हेउ ।
राम लषन मुनि साथ गवन तब कीन्हेउ ॥३४॥
स्यामल गौर किसोर मनोहरता निधि ।
सुखमा सकल सकेलि मनहुँ विरचे विधि ॥३५॥

विरचे विरंचि वनाइ बाँची रुचिरता रंचौ नहीं ।
दसचारि भुवन निहारि देखि विचारि नहिँ उपमा कही ।
ऋषि संग सोहत जात मगु छवि बसति सो तुलसी हिए ।
कियो गमन जनु दिननाथ उत्तर संग मधु माधव लिए ॥३६॥

गिरि तरु बेलि सरित सर विपुल विलोकहिँ ।
धावहिँ बाल सुभाय, विहँग मृग रोकहिँ ॥३७॥
सकुचहिँ मुनिहि सभीत वहुरि फिरि आवहिँ ।
तोरि फूल फल किसलय माल बनावहिँ ॥३८॥
देखि विनोद प्रमोद प्रेम कौसिक उर ।
करत जाहिँ घन छाँह, सुमन बरषहिँ सुर ॥३९॥
वधी ताड़का; राम जानि सब लायक ।
बिद्या-मंत्र-रहस्य दिए मुनिनायक ॥४०॥
मग-लोगन्ह के करत सफल मन लोचन ।
गए कौसिक आस्रमहिँ विप्र-भय-मोचन ॥४१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारि निसाचर-निकर जज्ञ करवायउ ।
अभय किए मुनिबृंद जगत जसु गायउ ।।४२।।
बिप्र साधु सुरकाज महामुनि मन धरि ।
रामहिँ चले लिवाइ धनुषमख मिसु करि ।।४३।।
गौतमनारि उधारि पठै पतिधामहिँ ।
जनकनगर लै गयउ महामुनि रामहिँ ।।४४।।

लै गयउ रामहिँ गाधिसुवन बिलोकि पुर हरषे हिए ।
सुनि राउ आगे लेन आयउ सचिव गुरु भूसुर लिए ।।
नृप गहे पाँय, असीस पाई, मान आदर अति किए ।
अवलोकि रामहिँ अनुभवत मनु ब्रह्मसुख सौगुन दिए ।।४५।।

देखि मनोहर मूरति मन अनुरागेउ ।
बँधेउ सनेह बिदेह, बिराग बिरागेउ ।।४६।।
प्रमुदित हृदय सराहत भल भवसागर ।
जहँ उपजहिँ अस मानिक, बिधि बड़ नागर ।।४७।।
पुन्यपयोधि मातुपितु ए सिसु सुरतरु ।
रूप-सुधा-सुख देत नयन अमरनि बरु ।।४८।।
"केहि सुकृती के कुँवर" कहिय मुनिनायक ।
"गौर स्याम छबिधाम धरे धनुसायक ।।४९।।
बिषयबिमुख मन मोर सेइ परमारथ ।
इन्हहिँ देखि भयो मगन जानि बड़ स्वारथ "।।५०।।
कहेउ सप्रेम पुलकि मुनि सुनि, "महिपालक !
ए परमारथरूप ब्रह्ममय बालक ।।५१।।
पूषन-बंस-विभूषन दसरथनंदन ।
नाम राम अरु लषन सुरारिनिकंदन" ।।५२।।
रूप सील वय बंस राम परिपूरन ।
समुझि कठिन पन आपन लाग बिसूरन ।।५३।।

लागे बिसूरन समुझि पन मन वहुरि धीरज आनि कै ।
लै चले देखन रंगभूमि अनेक बिधि सनमानि कै ।।
कौसिक सराही रुचिर रचना, जनक सुनि हरषित भए ।
तब राम लषन समेत मुनि कहँ सुभग सिंहासन दए ।।५४।।

राजत राजसमाज जुगल रघुकुलमनि ।
मनहुँ सरदविधु उभय, नखत धरनीधनि ।।५५।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काकपच्छ सिर, सुभग सरोरुह लोचन।
गौर स्याम सत-कोटि-काम-मद-मोचन ॥५६॥
तिलक ललित सर, भ्रुकुटी काम-कमानै।
स्रवन विभूषन रुचिर देखि मन मानै ॥५७॥
नासा चिबुक कपोल अधर रद सुंदर।
बदन सरद-विधु-निंदक सहज मनोहर ॥५८॥
उर विसाल बृषकंध सुभग भुज अति बल।
पीत वसन उपवीत, कंठ मुकुताफल ॥५९॥
कटि निषंग, कर-कमलन्हि धरे धनुसायक।
सकल अंग मनमोहन जोहन लायक ॥६०॥
राम-लषन छवि देखि मगन भए पुरजन।
उर आनँद, जल लोचन, प्रेम पुलक तन ॥६१॥
नारि परस्पर कहहिँ देखि दुहुँ भाइन्ह।
"लहेउ जनम फल आजु जनमि जग आइन्ह ॥६२॥

जग जनमि लोचनलाहु पाए" सकल सिवहिँ मनावहीं।
"बर मिलौ सीतहि साँवरो हम हरषि मंगल गावहीं" ॥
एक कहहिँ 'कुँवर किसोर कुलिस-कटोर सिवधनु है महा।
किमि लेहिँ बाल मराल मंदर नृपहिँ अस काहु न कहा" ॥६३॥

भे निरास सब भूप विलोकत रामहिँ।
"पन परिहरि सिय देब जनक बर स्यामहिँ" ॥६४॥
कहहिँ एक "भलि बात, ब्याहु भल होइहिँ।
बर दुलहिनि लगि जनक अपन पन खोइहिँ" ॥६५॥
सुचि सुजान नृप कहहिँ "हमहि अस सूझइ।
तेज प्रताप रूप जहँ तहँ बल बूझइ ॥६६॥
चितइ न सकहु रामतन, गाल बजावहु।
विधि बस बलउ लजान, सुमति न लजावहु ॥६७॥
अवसि राम के उठत सरासन टूटिहि।
गवनिहि राजसमाज नाक असि फूटिहि ॥६८॥
कस न पियहु भरि लोचन रूप-सुधा-रसु।
करहु कृतारथ जनम, होहु कस नरपसु" ॥६९॥
दुहुँ दिसि राजकुमार बिराजत मुनिवर।
नील पीत पाथोज बीच जनु दिनकर ॥७०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काकपच्छ ऋषि परसत पानि सरोजनि।
लाल कमल जनु लालत बालमनोजनि ॥७१॥

"मनसिज मनोहर मधुर मूरति कस न सादर जोवहू।
बिनु काज राजसमाज महँ तजि लाज आपु बिगोवहू" ॥
सिख देइ भूपनि साधु भूप अनूप छवि देखन लगे।
रघुबंस कैरवचंद चितइ चकोर जिमि लोचन ठगे ॥७२॥

पुर-नर-नारि निहारहिँ रघुकुल दीपहिँ।
दोसु नेहवस देहिँ बिदेह महीपहिँ ॥७३॥
एक कहहि "भल भूप, देहु जनि दूषन।
नृप न सोह बिनु बचन, नाक बिनु भूषन ॥७४॥
हमरे जान जनेस बहुत भल कीन्हेउ।
पन-मिस लोचनलाहु सबन्हि कहँ दीन्हेउ ॥७५॥
अस सुकृती नरनाहु जो मन अभिलाषिहि।
सो पुरइहि जगदीस पैज पन राखिहि ॥७६॥
प्रथम सुनत जो राउ राम गुन-रूपहिँ।
बोलि ब्याहि सिय देत दोष नहिँ भूपहिँ ॥७७॥
अब करि पैज पंच महँ जो पन त्यागै।
बिधिगति जानि न जाइ, अजसु जग जागै ॥७८॥
अजहुँ अवसि रघुनंदन चाप चढ़ाउब।
ब्याह उछाह सुमंगल त्रिभुवन गाउब" ॥७९॥
लागि झरोखन्ह झाँकहिँ भूपतिभामिनि।
कहत बचन रद लसहिँ दमक जनु दामिनि ॥८०॥

जनु दमक दामिनि, रूप रति मृदु निदरि सुंदरि सोहहीं।
मुनि ढिग देखाए सखिन्ह कुँवर बिलोकि छवि मन मोहहीं ॥
सियमातु हरषी निरखि सुखमा अति अलौकिक राम की।
हिय कहति 'कहँ धनु कुँवर कहँ, बिपरीत गति बिधि बाम की' ॥८१॥

कहि प्रिय बचन सखिन्ह सन रानि बिसूरति।
"कहाँ कठिन सिवधनुष कहाँ मृदु मूरति ॥८२॥
जो बिधि लोचन अतिथि करत नहिँ रामहिँ।
तौ कोउ नृपहि न देत दोष परिनामहिँ ॥८३॥
अब असमंजस भयउ न कछु कहि आवै"।
रानिहि जानि ससोच सखी समुझावै ॥८४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"देवि ! सोच परिहरिय हरष हिय आनिय ।
चाप चढ़ाउव राम वचन फुर मानिय ॥८५॥
तीनि काल कर ज्ञान कोसिकहि करतल ।
सो कि स्वयंवर आनहि वालक विनु वल ?" ॥८६॥
मुनिमहिमा सुनि रानिहिँ धीरजु आयउ ।
तव सुवाहु-सूदन-जसु सखिन सुनायउ ॥८७॥
सुनि जिय भयउ भरोस रानि हिय हरखइ ।
वहुरि निरखि रघुवरहिँ प्रेम मन करखइ ॥८८॥
नृप रानी पुरलोग रामतन चितवहिँ ।
मंजु मनोरथ-कलस भरहिँ अरु रितवहिँ ॥८९॥

रितवहिँ भरहिँ धनु निरखि छिनु छिन निरखि रामहिँ सोचहीं ।
नर नारि हरष-बिषाद-वस हिय सकल सिवहिँ सँकोचहीं ।
तब जनक-आयसु पाइ कुलगुरु जानकिहिँ लै आयऊ ।
सिय रूपरासि निहारि लोचन-लाहु लोगन्हि पायऊ ॥९०॥

मंगल भूषन वसन मंजु तन सोहहिँ ।
देखि मूढ़ महिपाल मोहवस मोहहिँ ॥९१॥
रूपरासि जेहि ओर सुभाय निहारइ ।
नील-कमल-सर-श्रेनि मयन जनु डारइ ॥९२॥
छिनु सीतहिँ छिनु रामहिँ पुरजन देखहिँ ।
रूप सील वय बंस विसेष विसेखहिँ ॥९३॥
राम दीख जव सीय, सीय रघुनायक ।
दोउ तन तकि तकि मयन सुधारत सायक ॥९४॥
प्रेम प्रमोद परस्पर प्रगटत गोपहिँ ।
जनु हिरदय गुन-ग्राम-थूनि थिर रोपहिँ ॥९५॥
रामसीय वय, समौ, सुभाय सुहावन ।
नृप जोवन छवि पुरइ चहत जनु आवन ॥९६॥
सो छवि जाइ न वरनि देखि मन मानै ।
सुधापान करि मूक कि स्वाद वखानै ? ॥९७॥
तब विदेहपन बंदिन्ह प्रगटि सुनायउ ।
उठे भूप आमरषि सगुन नहिँ पायउ ॥९८॥

नहिँ सगुन पायेउ रहे मिसु करि एक धनु देखन गए ।
टकटोरि कपि ज्यौं नारियरु सिर नाइ सब बैठत भए ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इक करहिँ दाप, न चाप सज्जन-बचन-जिमि टारे टरैं ।
नृप नहुष ज्यों सब के बिलोकत बुद्धिबल बरबस हरैं ॥९९॥
देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।
नृपसमाज जनु तुहिन बनजबन मारेउ ॥१००॥
कौसिक जनकहिँ कहेउ "देहु अनुसासन ।
देखि भानु-कुल-भानु इसानु-सरासन" ॥१०१॥
"मुनिवर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलहिँ ।
तदपि उचित आचरत पाँच भल बोलहिँ ॥१०२॥
बानु बानु जिमि गयउ, गवहिँ दसकंधरु ।
को अवनीतल इन्ह सम बीरधुरंधरु ॥१०३॥
पारबती-मन सरिस अचल धनुचालक ।
हहिँ पुरारि तेउ एक-नारिब्रत-पालक ॥१०४॥
सो धनु कहि अवलोकन भूप-किसोरहिँ ।
भेद कि सिरिस-सुमन-कन कुलिस कठोरहिँ ॥१०५॥
रोम रोम छबि निदति सोम मनोजनि ।
देखिय मूरति, मलिन करिय मुनि सो जनि" ॥१०६॥
मुनि हँसि कहेउ "जनक, यह मूरति सो हइ ।
सुमिरत सकृत मोहमल सकल बिछोहइ ॥१०७॥

सब मल-बिछोहनि जानि मूरति जनक कौतुक देखहू ।
धनुसिंधु नृप-बल-जल बढ़्यो रघुबरहिँ कुंभज लेखहू ॥"
सुनि सकुचि सोचहिँ जनक, गुरु-पद बंदि रघुनंदन चले ।
नहिँ हरष हृदय बिषाद कछु भए सगुन सुभ मंगल भले ॥१०८॥

बरिसन लगे सुमन सुर, दुंदुभि बाजहिँ ।
मुदित जनक पुर-परिजन, नृपगन लाजहिँ ॥१०९॥
महि महिधरनि लषन कह बलहिँ बढ़ावन ।
राम चहत सिव-चापहिँ चपरि चढ़ावन ॥११०॥
गए सुभाय राम जब चाप समीपहिँ ।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपहिँ ॥१११॥
कहि न सकति कछु सकुचनि, सिय हिय सोचइ ।
गौरि गनेस गिरीसहि सुमिरि सँकोचइ ॥११२॥
होति बिरह-सर-मगन देखि रघुनाथहिँ ।
फरकि बाम भुज नयन देहिँ जनु हाथहिँ ॥११३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धीरज धरति, सगुन बल रहत सो नाहिन।
बर किसोर धनु घोर, दइउ नहिँ दाहिन ॥११४॥
अंतरजामी राम मरम सब जानेउ।
धनु चढ़ाइ कौतुकहिँ कान लागि तानेउ ॥११५॥
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भंजेउ।
जनु मृग-राज - किसोर महा गज गंजेउ ॥११६॥

गंजेउ सो गर्जेउ घोर धुनि सुनि भूमि भूधर लरखरे।
रघुबीर-जस-मुकुता बिपुल सब भुवन पटु पेटक भरे॥
हिय मुदित, अनहित रुदित मुख, छबि कहत कबि धनुजाग की।
जनु मोर चक्क चकोर कैरव सघन कमल तड़ाग की ॥११७॥

नभ पुर मंगल गान निसान गहागहे।
देखि मनोरथ सुरतरु ललित लहालहे ॥११८॥
तब उपरोहित कहेउ, सखी सब गावत।
चलीँ लेवाइ जानकिहिँ भा मनभावत ॥११९॥
कर-कमलनि जयमाल जानकी सोहइ।
बरनि सकै छबि अतुलित अस कबि को हइ? ॥१२०॥
सीय सनेह-सकुच-बस पियतन हेरइ।
सुरतरु रुख सुरबेलि पवन जनु फेरइ ॥१२१॥
लसत ललित करकमल माल पहिरावत।
कामफंद जनु चंदहि बनज फँदावत ॥१२२॥
राम-सीय छबि निरुपम, निरुपम सो दिनु।
सुखसमाज लखि रानिन्हि आनँद छिनु छिनु ॥१२३॥
प्रभुहि माल पहिराइ जानकिहिँ लै चली।
सखी मनहुँ बिधु-उदय मुदित कैरव कली ॥१२४॥
बरषहिँ बिबुध प्रसून हरषि कहि जय जय।
सुख सनेह भरे भुवन राम गुरु पहिं गय ॥१२५॥
गए राम गुरु पहिँ, राउ रानी नारि नर आनँद भरे।
जनु तृषित करि-करिनी-निकर सीतल सुधासागर परे॥
कौसिकहिँ पूजि प्रसंसि आयसु पाइ नृप सुख पायऊ।
लिखि लगन तिलकसमाज सजि कुलगुरुहिँ अवध पठायऊ॥१२६॥

गुनिगन बोलि कहेउ नृप माँड़व छावन।
गावहिँ गीत सुवासिनि, बाज बधावन ॥१२७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीय-राम-हित पूजहिँ गौरि गनेसहिँ ।
परिजन पुरजन सहित प्रमोद नरेसहिँ ।।१२८।।
प्रथम हरदि बंदन करि मंगल गावहिँ ।
करि कुलरीति, कलस थपि तैलु चढ़ावहिँ ।।१२९।।
गे मुनि अवध, विलोकि सुसरित नहायउ ।
सतानंद सत-कोटि-नाम-फल पायउ ।।१३०।।
नृप सुनि आगे आइ पूजि सनमानेउ ।
दीन्हि लगन कहि कुसल राउ हरषानेउ ।।१३१।।
सुनि पुर भयउ अनंद बधाव बजावहिँ ।
सजहिँ सुमंगल कलस बितान बनावहिँ ।।१३२।।
राउ छाँड़ि सब काज साज सब साजहिँ ।
चलउ बरात बनाइ पूजि गनराजहिँ ।।१३३।।
बाजहिँ ढोल निसान सगुन सुभ पाइन्हि ।
सिय-नैहर जनकौर नगर नियराइन्हि ।।१३४।।

नियरानि नगर बरात हरषी लेन अगवानी गए ।
देखत परस्पर मिलत, मानत, प्रेमपरिपूरन भए ।।
आनंद पुर कौतुक कोलाहल बनत सो बरनत कहाँ ।
लै दियो तहँ जनवास सकल सुपास नित नूतन जहाँ ।।१३५।।

ग जनवासहिँ कौसिक रामलखन लिए ।
हरषे निरखि बरात, प्रेम प्रमुदित हिए ।।१३६।।
हृदय लाइ लिए गोद मोद अति भूपहिँ ।
कहि न सकहिँ सत सेष अनंद अनूपहिँ ।।१३७।।
राय कौसिकहिँ पूजि दान बिप्रन्ह दिए ।
राम सुमंगल हेतु सकल मंगल किए ।।१३८।।
ब्याह-विभूषन-भूषित भूषन-भूषन ।
बिस्व-बिलोचन - बनज - बिकासक पूषन ।।१३९।।
मध्य बरात बिराजत अति अनुकूलेउ ।
मनहुँ काम आराम कल्पतरु फूलेउ ।।१४०।।
पठई भेंट बिदेह बहुत बहु भाँतिन्ह ।
देखत देव सिहाहिँ अनंद बरातिन्ह ।।१४१।।
बेदविहित कुलरीति कीन्हि दुहुँ कुलगुर ।
पठई बोलि बरात जनक प्रमुदित उर ।।१४२।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाइ कहेउ "पगु धारिय" मुनि अवधेसहिँ।
चल सुमिरि गुरु गौरि गिरीस गनेसहिँ ॥१४३॥

चले सुमिरि गुरु, सुर सुमन बरषहिँ, परे बहु बिधि पाँवड़े।
सनमानि सब बिधि जनक दसरथ किए प्रेम कनावड़े॥
गुन सकल सम समधी परस्पर मिलत अति आनँद लहे।
जय धन्य जय जय धन्य धन्य बिलोकि सुर नर मुनि कहे ॥१४४॥

तीनि लोक अवलोकहिँ, नहिँ उपमा कोउ।
दसरथ जनक समान जनक दसरथ दोउ ॥१४५॥
सजहिँ सुमंगल साज रहस रनिवासहिँ।
गान करहिँ पिकबैनि सहित परिहासहिँ ॥१४६॥
उमा रमादिक सुरतिय सुनि प्रमुदित भईँ।
कपट नारि-बर-बेष बिरचि मंडप गईँ ॥१४७॥
मंगल आरति साजि बरहिँ परिछन चलीं।
जनु बिगसीं रबि-उदय कनक-पंकज-कलीं ॥१४८॥
नख सिख सुंदर रामरूप जब देखहिँ।
सब इंद्रिन्ह महँ इंद्र बिलोचन लेखहिँ ॥१४९॥
परम प्रीति कुलरीति करहिँ गजगामिनि।
नहिँ अघाहिँ अनुराग भाग भरि भामिनि ॥१५०॥
नेगचारु कहँ नागरि गहरु लगावहिँ।
निरखि निरखि आनंद सुलोचनि पावहिँ ॥१५१॥
करि आरती निछावरि बरहिँ निहारहिँ।
प्रेममगन प्रमदागन तनु न सम्हारहिँ ॥१५२॥

नहिँ तनु सम्हारहिँ, छबि निहारहिँ निमिष-रिपु जनु रन जए।
चक्कवै-लोचन रामरूप-सुराज-सुख भोगी भए॥
तब जनक सहित समाज राजहिँ उचित रुचिरासन दए।
कौसिक बसिष्ठहिँ पूजि पूजे राउ दै अंबर नए ॥१५३॥

देत अरघ रघुबीरहिँ मंडप लै चलीं।
करहिँ सुमंगल गान उमँगि आनँद अलीं ॥१५४॥
बर बिराज मंडप महँ बिस्व बिमोहइ।
ऋतु बसंत बनमध्य मदन जनु सोहइ ॥१५५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुल-बिवहार, बेदबिधि चाहिय जहँ जस।
उपरोहित दोउ करहिँ मुदित मन तहँ तस ॥१५६॥
बरहिँ पूजि नृप दीन्ह सुभग सिंहासन।
चलीं दुलहिनिहिँ ल्याइ पाइ अनुसासन ॥१५७॥
जुवति जुत्थ महँ सीय सुभाइ बिराजइ।
उपमा कहत लजाइ भारती भाजइ ॥१५८॥
दुलह दुलहिनिन्ह देखि नारि नर हरषहिँ।
छिनु छिनु गान निसान सुमन सुर बरषहिँ ॥१५९॥
लै लै नाउँ सुआसिनि मंगल गावहिँ।
कुँवर कुँवरि हित गनपति गौरि पुजावहिँ ॥१६०॥
अगिनि थापि मिथिलेस कुसोदक लीन्हेउ।
कन्यादान बिधान संकलप कीन्हेउ ॥१६१॥

संकलपि सिय रामहिँ समर्पी सील सुख सोभामई।
जिमि संकरहिँ गिरिराज गिरिजा, हरिहि श्री सागर दई ॥
सिंदूरबंदन होम लावा होन लागी भाँवरी।
सिलपोहनी करि मोहनी मन हर्‌यौ मूरति साँवरी ॥१६२॥

यहिँ बिधि भयो बिवाह उछाह तिहूँ पुर।
देहिँ असीस मुनीस सुमन बरषहिँ सुर ॥१६३॥
मनभावत बिधि कीन्ह, मुदित भामिनि भइँ।
बर दुलहिनिहिँ लेवाइ सखी कोहबर गइँ ॥१६४॥
निरखि निछावरि करहिँ बसन मनि छिनु छिनु।
जाइ न बरनि बिनोद मोदमय सो दिनु ॥१६५॥
सियभ्राता के समय भौम तहँ आयउ।
दुरीदुरा करि नेगु सुनात जनायउ ॥१६६॥
चतुर नारिबर कुँवरिहिँ रीति सिखावहिँ।
देहिँ गारि लहकौरि समौ सुख पावहिँ ॥१६७॥
जुवा खेलावत कौतुक कीन्ह सयानिन्ह।
जीति-हारि-मिस देहिँ गारि दुहुँ रानिन्ह ॥१६८॥
सीयमातु मन मुदित उतारति आरति।
को कहि सकइ अनंद मगन भइ भारति ॥१६९॥
जुवति जूथ रनिवास रहस-बस यहि बिधि।
देखि देखि सिय राम सकल मंगलनिधि ॥१७०॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंगलनिधान विलोकि लोयन-लाह लूटति नागरी।
दइ जनक तीनिहु कुँवरि कुँवर विवाहि सुनि आनँदभरी॥
कल्यान मोँ कल्यान पाइ बितान छवि मन मोहई।
सुर धेनु, ससि, सुरमनि सहित मानहुँ कलपतरु सोहई॥१७१॥

जनक-अनुज-तनया दुइ परम मनोरम।
जेठि भरत कहँ ब्याहि रूप रति सय सम॥१७२॥
सिय लघु भगिनि लषन कहँ रूप-उजागरि।
लषन-अनुज श्रुतिकीरति सब-गुन - आगरि॥१७३॥
रामबिबाह समान ब्याह तीनिउ भए।
जीवनफल, लोचनफल विधि सब कहँ दए॥१७४॥
दाइज भयउ विविध विधि, जाइ न सो गनि।
दासी, दास, वाजि, गज, हेम, वसन, मनि॥१७५॥
दान मान परमान प्रेम पूरन किए।
समधी सहित बरात विनय बस करि लिए॥१७६॥
गे जनवासेहिँ राउ, संग सुत सुतबहु।
जनु पाए फल चारि सहित साधन चहुँ॥१७७॥
चहुँ प्रकार जेवनार भई वहु भाँतिन्ह।
भोजन करत अवधपति सहित बरातिन्ह॥१७८॥
देहिँ गारि वर नारि नाम लै दुहुँ दिसि।
जेंवत बढ़ेउ अनंद, सोहावनि सो निसि॥१७९॥

सो निसि सोहावनि, मधुर गावनि, बाजने बाजहिँ भले।
नृप कियो भोजन पान, पाइ प्रमोद जनवासहिँ चले॥
नट भाट मागध सूत जाचक जस प्रतापहिँ बरनहीं।
सानंद भूसुर बृंद मनि गज देत मन करषै नहीं॥१८०॥

करि करि विनय कछुक दिन राखि बरातिन्ह।
जनक कीन्ह पहुनाई अगनित भाँतिन्ह॥१८१॥
'प्रात बरात चलिहि सुनि भूपतिभामिनि।
परि न बिरहवस नींद, बीति गइ जामिनि॥१८२॥
खरभर नगर, नारि नर विधिहिँ मनावहिँ।
बार बार ससुरारि राम जेहि आवहिँ॥१८३॥
सकल चलन के साज जनक साजत भए।
भाइन्ह सहित राम तब भूपभवन गए॥१८४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सासु उतारि आरती करहिँ निछावरि ।
निरखि निरखि हिय हरषहिँ मूरति साँवरि ॥१८५॥
माँगेउ बिदा राम तब, सुनि करुना भरी ।
परिहरि सकुच सप्रेम पुलकि पायन्ह परी ॥१८६॥
सीय सहित सब सुता सौँपि कर जोरहिँ ।
बार बार रघनाथहिँ निरखि निहोरहिँ ॥१८७॥
"तात तजिय जनि छोह मया राखबि मन ।
अनुचर जानब राउ सहित पुर परिजन ॥१८८॥

जन जानि करब सनेह, बलि" कहि दीन बचन सुनावहीं ।
अति प्रेम बारहिँ बार रानी बालकन्हि उर लावहीं ॥
सिय चलत पुरजन नारि हय गज बिहँग मृग ब्याकुल भए ।
सुनि बिनय सासु प्रबोधि तब रघुबंसमनि पितु पहिँ गए ॥१८९॥

परेउ निसानहिँघाउ राउ अवधहिँ चले ।
सुरगन बरषहिँ सुमन सगुन पावहिँ भले ॥१९०॥
जनक जानकिहिँ भेंटि सिखाइ सिखावन ।
सहित सचिव गुरु बंधु चले पहुँचावन ॥१९१॥
प्रेम पुलकि कह राय "फिरिय अब राजन ।"
करत परस्पर बिनय सकल गुनभाजन ॥१९२॥
कहेउ जनक कर जोरि "कीन्ह मोहिँ आपन ।
रघुकुल-तिलक सदा तुम्ह उथपनथापन ॥१९३॥
बिलग न मानब मोर जो बोलि पठायउँ ।
प्रभु प्रसाद जस जाति सकल सुख पायउँ" ॥१९४॥
पुनि बसिष्ठ आदिक मुनि बंदि महीपति ।
गहि कौसिक के पाँय कीन्हि बिनती अति ॥१९५॥
भाइन्ह सहित बहोरि बिनव रघुबीरहिँ ।
गदगद कंठ; नयन जल, उर धरि धीरहिँ ॥१९६॥
"कृपासिंधु सुखसिंध सुजान-सिरोमनि ।
तात ! समय सुधि करबि छोह छाँड़ब जनि" ॥१९७॥

जनि छोह छाँड़ब बिनय सुनि रघुबीर बहु बिनती करी ।
मिलि भेंटि सहित सनेह फिरेउ बिदेह मन धीरज धरी ॥
सो समौ कहत न बनत कछु सब भुवन भरि करुना रहे ।
तब कीन्ह कोसलपति पयान निसान बाजे गहगहे ॥१९८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंथ मिले भृगुनाथ हाथ फरसा लिए ।
डाँटहिँ आँखि देखाइ कोप दारुन किए ॥१९९॥
राम कीन्ह परितोष रोष रिस परिहरि ।
चले सौंपि सारंग सुफल लोचन करि ॥२००॥
रघुवर-भुज-बल देखि उछाह बरातिन्ह ।
मुदित राउ लखि सन्मुख विधि सब भाँतिन्ह ॥२०१॥
एहि विधि ब्याहि सकल सुत जग जस छायउ ।
मगलोगनि सुख देत अवधपति आयउ ॥२०२॥
होहिँ सुमंगल सगुन सुमन सुर बरषहिँ ।
नगर कोलाहल भयउ नारि नर हरषहिँ ॥२०३॥
घाट बाट पुर द्वार बजार बनावहिँ ।
बीथी सींचि सुगंध सुमंगल गावहिँ ॥२०४॥
चौकैं पूरैं चारु कलस ध्वज साजहिँ ।
विविध प्रकार गहगहे बाजन बाजहिँ ॥२०५॥
बंदनवार वितान पताका घर घर ।
रोपैं सफल सपल्लव मंगल तरुवर ॥२०६॥

मंगल बिटप मंजुल विपुल दधि दूब अच्छत रोचना ।
भरि थार आरति सजहिँ सब सारंग-सावक-लोचना ॥
मन मुदित कौसल्या सुमित्रा सकल भूपति-भामिनी ।
सजि साजि परिछन चलीं रामहिँ मत्त-कुंजरगामिनी ॥२०७॥

बधुन्ह सहित सुत चारिउ मातु निहारहिँ ।
बारहिँ बार आरती मुदित उतारहिँ ॥२०८॥
करहिँ निछावरि छिनु छिनु मंगल मुद भरी ।
दुलह दुलहिनिन्ह देखि प्रेम-पय-निधि परीं ॥२०९॥
देत पाँवड़े अरघ चलीं लै सादर ।
उमगि चलेउ आनंद भुवन भुइँ बादर ॥२१०॥
नारि उहार उघारि दुलहिनिन्ह देखहिँ ।
नैन लाहु लहि जनम सफल करि लेखहिँ ॥२११॥
भवन आनि सनमानि सकल मंगल किए ।
बसन कनक मनि धेनु दान विप्रन्ह दिए ॥२१२॥
जाचक कीन्ह निहाल असीसहिँ जहँ तहँ ।
पूजे देव पितर सब राम-उदय कहँ ॥२१३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेगचार करि दीन्ह सबहिँ पहिरावनि ।
समधी सकल सुआसिनि गुरुतिय पावनि ॥२१४॥
जोरी चारि निहारि असीसत निकसहिँ ।
मनहुँ कुमद विधु-उदय मुदित मन बिकसहिँ ॥२१५॥

बिकसहिँ कुमुद जिमि देखि बिधु भइ अवध सुख सोभामई ।
एहि जुगुति रामबिबाह गावहिँ सकल कबि कीरति नई ।
उपबीत ब्याह उछाह जे सिय राम मंगल गावहीं ।
तुलसी सकल कल्यान ते नर नारि अनुदिनु पावहीं ॥२१६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामाज्ञा-प्रश्न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामाज्ञा-प्रश्न

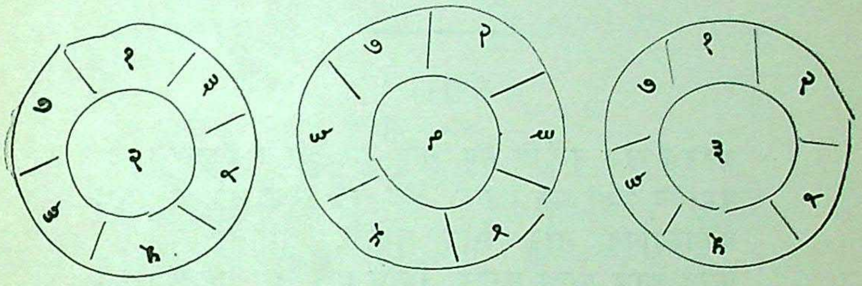

अष्टोत्तर सत कमल फल, मुष्टी तीनि प्रमान ।
सप्त सप्त तजि सेष को, राखै सब बिलगान ।।
प्रथम सर्ग जो सेष रह, दूजे सप्तक होइ ।
तीजे दोहा जानिए, सगुन बिचारब सोइ ।।

प्रथम सर्ग

—०—

सप्तक—१

वानि विनायकु अंब रवि, गुरु हर रमा रमेस ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ मंगल देस विदेस ।।१।।
गुरु सरसइ सिंधुरबदन, ससि सुरसरि सुरगाइ ।
सुमिरि चलहु मग मुदित मन, होइहि सुकृति सहाइ ।।२।।
गिरा गौरि गुरु गनप हर, मंगल मंगलमूल ।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, होइ ईस अनुकूल ।।३।।
भरत भारती रिपुदवनु, गुरु गनेस बुधवार ।
सुमिरत सुलभ सुधरम फल, बिद्या विनय विचार ।।४।।
सुरगुरु गुरु सिय राम गनराउ गिरा उर आनि ।
जो कुछ करिय सो होइ सुभ, खुलहिं सुमंगल खानि ।।५।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुक्र सुमिरि गुरु सारदा, गनपु लषनु हनुमान ।
करिय काज सबु साजु भल, निपटहिँ नीक निदान ॥६॥
तुलसी तुलसो राम सिय, सुमिरि लषन हनुमान ।
काजु विचारेहु सो करहु, दिनु दिनु बड़ कल्यान ॥७॥

सप्तक–२

दसरथ राज न ईति-भय, नहिँ दुख दुरित दुकाल ।
प्रमुदित प्रजा प्रसन्न सब, सब सुख सदा सुकाल ॥१॥
कौसल्यापद नाइ सिर, सुमिरि सुमित्रापाय ।
करहु काज मंगल कुसल, बिधि हरि संभु सहाय ॥२॥
विधिबस बन मृगया फिरत, दीन्ह अंध मुनि साप ।
सो सुनि बिपति विषाद बड़, प्रजहि सोक संताप ॥३॥
सुतहित बिनती कीन्हि नृप, कुलगुरु कहा उपाउ ।
होइहि भल संतान सुनि, प्रमुदित कोसलराउ ॥४॥
पुत्रजागु करवाइ ऋषि, राजहिँ दीन्ह प्रसाद ।
सकल-सुमंगल-मूल जग, भूसुर-आसिरबाद ॥५॥
रामजनम घर घर अवध, मंगल गान निसान ।
सगुन सुहावन होइ सुत, मंगल-मोद-निधान ॥६॥
राम भरतु सानुज लषनु, दसरथ बालक चारि ।
तुलसी सुमिरत सगुन सुभ, मंगल कहब पचारि ॥७॥

सप्तक–३

भूप-भवन भाइन्ह सहित, रघुवर बाल-विनोद ।
सुमिरत सब कल्यान जग, पग पग मंगल मोद ॥१॥
करनबेध चूड़ाकरन, श्रीरघुवर-उपवीत ।
समय सकल कल्यानमय, मंजुल मंगल गीत ॥२॥
भरतु सत्रुसूदन लषनु, सहित सुमिरि रघुनाथ ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहि सुमंगल साथ ॥३॥
रामु लषन कौसिक सहित, सुमिरहु करहु पयान ।
लच्छि लाभ जय जगत जसु, मंगल सगुन प्रमान ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनि मखपाल कृपाल प्रभु, चरनकमल उर ग्रानु ।
तजहु सोच संकट मिटिहि, सत्य सगुन जिय जानु ॥५॥
हानि मीचु दारिद दुरित, ग्रादि-ग्रंत-गत बीच ।
राम बिमुख ग्रघ ग्रापने, गए निसाचर नीच ॥६॥
सिला-साप-मोचन चरन, सुमिरहु तुलसीदास ।
तजहु सोच संकट मिटिहि पूजिहि मन कै ग्रास ॥७॥

सप्तक—४

सीय-स्वयंवर समउ भल, सगुन साध सब काज ।
कीरति विजय बिवाह विधि, सकल सुमंगल काज ॥१॥
राजत राजसमाज महँ, राम भंजि भवचाप ।
सगुन सुहावन लाभु बड़, जय पर-सभा प्रताप ॥२॥
लाभ-मोद-मंगल-ग्रवधि, सिय रघुबीर बिबाहु ।
सकल सिद्धिदायक समउ, सुभ सब काज उछाहु ॥३॥
कोसलपालक बाल-उर, सिय मेली जयमाल ।
समउ सुहावन सगुन भल, मुद-मंगल सब काल ॥४॥
हरषि बिबुध बरषहिँ सुमन, मंगल गान निसान ।
जय जय रबिकुल-कमल-रबि, मंगल-मोद-निधान ॥५॥
सतानंद पठए जनक, दसरथ सहित समाज ।
ग्राए तिरहुति सगुन सुभ, भए सिद्ध सब काज ॥६॥
दसरथ पूरन परब-बिधु, उदित समय संजोग ।
जनकनगर सर कुमुदगन, तुलसी प्रमुदित लोग ॥७॥

सप्तक—५

मन मलीन मानी महिप, कोक कोकनद बृंद ।
सुहृद-समाज चकोर चित, प्रमुदित परमानंद ॥१॥
तेहि ग्रवसर रावन-नगर, ग्रसगुन ग्रसुभ ग्रपार ।
होहिँ हानि-भय-मरन-दुख-सूचक बारहि बार ॥२॥
मधु माधव दसरथ जनक, मिलब राज ऋतुराज ।
सगुन सुबन नव दल सुतरु, फूलत फलत सुकाज ॥३॥
बिनय-पराग सुप्रेम रस, सुमन सुभग संबाद ।
कुसुमित काज रसाल तरु, सगुन सुकोकिल-नाद ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदित भानुकुल-भानु लखि, लुके उलूक नरेस ।
गए गँवाइ गरूर पति, धनु मिस हये महेस ॥५॥
चारि चारु दसरथ कुँवर, निरखि मुदित पुर लोग ।
कोसलेस मिथिलेस को, समउ सराहन जोग ॥६॥
एक बितान बिबाहि सब, सुवन सुमंगल रूप ।
तुलसी सहित समाज सुख, सुकृत-सिंधु दोउ भूप ॥७॥

सप्तक—६

दाइज भयउ अनेक विधि, सुनि सिहाहिँ दिसिपाल ।
सुख संपति संतोषमय, सगुन सुमंगल माल ॥१॥
बर दुलहिनि सब परस्पर, मुदित पाइ मनकाम ।
चारु चारि जोरी निरखि, दुहुँ समाज अभिराम ॥२॥
चारिउ कुँवर बियाहि पुर, गवने दसरथ राउ ।
भए मंजु मंगल सगुन, गुर-सुर-संभु-पसाउ ॥३॥
पंथ परसुधर आगमन, समय सोच सब काहु ।
राजसमाज बिषाद बड़, भय बस मिटा उछाहु ॥४॥
रोष कलुष लोचन भ्रुकुटि, पानि परसु धनु बान ।
काल कराल बिलोकि मुनि, सब समाज बिलखान ॥५॥
प्रभुहि सौंपि सारंग मुनि, दीन्ह सुआसिरबाद ।
जय मंगल सूचक सगुन, राम-राम संबाद ॥६॥
अवध अनंद बधावनो, मंगल गान निसान ।
तुलसी तोरन कलस पुर, चँवर पताक बितान ॥७॥

सप्तक—७

साजि सुमंगल आरती, रहस बिबस रनिवासु ।
मुदित मातु परिछन चलीं, उमगत हृदय हुलासु ॥१॥
करहिँ निछावरि आरती, उमगि उमगि अनुराग ।
बर दुलहिनि अनुरूप लखि, सखी सराहहिँ भाग ॥२॥
मुदित नगर नर नारि सब, सगुन सुमंगल मूल ।
जय धुनि मुनि सुर दुंदुभी, बाजहिँ बरषहिँ फूल ॥३॥
आए कोसलपाल पुर, कुसल समाज समेत ।
समउ सुनत सुमिरत सुखद, सकल सिद्धि सुभ-देत ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप सील वय बंसगुन, सम बिबाह भए चारि ।
मुदित राउ रानी सकल, सानुकूल त्रिपुरारि ।।५।।
बिधि हरि हर अनुकूल अति, दसरथ राजहिं आजु ।
देखि सराहत सिद्ध सुर, संपति समउ समाजु ।।६।।
सगुन प्रथम उनचास सुभ, तुलसी अति अभिराम ।
सब प्रसन्न सुर भूमिसुर, गोगन गंगा राम ।।७।।

द्वितीय सर्ग

सप्तक—१

समय राम-जुवराज कर, मंगल-मोद-निकेतु ।
सगुन सुहावन संपदा, सिद्धि सुमंगल हेतु ।।१।।
सुर-माया-बस केकयी, कुसमय कीन्हि कुचालि ।
कुटिल नारि मिस होइ छलु, अनभल आजु कि कालि ।।२।।
कुसमय कुसगुन कोटि सम, राम-सीय-बनबास ।
अनरथ-अनभल-अवधि जग, जानब सरवस-नास ।।३।।
सोचत पुर-परिजन सकल, बिकल राउ-रनिवास ।।
छल-मलीन मन तीयमिस, बिपति बिषाद बिनास ।।४।।
लषन-राम-सिय-बनगमनु, सकल अमंगल मूल ।
सोच पोच संताप बस, कुसमय संसय-सूल ।।५।।
प्रथम बास सुरसरि निकट, सेवा कीन्हि निषाद ।
कहब सुभासुभ सगुन फल, बिसमय हरष बिषाद ।।६।।
चले नहाइ प्रयाग प्रभु, लषन सीय रघुराज ।
तुलसी जानब सगुन फल, होइहि साधु समाज ।।७।।

सप्तक—२

सीय रामु लोने लषनु तापस-बेष अनूप ।
तप तीरथ जप जाग हित, सगुन सुमंगल रूप ।।१।।
सीता-लषन-समेत प्रभु, जमुना उतरि नहाइ ।
चले सकल संकट - समन, सगुन सुमंगल पाइ ।२।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रवध सोक-संताप बस, बिकल सकल नर-नारि।
बाम बिधाता राम-बिनु, माँगत मीचु पुकारि ॥३॥
लषन सीय रघुबंसमनि, पथिक पाँय उर ग्रानि।
चलहु ग्रगम मग सुगम सुभ, सगुन सुमंगल खानि ॥४॥
ग्राम-नारि-नर मुदित मन, लषन-राम-सिय देखि।
होइ प्रीति पहिचान बिनु, मान बिदेस बिसेखि ॥५॥
बन मनिगन रामहिँ मिलहिँ; मुदित सुकृत फल पाइ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, ग्रभिमत होइ ग्रघाइ ॥६॥
चित्रकूट पयतीर प्रभु, बसे भानुकुल-भानु।
तुलसी जप तप जोग हित, सगुन सुमंगल जानु ॥७॥

सप्तक—३

हंसबंस-ग्रवतंस जब, कीन्ह बास पय पास।
तापस साधक सिद्ध मुनि, सब कहँ सगुन सुपास ॥१॥
बिटप बेलि फूलहिँ फलहिँ, जल-थल-बिमल बिसेखि।
मुदित किरात बिहंग मृग, मंगल-मूरति देखि ॥२॥
सींचति सीय सरोज-कर, बये बिटप बट बेलि।
समउ सुकालु किसानहित, सगुन सुमंगल केलि ॥३॥
हय हाँके फिरि दखिन दिसि, हेरि हेरि हिहिनात।
भए निषाद बिषाद बस, ग्रवध सुमंतहिँ जात ॥४॥
सचिव सोच ब्याकुल सुनत, ग्रसगुन ग्रवध प्रबेस।
समाचार सुनि सोक बस, माँगो मीचु नरेस ॥५॥
राम राम कहि राम सिय, रामसरन भए राउ।
सुमिरहु सीता राम ग्रब, नाहिन ग्रान उपाउ ॥६॥
राम बिरह दसरथ मरनु, मुनि मन ग्रगम सुमीचु।
तुलसी मंगल मरन-तरु, सुचि सनेह जल सींचु ॥७॥

सप्तक—४

धीर बीर रघुबीर प्रिय, सुमिरि समीरकुमारु।
ग्रगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि बिचारु ॥१॥
सुमिरि सत्रुसूदन-चरन, सगुन सुमंगल मानि।
परपुर बाद-बिबाद-जय, जूझ जुग्रा जय जानि ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवक सखा सुबंधु हित, सगुन विचारु बिसेखि।
भरत नाम गुनगन बिमल, सुमिरि सत्य सब लेखि॥३॥
साहिब समरथ सीलनिधि, सेवत सुलभ सुजान।
राम सुमिरि सेइय सुप्रभु, सगुन कहब कल्यान॥४॥
सुकृत-सील-सोभा-अवधि, सीय सुमंगल-खानि।
सुमिरि सगुन तिय धरम हित, कहब सुमंगल जानि॥५॥
ललित लषनमूरति हृदय, आनि धरें धनुबान।
करहु काज सुभ सगुन सब, मुद मंगल कल्यान॥६॥
रामनाम पर राम तें, प्रीति प्रतीति भरोस।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन सुमंगल कोस॥७॥

सप्तक–५

गुरु आयसु आए भरत, निरखि नगर-नर-नारि।
सानुज सोचत पोच विधि, लोचन मोचत बारि॥१॥
भूप-मरन प्रभु-बन-गवनु, सब विधि अवध अनाथ।
रोवत समुझि कुमातु-कृत, मीँजि हाथ धुनि माथ॥२॥
बेद-बिहित पितु-करम करि, लिये संग सब लोग।
चले चित्रकूटहिँ भरत, ब्याकुल राम-वियोग॥३॥
रामदरसु हिय हरषु बड़, भूपति-मरन-बिषादु।
सोचत सकल समाज सुनि, राम भरत-संवादु॥४॥
सुनि सिष आसिष, पाँवरी पाइ, नाइ पद माथ।
चले अवध संतापबस विकल लोग सब साथ॥५॥
भरत-नेम-ब्रत-धरम सुभ, रामचरन-अनुराग।
सगुन समुझि साहस करिय, सिद्ध होइ जप जाग॥६॥
चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय-लषन समेत।
रामनाम-जप जापकहिँ, तुलसी अभिमत देत॥७॥

सप्तक–६

पय पावनि, बनभूमि भलि, सैल सुहावन पीठ।
रागिहिँ सीठ बिसेषि थलु, विषय-बिरागिहिँ मीठ॥१॥
फटिक-सिला मंदाकिनी, सिय-रघुबीर-बिहार।
रामभगत हित सगुन सुभ, भूतल भगतिभँडार॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सगुन सकल-संकट-समन, चित्रकूट चलि जाहु ।
सीता-राम-प्रसाद सुभ, लघु साधन बड़ लाहु ॥३॥
दिये अत्रितिय जानकिहिँ, बसन बिभूषन भूरि ।
रामकृपा संतोष सुख, होहिँ सकल दुख दूरि ॥४॥
काककुचालि, बिराधबध, देह तजी सरभंग ।
हानि मरन-सूचक सगुन, अनरथ-असुभ प्रसंग ॥५॥
राम लषन मुनिगन मिलन, मंजुल मंगल-मूल ।
सत समाज तब होइ जब, रमा राम अनुकूल ॥६॥
मिले कुंभसंभव मुनिहिँ, लषन सीय रघुराज ।
तुलसी साधु-समाज-सुख, सिद्ध दरस सुभ काज ॥७॥

———

सप्तक—७

सुनि मुनि आयसु प्रभु कियो, पंचवटी बसवास ।
भइ महि पावनि परसि पद, भा सब भाँति सुपास ॥१॥
सरित सरोवर सजल सब, जलज बिपुल बहुरंग ।
समउ सुहावन सगुन सुभ, राजा प्रजा प्रसंग ॥२॥
बिटप बेलि फूलहिँ फलहिँ, सीतल सुखद समीर ।
मुदित बिहँग मृग मधुप गन बनपालक दोउ बीर ॥३॥
मोदाकर गोदावरी, बिपिन सुखद सब काल ।
निर्भय मुनि जप तप करहिँ, पालक राम कृपाल ॥४॥
भेँट गीध रघुराज सन, दुहुँ दिसि हृदय हुलासु ।
सेवक पाइ सुसाहिबहि, साहिब पाइ सुदासु ॥५॥
पढ़हिँ पढ़ावहिँ मुनितनय, आगम निगम पुरान ।
सगुन सुबिद्या लाभहित, जानब समय समान ॥६॥
निज कर सींचति जानकी, तुलसी लाइ रसाल ।
सुभ दुतीय उनचास भलि, बरषा कृषी सुकाल ॥७॥

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय सर्ग

सप्तक—१

दंडकवन पावन-करन, चरन-सरोज प्रभाउ ।
ऊसर जामहिँ खल तरहिँ होइँ रंक ते राउ ॥१॥
कपटरूप मन-मलिन गइ, सूपनखा प्रभु पास ।
कुसगन कठिन कुनारि-कृत, कलह कलुष उपहास ॥२॥
नाक कान बिन विकल भइ, विकट कराल कुरूप ।
कुसगुन, पाउ न देव मग, पग पग कंटक कूप ॥३॥
खर दूषन देखी दुखित, चले साजि सब साज ।
अनरथ असगुन अघ असुभ, अनभल अखिल अकाज ॥४॥
कटु कुठाँय करटा रटहिँ, फकरहिँ फेरु कुभाँति ।
नीच निसाचर मीचु-बस अनी मोह-मद-माति ॥५॥
राम-रोष पावक प्रबल, निसिचर सलभ समान ।
लरत परत जरि जरि मरत, भय भसम जगु जान ॥६॥
सीता लषन समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर बरषत सुमन, सगुन सुमंगल बास ॥७॥

सप्तक—२

सुभट सहस चौदह सहित, भाइ कालबल जानि ।
सूपनखा लंकहिँ चली, असुभ अमंगल-खानि ॥१॥
बसन सकल सोनित-समल, विकट बदन गत गात ।
रोवति रावन की सभा, तात मात, हा ! भ्रात ॥२॥
काल कि मूरति कालिका, कालराति बिकराल ।
बिन पहिचान लंकपति, सभा समय तेँहि काल ॥३॥
सूपनखा सब भाँति गत असुभ अमंगल-मूल ।
समय साढ़साती सरिस, नृपहिँ प्रजहिँ प्रतिकूल ॥४॥
बरबस गवनत रावनहिँ, असगुन भए अपार ।
नीचु गनत नहिँ मीचुबस मिलि मारीच बिचार ॥५॥

५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इत रावन, उत राम-कर, मीचु जानि मारीच ।
कपट कनक-मृग-बेष तव, कीन्ह निसाचर नीच ॥६॥
पंचवटी वट बिटप तर, सीता लषन समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु, सकल सुमंगल देत ॥७॥

सप्तक—३

मायामृग पहिचानि प्रभु, चले सीय-रुचि जानि ।
बंचक चोर प्रपंचकृत, सगुन कहव हितहानि ॥१॥
सीयहरन अवसर सगुन, भय संसय संताप ।
नारि-काज-हित निपट गत, प्रगट पराभव पाप ॥२॥
गीधराज रावन समर, घायल बीर बिराज ।
सूर सुजसु संग्राम महि, मरनु सुसाहिव काज ॥३॥
राम लषनु वन वन बिकल फिरत सीय सुधि लेत ।
सूचत सगुन बिषादु बड़, असुभ अरिष्ट अचेत ॥४॥
रघुबर बिकल बिहंग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर ।
सिय सुधि कहि 'सिय राम' कहि तजी देह मतिधीर ॥५॥
दसरथ तें दसगुन भगति, सहित तासु करि काज ।
सोचत बंधु समेत प्रभु, कृपासिंधु रघुराज ॥६॥
तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम ।
सगुन सुमंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥७॥

सप्तक—४

सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमंगल जानु ।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनमानहिं आनु ॥१॥
सुमिरि सत्रुसूदन-चरन, चलहु करहु सब काज ।
सत्रु-पराजय नित बिजय, सगुन सुमंगल साज ॥२॥
भरत नाम सुमिरत मिटहिं, कपट कलेस कुचालि ।
नीति प्रीति परतीति हित, सगुन सुमंगलसालि ॥३॥
रामनाम कलि कामतरु, सकल सुमंगल कंद ।
सुमिरत करतल सिद्धि जग, पग पग परमानंद ॥४॥
सीताचरन प्रनाम करि, सुमिरि सुनामु सनेम ।
सुतिय होहिं पतिदवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम ॥५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लषन ललित मूरति मधर, सुमिरहु सहित सनेह ।
सुख संपति कीरति विजय, सगुन सुमंगल गेह ।।६।।
तुलसी तुलसी मंजरी, मंगल मंजुल मूल ।
देखत सुमिरत सगुन सुभ, कलपलता फल फूल ।।७।।

सप्तक–५

खलबल अंध कबंध बस, पर सुबंध समेत ।
सगन सोच संकट कहव, भूत प्रत दुख दत ।।१।।
पाई नीच सुमीच भलि, मिटा महामुनि साप ।
बिहग-मरन ,सिय सोच मन, सगन सभय संताप ।।२।।
कहि सवरी सब सीय-सुधि, प्रभु सराहि फल खात ।
सोच समय संतोष सुनि, सगुन सुमंगल बात ।।३।।
पवनसुवन सन भेंट भइ, भूमिसुता सुधि पाइ ।
सोचविमोचन सगुन सुभ, मिला सुसेवक आइ ।।४।।
राम लखन हनुमान मन, दुहुँ दिसि परम उछाहु ।
मिला सुसाहिव सेवकहिँ, प्रभुहिँ सुसेवक लाहु ।।५।।
कीन्ह सखा सुग्रीव प्रभु, दीन्हि बाँह रघुबीर ।
सुभ सनेह हित सगुन फलु, मिटइ सोच भयभीर ।।६।।
वली वालि बलसालि दलि, सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपालु को विरद गरीब नेवाज ।।७।।

सप्तक–६

बंधुबिरोध न कुसल कुल, कुसगुन कोटि कुचालि ।
रावनरबि को राहु सो, भयो कालवस वालि ।।१।।
कीन्ह बास बरषा निरखि, गिरिवर सानुज राम ।
काज बिलंबित सगुन फल, होइहि भल परिनाम ।।२।।
सीय-सोध कपि भालु सब, विदा किये कपिनाथ ।
जतन करहु आलस तजहु, नाइ रामपद माथ ।।३।।
हनूमान हिय हरषि तव, राम जोहारे जाइ ।
मंगलमूरति मारुतिहिँ, सादर लीन्ह बुलाइ ।।४।।
डाँटे वानर भालु सब, अवधि गये विन काज ।
जो आइहि सो कालवस, कोपि कहा कपिराज ।।५।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानि-सिरोमनि जानि जिय, कपि बल-बुद्धि-निधानु ।
दीन्हि मुद्रिका मुदित प्रभु, पाइ मुदित हनुमानु ॥६॥
तुलसी करतल सिद्धि सब, सगुन सुमंगल साज ।
करि प्रनाम रामहिँ चलहु, साहस सिद्ध सुकाज ॥७॥

सप्तक—७

नाथ हाथ माथे धरेउ, प्रभु-मुंदरी मुहँ मेलि ।
चलेउ सुमिरि सारंगधर, आनिहि सिद्धि सकेलि ॥१॥
संग नील नल कुमुद गद, जामवंतु जुवराज ।
चले रामपद नाइ सिर, सगुन सुमंगल साज । २॥
पैठि बिबर मिलि तापसिहिँ, अँचइ पानि, फलु खाइ ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, अभिमत होइ अघाइ ॥३॥
बनचर बिकल बिषाद-बस, देखि उदधि अवगाह ।
असमंजस बड़ सगुन गत, बिधिवस होइ निबाह ॥४॥
सब सभीत संपाति लखि, हहरे हृदय हरास ।
कहत परस्पर गीध-गति, परिहरि जीवन-आस ॥५॥
नव तन पाइ देखाइ प्रभु, महिमा कथा सुनाइ ।
धरहु धीर साहसु करहु, मुदित सीय-सुधि पाइ ॥६॥
तुलसी रामप्रभाउ कहि, मदित चले संपाति ।
सुभ तीसर उनचास भल, सगुन सुमंगल पाँति ॥७॥

चतुर्थ सर्ग

सप्तक—१

रामजनम सुभ सगुन भल, सकल सुकृत सुखसारु ।
पुत्रलाभ कल्यानु बड़, मंगलचारु बिचारु ॥१॥
दसरथ कुलगुरु की कृपा, सुतहित जाग कराइ ।
पायस पाइ बिभाग करि, रानिन्ह दीन्ह बुलाइ ॥२॥
सब सगरभ सोहहिँ सदन, सकल सुमंगलखानि ।
तज प्रताप प्रसन्नता, रूप न जाहिँ बखानि ॥३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखि सुहावन सपन सुभ, सगुन सुमंगल पाइ ।
कहहिँ भूप सन मुदित मन, हर्ष न हृदय समाइ ॥४॥
सपन सगुन सुनि राउ कह, कुलगुरु-आसिरवाद ।
पूजिहि सब मनकामना, संकर-गौरि-प्रसाद ॥५॥
मास पाख तिथि जोग सुभ, नखत लगन ग्रह वार ।
सकल सुमंगल मूल जग, राम लीन्ह अवतार ॥६॥
भरत लषन रिपुदवन सब, सुवन सुमंगल मूल ।
प्रगट भए नृप सुकृतफल, तुलसी विधि अनुकूल ॥७॥

———

सप्तक—२

घर घर अवध वधावने, मुदित नगर-नर-नारि ।
वरषि सुमन हरषहिँ विबुध, विधि त्रिपुरारि मुरारि ॥१॥
मंगलगान निसान नभ, नगर मुदित नरनारि ।
भूप-सुकृत-सुरतरु निरखि फरे चारु फल चारि ॥२॥
पुत्रकाज कल्यान नृप, दिये दान वहु भांति ।
रहस विवस रनिवास सब, मुद मंगल दिन राति ॥३॥
अनुदिन अवध वधावने, नित नव मंगल मोद ।
मदित मातु पितु लोग लखि, रघुवर वालविनोद ॥४॥
करनबेध चूड़ाकरन, लौकिक बैदिक काज ।
गुरु आयसु भूपति करत, मंगल साज समाज ॥५॥
राज-अजिर राजत रुचिर, कोसल-पालक-वाल ।
जानु-पानि-चर चरित बर, सगुन सुमंगल माल ॥६॥
लहे मातु पितु भागवस, सुत जग जलधि ललाम ।
पुत्र-लाभ हित सगुन सुभ, तुलसी सुमिरहु राम ॥७॥

———

सप्तक—३

बाल विभूषन-वसन-धर धूरि-धूसरित अंग ।
बालकेलि रघुवर करत, बालबंधु सब संग ॥१॥
राम भरत लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभ नाम ।
सुमिरत दसरथसुवन सब, पूजिहि सब मनकाम ॥२॥
नाम ललित, लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन, भूषन ललित, ललित अनुज-सिसु साथ ॥३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुदिन सोधि मंगल किए, दिए भूप ब्रतबंध ।
अवध बधाव बिलोकि सुर, बरषत सुमन सुगंध ।।४।।
भूपति भूसुर भाट नट, जाचक पुर-नर-नारि ।
दिये दान सनमानि सब, पूजे कुल-अनुहारि ।।५।।
सखी सुआसिनि विप्रतिय, सनमानी सब राय ।
ईस मनाय असीस सुभ, देहिँ सनेह सुभाय ।।६।।
रामकाज कल्यान सब, सगुन सुमंगल मूल ।
चिरजीवहु तुलसीस सब, कहि सुर बरषहिँ फूल ।।७।।

सप्तक—४

रामजनम सुभकाज सब, कहत देवऋषि आइ ।
सुनि सुनि मन हनुमान के, प्रेम उमँग न अमाइ ।।१।।
भरतु स्यामतन राम सम, सब गुन-रूप-निधान ।
सेवक सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ।।२।।
ललित लाहु लोने लषनु, लोयन-लाहु निहारि ।
सुत ललाम लालहु ललित, लेहु ललकि फल चारि ।।३।।
मंगलमूरति मोदनिधि, मधुर मनोहर बेष ।
राम अनुग्रह पुत्रफल, होइहि सगुन विसेष ।।४।।
सोधत मख महि जनकपुर, सीय सुमंगलखानि ।
भूपति पुन्य पयोधि जनु, रमा प्रगट भइ आनि ।।५।।
नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमा-सील-निकेत ।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमंगल देत ।।६।।
बालक कोसलपाल के सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मनमानस बसत, मंगल मंजु मराल ।।७।।

सप्तक—५

जनकनंदिनी जनकपुर, जब तें प्रगटीं आइ ।
तब तें सब सुख संपदा, अधिक अधिक अधिकाइ ।।१।।
सीय स्वयंबर जनकपुर, सुनि सुनि सकल नरेस ।
आए साज समाज सजि, भूषन बसन सुदेस ।।२।।
चले मुदित कौसिक अवध, सगुन सुमंगल साथ ।
आए सुनि सनमानि गृह, आने कोसलनाथ ।।३।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सादर सोरह भाँति नृप पूजि पहुनई कीन्हि ।
विनय बड़ाई देखि मुनि, अभिमत आसिष दीन्हि ॥४॥
मुनि माँगे दसरथ दिये, रामु लषनु दोउ भाइ ।
पाइ सगुन-फल सुकृत-फल, प्रमुदित चले लेवाइ ॥५॥
स्यामल गौर किसोर बर, धरे तून धनु बान ।
सोहत कौसिक सहित मग, मुद मंगल कल्यान ॥६॥
सैल सरित सर बाग बन, मृग विहंग बहुरंग ।
तुलसी देखत जात प्रभु, मुदित गाधिसुत संग ॥७॥

सप्तक—६

लेत बिलोचन-लाभु सब, बड़भागी मगलोग ।
रामकृपा दरसनु सुगम, अगम जाग जप जोग ॥१॥
जलदछाँह मृदु मग अवनि, सुखद पवन अनुकूल ।
हरषत विबुध बिलोकि प्रभु, बरषत सुरतरु-फूल ॥२॥
दले मलिन खल, राखि मख, मुनि सिख आसिष दीन्हि ।
बिद्या बिस्वामित्र सब, सुथल समरपित कीन्हि ॥३॥
अभय किए मुनि राखि मखु, धरे बान धनु भाथ ।
धनु मख कौतुक जनकपुर, चले गाधिसुत साथ ॥४॥
गौतमतिय-तारन चरन,-कमल आनि उर देखु ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु ॥५॥
जनक पाइ प्रिय पाहुने, पूजे पूजन जोगु ।
बालक कोसलपाल के, देखि मगन पुरलोगु ॥६॥
सनमाने आने सदन, पूजे अति अनुराग ।
तुलसी मंगल सगुन सुभ, भूरि भलाई भाग ॥७॥

सप्तक—७

कौसिक देखन धनुष मख, चल संग दोउ भाइ ।
कुँवर निरखि पुर नारि नर, मुदित नयनफल पाइ ॥१॥
भूपसभा भवचाप दलि, राजत राजकिसोर ।
सिद्धि सुमंगल सगुन सुभ, जय जय जय सब ओर ॥२॥
जयमय मंजुल माल उर, मंगलमूरति देखि ।
गान निसान प्रसून झरि, मंगल मोद बिसेखि ॥३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाचार सुनि अवधपति, आए सहित समाज ।
प्रीति परस्पर मिलत मुद, सगुन सुमंगल साज ।।४।।
गान निसान बितान बर, बिरचें बिबिध विधान ।
चारि बिबाह उछाह वड़, कुसल काज कल्यान ।।५।।
दाइज पाइ अनेक विधि, सुत सुतवधुन समेत ।
अवधनाथु आए अवध, सकल सुमंगल लेत ।।६।।
चौथ चारु उनचास पुर, घर घर मंगलचार ।
तुलसी सब दिन दाहिने, दसरथ राजकुमार ।।७।।

——————

पंचम सर्ग

——————

सप्तक—१

रामनाम कलि-कामतरु, रामभगति सुरधेनु ।
सगुन सुमंगल मूल जग, गुरु-पद-पंकज रेनु ।।१।।
जलधि-पार मानस अगम, रावन-पालित लंक ।
सोच बिकल कपि भालु सब, दुहुँ दिसि संकट संक ।।२।।
जामवंत हनुमंत बलु, कहा पचारि पचारि ।
राम सुमिरि साहसु करिय, मानिय हिये न हारि ।।३।।
रामकाज लगि जनमु जग, सुनि हरषे हनुमान ।
होइ पुत्र फल सगुन सुभ, राम भगतु बलवान ।।४।।
कहत उछाहु बड़ाइ कपि, साथी सकल प्रबोधि ।
लागत रामप्रसाद मोहिँ, गोपद सरिस पयोधि ।।५।।
राखि तोषि सबु साथ सुभ, सगुन सुमंगल पाइ ।
कूदि कुधर चढ़ि आनि उर, सीय सहित दोउ भाइ ।।६।।
हरषि सुमन बरषत बिबुध, सगुन सुमंगल होत ।
तुलसी प्रभु लंघेउ जलधि, प्रभु प्रताप करि पोत ।।७।।

——————

सप्तक—२

राहुमातु माया मलिन, मारी मारुतपूत ।
समय सगुन मारग मिलहिँ, छल मलीन खल धूत ।।१।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूजा पाइ मिनाक पहिँ, सुरसा कपि संवादु ।
मारग अगम सहाय सुभ, होइहि रामप्रसादु ॥२॥
लंका लोलप लंकिनी, काली काल कराल ।
काल करालहिँ दीन्हिँ वलि, कालरूप कपिकाल ॥३॥
मसकरूप दसकंधपुर, निसि कपि घर घर देखि ।
सीय विलोकि असोक तर, हरष बिषाद बिसेखि ॥४॥
फरकत मंगल अंग सिय, वाम विलोचन वाहु ।
त्रिजटा सुनि कह सगुन फल, प्रिय सँदेस वड़ लाहु ॥५॥
सगुन समुझि त्रिजटा कहति, सुनु, सिय! अवहीँ आजु ।
मिलिहि रामसेवक कहिहिँ, कुसल लषनु रघुराजु ॥६॥
तुलसी प्रभु गुनगन वरनि, आपनि वात जनाइ ।
कुसल खेम सुग्रीवपुर, रामु लषन दोउ भाइ ॥७॥

———

सप्तक–३

सुरुख जानकी जानि कपि, कहे सकल संकेत ।
दीन्हि मुद्रिका, लीन्हि सिय, प्रीति प्रतीति समेत ॥ १ ॥
पाइ नाथ कर मुद्रिका, सियहिय हरष बिषादु ।
प्राननाथ प्रिय सेवकहिँ, दीन्ह सुआसिरवादु ॥ २ ॥
नाथ-सपथ पन रोपि कपि, कहत चरन सिरु नाइ ।
नहिँ विलंब, जगदंब ! अव आइ गए दोउ भाइ ॥ ३ ॥
समाचार कहि सुनत प्रभु, सानुज सहित सहाय ।
आए अव रघुबंसमनि, सोचु परिहरिय माय ॥ ४ ॥
गए सोच संकट सकल, भए सुदिन जिय जानु ।
कौतुक सागर सेतु करि, आए कृपानिधानु ॥ ५ ॥
सकुल सदल जमराजपुर, चलन चहत दसकंधु ।
काल न देखत कालवस, बीस-बिलोचन-अंधु ॥ ६ ॥
आसिष आयसु पाइ कपि, सीयचरन सिर नाइ ।
तुलसी रावन-वाग-फल, खात वराइ वराइ ॥ ७ ॥

———:०:———

सप्तक–४

सूर-सिरोमनि साहसी, सुमति समीरकुमार ।
सुमिरत सव सुख-संपदा, मुद-मंगल-दातार ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्रुसमन पद-पंकरुह, सुमिरि करहु सब काज ।
कुसल खेम कल्यान सुभ, सगन सुमंगल साज ॥ २ ॥
भरत भलाई की अवधि, सील सनेह निधान ।
धरम भगति भायप समय, सगुन कहब कल्यान ॥ ३ ॥
सेवकपाल कृपालचित, रबिकुल-कैरव-चंद ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, पग पग परमानंद ॥ ४ ॥
सियपद सुमिरि सुतीय हित, सगुन सुमंगल जान ।
स्वामि सोहागिल, भाग बड़, पुत्रकाजु कल्यान ॥ ५ ॥
लछिमन पदपंकज सुमिरि सगन सुमंगल पाइ ।
जय बिभूति कीरति कुसल, अभिमत लाभ अघाइ ॥ ६ ॥
तुलसी कानन कमलवन, सकल सुमंगल वास ।
राम-भगति-हित सगुन सुभ, सुमिरत तुलसीदास ॥ ७ ॥

———

सप्तक—५

रूख निपातत, खात फल, रक्षक अक्ष निपाति ।
कालरूप बिकराल कपि, सभय निसाचर जाति ॥ १ ॥
बन उजारि जारेउ नगर, कूदि कूदि कपिनाथ ।
हाहाकार पुकार सब, आरत मारत माथ ॥ २ ॥
पूँछ बुताइ प्रबोधि सिय, आइ गहे प्रभु पाय ।
खेम कुसल जय जानकी, जय जय जय रघुराय ॥ ३ ॥
सुनि प्रमुदित रघबंसमनि, सानुज सेन समेत ।
चले सकल मंगल सगुन, विजय सिद्धि कहि देत ॥ ४ ॥
रामपयान निसान नभ, बाजहिँ गाजहिँ बीर ।
सगुन सुमंगल समर जय, कीरति कुसल सरीर ॥ ५ ॥
कृपासिंधु प्रभु सिंधु सन, माँगेउ पंथ न दत ।
बिनय न मानहिँ जीव जड़, डाँटे नवहिँ अचेत ॥ ६ ॥
लाभु लाभु लोवा कहत, छेमकरी कह छम ।
चलत बिभीषन सगुन सुनि, तुलसी पुलकत पेम ॥ ७ ॥

———

सप्तक—६

पाहि पाहि असरन-सरन, प्रनतपाल रघुराज ।
दियो तिलक लंकेसु कहि, राम गरीबनेवाज ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंक असुभ चरचा चलति, हाट, बाट, घर, घाट ।
रावन सहित समाज अब, जाइहि बारह बाट ॥ २ ॥
ऊकपात, दिगदाह दिन, फेकरहिँ स्वान सियार ।
उदित केतु, गतहेतु महि, कंपति बारहिँ बार ॥ ३ ॥
रामकृपा कपि भालु करि, कौतुक सागर सेतु ।
चले पार बरषत बिबुध, सुमन सुमंगल हेतु ॥ ४ ॥
नीच निसाचर मीचु बस, चले साजि चतुरंग ।
प्रभु-प्रताप-पावक प्रबल, उड़ि उड़ि परत पतंग ॥ ५ ॥
साजि साजि वाहन चलहिँ, जातुधानु बलवानु ।
असगुन असुभ न गनहिँ गत, आइ कालु नियरानु ॥ ६ ॥
लरत भालु कपि सुभट सब, निदरि निसाचर घोर ।
सिर पर समरथ राम सो, साहिब, तुलसी तोर ॥ ७ ॥

सप्तक–७

मेघनादु, अतिकाय भट, परे महोदर खेत ।
रावन भाइ जगाइ तब, कहा प्रसंगु अचेत ॥ १ ॥
उठि बिसाल बिकराल बड़, कुंभकरनु जमुहान ।
लखि सुदेस कपि भालु दल, जनु दुकाल समुहान ॥ २ ॥
राम स्याम बारिद सघन, बसन सुदामिनि माल ।
बरषत सर हरषत बिबुध, दला दुकालु दयाल ॥ ३ ॥
राम रावनहिँ परसपर, होति रारि रन घोर ।
लरत पचारि पचारि भट, समर सोर दुहुँ ओर ॥ ४ ॥
बीस बाहु, दस सीस दलि, खंड खंड तनु कीन्ह ।
सुभट-सिरोमनि लंकपति, पाछे पाउ न दीन्ह ॥ ५ ॥
बिबुध बजावत दुंदुभी, हरषत बरषत फूल ।
राम बिराजत जीति रन, सुर सेवक अनुकूल ॥ ६ ॥
लंका थापि बिभीषनहि, बिबुध बसाइ सुबास ।
तुलसी जय मंगल कुसल, सुभ पंचम उनचास ॥ ७ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षष्ठ सर्ग

सप्तक–१

रघुवर-आयसु अमरपति, अमिय सींचि कपि भालु ।
सकल जिआए सगुन सुभ, सुमिरहु राम कृपालु ।। १ ।।
सादर आनी जानकी, हनूमान प्रभु पास ।
प्रीति परस्पर समउ सुभ, सगुन सुमंगल वास ।। २ ।।
सीता-सपथ प्रसंग सुभ, सीतल भयउ कृसानु ।
नेम प्रेम ब्रत धरम हित, सगुन सुहावनु जानु ।। ३ ।।
सनमाने कपि भालु सब, सादर साजि बिमानु ।
सीय सहित, सानुज, सदल, चले भानुकुल-भानु ।। ४ ।।
हरषत सुर, बरषत सुमन, सगुन सुमंगल गान ।
अवधनाथु गवने अवध, खेम कुसल कल्यान ।। ५ ।।
सिंधु, सरोवर, सरित, गिरि, कानन, भूमिविभाग ।
राम दिखावत जानकिहिं उमँगि उमँगि अनुराग ।। ६ ।।
तुलसी मंगल सगुन सुभ, कहत जोरि जग हाथ ।
हंस-बंस-अवतंस जय, जय जय जानकिनाथ ।। ७ ।।

सप्तक–२

अवध अनंदित लोग सब, ब्योम बिलोकि बिमान ।
मनहुँ कोकनद कोक मन, मुदित उदित लखि भानु ।। १ ।।
मिले गुरुहिँ, जन, परिजनहिँ, भेंटत भरत सप्रीति ।
लषन रामु सिय कुसल पुर, आए रिपु रन जीति ।। २ ।।
उदबस अवध अनाथ सब, अंबदसा दुख देखि ।
राम लषनु सीता सकल, बिकल बिषाद बिसेखि ।। ३ ।।
मिलीं मातु, हित, मीत, गरु, सनमाने सब लोग ।
सगन समय बिसमय हरष, प्रिय संजोग बियोग ।। ४ ।।
अमर अनंदित, मुनि मुदित, मुदित भवन दसचारि ।
घर घर अवध बधावने, मुदित नगर-नर-नारि ।। ५ ।।
सुदिन सोधि गरु बेदबिधि, कियो राज-अभिषेक ।
सगुन सुमंगल सिद्धि सब; दायक दोहा एक ।। ६ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाँति भाँति उपहार लेइ, मिलत जुहारत भूप।
पहिराए सनमानि सब, तुलसी सगुन अनूप ॥ ७ ॥

सप्तक—३

जयधुनि गान निसान सुर, बरषत सुरतरु फूल।
भए रामु राजा अवध, सगुन सुमंगल मूल ॥ १ ॥
भालु, बिभीषन, कीसपति, पूजे सहित समाज।
भली भाँति सनमानि सब, बिदा किए रघुराज ॥ २ ॥
रामराज संतोष सुख, घर, बन सकल सुपास।
तरु सुरतरु, सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥ ३ ॥
रामराज सब काज कहँ, नीक एक ही आँक।
सकल सगुन मंगल कुसल, होइहि बारु न बाँक ॥ ४ ॥
कुंभकरन रावन सरिस, मेघनाद से बीर।
ढहे समूल बिसाल तरु, कालनदी के तीर ॥ ५ ॥
सकुल सदन रावन सरिस, कवलित काल कराल।
सोच पोच असगुन असुभ, जाय जीव जंजाल ॥ ६ ॥
अबिचल राज बिभीषनहिँ दीन्ह राज रघुराज।
अजहुँ बिराजत लंक पर; तुलसी सहित समाज ॥ ७ ॥

सप्तक—४

मंजुल मंगल मोदमय, मूरति मारुतपूत।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल, सुमिरत रघुबर-दूत ॥ १ ॥
सगुन समय सुमिरत सुखद, भरत-आचरनु चारु।
स्वामिधरम ब्रत पेम हित, नेम निवाह निहारु ॥ २ ॥
ललित लषन-लघु-बंधु-पद, सुखद सगुन सब काहु।
सुमिरत सुभ कीरति बिजय, भूमि ग्राम गृह लाहु ॥ ३ ॥
रामचंद्र-मुख-चंद्रमा, चित चकोर जब होइ।
रामराज सब काज सुभ, समउ सुहावन सोइ ॥ ४ ॥
भूमिनंदिनी-पद-पदुम, सुमिरत सुभ सब काज।
बरषा भलि, खेती सुफल, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥ ५ ॥
सेवक, सखा, सुबंधु हित, नाइ लषनुपद माथु।
कीजिय प्रीति प्रतीति सुभ, सगुन सुमंगल साथु ॥ ६ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाम-रति, नामगति, राम नाम बिस्वास।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, तुलसी तुलसीदास ॥ ७ ॥

———

सप्तक—५

विप्र एक वालक मृतक, राखेउ रामदुआर।
दंपति बिलपत सोक अति, आरत करत पुकार ॥ १ ॥
राम सोच संकोच सव; सचिव विकल संताप।
बालक-मीचु अकाल भइ, रामराज केहि पाप ॥ २ ॥
बिबुध बिमल बानी गगन, हेतु प्रजा अपचारु।
रामराज परिनाम भल, कीजिय बेगि बिचारु ॥ ३ ॥
कोसलपाल कृपालु चित, बालक दीन्ह जिआइ।
सगुन कुसल कल्यान सुभ, रोगी उठै नहाइ ॥ ४ ॥
बालकु जिया बिलोकि सब, कहत उठा जनु सोइ।
सोच-बिमोचन सगुन सुभ, रामकृपा भल होइ ॥ ५ ॥
सिला सुतिय भइ, गिरि तरे, मृतक जिए जग जान।
राम अनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥ ६ ॥
केवट निसिचर विहँग मृग, किये साधु सनमानि।
तुलसी रघुबर की कृपा, सगुन सुमंगलखानि ॥ ७ ॥

———

सप्तक—६

रामराज राजत सकल, धरम-निरत नरनारि।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥ १ ॥
बग उलूक झगरत गए, अवध जहाँ रघुराउ।
नीक सगुन, बिवरिहि झगर, होइहि धरम निआउ ॥ २ ॥
जती-स्वान संवाद सुनि, सगुन कहब जिय जानि।
हंस-बंस-अवतंस-पुर बिलग होत पय पानि ॥ ३ ॥
राम कुचरचा करहिँ सब, सीतहिँ लाइ कलंक।
सदा अभागी लोग जग, कहत सँकोचु न संक ॥ ४ ॥
सती-सिरोमनि सीय तजि, राखि लोक रुचि राम।
सहे दुसह दुख सगुन गत, प्रिय बियोगु परिनाम ॥ ५ ॥
बरन-धरम आस्रम-धरम, निरत सुखी सब लोग।
रामराज मंगल सगुन, सुफल जाग जप जोग ॥ ६ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाजिमेध अगनित किए, दिए दान बहु भाँति ।
तुलसी राजा राम जग, सगुन सुमंगल पाँति ॥ ७ ॥

सप्तक–७

असमंजसु वड़ सगुन गत, सीता-राम-वियोग ।
गवन विदेस, कलेस कलि, हानि, पराभव, रोग ॥ १ ॥
मानिय सिय अपराध विनु, प्रभु परिहरि पछितात ।
रुचै समाज न राजसुख, मन मलीन कृस गात ॥ २ ॥
पुत्र-लाभ, लव-कुस-जनम, सगुन सुहावन होइ ।
समाचार मंगल कुसल, सुखद सुनावइ कोइ ॥ ३ ॥
रामसभा लव-कुस ललित, किए राम-गुन-गान ।
राज-समागम सगुन सुभ, सुजस लाभ सनमान ॥ ४ ॥
वालमीकि लव-कुस सहित, आनी सिय सुनि राम ।
हृदय हरषु जानव प्रथम, सगुन सोक परिनाम ॥ ५ ॥
अनरथ असगुन अति असुभ, सीता-अवनि-प्रबेसु ।
समय सोक संताप भय, कलह कलंक कलेसु ॥ ६ ॥
सुभग सगुन उनचास रस, रामचरितमय चारु ।
राम-भगत हित सफल सव, तुलसी विमल विचारु ॥ ७ ॥

सप्तम स[illegible]

सप्तक–१

राम लषनु सानुज भरत, सुमिरत सुभ सब काज ।
सहित प्रीति परतीति हित, सगुन सकल सुभ काज ॥ १ ॥
सुख-सुद-मंगल-कुमुद-विधु, सगुन-सरोरुह-भानु ।
करहु काज सव, सिद्धि सुभ, आनि हिए हनुमान ॥ २ ॥
राजकाज, मनि, हेम, हय, रामरूप रविवार ।
कहव नीक जयलाभ सुभ, सगुन समय अनुहार ॥ ३ ॥
रस गोरस खेती सकल, विप्रकाज सुभ साज ।
राम-अनुग्रह सोम दिन, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मंगल मंगल भूमि हित, नृपहित जय संग्राम।
सगुन बिचारब समय सम, करि गुरुचरन प्रनाम ॥ ५ ॥
बिपुल, वनिज, बिद्या, बसन, बुध बिसेषि गृहकाजु।
सगुन सुमंगल कहव सुभ, सुमिरि सीय रघुराजु ॥ ६ ॥
गुरुप्रसाद मंगल सकल, रामराज सब काज।
जज्ञ, विवाह-उछाह ब्रत, सुभ तुलसी सव साज ॥ ७ ॥

सप्तक—२

सुक्र सुमंगल काज सव, कहव सगुन सुभ देखि।
जंत्र मंत्र मनि औषधी, सहसा सिद्धि बिसेखि ॥ १ ॥
रामकृपा थिर काज सुभ, सनि-बासर बिस्राम।
लोह, महिष, गज, बनिज भल, सुख सुपास गृह ग्राम ॥ २ ॥
राहु केतु उलटे चलहिं, असुभ अमंगल मूल।
रुंड मुंड पाषंड-प्रिय, असुर अमर प्रतिकूल ॥ ३ ॥
समउ राहु रवि-गहनु-मत, राजहिं प्रजहिं कलेस।
सगुन सोच संकट विकट, कलह कलुष दुख देस ॥ ४ ॥
राहु सोम संगमु बिषमु, असगुन उदधि अगाधु।
ईति भीति खल दल प्रवल, सीदहिं भूसुर साधु ॥ ५ ॥
सात पाँच ग्रह एक थल, चलहिं वाम गति धाम।
राज बिराजिय समउ गत, सुभहित सुमिरहु राम ॥ ६ ॥
खेती वनि बिद्या बनिज, सेवा सिलिप सुकाज।
तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल राम के राज ॥ ७ ॥

सप्तक—३

सुधा, साधु, सुरतरु, सुमन, सुफल सुहावनि बात।
तुलसी सीतापति-भगति, सगुन सुमंगल सात ॥ १ ॥
सिद्ध समागम संपदा, सदन सरीर सुपास।
सीतानाथ-प्रसाद सुभ, सगुन सुमंगल वास ॥ २ ॥
कौसल्या कल्यानमय, मूरति करत प्रनामु।
सगुन सुमंगल काज सुभ, कृपा करहिं सियरामु ॥ ३ ॥
सुमिरि सुमित्रा नाम जग, जे तिय लेहिं सुनेम।
सुवन लखन रिपुदवनु से, पावहिं पति-पद-प्रेम ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान ।
धरनि धाम धन धरम सुख, सुत गुन-रूप-निधान ॥ ५ ॥
कलह कपट कलि कैकई, सुमिरत काज नसाइ ।
हानि मीचु दारिद दुरित, असगुन असुभ अघाइ ॥ ६ ॥
राम वाम दिसि जानकी, लषनु दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ ७ ॥

सप्तक—४

मध्यम दिन, मध्यम दसा, मध्यम सकल समाज ।
नाइ माथ रघुनाथपद, जानव मध्यम काज ॥ १ ॥
हित पर बढ़इ विरोधु जव, अनहित पर अनुराग ।
रामविमुख विधि वामगत, सगुन अघाइ अभाग ॥ २ ॥
कृपनु देइ, पाइय परो, बिन साधन सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि, जो कीजिय सुभ सोइ ॥ ३ ॥
पहिले हित परिनामगत, बीच बीच भल पोच ।
सगुन कहब अस रामगति, कहवि समेत सँकोच ॥ ४ ॥
रमा रमापति गौरि हरु, सीताराम सनेहु ।
दंपति-हित, संपति सकल, सगुन सुमंगल गेहु ॥ ५ ॥
प्रीति प्रतीति न रामपद, वड़ी आस, वड़ लोभ ।
नहिं सपनेहुँ संतोष सुख, जहाँ तहाँ मन छोभ ॥ ६ ॥
पय नहाइ, फल खाइ, जपु रामनाम षट मास ।
सगुन सुमंगल सिद्धि सव, करतल तुलसीदास ॥ ७ ॥

सप्तक—५

वड़ कलेस, कारज अलप, वड़ी आस, लहु लाहु ।
उदासीन सीतारमन, समय सरिस निरवाहु ॥ १ ॥
दस दिसि दुख दारिद दुरित, दुसह दसा दिन दोष ।
फेरे लोचन राम अव, सनमुख साज सरोष ॥ २ ॥
खेती वनिज न, भीख भलि, अफल उपाय कदंव ।
कुसमय जानव, वाम विधि, रामनाम अवलंव ॥ ३ ॥
पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सव सगुन सुभ, सुमिरत सीताराम ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भागु भाग तजि भालथलु, आलस ग्रसे उपाउ ।
असुभ अमंगल सगुन सुनि, सरन राम के आउ ॥ ५ ॥
गइ बरषा करषक बिकल, सूखत सालि सुनाज ।
कुसुमउ कुसगुन कलह कलि, प्रजहिँ कलेसु कुराज ॥ ६ ॥
तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरहु लषन समेत ।
दिन दिन उदउ अनंद अव, सगुन सुमंगल देत ॥ ७ ॥

सप्तक—६

उदवस अवध नरेस बिनु, देस दुखी नर नारि ।
राजभंग कुसमाज बड़, गत ग्रह-चालि बिचारि ॥ १ ॥
अवध-प्रबेस अनंदु बड़, सगुन सुमंगल माल ।
राम-तिलक-अवसर कहव, सुख संतोष सुकाल ॥ २ ॥
राम राज-बाधक बिबुध, कहव सगुन सतिभाउ ।
देखि देवकृत दोष दुख, कीजिय उचित उपाउ ॥ ३ ॥
मंद मंथरा मोहवस, कुटिल कैकई कीन्ह ।
ब्याधि बिपति सव देवकृत, समय सगुन कहि दीन्ह ॥ ४ ॥
रामबिरह दसरथ दुखित, कहति केकई काकु ।
कुसमय जाय उपाय सव, केवल करमबिपाकु ॥ ५ ॥
लखन राम सिय वसत बन, बिरह-बिकल पुरलोग ।
समय सगुन कह करमवस, दुख सुख जोग वियोग ॥ ६ ॥
तुलसी लाइ रसाल तरु, निज कर सींचत सीय ।
कृषी सफल भल सगुन सुभ, समउ कहव कमनीय ॥ ७ ॥

सप्तक—७

सुदिन साँझ पोथी नेवति, पूजि प्रभात सप्रेम ।
सगुन विचारव चारुमति, सादर सत्य सनेम ॥ १ ॥
मुनि गनि, दिन गनि, धातु गनि, दोहा देखि बिचारि ।
देस, करम, करता, बचन, सगुन समय अनुहारि ॥ २ ॥
सगुन सत्य ससि नयन गुन, अवधि अधिक नयवान ।
होइ सुफल सुभ जासु जसु, प्रीति प्रतीति प्रमान ॥ ३ ॥
गुरु गनेस हरु गौरि सिय, रामु लषनु हनुमानु ।
तुलसी सादर सुमिर सव, सगुन बिचार बिधानु ॥ ४ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हनूमान सानुज भरत, राम सीय उर आनि ।
लषन सुमिरि तुलसी कहत, सगुन बिचारु बखानि ॥ ५ ॥
जो जेहि काजहि अनुहरइ, सो दोहा जब होइ ।
सगुन समय सब सत्य सब, कहब रामगति गोइ ॥ ६ ॥
गुन बिस्वास, बिचित्र मनि, सगुन मनोहर हारु ।
तुलसी रघुवर-भगत-उर, बिलसत बिमल बिचारु ॥ ७ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोहावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोहावली

दोहा

राम वाम दिसि जानकी लषन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय सुरतरु तुलसी तोर ॥ १॥
सीता लषनु समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर, बरषत सुमन सगुन सुमंगलवास ॥ २ ॥
पंचवटी वटविटप-तर सीता-लषन-समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु सकल सुमंगल देत ॥ ३ ॥
चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय-लषन-समेत ।
रामनाम-जप जापकहिं तुलसी अभिमत देत ॥ ४ ॥
पय अहार फल खाइ जपु रामनाम षट मास ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब करतल तुलसीदास ॥ ५ ॥
रामनाम-मनि-दीप धरु जीह-देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरौ जौ चाहसि उजियार ॥ ६ ॥
हिय निर्गुन, नयनन्हि सगुन, रसना राम सुनाम ।
मनहुँ पुरट-संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम ॥ ७ ॥
सगुन ध्यान रुचि सरस नहिं, निर्गुन मन तें दूरि ।
तुलसी सुमिरहु राम को नाम सजीवन-मूरि ॥ ८ ॥
एक छत्र, इक मुकुटमनि, सब बरनन पर जोउ ।
तुलसी रघुबर-नाम के बरन बिराजत दोउ ॥ ९ ॥
रामनाम को अंक है, सब साधन हैं सून ।
अंक गए कछु हाथ नहिं, अंक रहे दसगून ॥ १०॥
नाम राम को कलपतरु, कलि कल्यान-निवास ।
जो सुमिरत भयो भाग तें, तुलसी तुलसीदास ॥११॥

७—पुरट = सोना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाम जपि जीह जन भए सुकृत सुखसालि।
तुलसी इहाँ जो आलसी गयो आजु की कालि ॥१२॥
नाम गरीबनिवाज को राज देत जन जानि।
तुलसी मन परिहरत नहिँ घुरविनिआ की वानि ॥ १३॥
कासी विधि बस तनु तजै, हठि तन तजै प्रयाग।
तुलसी जो फल सो सुलभ रामनाम अनुराग ॥ १४॥
मीठो अरु कठवति भरौ, रौताई अरु खेम।
स्वारथ परमारथ सुलभ, रामनाम के प्रेम ॥१५॥
रामनाम सुमिरत सुजस भाजन भए कुजाति।
कुतरु कुसर पुर-राजमग लहत भुवन-विख्याति ॥१६॥
स्वारथ सुख सपनेहुँ अगम परमारथ न प्रबेस।
रामनाम सुमिरत मिटहि तुलसी कठिन कलेस ॥१७॥
'मोर मोर' सब कहँ कहसि, तू को ? कहु निज नाम।
कै चुप साधहि सुनि समुझि, कै तुलसी जपु राम ॥१८॥
हम लखि, लखहि हमार, लखि हम हमार के बीच।
तुलसी अलखहि का लखहि ? रामनाम जपु नीच ॥१९॥
रामनाम-अवलंब बिनु परमारथ की आस।
बरषत वारिद-बूंद गहि चाहत चढ़न अकास ॥२०॥
तुलसी हठि हठि कहत नित चित सुनि हित करि मानि।
लाभ राम सुमिरत बड़ो बड़ी बिसारे हानि ॥२१॥
बिगरी जनम अनेक की सुधरै अबहीँ आजु।
होहि राम को, नाम जपु, तुलसी तजि कुसमाजु ॥२२॥
प्रीति प्रतीति सुरीति सोँ रामनाम जपु राम।
तुलसी तेरो है भलो आदि मध्य परिनाम ॥२३॥
दंपति रस-रसना, दसन परिजन, बदन सुगेह।
तुलसी हरहित बरन सिसु, संपति सहज सनेह ॥२४॥
बरषाऋतु रघुपति-भगति तुलसी सालि सुदास।
रामनाम वर बरन जुग सावन भादौँ मास ॥२५॥
रामनाम नर-केसरी कनककसिपु कलिकालु।
जापकजन प्रह्लाद जिमि पालहि दलि सुरसालु ॥२६॥

१३–घुरबिनिआ = घूर (कूड़ाखाने) में पड़े दाने चुननेवाली।
२४–हरहित बरन = रामनाम। २६–सुरसाल = राक्षस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाम कलि कामतरु सकल सुमंगल कंद ।
सुमिरत करतल सिद्धि सब पग पग परमानंद ॥२७॥
रामनाम कलि कामतरु रामभगति सुरधेनु ।
सकल सुमंगल मूल जग गुरुपद-पंकज-रेनु ॥२८॥
जथा भूमि सब बीज मैं, नखत-निवास अकास ।
रामनाम सब धरममैं, जानत तुलसीदास ॥२९॥
सकल कामनाहीन जे रामभगति-रसलीन ।
नाम प्रेम-पीयष-हृद तिनहुँ किए मन मीन ॥३०॥
ब्रह्म राम तें नाम बड़ बरदायक बरदानि ।
रामचरित सतकोटि महँ लिय महेस जिय जानि ॥३१॥
सबरी गीध सुसेवकनि सुगति दीन्हि रघुनाथ ।
नामु उधारे अमित खल बेद-बिदित गुनगाथ ॥३२॥
रामनाम पर राम तें प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल सगुन-सुमंगल-कोस ॥३३॥
लंक बिभीषन, राज कपि, पति मारुति, खग मीच ।
लही राम सों, नामरति चाहत तुलसी नीच ॥३४॥
हरन अमंगल अघ अखिल, करन सकल कल्यान ।
रामनाम नित कहत हर, गावत बेद पुरान ॥३५॥
तुलसी प्रीति प्रतीति सों रामनाम-जप-जाग ।
किए होय बिधि दाहिनो देइ अभागेहिं भाग ॥३६॥
जल थल नभ गति अमित अति, अग जग जीव अनेक ।
तुलसी तोसे दीन कहँ रामनाम-गति एक ॥३७॥
राम भरोसो, राम बल, रामनाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल माँगत तुलसीदास ॥३८॥
रामनाम रति, राम गति रामनाम बिस्वास ।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, दुहुँ दिसि तुलसीदास ॥३९॥
रसना साँपिन, बदन बिल, जे न जपहिं हरिनाम ।
तुलसी प्रेम न राम सों ताहि बिधाता बाम ॥४०॥
हिय फाटहु फूटहु नयन, जरउ सो तन केहि काम ।
द्रवहिं, स्रवहिं पुलकहिं नहीं तुलसी सुमिरत राम ॥४१॥

३१—रामचरित = रामायण ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामहिँ सुमिरत, रन भिरत, देत, परत गुरु पाय ।
तुलसी जिन्हहिँ न पुलक तनु ते जग जीवत जाय ॥४२॥

सोरठा

हृदय सो कुलिस समान, जो न द्रवहि हरिगुन सुनत ।
कर न रामगुन-गान, जीह सो दादुर-जीह सम ॥४३॥
स्रवै न सलिल सनेह, तुलसी सुनि रघुबीर-जस ।
ते नयना जनि देहु, राम करहु बरु आँधरो ॥४४॥
रहै न जल भरि पूरि, राम ! सुजस सुनि रावरो ।
तिन आँखिन में धूरि, भरि भरि मूठी मेलिए ॥४५॥
वारक सुमिरत तोहिँ होहिँ तिनहिँ सन्मुख सुखद ।
क्यों न सँभारहि मोहिँ दयासिंधु दसरत्थ के ? ॥४६॥
साहिव होत सरोष सेवक को अपराध सुनि ।
अपने देखे दोष सपनेहु राम न उर धरे ॥४७॥

दोहा

तुलसी रामहिँ आपु तेँ सेवक की रुचि मीठि ।
सीतापति से साहिवहिँ कैसे दीजै पीठि ॥४८॥
तुलसी जाके होयगी अंतर बाहिर दीठि ।
सो कि कृपालुहिँ देइगो केवट पालहिँ पीठि ? ॥४९॥
प्रभु तरुतर, कपि डार पर, ते किए आपु समान ।
तुलसी कहूँ न राम सो साहिब सीलनिधान ॥५०॥
रे मन! सब सोँ निरस ह्वै सरस राम सोँ होहि ।
भलो सिखावन देत है निसि दिन तुलसी तोहि ॥५१॥
हरो चरहिँ, तापहिँ बरत, फरे पसारहिँ हाथ ।
तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥५२॥
स्वारथ सीताराम सों, परमारथ सियराम ।
तुलसी तेरो दूसरे द्वार कहा कहु काम ॥५३॥
स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एक ही ओर ।
द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर ॥५४॥
तुलसी स्वारथ रामहित, परमारथ रघुबीर ।
सेवक जाके लषन से पवनपूत रनधीर ॥५५॥
ज्योँ जग बैरी मीन को, आपु सहित, बिनु वारि ।
त्यों तुलसी रघुबीर बिनु गति आपनी विचारि ॥५६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामप्रेम विनु दूवरो, रामप्रेम ही पीन।
रघुवर कवहुँक करहुगे, तुलसी ज्यौं जल मीन ॥५७॥
राम सनेही, राम गति, रामचरन रति जाहि।
तुलसी फल जग-जनम को दियो विधाता ताहि ॥५८॥
आपु आपने तें अधिक जेहि प्रिय सीताराम।
तेहिके पग की पानहीं तुलसी-तनु को चाम ॥५९॥
स्वारथ-परमारथ रहित सीताराम-सनेह।
तुलसी सो फल चारि को फल हमार मत एह ॥६०॥
जे जन रूखे विषयरस, चिकने रामसनेह।
तुलसी ते प्रिय राम के, कानन वसहिँ कि गेह ॥६१॥
जथालाभ संतोष सुख, रघुवर-चरन-सनेह।
तुलसी जौ मन खूँद सम कानन वसहु कि गेह ॥६२॥
तुलसी जोपै राम सों, नाहिन सहज सनेह।
मूँड़ मुड़ायो वादि ही, भाँड़ भयो तजि गेह ॥६३॥
तुलसी श्रीरघुवीर तजि करै भरोसो और।
सुख संपति की का चली नरकहु नाहीं ठौर ॥६४॥
तुलसी परिहरि हरि हर्राहँ, पाँवर पूजहिँ भूत।
अंत फजीहति होहिँगे गनिका के से पूत ॥६५॥
सेए सीताराम नहिँ भजे न संकर गौरि।
जनम गँवायो वादि ही परत पराई पौरि ॥६६॥
तुलसी हरि अपमान तें होइ अकाज समाज।
राज करत रज मिलि गए सदल सकुल कुरुराज ॥६७॥
तुलसी रामहिँ परिहरे निपट हानि सुनु ओझ।
सुरसरिगत सोई सलिल, सुरा सरिस गंगोझ ॥६८॥
राम दूरि माया वढ़ति, घटति जानि मन माँह।
भूरि होति रवि दूरि लखि सिर पर पग तर छाँह ॥६९॥
साहिव सीतानाथ सों जव घटिहै अनुराग।
तुलसी तवहीं भाल तें भभरि भागि है भाग ॥७०॥
करिहौ कोसलनाथ तजि जवहिँ दूसरी आस।

६२—खूँद = घोड़े की उछल कूद की चाल।
६८—ओझ = ओझा। गंगोझ = गंगोदक, गंगाजल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ तहाँ दुख पाइहौ तव हीं तुलसीदास ॥७१॥
विध न ईंधन पाइए, सायर जुरै न नीर।
परै उपास कुबेरघर, जो विपच्छ रघुबीर ॥७२॥
बरषा को गोवर भयो, को चहै, को करै प्रीति ?
तुलसी तू अनुभवहि अब राम-विमुख की रीति ॥७३॥
सवहि समरथहिँ सुखदप्रिय, अच्छम प्रिय हितकारि :
कवहुँ न काहुहि राम प्रिय तुलसी कहा विचारि ॥७४॥
तुलसी उद्यम करम जग जव जेहिँ राम सुडीठि।
होइ सुफल सोइ, ताहि सब सनमुख, प्रभु तन पीठि ! ॥७५॥
प्रेम-कामतरु परिहरत, सेवत कलितरु ठँठ।
स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झँठ ॥७६॥
निज दूषनु, गुन राम के समुझे तुलसीदास।
होय भलो कलिकाल हू उभय लोक अनयास ॥७७॥
कै तोहिँ लागहिँ राम प्रिय, कै तू प्रभु-प्रिय होहि।
दुइ महँ रुचै जो सुगम सो कीबे तुलसी तोहि ॥७८॥
तुलसी दुइ महँ एक ही खेल, छाँड़ि छल, खेलु।
कै करु ममता राम सों, कै ममता परहेलु ॥७९॥
निगम अगम, साहव सुगम, राम साँचिली चाह।
अंबु असन अवलोकियत, सुलभ सबै जग माँह ॥८०॥
सनमुख आवत पथिक ज्यों दिए दाहिनो वाम।
तैसोइ होत सु आपको, त्यों ही तुलसी राम ॥८१॥
राम-प्रेम-पथ पेखिये, दिए विषय तनु पीठि।
तुलसी कँचुरि परिहरे होत साँपहू डीठि ॥८२॥
तुलसी जौलौं विषय की, मुधा माधुरी मीठि।
तौलों सुधा सहस्र सम राम भगति सुठि सीठि ॥८३॥
जैसो तैसो रावरो केवल कोसलपाल।
तौ तुलसी को है भलो तिहूँ लोक तिहुँ काल ॥८४॥
है तुलसी के एक गुन अवगुननिधि कहैं लोग।
भलो भरोसो रावरो राम रीझिवे जोग ॥८५॥

७९—परहेलु = तिरस्कार कर।
८३—मुधा = व्यर्थ। सीठि = सीठी, नीरस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रीति राम सौँ, नीतिपथ चलिय, राग रिस जीति ।
तुलसी संतन के मते इहै भगति की रीति ॥८६॥
सत्य वचन, मानस विमल, कपटरहित करतूति ।
तुलसी रघुवर सेवकहिँ, सकै न कलिजुग धूति ॥८७॥
तुलसी सुखी जो राम सोँ, दुखी सो निज करतूति ।
करम वचन मन टीक जेहि तेहि न सकै कलि धूति ॥८८॥
नातो नाते राम के, रामसनेह सनेहु ।
तुलसी माँगत जोरि कर जनम जनम सिव देहु ॥८९॥
सब साधन को एक फल, जेहि जान्यो सोइ जान ।
ज्यों त्यों मन-मंदिर बसहिँ राम धरे धनु बान ॥९०॥
जौ जगदीस तौ अति भलो, जौ महीस तौ भाग ।
तुलसी चाहत जनम भरि रामचरन-अनुराग ॥९१॥
परहुँ नरक, फलचारि-सिसु, मीच डाँकिनी खाउ ।
तुलसी राम सनेह को, जो फल सो जरि जाउ ॥९२॥
हित सोँ हित, रति राम सोँ, रिपु सोँ बैर विहाउ ।
उदासीन सब सोँ सरल, तुलसी सहज सुभाउ ॥९३॥
तुलसी ममता राम सोँ, समता सब संसार ।
राग न रोष न दोष दुख, दास भए भवपार ॥९४॥
रामहि डरु, करु राम सोँ ममता, प्रीति, प्रतीति ।
तुलसी निरुपधि राम को भए हारेहू जीति ॥९५॥
तुलसी राम कृपालु सौँ कहि सुनाउ गुन दोष ।
होय दूबरी दीनता, परम पीन संतोष ॥९६॥
सुमिरन सेवा राम सोँ, साहब सोँ पहिचानि ।
ऐसेहु लाभ न ललक जो, तुलसी नित हितहानि ॥९७॥
जाने जानत जोइये, बिनु जाने को जान ? ।
तुलसी यह सुनि समुझि हिय आनु धरे धनुबान ॥९८॥
करमठ कठमलिया कहैँ, ज्ञानी ज्ञानविहीन ।
तुलसी त्रिपथ विहाय गो, रामदुआरे दीन ॥९९॥
बाधक सब सब के भए, साधक भए न कोइ ।
तुलसी राम कृपालु तें भलो होइ सो होइ ॥१००॥

८७–धूति सकै = धोखा दे सकता है ।
९९–त्रिपथ = कर्म, ज्ञान और उपासना कांड ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकरप्रिय मम द्रोही, सिवद्रोही मम दास ।
ते नर करहिँ कलप भरि घोर नरक महँ वास ॥१०१॥
विलग विलग सुख संग दुख जनम मरन सोइ रीति ।
रहियत राखे राम के, गए ते उचित अनीति ॥१०२॥
जाय कहव करतूति विनु, जाय जोग विनु छेम ।
तुलसी जाय उपाय सव विना रामपद-प्रेम ॥१०३॥
लोग मगन सव जोग ही, जोग जाय विनु छेम ।
ज्यों तुलसी के भावगत रामप्रेम विनु नेम ॥१०४॥
राम निकाई रावरी है सव ही को नीक ।
जो यह साँची है सदा तो नीको तुलसीक ॥१०५॥
तुलसी राम जो आदरचो खोटो खरो खरोइ ।
दीपक काजर सिर धरचो, धरचो सु धरचो धरोइ ॥१०६॥
तनु विचित्र, कायर वचन, अहि अहार, मन घोर ।
तुलसी हरि भए पच्छधर, ताते कह सव मोर ॥१०७॥
लहै न फूटी कौड़िहू, को चाहै, केहि काज ?
सो तुलसी महँगो कियो राम गरीवनिवाज ॥१०८॥
घर घर माँगे टूक, पुनि भूपति पूजे पाँय ।
जे तुलसी तव राम विनु, ते अव राम सहाय ॥१०९॥
तुलसी राम सुदीठि तेँ निवल होत वलवान ।
वैर वालि सुग्रीव के कहा कियो हनुमान ? ॥११०॥
तुलसी रामहु तें अधक रामभक्त जिय जान ।
रिनिया राजा राम भे, धनिक भए हनुमान ॥१११॥
कियो सुसेवक-धरम कपि, प्रभु कृतज्ञ जिय जानि ।
जोरि हाथ ठाढ़े भए वरदायक वरदानि ॥११२॥
भगत-हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप ।
किए चरित पावन परम प्राकृत-नर-अनुरूप ॥११३॥
ज्ञान-गिरा-गोतीत, अज, माया-गुन-गोपार ।
सोइ सच्चिदानंदघन करत चरित्र उदार ॥११४॥
हिरन्याक्ष भ्राता सहित, मधुकैटभ वलवान ।
जेहि मारे सोइ अवतरे कृपासिंधु भगवान ॥११५॥
सुद्ध सच्चिदानंदमय कंद भानु-कुलकेतु ।
चरित करत नर अनुहरत संसृति-सागर-सेतु ॥११६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल-बिभूषन बसन बर, धूरि धूसरित अंग ।
बालकेलि रघुबर करत, बाल-बंधु सब संग ॥११७॥
अनुदिन अवध बधावने, नित नव मंगल मोद ।
मुदित मातु-पितु लोग लखि रघुबर बाल-बिनोद ॥११८॥
राज-अजिर राजत रुचिर कोसलपालक-बाल ।
जानु-पानि-चर चरित बर, सगुन-सुमंगल-माल ॥११९॥
नाम ललित, लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन, भूषन ललित, ललित अनुज सिसु साथ ॥१२०॥
राम, भरत, लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभ नाम ।
सुमिरत दसरथ सुवन सब पूजहिं सब मनकाम ॥१२१॥
बालक कोसलपाल के सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मन-मानस बसत मंगल मंजु मराल ॥१२२॥
भगत, भूमि, भूसुर, सुरभि, सुर हित लागि कृपाल ।
करत चरित धरि मनुज-तनु, सुनत मिटहिं जगजाल ॥१२३॥
निज इच्छा प्रभु अवतरइ सुर, महि, गो, द्विज लागि ।
सगुन-उपासक संग तहँ रहे मोक्ष सब त्यागि ॥१२४॥
परमानंद कृपायतन, मन परिपूरन-काम ।
प्रेमभगति अनपायनी देहु हमहिं श्रीराम ॥१२५॥
बारि मथे घृत होइ बरु सिकता तें बरु तेल ।
बिनु हरि-भजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल ॥१२६॥
हरिमाया-कृत दोष गुन बिनु हरिभजन न जाहिं ।
भजिय राम सब काम तजि अस बिचारि मन माहिं ॥१२७॥
जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हिं करइ चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनायकहिं भजहिं जीव ते धन्य ॥१२८॥
श्रीरघुबीर-प्रताप तें सिंधु तरे पाषान ।
ते मतिमंद जे राम तजि भजहिं जाय प्रभु आन ॥१२९॥
लव निमेष परमानु जुग, बरष कलप सर चंड ।
भजहि न मन तेहि राम कहँ काल जासु कोदंड ॥१३०॥
तब लगि कुसल न जीव कहँ, सपनेहुँ मन बिस्राम ।
जब लगि भजत न राम कहँ सोकधाम तजि काम ॥१३१॥
बिनु सतसंग न हरिकथा, तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गए बिनु रामपद होय न दृढ़ अनुराग ॥१३२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिनु बिस्वास भगति नहिँ, तेहि बिनु द्रवहिँ न राम।
रामकृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिस्राम ।।१३३।।

सोरठा

अस बिचारि मन धीर तजि कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुंदर सुखद ।।१३४।।
भावबस्य भगवान, सुखनिधान करुनाभवन।
तजि ममता, मद, मान, भजिय सदा सीतारमन ।।१३५।।
कहहिँ बिमलमति संत, बेद पुरान बिचारि अस।
द्रवैँ जानकीकंत तव छूटै संसारदुख ।।१३६।।
बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु ?।
गावहिँ बेद पुरान, सुख कि लहिय हरिभगति बिनु ?।।१३७।।

दोहा

रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निर्वान।
ज्ञानवंत अपि सोइ नर पसु बिनु पूँछ बिखान ।।१३८।।
जरउ सो संपति, सदन, सुख, सुहृद, मातु, पितु, भाइ।
सनमुख होत जो रामपद करइ न सहज सहाइ ।।१३९।।
सेइ,साधु गुरु, समुझि, सिखि, रामभगति थिरताइ।
लरिकाईं को पैरिबो तुलसी बिसरि न जाइ ।।१४०।।
सबै कहावत राम के, सबहि राम की आस।
राम कहैं जेहि आपनो, तेहि भजु तुलसीदास ।।१४१।।
जेहि सरीर रति राम सों सोइ आदरहिँ सुजान।
रुद्रदेह तजि नेह-बस बानर भे हनुमान ।।१४२।।
जानि रामसेवा सरस, समुझि करब अनुमान।
पुरखा ते सेवक भए, हर ते भे हनुमान ।।१४३।।
तुलसी रघुबर-सेवकहिँ खल डाँटत मन माखि।
बाजराज के बालकहिँ लवा दिखावत आँखि ।।१४४।।
रावन रिपु के दास तें कायर करहिँ कुचालि।
खर दूषन मारीच ज्यों, नीच जाहिँगे कालि ।।१४५।।
पुन्य, पाप, जस, अजस के भावी भाजन भूरि।
संकट तुलसीदास को राम करहिँगे दूरि ।।१४६।।
खेलत बालक ब्याल संग, मेलत पावक हाथ।
तुलसी सिसु पितु-मातु ज्यों राखत सिय रघुनाथ ।।१४७।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी दिन भल साहु कहँ, भली चोर कहँ राति ।
निसि बासर ताकहँ भलो मानै राम-इताति ॥१४८॥
तुलसी जाने सुनि समुझि कृपासिंधु रघुराज ।
महँगे मनि कंचन किए, सौंधे जग, जल नाज ॥१४९॥
सेवा, सील, सनेह, बस करि, परिहरि प्रिय लोग ।
तुलसी ते सब राम सों सुखद सुजोग वियोग ॥१५०॥
चारि चहत मानस अगम, चनक चारि को लाहु ।
चारि परिहरे चारि को दानि चारि चख चाहु ॥१५१॥
सूधे मन, सूधे बचन सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल विधि रघुबर-प्रेम-प्रसूति ॥१५२॥
बेष बिसद, बोलनि मधुर, मन कटु, करम मलीन ।
तुलसी राम न पाइए भए विषय-जल-मीन ॥१५३॥
बचन-बेष तें जो बनै सो बिगरै परिनाम ।
तुलसी मन तें जो बनै बनी बनाई राम ॥१५४॥
नीच मीचु लै जाइ जो राम-रजायसु पाइ ।
तो तुलसी तेरो भलो, नतु अनभलो अघाइ ॥१५५॥
जातिहीन, अघ-जनम-महि, मुकुत कीनि असि नारि ।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहिँ बिसारि ? ॥१५६॥
बंधु-बधू-रत कहि कियो बचन निरुत्तर बालि ।
तुलसी प्रभु सुग्रीव की चितइ न कछू कुचालि ॥१५७॥
बालि बली बलसालि दलि सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपालु को विरुद गरीबनिवाज ॥१५८॥
कहा बिभीषन लै मिलो, कहा बिगारचो बालि ?
तुलसी प्रभु सरनागतहिँ, सब दिन आए पालि ॥१५९॥
तुलसी कोसलपाल सो, को सरनागत-पाल ?
भज्यो बिभीषन बंधु - भय, भंज्यो दारिद-काल ॥१६०॥
कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस अस रामकर, समुझि परै कहु काहि ? ॥१६१॥

१४८—इताति = इताअत, अनुशासन, आज्ञा ।
१४९—सौंधे = स्वर्घ, सस्ते । १६१—चाहि = अपेक्षा ; उससे (बढ़कर) ।

७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वलकल भूषन, फल असन, तृन सज्या , द्रुम प्रीति ।
तिन्ह समयन लंका दई, यह रघुवर की रीति ।।१६२।।
जो संपति सिव रावनहिं दीन्हि दिए दस माथ ।
सोइ संपदा विभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ ।।१६३।।
अविचल राज विभीषनहिँ दीन्ह राम रघुराज ।
अजहुँ विराजत लंक पर तुलसी सहित समाज ।।१६४।।
कहा विभीषन लै मिल्यो कहा दियो रघुनाथ ।
तुलसी यह जाने बिना मूढ़ मीजिहैँ हाथ ।।१६५।।
बैरिबंधु निसिचर अधम, तज्यो न भरे कलंक ।
झूठे अघ सिय परिहरी तुलसी साइँ ससंक ।।१६६।।
तेहि समाज कियो कठिन पन जेहि तौल्यो कैलास ।
तुलसी प्रभु-महिमा कहौं, सेवक को बिस्वास ।।१६७।।
सभा सभासद निरखि पट पकरि, उठायो हाथ ।
तुलसी कियो इगारहोँ बसनबेष जदुनाथ ।।१६८।।
त्राहि तीन कह्यो द्रौपदी तुलसी राजसमाज ।
प्रथम बढ़े पट, बिय बिकल, चहत चकित निज काज ।।१६९।।
सुखजीवन सब कोउ चहत, सुखजीवन हरिहाथ ।
तुलसी दाता माँगनेउ देखियत अबुध अनाथ ।।१७०।।
कृपिन देइ, पाइय परो, बिनु साधे सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि जो कीजै सुभ सोइ ।।१७१।।
दंडकवन-पावन-करन चरन-सरोज प्रभाउ ।
ऊसर जामहि, खल तरहि, होइ रंक ते राउ ।।१७२।।
बिन ही ऋतु तरुवर फरत, सिला द्रवति जलजोर ।
राम लषन सिय करि कृपा जब चितवत जेहि ओर ।।१७३।।
सिला सु तिय भइ, गिरि तरे, मृतक जिए जग जान ।
राम-अनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ।।१७४।।
सिलासाप-मोचन चरन सुमिरहु तुलसीदास ।
तजहु सोच, संकट मिटहि, पूजिहि मन की आस ।।१७५।।
मुए जिआए भालु कपि, अवध विप्र को पूत ।
सुमिरहु तुलसी ताहि तू जाको मारुति दूत ।।१७६।।

१६८–इगारहोँ = दस अवतारों के अतिरिक्त ग्यारहवाँ वस्त्र का रूप ।
१६९–बिय = दूसरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल करम गुन दोष जग जीव तिहारे हाथ।
तुलसी रघुवर रावरो, जान जानकीनाथ ॥१७७॥
रोगनिकर तनु, जरठपनु, तुलसी संग कुलोग।
रामकृपा लै पालिये, दीन पालिबे जोग ॥१७८॥
मो सम दीन, न दीनहितु तुम समान रघुबीर।
अस बिचारि, रघुबंसमनि, हरहु बिषम भवभीर ॥१७९॥
भवभुवंग तुलसी नकुल, डसत ज्ञान हरि लेत।
चित्रकूट - इक औषधी, चितवत होइ सचेत ॥१८०॥
हौंहुँ कहावत, सब कहत, राम सहत उपहास।
साहब सीतानाथ से, सेवक तुलसीदास ॥१८१॥
रामराज राजत सकल धरम-निरत नर-नारि।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥१८२॥
रामराज संतोष सुख, घर बन सकल सुपास।
तरु सुरतरु, सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥१८३॥
खेती, बनि, बिद्या, बनिज सेवा, सिलिपि सुकाज।
तुलसी सुरतरु सरिस सब सुफल राम के राज ॥१८४॥
दंड जतिन कर, भेद जहँ नरतक नृत्य समाज।
जीतहु मनहिँ सुनिय अस, रामचंद्र के राज ॥१८५॥
कोपे सोच न पोच कर, करिय निहोर न काज।
तुलसी परमिति प्रीति की रीति राम के काज ॥१८६॥
मुकुर निरखि मुख रामभ्रू, गनत गुनहिँ दै दोष।
तुलसी से सठ सेवकनि लखि, जनि परहिं सरोष ॥१८७॥
सहसनाम मुनि-भनित सुनि, तुलसी-बल्लभ नाम।
सकुचत हिय हँसि, निरखि सिय, धरमधुरंधर राम ॥१८८॥
गौतम-तिय-गतिसुरति करि, नहिँ परसति पग पानि।
हिय हरषे रघुबंसमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥१८९॥
तुलसी बिलसत नखत निसि सरद-सुधाकर साथ।
मुकुता झालरि झलक जनु रामसुजस-सिसु-हाथ ॥१९०॥
रघुपति कीरति-कामिनी क्यों कहै तुलसी दासु?
सरद-अकास प्रकास ससि चारु चिबुक-तिल जासु ॥१९१॥
प्रभु गुनगन भूषन वसन, बिसद बिसेष सुदेस।
राम-सुकीरति-कामिनी, तुलसी-करतब केस ॥१९२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामचरित राकेसकर सरिस सुखद सब काहु ।
सज्जन-कुमुद चकोर चित, हित बिसेष बड़ लाहु ॥१९३॥
रघुबर कीरति सज्जननि सीतल, खलनि सुताति ।
ज्यों, चकोर-चय, चक्कवनि तुलसी चाँदनि राति ॥१९४॥
रामकथा मंदाकिनी , चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय-रघुबीर-बिहारु ॥१९५॥
स्याम-सुरभि-पय बिसद अति, गुनद करहिँ तेहि पान ।
गिरा ग्राम्य सियराम-जस गावहिँ सुनहिँ सुजान ॥१९६॥
हरि-हर-जस सुर-नर-गिरहु, बरनहिँ सुकवि-समाज ।
हाँड़ी हाटक घटित चरु राँधे स्वाद सुनाज ॥१९७॥
तिल पर राखेउ सकल जग, बिदित, बिलोकत लोग ।
तुलसी महिमा राम की कौन जानिबे जोग ? १९८॥

सोरठा

राम ! स्वरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धिपर ।
अबिगत अकथ अपार, नेति नेति नित निगम कह ॥१९९॥

दोहा

माया, जीव, सुभाव, गुन, काल, करम महदादि ।
ईस-अंक तें बढ़त सब ईस-अंक बिनु बादि ॥२००॥
हित उदास रघुबर-बिरह, बिकल सकल नर-नारि ।
भरत-लषन-सियगति समुझि प्रभु-चख सदा सुवारि ॥२०१॥
सीय, सुमित्रासुवन-गति, भरत-सनेह सुभाउ ।
कहिबे को सारद सरस, जनिबे को रघुराउ ॥२०२॥
जानी राम , न कहि सके भरत लषन सियप्रीति ।
सो सुनि गुनि तुलसी कहत, हठ सठता की रीति ॥२०३॥
सब बिधि समरथ सकल कह, सहि साँसति दिन राति ।
भलो निबाहेउ सुनि समुझि स्वामिधर्म सब भाँति ॥२०४॥
भरतहि होइ न राजमद, बिधि-हरि-हर-पद पाइ ।
कबहुँक काँजी सीकरनि छीरसिंधु बिनसाइ ॥२०५॥
संपति चकई, भरत चक, मुनि आयसु खिलवार ।
तेहि निसि आस्रम-पीँजरा राखे भा भिनुसार ॥२०६॥
सधन चोर मग मुदित मन, धनी गही ज्यों फेँट ।
त्यों सुग्रीव बिभीषनहिँ भई भरत की भेँट ॥२०७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम सराहे, भरत उठि मिले राम सम जानि ।
तदपि विभीषन कीसपति, तुलसी गरत गलानि ।।२०८।।
भरत स्यामतन रामसम, सब गुन रूप - निधान ।
सेवक-सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ।।२०९।।
ललित लषन मूरति-मधुर सुमिरहु सहित सनेह ।
सुख-संपति-कीरति-विजय-सगुन-सुमंगल गेह ।।२१०।।
नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमा-सील-निकेत ।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमंगल देत ।।२११।।
कौसल्या कल्यानमयि मूरति करत प्रनाम ।
सगुन सुमंगल काज सुभ, कृपा करहिँ सियराम ।।२१२।।
सुमिरि सुमित्रानाम जग जे तिय लेहिँ सुनेम ।
सुवन लषन-रिपुदवन-से, पावहिँ पति-पद-प्रेम ।।२१३।।
सीता-चरन प्रनाम करि, सुमिरि सुनाम सनेम ।
होहिँ तीय पतिदेवता प्राननाथ प्रिय प्रेम ।।२१४।।
तुलसी केवल कामतरु रामचरित-आराम ।
कलितरु कपि निसिचर कहत, हमहिँ किए विधि बाम ।।२१५।।
मातु सकल, सानुज भरत, गुरु, पुरलोग सुभाउ ।
देखत, देख न कैकइहिँ लंकापति कपिराउ ।।२१६।।
सहज सरल रघुवर वचन, कुमति कुटिल करि जान ।
चलै जोंक जल वक्रगति जद्यपि सलिल समान ।।२१७।।
दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान ।
धरनि, धाम, धन, धरमसुत, सदगुन-रूपनिधान ।।२१८।।
तुलसी जान्यो दसरथहि 'धरमु न सत्य समान' ।
रामु तजे जेहि लागि, बिनु राम परिहरे प्रान ।।२१९।।
रामविरह दसरथ-मरन, मुनिमन अगम सु मीचु ।
तुलसी मंगल-मरन-तरु, सुचि सनेह-जल सींचु ।।२२०।।

सोरठा

जीवन मरन सुनाम जैसे दसरथ राय को ।
जियत खिलाये राम, रामविरह तनु परिहरेउ ।।२२१।।

दोहा

प्रभुहि बिलोकत गोदगत, हिय-हित घायल नीचु ।
तुलसी पाई गीधपति मुकुति मनोहर मीचु ।।२२२।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुए मुकुत, जीवत मुकुत, मुकुत मुकुतहूँ बीच ।
तुलसी सकल सिहात सुनि गीधराज की मीचु ॥२२३॥
मुए, मरत, मरिहैं सकल घरी पहर के बीच ।
लही न काहू आजु लौं गीधराज की मीच ॥२२४॥
मुये मुकुत, जीवत मुकुत, मुकुत मुकुतहूँ बीच ।
तुलसी सबहीं ते अधिक गीधराज की मीच ॥२२५॥
रघुवर बिकल बिहंग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर ।
सिय-सुधि कहि, सियराम कहि, देह तजी मतिधीर ॥२२६॥
दसरथ तें दसगुन भगति सहित तासु कर काजु ।
सोचत बंधु समेत प्रभु कृपासिंधु रघुराजु ॥२२७॥
केवट निसिचर बिहँग मृग किये साधु सनमानि ।
तुलसी रघुवर की कृपा सकल सुमंगलखानि ॥२२८॥
मंजुल मंगल मोदमय मूरति मारुतपूत ।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल सुमिरत रघुवर-दूत ॥२२९॥
धीर, बीर, रघुबीर-प्रिय, सुमिरि समीरकुमार ।
अगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि बिचार ॥२३०॥
सुख-मुद-मंगल-कुमुद-विधु, सुगुन-सरोरुह-भानु ।
करहु काज सब सिद्ध सुभ आनि हिये हनुमानु ॥२३१॥
सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमंगल जानु ।
कीरति विजय विभूति भलि, हिय हनुमानहिँ आनु ॥२३२॥
सूर-सिरोमनि, साहसी, सुमति समीरकुमार ।
सुमिरत सब सुख-संपदा-मुदमंगल-दातार ॥२३३॥
तुलसी-तनु सर, सुख-जलज, भुज-रुज-गज बरजोर ।
दलत दयानिधि देखिए कपि केसरीकिसोर ॥२३४॥
भुज-तरु-कोटर रोग-अहि बरबस कियो प्रबेस ।
बिहँगराज-वाहन तुरत काढ़िय, मिटइ कलेस ॥२३५॥
बाहु-बिटप सुख-बिहँग-थलु लगी कुपीर कुआगि ।
रामकृपा जल सीँचिये, बेगि दीनहित लागि ॥२३६॥

सोरठा

मुकुति जनम-महि जानि, ज्ञानखानि, अघहानिकर ।
जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइय कस न ? ॥२३७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरत सकल सुरबृंद, विषम गरल जेहिँ पान किय ।
तेहि न भजसि मतिमंद, को कृपालु संकर सरिस ॥२३८॥

दोहा

बासर ढासनि के ढका, रजनी चहूँ दिसि चोर ।
संकर निज पुर राखिए चितै सुलोचन-कोर ॥२३९॥
अपनी बीसी आपुही पुरिहि लगाए हाथ ।
केहि बिधि बिनती बिस्व की करौं बिस्व के नाथ ॥२४०॥
और करै अपराध कोउ, और पाव फल-भोग ।
अति बिचित्र भगवंतगति, कोउ न जानिबे जोग ॥२४१॥
प्रेमसरीर प्रपंच-रुज, उपजी अधिक उपाधि ।
तुलसी भलो सुबैदई बेगि बाँधिये व्याधि ॥२४२॥
हम हमार आचार बड़, भूरि भार धरि सीस ।
हठि सठ परबस परत जिमि कीर, कोस, कृमि कीस ॥२४३॥
केहि मग प्रबिसति, जाति केहि, कहु दर्पन में छाँह ।
तुलसी त्यों जग-जीवगति करी जीव के नाँह ॥२४४॥
सुखसागर सुखनींदबस, सपने सब करतार ।
माया मायानाथ की को जग जाननहार ? ॥२४५॥
जीव सीव सम सुख सयन, सपने कछु करतूति ।
जागत दीन मलीन सोइ बिकल बिषाद बिभूति ॥२४६॥
सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥२४७॥
तुलसी देखत, अनुभवत, सुनत न समुझत नीचु ।
चपरि चपेटें देत नित केस गहे कर मीचु ॥२४८॥
करम खरी करमोह थल, अंक चराचर-जाल ।
हनत, गुनत, गुनि गुनि हनत जगतज योतिषी-काल ॥२४९॥
कहिबे कहँ रसना रची, सुनिबे कहँ किय कान ।
धरिबे कहँ चितहित सहित परमारथहिँ सुजान ॥२५०॥
ज्ञान कहै अज्ञान बिनु, तम बिनु कहै प्रकास ।
निरगुन कहै जो सगुन बिनु सो गुरु, तुलसीदास ॥२५१॥
अंक अगुन, आखर सगुन, सामुझि उभय प्रकार ।
खोए राखे आपु भल, तुलसी चारु बिचार ॥२५२॥

२३९—ढासनि = डाकू ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमारथ-पहिचानि-मति लसति विषय लपटानि।
निकसि चिता तें अधजरति, मानहुँ सती परानि ॥२५३॥
सीस उघारन किन कहेउ, बरजि रहे प्रिय लोग ।
घरही सती कहावती, जरती नाह-वियोग ॥२५४॥
खरिया, खरी, कपूर सब, उचित न, पिय ! तियत्याग ।
कै खरिया मोहिँ मेलि, कै विमल विवेक विराग ॥२५५॥
घर कीन्हें घर जात है, घर छाँड़े घर जाइ ।
तुलसी घर बन बीच ही राम-प्रेमपुर छाइ ॥२५६॥
दिये पीठि पाछे लगै, सनमुख होत पराय ।
तुलसी संपति छाँह ज्यों, लखि दिन बैठि गँवाय ॥२५७॥
तुलसी अदभुत देवता आसादेवी नाम ।
सेए सोक समर्पई, विमुख भए अभिराम ॥२५८॥
सोई सेँवर तेइ सुवा, सेवत सदा बसंत ।
तुलसी महिमा मोह की सुनत सराहत संत ॥२५९॥
करतल समुझत झूठ-गुन, सुनत होत मतिरंक ।
पारद प्रगट प्रपंचमय, सिद्धिउ नाउँ कलंक ॥२६०॥
ज्ञानी, तापस, सूर, कवि, कोविद गुनआगार ।
केहि कै लोभ विडंबना कीन्हि न यहि संसार ? ॥२६१॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि ।
मृगनयनी के नयनसर, को अस लाग न जाहि ? ॥२६२॥
व्यापि रहेउ संसार महँ माया कटक प्रचंड ।
सेनापति कामादि भट, दंभ, कपट पाखंड ॥२६३॥
तात तीन अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ ।
मुनि विज्ञान-धाम मन, करहिँ निमिष महँ छोभ ॥२६४॥
लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नारि ।
क्रोध के परुष बचन बल, मुनिवर कहहिँ विचारि ॥२६५॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि ।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद मायारूपी नारि ॥२६६॥
काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग काल न खाइ ? ॥२६७॥

२६०—कलंक = कजली, जो पारा सिद्ध होने पर बैठ जाती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनम-पत्रिका बरति कै देखहु मनहिँ विचारि ।
दारुन बैरी मीचु के बीच विराजत नारि ॥२६८॥
दीपसिखा सम जुवति-तन, मन जनि होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काममद, करहि सदा सतसंग ॥२६९॥
काम-क्रोध-मद-लोभरत, गृहासक्त दुखरूप ।
ते किमि जानहिँ रघुपतिहि, मूढ़ परे भवकूप ॥२७०॥
ग्रहगृहीत पुनि बातवस, तेहि पुनि बीछी मार ॥
ताहि पियाई बारुनी, कहहु कौन उपचार ? ॥२७१॥
ताहि की संपति सगुन सुभ, सपनेहु मन विस्राम ।
भूत द्रोहरत, मोहवस, रामविमुख, रतकाम ॥२७२॥
कहत कठिन, समुझत कठिन, साधत कठिन विवेक ।
होइ घुनाक्षरन्याय जौ, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥२७३॥
खल प्रबोध, जगसोध, मन को निरोध, कुल सोध ।
करहिँ ते फोकट पचि मरहिँ, सपनेहुँ सुख न सुबोध ॥२७४॥

सोरठा

कोउ विस्राम कि पाव, तात, सहज संतोष बिनु ?
चलै कि जल बिनु नाव, कोटि जतन पचि पचि मरिय ? ॥२७५॥
सुर नर मुनि कोउ नाहिँ, जेहि न मोह माया प्रवल ।
अस बिचारि मन माहिँ भजिय महा मायापतिहि ॥२७६॥

दोहा

एक भरोसो, एक बल, एक आस विस्वास ।
एक राम-घनस्याम हित चातक तुलसीदास ॥२७७॥
जौ घन बरषै समय सिर, जौ भरि जनम उदास ।
तुलसी या चित चातकहिँ तऊ तिहारी आस ॥२७८॥
चातक तुलसी के मते स्वातिहु पियै न पानि ।
प्रेमतृषा बाढ़ति भली, घटें घटैगी आनि ॥२७९॥
रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखिगे अंग ।
तुलसी चातक-प्रेम को नित नूतन रुचिरंग ॥२८०॥

२६८—जन्मकुंडली में छठा, सातवाँ और आठवाँ स्थान क्रमशः शत्रु, स्त्री और मृत्यु का माना जाता है ।

२७८—समय सिर=ठीक समय पर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़त न चातक-चित कबहुँ प्रिय पयोद के दोख।
तुलसी प्रेमपयोधि की ताते नाप न जोख ॥२८१॥
बरषि परुष पाहन पयद पंख करौ टुक टूक।
तुलसी परी न चाहिए चतुर चातकहिँ चूक ॥२८२॥
उपल बरषि गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर।
चितव कि चातक मेघ तजि कबहुँ दूसरी ओर ? ॥२८३॥
पबि, पाहन, दामिनि, गरज, झरि झकोर खरि खीझि।
रोष न प्रीतम-दोष लखि, तुलसी, रागहि रीझि ॥२८४॥
मान राखिबो, माँगिबो, पिय सोँ नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैँ, जौ चातक मत लेहु ॥२८५॥
तुलसी चातक ही फबै मान राखिबो, प्रेम।
बक्र बुँद लखि स्वातिहू निदरि निबाहत नेम ॥२८६॥
तुलसी चातक माँगनो एक, एक घन दानि।
देत जो भूभाजन भरत, लेत जो घूँटक पानि ॥२८७॥
तीनि लोक तिहुँ काल जस चातक ही के माथ।
तुलसी जासु न दीनता सुनी दूसरे नाथ ॥२८८॥
प्रीति पपीहा पयद की प्रगट नई पहिचानि।
जाचक जगत कनाउड़ो, कियो कनौड़ो दानि ॥२८९॥
नहिँ जाचत, नहिँ संग्रही, सीस नाइ नहिँ लेइ।
ऐसे मानी माँगनहिँ को बारिद बिन देइ ॥२९०॥
को को न ज्यायो जगत में जीवन-दायक दानि।
भयो कनौड़ो जाचकहिँ पयद प्रेम पहिचानि ॥२९१॥
साधन साँसति सब सहत, सबहिँ सुखद फल लाहु।
तुलसी चातक-जलद की रीझि-बूझि बुध काहु ॥२९२॥
चातक जीवन-दायकहिँ, जीवन समय सुरीति।
तुलसी अलख न लखि परै चातक प्रीति प्रतीति ॥२९३॥
जीव चराचर जहँ लगे, है सबको हित मेह।
तुलसी चातक मन बस्यो घन सोँ सहज सनेह ॥२९४॥
डोलत बिपुल बिहंग बन, पियत पोखरिन बारि।
सुजस-धवल, चातक नवल ! तुही भुवन दसचारि ॥२९५॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख-मीठे, मानव-मलिन कोकिल मोर चकोर।
सुजस-धवल, चातक नवल! रह्यो भुवन भरि तोर ॥२९६॥
वास, बेष, बोलनि, चलनि, मानस मंजु मराल।
तुलसी चातक-प्रेम की कीरति बिसद बिसाल ॥२९७॥
प्रेम न परिखिय परुषपन पयद-सिखावन एह॥
जग कह चातक पातकी, ऊसर बरसै मेह ॥२९८॥
होइ न चातक पातकी, जीवनदानि न मूढ़।
तुलसी गति प्रह्लाद की समुझि प्रेम-पथ गूढ़ ॥२९९॥
गरज आपनी सबन को, अरज करत उर आनि।
तुलसी चातक चतुर भो जाचक जानि सुदानि ॥३००॥
चरग-चंगुगत चातकहिं नेम प्रेम की पीर।
तुलसी परबस हाड़ पर परिहैं पुहुमी नीर ॥३०१॥
बध्यो बधिक परयो पुन्यजल, उलटि उठाई चोंच।
तुलसी चातक-प्रेमपट मरतहु लगी न खोंच ॥३०२॥
अंड फोरि कियो चेटुवा, तुष परयो नीर निहारि।
गहि चंगुल चातक चतुर डारयो बाहिर बारि ॥३०३॥
तुलसी चातक देत सिख सुतहिं बार ही बार।
तात न तर्पन कीजियै बिना बारि-धर-धार ॥३०४॥

सोरठा

जियत न नाई नारि चातक घन तजि दूसरहिं।
सुरसरि हू को बारि मरत न माँगेउ अरघ जल ॥३०५॥
सुन रे तुलसीदास, प्यास पपीहहिं प्रेम की।
परिहरि चारिउ मास, जो अँचवै जल स्वाति को ॥३०६॥
जाँचै बारहमास, पियै पपीहा स्वातिजल।
जान्यो तुलसीदास, जोगवत नेही मेह-मन ॥३०७॥

दोहा

तुलसी के मत चातकहिं, केवल प्रेमपियास।
पियत स्वातिजल जान जग, जाचक बारह मास ॥३०८॥
आलवाल मुकुताहलनि, हिय सनेह-तरु-मूल।
होइ हेतु चित चातकहिं, स्वाति सलिल-अनुकूल ॥३०९॥
बिबि रसना, तनु स्याम है, बंक चलनि, बिषखानि।
तुलसी जस स्रवननि सुन्यो सीस समरप्यो आनि ॥३१०॥

३०५—नारि = नार, गरदन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उष्नकाल अरु देह खिन, मगपंथी, तन ऊख ।
चातक बतियाँ ना रुचीं अन जल सींचे रूख ॥३११॥
अन जल सींचे रूख की छाया तें बरु घाम ।
तुलसी चातक बहुत हैं यह प्रबीन को काम ॥३१२॥
एक अंग सों स्नेहता निसिदिन चातक नेह ।
तुलसी जासों हित लगै वहि अहार, वहि देह ॥३१३॥
आपु व्याध को रूप धरि, कुहो कुरंगहि राग ।
तुलसी जो मृगमन मुरै परै प्रेमपट दाग ॥३१४॥
तुलसी मनि निज दुति फनिहिं व्याधहिं देउ दिखाइ ।
बिछुरत होइ न आँधरो ताते प्रेम न जाइ ॥३१५॥
जरत तुहिन लखि बनजबन, रबि दै पीठि पराउ ।
उदय बिकस, अथवत सकुच, मिटै न सहज सुभाउ ॥३१६॥
देउ आपने हाथ जल मीनहिं माहुर घोरि ।
तुलसी जियै जो बारि बिनु तौ तु देहि कबि खोरि ॥३१७॥
मकर, उरग, दादुर, कमठ, जलजीवन जलगेह ।
तुलसी एकै मीन को है साँचिलो सनेह ॥३१८॥
सुलभ प्रीति प्रीतम सबै कहत, करत सब कोइ ।
मोरसिखा बिनु मूरि हू पलुहत गरजत मेह ॥३१९॥
सुलभ प्रीति प्रीतम सबै कहत, करत सब कोइ ।
तुलसी मीन पुनीत ते त्रिभुवन बड़ो न कोइ ॥३२०॥
तुलसी जप तप नेम व्रत सब सब ही तें होइ ।
लहै बड़ाई देवता इष्टदेव जब होइ ॥३२१॥
कुदिन हितू सो हित सुदिन, हित अनहित किन होइ ।
ससिछबि-हर रबिसदन तउ मित्र कहत सब कोइ ॥३२२॥
कै लघु कै बड़ मीत भल, समसनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस मिले महाविष होइ ॥३२३॥
मान्य मीत सों सुख चहै सो न छुवै छलछाँह ।
ससि, त्रिसंकु, कैकेइ गति लखि तुलसी मन माँह ॥३२४॥

३११–ऊख = तपा हुआ (उष्ण) । अन = अन्य, दूसरा ।
३१४–कुहो = (चाहे) मारे ।
३१९–मोरसिखा = मयूरशिखा नाम की घास या बूटी जो बरसात आते ही पनप जाती है । इसमें जड़ नहीं होती । पलुहना = पनपना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहिय कठिन कृत कोमलहु हित हठि होइ सहाइ ।
पलक पानि पर ओड़िअत समुझि कुघाइ सुघाइ ॥३२५॥
तुलसी बैर सनेह दोउ रहित विलोचन चारि ।
सुरा सेवरा आदरहिं, निंदहिं सुरसरि - बारि ॥३२६॥
रुचै माँगनेहि माँगिबो, तुलसी दानिहि दानु ।
आलस, अनख न आचरज, प्रेम-पिहानी जानु ॥३२७॥
अमिय गारि गारेउ गरल, गारि कीन्ह करतार ।
प्रेम बैर की जननि जुग, जानहिं बुध, न गँवार ॥३२८॥
सदा न जे सुमिरत रहहिं, मिलि न कहहिं प्रिय बैन।
तेपै तिन्हके जाहिं घर जिनके हिये न नैन ॥३२९॥
हित पुनीत सब स्वारथहिं, अरि असुद्ध विनु चाड़ ।
निज मुख मानिक सम दसन, भूमि परे ते हाड़ ॥३३०॥
माखी, काक, उलूक,, बक, दादुर से भए लोग ।
भले ते सुक, पिक, मोर से, कोउ न प्रेमपथ जोग ॥३३१॥
हृदय कपट, बर बेष धरि, बचन कहैं गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर ज्यों, क्यों मिलिए मन खोलि ॥३३२॥
चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल ।
छीर-नीर बिवरन समय बक उघरत तेहि काल ॥३३३॥
मिलै जो सरलहि सरल ह्वै, कुटिल न सहज बिहाइ ।
सो सहेतु, ज्यों बक्रगति ब्याल न बिलै समाइ ॥३३४॥
कृसधन सखहिं न देत दुख, मुएहु न माँगत नीच ।
तुलसी सज्जन की रहनि पावक पानी बीच ॥३३५॥
संग सरल कुटिलहिं भए, हरि हर करहिं निवाहु ।
ग्रह गनती गति चतुर बिधि कियो उदर-बिनु राहु ॥३३६॥
नीच निचाई नहिं तजै सज्जन हू के संग ।
तुलसी चंदन-बिटप बसि बिनु बिष भए न भुअंग ॥३३७॥
भलो भलाई पै लहै, लहै निचाई नीचु ।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीचु ॥३३८॥
मिथ्या माहुर सज्जनहिं, खलहिं गरल सम साँच ।
तुलसी छुवत पराई ज्यों पारद पावक-आँच ॥३३९॥

३२७–पिहानी = ढक्कन, छिपानेवाली वस्तु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संत-संग अपवर्गकर, कामी भवकर पंथ ।
कहहिं साधु, कवि, कोविद, स्रुति, पुरान, सद्ग्रंथ ॥३४०॥
सुकृत न सुकृती परिहरै, कपट न कपटी नीच ।
मरत सिखावन देइ चले गीधराज मारीच ॥३४१॥
सुजन सुतरु वन, ऊख सम, खल टंकिका रुखान ।
परहित अनहित लागि सब साँसति सहत समान ॥३४२॥
पियहिं सुमन रस अलि, बिटप काटि कोल फल खात ।
तुलसी तरुजीवी जुगल, सुमति कुमति की बात ॥३४३॥
अवसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिए का लाख ?
दुइज न चंदा देखिये, उदौ कहा भरि पाख ॥३४४॥
ज्ञान अनभले को सबहि, भले भलेहू काउ ।
सींग, सूँड़, रद, लूम, नख, करत जीव जड़ घाउ ॥३४५॥
तुलसी जगजीवन अहित, कतहुँ कोउ हित जानि ।
सोषक भानु, कृसानु, महि, पवन, एक घन दानि ॥३४६॥
सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूति कराल ।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥३४७॥
जलचर, थलचर, गगनचर, देव, दनुज, नर, नाग ।
उत्तम मध्यम अधम खल, दस गुन बढ़त बिभाग ॥३४८॥
बलि मिस देखे देवता, कर मिस मानवदेव ।
मुए-मार सुबिचार-हत स्वारथ-साधन एव ॥३४९॥
सुजन कहत भल पोच पथ, पापि न परखै भेद ।
करमनास सुरसरित मिस बिधि निषेध वद बेद ॥३५०॥
मनि भाजन मधु, पारई पूरन अमी निहारि ।
का छाँड़िय का संग्रहिय, कहहु बिबेक बिचारि ॥३५१॥
उत्तम, मध्यम, नीच गति पाहन, सिकता, पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुँन की, बैर बितिक्रम जानि ॥३५२॥

३४२–बन = कपास ।
३४९–मानवदेव = राजा ।
३५१–मधु = मद्य । पारई = मिट्टी का कटोरा; परई ।
३५२–पत्थर पर की, बालू पर की और पानी पर की लकीर की सी प्रीति क्रम से उत्तम, मध्यम और नीच है । बैर का क्रम इसका उलटा है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुन्य, प्रीति, पति, प्रापतिउ, परमारथ-पथ पाँच ।
लहहिं सुजन, परिहरहिं खल, सुनहु सिखावन साँच ।।३५३।।
नीच निरादर ही सुखद, आदर सुखद बिसाल ।
कदरी बदरी बिटप गति, पेखहु पनस रसाल ।।३५४।।
तुलसी अपनो आचरन भलो न लागत कासु ।
तेहि न बसात जो खात नित लहसुनहू को बासु ।।३५५।।
बुध सो बिबेकी बिमलमति जिनके रोष न राग ।
सुहृद सराहत साधु जेहि तुलसी ताको भाग ।।३५६।।
आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ।।३५७।।
तुलसी भलो सुसंग तें, पोच कुसंगति होइ ।
नाउ, किन्नरी, तीर, असि, लोह बिलोकहु लोइ ।।३५८।।
गुरु-संगति गुरु होइ सो, लघु-संगति लघु नाम ।
चार पदारथ में गनैं नरकद्वार हू काम ।।३५९।
तुलसी गुरु लघुता लहत लघु-संगति परिनाम ।
देवी देव पुकारियत नीच नारिनर नाम ।।३६०।।
तुलसी किए कुसंग थिति, होहिं दाहिने बाम ।
कहि सुनि सकुचिय सूम खल गत हरि-संकर-नाम ।।३६१।।
बसि कुसंग चह सुजनता ताकी आस निरास ।
तीरथहू को नाम भो 'गया' मगह के पास ।।३६२।।
राम-कृपा तुलसी सुलभ गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान ।।३६३।।
ग्रह, भेषज, जल, पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग ।
होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग ।।३६४।।
जनम जोग तें जानियत, जग बिचित्र गति देखि ।
तुलसी आखर, अंक, रस, रंग बिभेद बिसेखि ।।३६५।।
आखर जोरि बिचार करु, सुमति अंक लिखि लेखु ।
जोग-कुजोग सुजोग-मय जगगति समुझि बिसेखु ।।३६६।।
करु बिचारि, चलु सुपथ, भल आदि मध्य परिनाम ।
उलटि जपे 'जारा मरा', सूधे 'राजा राम' ।।३६७।।

३५४–बिसाल = बड़ा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होइ भले के अनभलो, होइ दानि के सूम।
होइ कुपूत सुपूत के, ज्यों पावक में धूम ॥३६८॥
जड़ चेतन गुन-दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि-बिकार ॥३६९॥

सोरठा

पाट कीट तें होइ, तातें पाटंबर रुचिर।
कृमि पालै सब कोइ, परम अपावन प्रान सम ॥३७०॥

दोहा

जो जो जेहि जेहि रस मगन तहँ सो मुदित मन मानि।
रस गुन दोष बिचारिबो रसिकरीति पहिचानि ॥३७१॥
सम प्रकास-तम पाख दुहुँ नामभेद बिधि कीन्ह।
ससि पोषक सोषक समुझि जग जस अपजस दीन्ह ॥३७२॥
लोक बेद हूँ लौं दगो नाम भले को पोच।
धर्मराज जम, गाज पवि, कहत सँकोच न सोच ॥३७३॥
बिरुचि परखिए सुजन जन, राखि परखिए मंद।
बढ़वानल सोखत उदधि, हरष बढ़ावत चंद ॥३७४॥
प्रभु सनमुख भए नीच नर निपट होत बिकराल।
रबि रुख लखि दरपन फटिक उगिलत ज्वालाजाल ॥३७५॥
प्रभु-समीप-गत सुजन जन होत सुखद सुबिचारि।
लवन-जलधि-जीवन जलद, बरखत सुधा सुबारि ॥३७६॥
नीच निरावहिं निरस तरु, तुलसी सींचहि ऊख।
पोषत पयद समान सब बिष पियूष के रूख ॥३७७॥
बरखि बिस्व हरषित करत, हरत ताप अघ प्यास।
तुलसी दोष न जलद को जो जल जरै जवास ॥३७८॥
अमर दानि, जाचक मरहिं, मरि मरि फिरि फिरि लेहिं।
तुलसी जाचक पातकी दातहिं दूषन देहिं ॥३७९॥
लखि गयंद लै चलत भजि स्वान सुखानो हाड़।
गज-गुन, मोल, अहार, बल, महिमा जान कि राड़ ? ॥३८०॥

३७३—दगो = अंकित है, प्रसिद्ध है।
३७४—बिरुचि = अपनी रुचि या प्रसन्नता से जो देखते ही हो।
३८०—राड़ = जड़, दुष्ट।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कै निदरहु कै आदरहु सिंहहिँ स्वान सियार।
हरष बिषाद न केसरिहिँ कुंजर-गंजनिहार ॥३८१॥
ठाढ़ो द्वार न दै सकैँ, तुलसी जे नर नीच।
निंदहिं बलि, हरिचंद को, का कियो करन, दधीच?' ॥३८२॥
ईस-सीस बिलसत बिमल, तुलसी तरल तरंग।
स्वान सरावग के कहे, लघुता लहै न गंग ॥३८३॥
तुलसी देवल देव को लागे लाख करोरि।
काक अभागे हगि भरचो, महिमा भई कि थोरि? ॥३८४॥
निज गुन घटत न नागनग, परखि परिहरत कोल।
तुलसी प्रभु भूषन किए गुंजा बढ़े न मोल ॥३८५॥
राकापति षोड़स उवहिँ, तारागन समुदाइ।
सकल गिरिन दव लाइए, बिनु रबि राति न जाइ ॥३८६॥
भलो कहै बिन जानेहू, बिनु जानें अपवाद।
ते नर गादुर जानि जिय, करिय न हरष विषाद ॥३८७॥
पर-सुख-संपति देखि सुनि जरहिँ जे जड़ बिनु आगि।
तुलसी तिनके भाग तेँ चलै भलाई भागि ॥३८८॥
तुलसी जे कीरति चहहिँ पर की कीरति खोइ।
तिनके मुँह मसि लागिहै, मिटहि न मरिहैँ धोइ ॥३८९॥
तनु, गुन, धन, महिमा, धरम, तेहि बिनु जेहि अभिमान।
तुलसी जियत बिडंबना, परिनामहु गत जान ॥३९०॥
सासु, ससुर, गुरु, मातु, पितु, प्रभु, भयो चह सब कोइ।
होनो दूजी ओर को, सुजन सराहिय सोइ ॥३९१॥
सठ सहि साँसत पति लहत, सुजन कलेस न काय।
गढ़ि गुढ़ि पाहन पूजिए, गंडकि-सिला सुभाय ॥३९२॥
बड़े बिबुध-दरवार तेँ भूमि-भूप-दरबार।
जापक पूजक पेखियत, सहत निरादर भार ॥३९३॥
बिनु प्रपंच छल भीख भलि, लहिय न दिए कलेस।
बावन बलि सों छल कियो, दियो उचित उपदेस ॥३९४॥
भलो भले सों छल किए जनम कनौड़ो होइ।
श्रीपति सिर तुलसी लसति, बलि-बावनगति सोइ ॥३९५॥
बिबुध-काज बावन बलिहिँ छलो भलो जिय जानि।
प्रभुता तजि बस भे, तदपि मन की गइ न गलानि ॥३९६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरल-वक्रगति पंचग्रह, चपरि न चितवत काहु।
तुलसी सूधे सूर ससि, समय बिडंबित राहु ॥३९७॥
खल-उपकार विकार-फल, तुलसी जान जहान।
मेढक, मर्कट, बनिक, बक, कथा सत्य-उपखान ॥३९८॥
तुलसी खल-बानी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि।
रामराज बाधक भई मूढ़ मंथरा चेरि ॥३९९॥
जोंक सूधि मन कुटिल गति, खल विपरीत विचारु।
अनहित सोनित सोख सो, सो हित सोखनहारु ॥४००॥
नीच गुडी ज्यों जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास।
ढीलि दिए गिरि परत महि, खैंचत चढ़त अकास ॥४०१॥
भरदर बरषत कोस सत बचैं जे बूंद बराइ।
तुलसी तेउ खल-बचन-सर हए, गए न पराइ ॥४०२॥
पेरत कोल्हू मेलि तिल तिली सनेही जानि।
देखि प्रीति की रीति यह, अब देखिबी रिसानि ॥४०३॥
सहवासी काचो गिलहिं, पुरजन पाक-प्रबीन।
कालछेप केहि मिलि करहिं तुलसी खग-मृग-मीन? ॥४०४॥
जासु भरोसे सोइए राखि गोद में सीस।
तुलसी तासु कुचाल तें रखवारो जगदीस ॥४०५॥
मार खोज लै सौंह करि, करि मत लाज, न त्रास।
मुए नीच ते मीच बिनु जे इनके बिस्वास ॥४०६॥
परद्रोही, परदार-रत, परधन, परअपबाद।
ते नर पाँवर पापमय देह धरे मनुजाद ॥४०७॥
बचन बेष क्यों जानिए मन मलीन नर नारि।
सूपनखा, मृग, पूतना, दसमुख प्रमुख बिचारि ॥४०८॥
हँसनि, मिलनि, बोलनि मधुर, कटु करतव मन माँह।
छुवत जो सकुचै सुमति सो तुलसी तिन्ह की छाँह ॥४०९॥
कपट सार सूची सहस, बाँधि बचन-परवास।
कियो दुराउ चहै चातुरी सो सठ तुलसीदास ॥४१०॥

३९७—चपरि = तेजी से, सहसा।
३९८—सत्य-उपखान = सत्योपाख्यान नाम का ग्रंथ।
४०६—मार = मारते हैं।
४१०—परवास = प्रवास, आच्छादन अर्थात् प्रबंध।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वचन विचार अचार तन, मन, करतव, छल छूति ।
तुलसी क्यों सुख पाइए अंतर्जामिहिँ धूति ? ।।४११।।
सारदूल को स्वाँग करि, कूकर की करतूति ।
तुलसी तापर चाहिए कीरति विजय विभूति ।।४१२।।
वड़े पाप वाढ़े किए, छोटे किए लजात ।
तुलसी तापर सुख चहत, विधि सों वहुत रिसात ।।४१३।।
देस-काल-करता-करम-वचन-विचार-विहीन ।
ते सुरतरु-तर दारिदी, सुरसरि-तीर मलीन ।।४१४।।
साहस ही, कै कोपवस, किए कठिन परिपाक ।
सठ संकट-भाजन भए हठि कुजाति कपि काक ।।४१५।।
राज करत विनु काजही करैं कुचालि कुसाज ।
तुलसी ते दसकंध ज्यों जइहैं सहित समाज ।।४१६।।
राज करत विनु काज ही ठटहिँ जे कूर कुठाट ।
तुलसी ते कुरुराज ज्यों जइहैँ वाहरवाट ।।४१७।।
सभा सुजोधन की सकुनि, सुमति सराहन जोग ।
द्रोन विदुर भीषम हरिहिँ कहैँ प्रपंची लोग ।।४१८।।
पाँडुसुवन कौरव, सदसि नीको रिपु हित जानि ।
हरि हर सम सव मानियत, ज्ञान मोह की वानि ।।४१९।।
हित पर वढ़ै विरोध जव, अनहित पर अनुराग ।
राम-विमुख विधि वामगति, सगुन अघाय अभाग ।।४२०।।
सहज सुहृद गुरु स्वामि सिख जो न करै सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हितहानि ।।४२१।।
भरुहाए नट भाट के चपरि चढ़े संग्राम ।
कै वै भाजे आइहैँ, कै वाँधे परिनाम ।।४२२।।
लोकरीति फूटी सहैँ, आँजी सहै न कोइ ।
तुलसी जो आँजी सहै सो आँधरो न होइ ।।४२३।।
भागे भल, ओड़ेहु भलो, भलो न घाले घाउ ।
तुलसी सवके सीस पर रखवारो रघुराउ ।।४२४।।
सुमति विचारहिँ, परिहरहिँ दल-सुमनहु संग्राम ।
सकुल गए, तनु विनु भए, साखी जादौ, काम ।।४२५।।
कलह न जानव छोट करि, कलह कठिन परिनाम ।
लगति अगिनि लघु नीचगृह, जरत धनिक-धन-धाम ।।४२६।।

४२२—भरुहाए = बढ़ावा देने से ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छमा-रोष के दोष-गुन सुनि मनु ! मानहि सीख ।
अबिचल श्रीपति हरि भए, भूसुर लहै न भीख ।।४२७।।
कौरव पांडव जानिए क्रोध-छमा के सीम ।
पाँचहि मारि न सौ सके, सम्रो सँहारे भीम ।।४२८।।
बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु ।
जीति सहस सम हारिबो, जीते हारि निहारु ।।४२९।।
जो परि पाँय मनाइए तासों रूठि बिचारि ।
तुलसी तहाँ न जीतिये, जहँ जीतेहू हारि ।।४३०।।
जूझे ते भल बूझिबो, भली जीति तें हारि ।
डहके से डहकाइबो भलो, जो करिय विचारि ।।४३१।।
जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाप परितापु ।
तासों रारि निवारिए, समय सँभारिय आपु ।।४३२।।
जो मधु मरै, न मारिये माहुर देइ सो काउ ।
जग जिति हारे परसुधर, हारि जिते रघुराउ ।।४३३।।
बैर-मूल-हर हित-बचन प्रेममूल उपकार ।
'दो, हा' सुभ-संदोह सो, तुलसी किए विचार ।।४३४।।
रोष न रसना खोलिए, बरु खोलिय तरवारि ।
सुनत मधुर ,परिनाम हित, बोलिय बचन विचारि ।।४३५।।
मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु स्रम भाग अभाग ।
कुहू कुहू कलकंठ रव, काँकाँ कररत काग ।।४३६।।
पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागै ढेर ।
सुमति बिचारे बोलिये समुझि कुफेर सुफेर ।।४३७।।
छिद्यो न तरुनि-कटाछ सर, करेउ न कठिन सनेहु ।
तुलसी तिनकी देह को जगत कबच करि लेहु ।।४३८।।
सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।
विद्यमान रन पाय रिपु कायर करहिं प्रलापु ।।४३९।।
बचन कहे अभिमान के पारथ पेखत सेतु ।
प्रभुतिय लूटत नीच भर, जय न, मीचु तेहि हेतु ।।४४०।।

४३४—दो'हा' = 'हा हा' अर्थात् हा हा खाना; बिनती करना ।

४४०—एक बार समुद्र में बँधे सेतु को देख अर्जुन ने हनुमान से गर्व से कहा, "मैं तो बाणों का पुल बाँध सकता था ।" अर्जुन ने पुल बाँधा, पर वह हनुमान जी के पैर रखते ही बैठ गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम लषन विजयो भए बनहु गरीबनिवाज।
मुखर वालि रावन गए घर ही सहित समाज ॥४४१॥
खग मग मीत पुनीत किय, बनहु राम नयपाल।
कुमति वालि दसकंठ घर सुहृद बंधु कियो काल ॥४४२॥
लखै अघानो भूख में, लखै जीति में हारि।
तुलसी सुमति सराहिए, मग पग धरै विचारि ॥४४३॥
लाभ समय को पालिबो, हानि समय की चूक।
सदा विचारहिं चारुमति सुदिन कुदिन दिन दूक ॥४४४॥
सिंधुतरन कपि गिरिहरन काज साइँ हित दोउ।
तुलसी समयहि सब बड़ो, बूझत कहुँ कोउ कोउ ॥४४५॥
तुलसी मीठी अमी तें माँगी मिलै जो मीच।
सुधा सुधाकर समय बिनु कालकूट तें नीच ॥४४६॥
तुलसी असमय के सखा धीरज, धर्म, विबेक।
साहित, साहस, सत्यव्रत, रामभरोसो एक ॥४४७॥
समरथ कोउ न राम सो, तीय-हरन अपराधु।
समयहि साधे काज सब, समय सराहहिं साधु ॥४४८॥
तुलसी तीरहु के चले समय पाइबी थाह।
धाइ न जाइ थहाइबो सर सरिता अवगाह ॥४४९॥
तुलसी जसि भवितब्यता तैसी मिलै सहाय।
आपु न आवै ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाय ॥४५०॥
कै जूझिबो कै बूझिबो, दान कि काय-कलेस।
चारि चारु परलोक-पथ जथाजोग उपदेस ॥४५१॥
पात पात को सींचिबो न करु सरग-तरु हेत।
कुटिल कटुक फर फरैगो तुलसी करत अचेत। ४५२॥
गठिबँध तें परतीति बड़ि, जेहि सब को सब काज।
कहब थोर समुझब बहुत, गाड़े बढ़त अनाज ॥४५३॥
अपनो ऐपन निजहथा, तिय पूजहिं निज भीति।
फलै सकल मनकामना, तुलसी प्रीति प्रतीति ॥४५४॥
बरषत करषत आपु जल, हरषत अरघनि भानु।
तुलसी चाहत साधु सुर सब सनेह सनमानु ॥४५५॥

४४४—दूक = दोनों।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्रुति-गुन, कर-गुन, पु-जुग, मृग, हय, रेवती, सखाउ।
देहि लेहि धन धरनि धरु, गएहु न जाइहि काउ ॥४५६॥
ऊगुन, पूगुन, वि, अज, कृ, म, आ, भ, अ, मू, गुनु साथ।
हरो, धरो, गाड़ो, दियो, धन फिर चढ़ै न हाथ ॥४५७॥
रवि हर दिसि गुन रस नयन, मुनि प्रथमादिक वार।
तिथि सब-काज-नसावनी, होइ, कुजोग विचार ॥४५८॥
ससि सर नव दुइ छ दस गुन, मुनि फल वसु हर भानु।
मेषादिक क्रम तें गनहिं घात चंद्र जिय जानु ॥४५९॥
नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चक चाष।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहि मन अभिलाष ॥४६०॥
सुधा, साधु, सुरतरु, सुमन, सुफल, सुहावनि बात।
तुलसी सीतापति भगति, सगुन सुमंगल सात ॥४६१॥

४५६––स्रुति-गुन = श्रवण से तीन नक्षत्र अर्थात् श्रवण, धनिष्ठा और शतभिक्।

कर-गुन = हस्त से तीन नक्षत्र अर्थात् हस्त, चित्रा और स्वाती।

पु-जुग = दोनों पु अर्थात् 'पु' से आरंभ होनेवाले पुष्य और पुनर्वसु।

सखा = अनुराधा। स्वात्यादित्य मृदुद्विदैव गुरुभे कर्णत्रयाश्चे चरे।

४५७––उ-गुन = उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद।

पू गुन = पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद।

वि = विशाखा। अज = रोहिणी। कृ = कृत्तिका। म = मघा। आ = आर्द्रा। भ = भरणी। अ = अश्लेषा। मू = मूल।

तीक्ष्ण मिश्र ध्रुवोग्रैर्यत् द्रव्यं दत्तं निवेशितम्।
प्रयुक्तं च, विनष्टं च, विष्टयांपाते च नाप्यते ॥

४५८––रवि = द्वादशी। हर = एकादशी। दिसि = दसमी। गुन = तीज। रस = षष्ठी। नयन = दूज। मुनि = सप्तमी––ये यदि क्रम से रवि, सोम, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि को पड़ें तो।

४५९––चंद्रमा को इन इन स्थानों पर घातक समझो––

मेष का १, वृष का ५, मिथुन का ९, कर्क का २, सिंह का ६, कन्या का १०, तुला का ३, वृश्चिक का ७, धन का ४, मकर का ८, कुंभ का ११, मीन का १२।

४६०––सुदरसन = मछली। दरसनी = दर्पण। चक = चक्रवाक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरत सत्रुसूदन लषन सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सव, मिलिहि सुमंगल साथ ॥४६२॥

राम लषन कौसिक सहित सुमिरहु करहु पयान।
लच्छिलाभ लै जगत जसु मंगल सगुन प्रमान ॥४६३॥

अतुलित महिमा बेद की तुलसी किए विचार।
जो निंदत निंदित भयो बिदित बुद्ध अवतार ॥४६४॥

बुध-किसान सर-बेद निज मते-खेत सब सींच।
तुलसी कृषि लखि जानिबो उत्तम, मध्यम, नीच ॥४६५॥

सहि कुबोल, साँसति सकल, अँगइ अनट अपमान।
तुलसी धरम न परिहरिय, कहि करि गए सुजान ॥४६६॥

अनहित भय परहित किए, पर-अनहित हितहानि।
तुलसी चारु विचार भल, करिय काज सुनि जानि ॥४६७॥

पुरुषारथ, पूरव करम, परमेस्वर परधान।
तुलसी पैरत सरित ज्यों सवहिँ काज अनुमान ॥४६८॥

चलव नीतिमग, रामपग-नेह-निवाहव नीक।
तुलसी पहिरिय सो वसन जो न पखारे फीक ॥४६९॥

दो 'हा' चारु विचारु चलु परिहरि वाद विवाद।
सुकृत-सीवँ, स्वारथ-अवधि, परमारथ-मरजाद ॥४७०॥

तुलसी सो समरथ सुमति, सुकृती, साधु, सयान।
जो विचारि ब्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान ॥४७१॥

जाय जोग जग छेम विनु, तुलसी के हित राखि।
बिनुऽपराध भृगुपति, नहुष, बेनु, वृकासुर साखि ॥४७२॥

वड़ि प्रतीति गठिबंध तें, बड़ो जोग तें छेम।
बड़ो सुसेवक साइँ तें, बड़ो नेम तें प्रेम ॥४७३॥

सिष्य, सखा, सेवक, सचिव, सुतिय, सिखावन साँच।
सुनि समुझिय, पुनि परिहरिय, पर-मनरंजन पाँच ॥४७४॥

नगर, नारि, भोजन, सचिव, सेवक, सखा, अगार।
सरस, परिहरे रंगरस निरस विषाद बिकार ॥४७५॥

४७२—जाय = व्यर्थ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तूठहिँ निज रुचि काज करि, रूठहिँ काज बिगारि।
तीय, तनय, सेवक, सखा, मन के कंटक चारि ॥४७६॥
दीरघ रोगी, दारिदी, कटुबच, लोलुप लोग।
तुलसी प्रान समान तउ होहिँ निरादर-जोग ॥४७७॥
पाही खेती, लगनवट, रिन कुब्याज, मग खेत।
बैर बड़े सों आपने, किए पाँच दुख-हेत ॥४७८॥
धाय लगे लोहा ललकि खैँचि लेइ नइ नीचु।
समरथ पापी सों बयर, जानि बिसाही मीचु ॥४७९॥
सोचिय गृही जो मोहबस, करै कर्मपथ-त्याग।
सोचिय जती प्रपंच-रत, बिगत-बिबेक-बिराग ॥४८०॥
तुलसी स्वारथ सामुहो, परमारथ तनु पीठि।
अंध कहै दुख पाइहौ, डिठियारो केहि डीठि ? ॥४८१॥
बिनु आँखिन की पानही पहिचानत लखि पाय।
चारि नयन के नारि नर सूझत मीचु न माय ॥४८२॥
जुपै मूढ़ उपदेस के होते जोग जहान।
क्यों न सुजोधन बोध कै आए स्याम सुजान ? ॥४८३॥

सोरठा

फूलै फरै न बेत, जदपि सुधा बरषहिँ जलद।
मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैँ बिरंचि सिव ॥४८४॥

दोहा

रीझि आपनी बूझि पर, खीझि विचार-विहीन।
ते उपदेस न मानहीं मोह-महोदधि-मीन ॥४८५॥
अनसमुझे अनुसोचनो, अवसि समुझिए आपु।
तुलसी आपु न समझिए पलपल पर परितापु ॥४८६॥
कूप खनत मंदिर जरत, आए धारि बबूर।
बवहिँ, नवहिँ निज काज सिर कुमति-सिरोमनि कूर ॥४८७॥

४७८—पाही खेती = जिस गाँव में बसा हो उससे दूर दूसरे गाँव में खेती। लगनवट = प्रेम।

४७९—मछली और कटिया का दृष्टांत।

४८७—आए धारि बबूर बवहिँ = कहावत अर्थात् जब सेना ने गढ़ घेर लिया तब चारों ओर रोक के लिये चले बबूल बोने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निडर ईस तें बीस कै बीसवाहु सो होइ ।
गयो गयो कहैं सुमति सब, भयो कुमति कह कोइ ॥४८८॥
जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो तुलसी उचित न होइ ॥४८९॥
बहु मुख, बहु रुचि, बहु बचन, बहु अचार ब्यवहार ।
इनको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥४९०॥
लोगनि भलौ मनाव जो भलो होन की आस ।
करत गगन को गेंदुआ सो सठ तुलसीदास ॥४९१॥
अपजस-जोग कि जानकी, मनि चोरी की कान्ह ? ।
तुलसी लोग रिझाइबो करषि कातिबो नान्ह ॥४९२॥
तुलसी जुपै गुमान को होतो कछू उपाउ ।
तौ कि जानिकिहि जानि जिय परिहरते रघुराउ ?॥४९३॥
माँगि मधुकरी खात ते, सोवत गोड़ पसारि ।
पाप-प्रतिष्ठा बढ़ि परी, ताते बाढ़ी रारि ॥४९४॥
तुलसी भेड़ी की धँसनि जड़-जनता-सनमान ।
उपजत ही अभिमान भो, खोवत मूढ़ अपान ॥४९५॥
लही आँख कब आँधरे, बाँझ पूत कब ल्याय ?
कब कोढ़ी काया लही ? जग बहराइच जाइ ॥४९६॥
तुलसी निरभय होत नर, सुनियत सुरपुर जाइ ।
सो गति देखियत अछत तनु, सुख संपति गति पाइ ॥४९७॥

४८८—बीसकै = बीस बिस्वे, निश्चय ।

४९१—गेंदुआ = तकिया ।

४९२—नान्ह = महीन ।

४९३—गुमान = बुरी धारणा, शंका, लोकापवाद ।

४९४—खात ते = खाते थे ।

४९६—बहराइच में, साला मसऊद गाजी (गाजी मियाँ) की दरगाह है; जहाँ कई हजार यात्री जाया करते हैं । यह महमूद ग़ज़नवी का भानजा था, जो महमूद के कन्नौज से आगे न बढ़ने पर भी ग़ाज़ी होने के हौसले से अवध की ओर कुछ सेना लेकर आया । यहाँ श्रावस्ती (आधु० सहेतमहेत, जो बलरामपुर के पास है) के जैन राजा सुहृददेव के हाथ से मारा गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी तोरत तीरतरु, वक हित हंस विडारि ।
विगत-नलिन-अलि, मलिन जल, सुरसरिहू वढ़ियारि ।।४९८।।
अधिकारी वस औसरा भलेउ जानिवे मंद ।
सुधासदन वसु, वारहें, चउथे, चउथिउ चंद ।।४९९।।
त्रिविध एक विधि प्रभु-अनुग अवसर करहिं कुठाट ।
सूधे टेढ़े, सम विषम, सव महँ वारहवाट ।।५००।।
प्रभु तें प्रभु-गन दुखद लखि प्रजहिं सँभारै राउ ।
कर तें होत कृपान को कठिन घोर घन घाउ ।।५०१।।
व्यालहु तें विकराल वड़ व्यालफेन जिय जानु ।
वहि के खाए मरत है, वह खाये विनु प्रानु ।।५०२।।
कारन ते कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर ।
कुलिस अस्थि तें, उपल तें लोह कराल कठोर ।।५०३।।
काल बिलोकत ईस-रुख, भानु काल-अनुहारि ।
रविहिं राउ, राजहिं प्रजा बुध व्यवहरहिं विचारि ।।५०४।।
जथा अमल पावन पवन पाइ कुसंग सुसंग ।
कहिय कुवास सुवास तिमि काल महीस-प्रसंग ।।५०५।।
भलेहु चलत पथ पोच भय, नृप-नियोग-नय-नेम ।
सुतिय सुभूपति भूषियत लोह-सँवारित हेम ।।५०६।।
माली भानु किसान सम, नीति निपुन नरपाल ।
प्रजा-भागबँस होहिंगे कवहुँ कवहुँ कलिकाल ।।५०७।।
वरषत हरषत लोग सव, करषत लखै न कोइ ।
तुलसी प्रजा-सुभाग तें भूप भानु सो होइ ।।५०८।।
सुधा, सुनाज, कुनाज, पल, आम, असन, सम जानि ।
सुप्रभु प्रजाहित लेहि कर सामादिक अनुमानि ।।५०९।।
पाके, पकये, विटप-दल उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहै, नरेस त्यों करि विचार मन बीच ।।५१०।।
रीझि खीझि गुरु देत सिख, सखा सुसाहिव साधु ।
तोरि खाय फल होइ भल, तरु काटे अपराधु ।।५११।।

४९९—चउथिउ = भादों सुदी चौथ का चंद्रमा ।

५०२—वहि के खाए = उसके काटने से ।

५०९—सुधा = दूध, रस आदि पीने के उत्तम पदार्थ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरनि-धेनु चारितु चरत, प्रजा-सुबच्छ पेन्हाइ ।
हाथ कछू नहिँ लागिहै किए गोड़ की गाइ ।।५१२।।
चढ़े बघूरे चंग ज्यों, ज्ञान ज्यों सोक-समाज ।
करम, धरम, सुख-संपदा त्यों जानिबे कुराज ।।५१३।।
कंटक करि करि परत गिरि साखा सहस खजूरि ।
मरहिँ कुनृप करि करि कुनय सो कुचालि भव भूरि ।।५१४।।
काल तोपची, तुपक महि, दारु अनय कराल ।
पाप पलीता, कठिन गुरु, गोला पुहुमीपाल ।।५१५।।
भूमि रुचिर रावन-सभा, अंगद-पद महिपाल ।
धरम राम, नय सील बल, अचल होत सुभ काल ।।५१६।।
प्रीति-राम-पद, नीतिरति, धरम प्रतीति सुभाइ ।
प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुँ बचन मन काइ ।।५१७।।
कर के कर, मन के मनहि, बचन बचन गुन जानि ।
भूपहि भूलि न परिहरै विजय विभूति सयानि ।।५१८।।
गोली बान सुमंत्र सर समुझि उलटि मन देखु ।
उत्तम मध्यम नीच प्रभु बचन विचारि विसेखु ।।५१९।।
सत्रु सयानो सलिल ज्यों राख सीस रिपु-नाउ ।
बूड़त लखि, पग डगत लखि, चपरि चहूँ दिसि धाउ ।।५२०।।
रैयत, राज-समाज, घर, तन, धन, धरम, सुबाहु ।
सांत सुसचिवन सौंपि सुख विलसहिँ नित नरनाहु ।।५२१।।
मुखिया मुख सो चाहिए, खान पान को एक ।
पालै पोषै सकल अँग तुलसी सहित विवेक ।।५२२।।
सेवक कर पद नयन से, मुख सो साहिब होइ ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुकवि सराहहिँ सोइ ।।५२३।।
मंत्री, गुरु अरु बैद जो प्रिय बोलहिँ भय आस ।
राज, धरम, तन तीनि कर होइ बेगिही नास ।।५२४।।
रसना मंत्री, दसन जन, तोष पोष निज काज ।
प्रभु-कर सेन पदादिका, बालक राज-समाज ।।५२५।।

५१२—चारितु = चारा । गोड़ की करना = दूध दुहते समय गाय के पैर बांधना ।
५१९—बान = बाना, फेंक कर मारा जाने वाला अस्त्र ।
५२१—सुबाहु = सेना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लकड़ी डौआ करछुली सरस काज अनुहारि।
सुप्रभु संग्रहहिं परिहरहिं, सेवक सखा बिचारि ॥५२६॥

प्रभु समीप छोटे, बड़े, निवल, होत बलवान।
तुलसी प्रगट बिलोकिए कर अँगुली अनुमान ॥५२७॥

साहब तें सेवक बड़ो जो निज धरम सुजान।
राम बाँधि उतरे उदधि, लाँघि गए हनुमान ॥५२८॥

तुलसी भल बरतरु बढ़त, निज मूलहि अनुकूल।
सबहि भाँति सब कहँ सुखद दलनि-फलनि बिनु फूल ॥५२९॥

सधन, सगुन, सधरम, सगन, सबल, सुसाइँ महीप।
तुलसी जे अभिमान बिनु ते त्रिभुवन के दीप ॥५३०॥

तुलसी निज करतूति बिनु मुकत जात जब कोइ।
गयो अजामिल लोक हरि नाम सक्यो नहिं धोइ ॥५३१॥

बड़ो गहे ते होत बड़, ज्यों बावन-कर-दंड।
श्रीप्रभु के सँग सों बढ़ो, गयो अखिल ब्रह्मंड ॥५३२॥

तुलसी दान जो देत हैं जल में हाथ उठाय।
प्रतिग्राही जीवै नहीं, दाता नरकै जाय ॥५३३॥

आपन छोड़े साथ जब ता दिन हितू न कोइ।
तुलसी अंबुज अंबुबिनु तरनि तासु रिपु होइ ॥५३४॥

उरबी परि कलहीन होइ, ऊपर कलाप्रधान।
तुलसी देखु कलापगति, साधन-घन पहिचान ॥५३५॥

तुलसी संगति पोच की सुजनहिं होत,मदानि।
ज्यों हरि रूप सुताहि तें कीन गुहारी आनि ॥५३६॥

५३३--जल में हाथ उठाय = गंगा में खड़े होकर जो गंगापुत्र आदि को दान दिया जाता है वह ऐसा ही है जैसा जल में मछली पकड़ने के लिये फेंका हुआ चारा, जिसे लेनेवाला भी मर जाता है और देनेवाला भी नरक में जाता है।

५३६--मदानि = कल्याणदायिनी। ज्यों ... आनि = भक्तमाल में कथा है कि एक बढ़ई ने काठ के दो हाथ कर विष्णु का रूप बनाया और एक राजकन्या पर मोहित होकर उससे विवाह कर लिया। एक बार कन्या के पिता पर कोई आपत्ति आई। उसने अपनी कन्या से अपने पति विष्णु से सहायता माँगने के लिये कहा। अपने रूप की मर्यादा का ध्यान करके विष्णु ने सचमुच रक्षा की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलि-कुचालि सुभमति-हरनि, सरलै दंडै चक्र ।
तुलसी यह निहचय भई, बाढ़ि लेति नव बक्र ॥५३७॥
गोखग, खेखग, बारिखग, तीनों माहिँ बिसेक ।
तुलसी पीवैं, फिर चलैं, रहैं फिरैं सँग एक ॥५३८॥
साधन, समय, सुसिद्धि लहि, उभय मूल अनुकूल ।
तुलसी तीनिउ समय सम ते महि मंगल-मूल ॥५३९॥
मातु-पिता-गुरु-स्वामि-सिख सिर धरि करहिँ सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन जनम कर, नतरु जनम जग जाय ॥५४०॥
अनुचित उचित बिचार तजि, ते पालहिँ पितुबैन ।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहिँ अमरपति-ऐन ॥५४१॥

सोरठा

सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभगति लहै ।
जस गावत स्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहिँ प्रिय ॥५४२॥

दोहा

सरनागत कहँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पाँवर पापमय, तिनहिँ बिलोकत हानि ॥५४३॥
तुलसी तृन जल-कूल को निरबल, निपट निकाज ।
कै राखै, कै सँग चलै, बाँह गहे की लाज ॥५४४॥
रामायन-अनुहरत सिख, जग भयो भारत रीति ।
तुलसी सठ की को सुनै ? कलि-कुचालि पर प्रीति ॥५४५॥
पात पात कै सींचिबो, बरी बरी कै लोन ।
तुलसी खोटे चतुरपन कलि डहके कहु को न ? ॥५४६॥
प्रीति, सगाई, सकल गुन, बनिज, उपाय अनेक ।
कल बल छल कलिमल-मलिन डहकत एकहि एक ॥५४७॥
दंभ सहित कलिधरम सब, छल समेत ब्यवहार ।
स्वारथ सहित सनेह सब, रुचि - अनुहरत अचार ॥५४८॥
चोर, चतुर, बटपार, नट, प्रभुप्रिय भँडुआ, भंड ।
सब-भच्छक परमारथी, कलि सुपंथ पाषंड ॥५४९॥
असुभ बेष भूषन धरैं, भच्छ अभच्छ जे खाहिँ ।
ते जोगी, ते सिद्ध नर, पूजित कलिजुग माहिँ ॥५५०॥

५३७—चक्र = राजचक्र, अर्थात् राजा अपने राजपुरुषों के सहित । बाढ़ि लेति नव = नित नई नई बढ़ती है । बक्र=वक्रता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोरठा

जे अपकारी चार, तिनकर गौरव, मान्य तेइ ।
मन वच करम लवार ते वकता कलिकाल महँ ।।५५१।।

दोहा

ब्रह्म-ज्ञान बिनु नारि-नर कहहिँ न दूसरि बात ।
कौड़ी लागि ते मोहवस करहिँ विप्र-गुरु-घात ।।५५२।।
बादहिँ सूद्र द्विजन सन "हम तुम तें कछु घाटि ? ।
जानहिँ ब्रह्म सो विप्रवर" आँखि दिखावहिँ डाँटि ।।५५३।।
साखी सवदी दोहरा, कहि किहनी उपखान ।
भगति निरूपहिँ भगत कलि, निंदहिँ बेद पुरान ।।५५४।।
स्रुति-संमत हरि-भक्तिपथ, संजुत-बिरति-बिबेक ।
तेहि परिहरहिँ बिमोहवस, कल्पहिँ पंथ अनेक ।।५५५।।
सकल धरम बिपरीत कलि, कलिपत कोटि कुपंथ ।
पुन्य पराय पहार वन, दुरे पुरान सुभ ग्रंथ ।।५५६।।
धातुवाद, निरुपाधि वर, सदगुरु-लाभ, सुभीत ।
देव-दरस कलिकाल में पोथिन दुरे सभीत ।।५५७।।
सुर-सदननि, तीरथ, पुरिन, निपट कुचालि कुसाज ।
मनहुँ मवासे मारि कलि राजत सहित समाज ।।५५८।।
गोंड़ गँवार नृपाल महि, यमन महा-महिपाल ।
साम न दाम, न भेद कलि, केवल दंड कराल ।।५५९।।
फोरहिँ सिल लोढ़ा सदन लागे अढ़ुक पहार ।
कायर कूर कपूत कलि घर घर सहस डहार ।।५६०।।
प्रगट चारि पद धरम के, कलि महँ एक प्रधान ।
येन केन विधि दीन्हे ही दान करै कल्यान ।।५६१।।
कलिजुग सम जुग आन नहिँ, जो नर कर बिस्वास ।
गाइ रामगुन-गन बिमल भव तर बिनहिँ प्रयास ।।५६२।।
स्रवन घटहु, पुनि दृग घटहु, घटहु सकल वल देह ।
इते घटे घटिहै कहा जो न घटै हरि-नेह ? ।।५६३।।

५५७—धातुवाद = रसायन ।
५५८—मवासे मारि = किला बाँध कर ।
५६०—डहार = डाहनेवाले । तंग करनेवाले ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन।
अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहै कौन ? ॥५६४॥
कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दंभ पाषंड।
दहन रामगुन-ग्राम जिमि ईंधन अनल प्रचंड ॥५६५॥

सोरठा

कलि पाषंड-प्रचार, प्रबल पाप पाँवर पतित।
तुलसी उभय अधार, रामनाम, सुरसरि-सलिल ॥५६६॥

दोहा

रामचंद्र-मुख-चंद्रमा चित चकोर जब होइ।
रामराज सब काज सुभ समय सुहावन सोइ ॥५६७॥
बीज राम-गुनगन, नयन जल, अंकुर पुलकालि।
सुकृती-सुतन सुखेत बर, बिलसत तुलसी सालि ॥५६८॥
तुलसी सहित सनेह नित सुमिरहु सीताराम।
सगुन सुमंगल सुभ सदा आदि मध्य परिनाम ॥५६९॥
पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम।
सुलभ सिद्धि सब साहिबी, सुमिरत सीताराम ॥५७०॥
मनिमय दोहा दीप जहँ, उर-घर प्रगट प्रकास।
तहँ न मोह भय-तम तमी, कलि कज्जली बिलास ॥५७१॥
का भाषा का संसकृत, प्रेम चाहिए साँच।
काम जु आवै कामरी, का लै करै कुमाच ॥५७२॥
मनि मानिक महँगे किए, सहँगे तृन, जल, नाज।
तुलसी एतो जानिए राम गरीब-नेवाज ॥५७३॥

५७२—कुमाच = एक प्रकार का रेशमी कपड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवितावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवितावली

बाल कांड

अवधेस के द्वारे सकारे गई, सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच-विमोचन को ठगि सी रही, जे न ठगे धिक से।।
तुलसी मनरंजन रंजित अंजन नैन सु खंजन-जातक से।
सजनी ससि में समसील उभै नव नील सरोरुह से विकसे।। १।।

पग नूपुर औ पहुँची करकंजनि, मंजु बनी मनिमाल हिए।
नव नील कलेवर पीत झँगा झलकैं, पुलकैं नृप गोद लिए।।
अरविंद सो आनन, रूपमरंद अनंदित लोचन-भृंग पिए।
मन मों न बस्यौ अस बालक जौ तुलसी जग में फल कौन जिए?।। २।।

तन की दुति स्याम सरोरुह, लोचन कंज की मंजुलताई हरैं।
अति सुंदर सोहत धूरि भरे, छवि भूरि अनंग की दूरि धरैं।।
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यों, किलकैं कल बाल-विनोद करैं।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं।। ३।।

कबहूँ ससि माँगत आरि करैं, कबहूँ प्रतिबिंब निहारि डरैं।
कबहूँ करताल बजाइ कै नाचत, मातु सबै मन मोद भरैं।।
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठि कै, पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं।। ४।।

बर दंत की पंगति कुंदकली, अधराधर-पल्लव खोलन की।
चपला चमकै घन बीच जगै छवि मोतिन माल अमोलन की।।
घुँघुरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर, कुंडल लोल कपोलन की।
निवछावरि प्रान करै तुलसी, बलि जाउँ लला इन बोलन की।। ५।।

पदकंजनि मंजु बनी पनहीं, धनुहीं सर पंकजपानि लिए।
लरिका संग खेलत डोलत हैं सरजूतट चौहट हाट हिए।।
तुलसी अस बालक सों नहिँ नेह कहा जप जोग समाधि किए?।
नर ते खर सूकर स्वान समान, कहौ जग में फल कौन जिए?।। ६।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरजू बर तीरहि तीर फिरैं रघुबीर, सखा अरु बीर सबै ।
धनुहीं कर तीर, निषंग कसे कटि, पीत दुकूल नवीन फबै ।।
तुलसी तेहि औसर लावनिता दस, चारि, नौ, तीनि, इकीस सबै ।
मति-भारति पंगु भई जो निहारि, बिचारि फिरी उपमा न पबै ।।७।।

कबित्त

छोनी में के छोनीपति छाजै जिन्हैं छत्रछाया
छोनी छोनी छाए छिति आए निमिराज के ।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बर बेष बपु
बरबे को बोले बयदेही बरकाज के ।।
बोले बंदी बिरुद बजाइ बर बाजनेऊ,
बाजे बाजे बीर बाहु धुनत समाज के ।
तुलसी मुदित मन पुर नर-नारि जेते
बार बार हेरैं मुख औध-मृगराज के ।।८।।

सीय के स्वयंबर समाज जहाँ राजनि को,
राजनि के राजा महाराजा जानै नाम को ?
पवन, पुरंदर, कृसानु, भानु, धनद से;
गुन के निधान रूपधाम, सोम काम को ? ।
बान बलवान, जातुधानप सरीखे सूर
जिन्हके गुमान सदा सालिम संग्राम को ।
तहाँ दसरत्थ के समर्थ नाथ तुलसी के
चपरि चढ़ायो चाप चंद्रमा-ललाम को ।। ९ ।।

७—दस, चारि⋯सबै = दस गुण माधुर्य के (रूप, लावण्य, सौंदर्य, माधुर्य, सौकुमार्य, यौवन, सुगंध, सुवेश, भाग्य, स्वच्छता, उज्वलता) । चार गुण प्रताप के (ऐश्वर्य, वीर्य, तेज, बल) । ऐश्वर्य के नौ गुण (अदभ्रता, नियतात्मता, वशीकरण, वाग्मित्व, सर्वज्ञता, संहनन, स्थिरता, वदान्यता) । सहज या प्रकृति के तीन गुण (सौम्यता, रमण, व्यापकता) । यश के २१ गुण (सुशीलता, वात्सल्य, सुलभता, गंभीरता, क्षमा, दया, करुणा, आर्द्रता, उदारता, आर्जव, शरण्यत्व, सौहार्द्र, चातुर्य, प्रीतिपालन, कृतज्ञता, ज्ञान, नीति, लोकप्रियता, कुलीनता, अनुराग, निर्वहणता ।

९—सालिम = दृढ़, अविचलित । चंद्रमाललाम = चंद्रभूषण, शिव ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मयनमहन पुरदहन गहन जानि
आनि कै सबै को सारु धनुष गढ़ायो है।
जनक सदसि जेते भले भले भूमिपाल
किए वलहीन, वल आपनो वढ़ायो है॥
कुलिस कठोर कूर्म पीठ तें कठिन अति,
हठि न पिनाक काहू चपरि चढ़ायो है।
तुलसी सो राम के सरोज-पानि परसत ही,
टूट्यौ मानों वारे तें पुरारि ही पढ़ायो है॥१०॥

छप्पय

डिगति उर्वि अति गुर्वि, सर्ब पब्बै समुद्र सर।
ब्याल वधिर तेहि काल, बिकल दिगपाल चराचर॥
दिग्गयंद लरखरत, परत दसकंठ मुक्खभर।
सुरबिमान हिमभानु भानु संघटित परस्पर॥
चौंके बिरंचि संकर सहित, कोल कमठ अहि कलमल्यौ।
ब्रह्मांड खंड कियो चंड धुनि जबहिँ राम सिवधनु दल्यौ॥११॥

घनाक्षरी

लोचनाभिराम घनस्याम रामरूप सिसु,
सखी कहैं सखी सों तू प्रेममय पालि, री !
बालक नृपालजू के ख्याल ही पिनाक तोरचो,
मंडलीक-मंडली-प्रताप-दाप दालि री॥
जनक को, सिया को, हमारो, तेरो, तुलसी को,
सब को भावतो ह्वैहै मैं जो कह्यो कालि री।
कौसिला की कोखि पर तोखि तन वारिये री,
राय दसरत्थ की वलैया लीजै आलि री॥१२॥
दूव दधि रोचना कनकथार भरि भरि,
आरती सँवारि वर नारि चलीं गावतीं।
लीन्हें जयमाल करकंज सोहैं जानकी के,
"पहिराओ राघोजू को" सखियाँ सिखावतीं॥
तुलसी मुदितमन जनक नगरजन,
झाँकती झरोखे लागीं सोभा रानी पावतीं।

११—हिमभानु = चंद्रमा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनहुँ चकोरी चारु बैठीं निज निज नीड़
चंद की किरन पीवैं, पलकैं न लावतीं ॥१३॥

नगर निसान बर बाजैं ब्योम दुंदुभी,
बिमान चढ़ि गान कै कै सुरनारि नाचहीं ।
जय जय तिहूँ पुर, जयमाल राम उर,
बरषैं सुमन सुर, रूरे रूप राचहीं ॥
जनक को पन जयौ, सब को भावतो भयौ,
तुलसी मुदित रोम रोम मोद माचहीं ।
साँवरो किसोर, गोरी सोभा पर तृन तोरि
"जोरी जियौ जुग जुग" सखीजन जाँचहीं ॥१४॥

भले भूप कहत भले भदेस भूपनि सों
"लोक लखि बोलिए पुनीत रीतिमारखी" ।
जगदंबा जानकी, जगतपितु रामभद्र,
जानि जिय जोवो जो न लागै मुँह कारखी ॥
देखे हैं अनेक ब्याह, सुने हैं पुरान बेद,
बूझे हैं सुजान साधु नर नारि पारखी ।
ऐसे सम समधी समाज ना बिराजमान,
राम से न बर, दुलही न सीय सारखी ॥१५॥

बानी बिधि गौरी हर सेसहू गनेस कही,
सही भरी लोमस भुसुंडि बहुबारिखो ।
चारिदस भुवन निहारि नर नारि सब,
नारद को परदा न नारद सो पारिखो ॥
तिन कही जग में जगमगति जोरी एक,
दूजो को कहैया औ सुनैया चखचारिखो ।
रमा रमारमन, सुजान हनुमान कही
'सीय सी न तीय न पुरुष राम सारिखो" ॥१६॥

सवैया

दूलह श्री रघुनाथ बने, दुलही सिय सुंदर मंदिर माहीं ।
गावति गीत सबै मिलि सुंदरि, बेद जुवा जुरि बिप्र पढ़ाहीं ॥
राम को रूप निहारति जानकी कंकन के नग की परछाहीं ।
यातें सबै सुधि भूलि गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं ॥१७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कवित्त

भूपमंडली प्रचंड चंडीस-कोदंड खंड्यौ
चंड बाहुदंड जाको ताही सों कहतु हौं।
कठिन कुठार धार धारिबे की धीरताहि,
बीरता बिदित ताकी देखिए चहतु हौं॥
तुलसी समाज राज तजि सो बिराजै आजु,
गाज्यौ मृगराज गजराज ज्यों गहतु हौं।
छोनी में न छाँड्यौ छप्यौ छोनिप को छोना छोटो,
छोनिप-छपन बाँको बिरुद बहतु हौं॥१८॥
निपट निदरि बोले बचन कुठरपानि,
मानि त्रास औनिपन मानौ मौनता गही।
रोषे माषे लखन अकनि अनखौंहीं बातैं,
तुलसी बिनीत बानी बिहँसि ऐसी कही॥
"सुजस तिहारो भरो भुवननि, भृगुनाथ!
प्रगट प्रताप आपु कह्यौ सो सबै सही।
टूट्यौ सो न जुरैगो सरासन महेसजू को,
रावरी पिनाक मैं सरीकता कहा रही?" ॥१९॥

सवैया

"गर्भ के अर्भक काटन को पटु धार कुठार कराल है जाको।
सोई हौं बूझत राजसभा 'धनु को दल्यौ'? हौं दलिहौं बल ताको।
लघु आनन उत्तर देत बड़ो, लरिहै मरिहै करिहै कछु साको।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो सो ढोटो है काको" ॥२०॥

घनाक्षरी

"मख राखिबे के काज राजा मेरे संग दए,
जीते जातुधान जे जितैया बिबुधेस के।
गौतम की तीय तारी, मेटे अघ भूरि भारी,
लोचन अतिथि भए जनक जनेस के॥
चंड बाहुदड बल चंडीस-कोदंड खंड्यौ,
ब्याही जानकी, जीते नरेस देस देस के।

१९—अकनि = सुनकर। सरीकता = शिरकत, साझा, बराबरी।
२०—साका करना = अद्भुत कर्म करके स्थायी कीर्ति प्राप्त करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँवरे गोरे सरीर, धीर महाबीर दोऊ,
नाम राम लखन, कुमार कोसलेस के" ॥२१॥

सवैया

काल कराल नृपालन के धनुभंग सुने फरसा लिए धाए।
लक्खन राम बिलोकि सप्रेम, महा रिसि ते फिरि आँखि दिखाए॥
धीर-सिरोमनि बीर बड़े बिनयी, बिजयी रघुनाथ सुहाए।
लायक हे भृगुनायक सो धनुसायक सौंपि सुभाय सिधाए॥२२॥

अयोध्या कांड

सवैया

कीर के कागर ज्यों नृपचीर बिभूषन, उप्पम अंगनि पाई।
औध तजी मगबास के रूख ज्यौं, पंथ के साथी ज्यौं लोग-लुगाई॥
संग सुबंधु, पुनीत प्रिया मनो धर्म क्रिया धरि देह सुहाई।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं॥ १॥
कागर-कीर ज्यौं भूषन चीर सरीर लस्यौ तजि नीर ज्यौं काई।
मातु पिता प्रिय लोग सबै सनमानि सुभाय सनेह सगाई॥
संग सुभामिनि भाइ भलो, दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाईं॥ २॥

घनाक्षरी

सिथिल सनेह कहै कौसिला सुमित्राजू सों,
"मैं न लखी सौति, सखी! भगिनी ज्यौं सेई है।
कहैं मोहि 'मैया' कहौं 'मैं न मैया' भरत की;
'बलैया लैहौं, भैया! तेरी मैया कैकेयी है॥'
तुलसी सरल भाय रघुराय माय मानी,
काय मन बानी हूँ न जानी कै मतेई है।
बाम बिधि मेरो सुख सिरिस सुमन सम,
ताको छल-छुरी कोह-कुलिस लै टेई है" ॥ ३॥

१—कागर = पंख।
२—धर्म, क्रिया = धर्म और कर्म।
३—मतेई = विमाता, सौतेली माँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"कीजै कहा, जीजी जू !" सुमित्रा परि पायँ कहै
"तुलसी सहावै बिधि सोई सहियतु है।
रावरो सुभाव राम-जन्म ही तें जानियत,
भरत की मातु को कि ऐसो चहियतु है ? ॥
जाई राजघर, ब्याहि आई राजघर माहँ,
राज-पूत पाए हूँ न सुख लहियतु है।
देह सुधागेह ताहि मृगहू मलीन कियो,
ताहू पर वाहु बिनु राहु गहियतु है" ॥ ४ ॥

सवैया

नाम अजामिल से खल कोटि अपार नदी भव बूड़त काढ़े।
जो सुमिरे गिरि-मेरु सिला-कन, होत अजाखुर बारिधि बाढ़े॥
तुलसी जेहि के पदपंकज तें प्रगटी तटिनी जो हरै अघ गाढ़े।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े॥ ५ ॥
एहि घाट तें थोरिक दूर अहै कटि लौं जल थाह देखाइहौं जू।
परसे पगधूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू ? ॥
तुलसी अवलंब न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू ?।
बरु मारिए मोहि बिना पग धोए हौं नाथ नों नाव चढ़ाइहौं जू ॥६॥
रावरे दोष न पायँन को, पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है।
पाहन तें बन-वाहन काठ को कोमल है, जल खाइ रहा है।
पावन पायँ पखारि कै नाव चढ़ाइहौं, आयसु होत कहा है ?।
तुलसी सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है॥ ७ ॥

घनाक्षरी

पात भरी सहरी, सकल सुत बारे बारे,
केवट की जाति कछू बेद ना पढ़ाइहौं।
सब परिवार मेरो याही लागि, राजा जू !
हौं दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं ? ॥
गौतम की घरनी ज्यों तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सों निषाद ह्वैकै बाद न बढ़ाइहौं।

४—सुधागेह = (१) चंद्रमा, (२) कहते हैं कि कैकेयी के मुख में अमृत था।
५—स्वै = सोई, वही।
७—बन-बाहन = नाव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी के ईस राम रावरे सों साँची कहौं,
बिना पग धोए नाथ नाव न चढ़ाइहौं ॥८॥

जिनको पुनीत वारि धारे सिर पै पुरारि,
त्रिपथगामिनी-जसु बेद कहै गाइ कै।
जिनको जोगींद्र मुनिबृंद देव देह धरि
करत बिराग जप जोग मन लाइ कै॥
तुलसी जिनकी धूरि परसि अहिल्या तरी,
गौतम सिधारे गृह गौनो सो लिवाइ कै।
तेई पायँ पाइकै चढ़ाइ नाव धोए बिनु
ख्वैहौं न पठावनी कै ह्वैहौं न हँसाइ कै ? ॥९॥

प्रभुरुख पाइकै बोलाइ बाल घरनिहिं
बंदि कै चरन चहूँ दिसि बैठे घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानि गंगाजू को
धोइ पाँय पीयत पुनीत वारि फेरि फेरि॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर,
बरषैं सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।
बिबुध-सनेह-सानी बानी असयानी सुनि,
हँसे राघौ जानकी लखन तन हेरि हेरि ॥१०॥

सवैया

पुर तें निकसी रघुबीर-बधू, धरि धीर दये मग में डग द्वै।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गए मधुराधर वै॥
फिरि बूझति हैं "चलनो अब केतिक, पर्न कुटी करिहौ कित ह्वै ?"।
तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अति चारु चलीं जल च्वै*॥११॥

९—पठावनी = मजदूरी।

लाला छक्कनलाल की छपाई प्रति में इसके आगे यह सवैया और है—
जल सूखि गए रसनाधर मंजुल कंज से लोचन चारु चुवैं।
करुनानिधि कंत तुरंत कह्यौ कि 'दुरंत महावन है इतवैं' ?
सरसीरुह-लोचन मोचत नीर चितै रघुनायक सीय पै ह्वै।
"अब हीं बन, भामिनि ! पूछति हौ तजि कोसलराज पुरी दिन द्वै" ॥
इस सवैया में कहीं 'तुलसी' शब्द नहीं आया है, इससे संदेह है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जल को गए लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय ! छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े ।
पोंछि पसेउ बयारि करौं, अरु पायँ पखारिहौं भूभुरि डाढ़े" ॥
तुलसी रघुबीर प्रिया स्रम जानि कै बैठि बिलंब लौं कंटक काढ़े ।
जानकी नाह को नेह लख्यौ, पुलको तनु, बारि बिलोचन बाढ़े ॥१२॥
ठाढ़े हैं नौ द्रुम डार गहे, धनु काँधे धरे, कर सायक लै ।
बिकटी भ्रुकुटी बड़री अँखियाँ, अनमोल कपोलन की छवि है ॥
तुलसी असि मूरति आनि हिए जड़ डारिहौं प्रान निछावरि कै ।
स्रम-सीकर साँवरि देह लसै मनो रासि महातम तारकमै ॥१३॥

घनाक्षरी

जलजनयन, जलजानन, जटा है सिर,
जोवन उमंग अंग उदित उदार हैं ।
साँवरे गोरे के बीच भामिनी सुदामिनी सी,
मुनिपट धारे, उर फूलनि के हार हैं ॥
करनि सरासन सिलीमुख, निषंग कटि,
अतिही अनूप काहू भूप के कुमार हैं ।
तुलसी बिलोकि कै तिलोक के तिलक तीनि,
रहे नरनारि ज्यों चितेरे चित्रसार हैं ॥१४॥
आगे सोहै साँवरो कुवँर, गोरो पाछे पाछे,
आछे मुनि बेष धरे लाजत अनंग हैं ।
बान बिसिखासन, बसन बन ही के कटि,
कसे हैं बनाइ, नीके राजत निषंग हैं ॥
साथ निसिनाथमुखी पाथनाथ-नंदिनी सी,
तुलसी बिलोके चित्त लाइ लेत संग हैं ।
आनँद उमंग मन, जोवन उमंग तन,
रूप की उमंग उमगत अंग अंग हैं ॥१५॥

कवित्त

सुंदर बदन, सरसीरुह सुहाए नैन,
मंजुल प्रसून माथे मुकुट जटनि के ।

१२—भूभुरि = गरम धूल ।
१४—चितेरा = चित्र ।
१५—बनाइ = अच्छी तरह, खूब ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रंसनि सरासन लसत, सुचि कर सर,
तून कटि, मुनिपट लूटक पटनि के ।।
नारि सुकुमारि संग जाके ग्रंग उवटि कै,
विधि विरचे वरूथ विद्युतछटनि के ।
गोरे को बरन देखे सोनो न सलोनो लागै,
साँवरे विलोके गर्ब घटत घटनि के ।।१६।।

वल्कल वसन, धनुबान पानि, तून कटि,
रूप के निधान, घन-दामिनी-बरन हैं ।
तुलसी सुतीय संग सहज सुहाए ग्रंग,
नवल कँवल हू ते कोमल चरन हैं ।।
ग्रौरै सो वसंत, ग्रौरै रति, ग्रौरै रतिपति,
मूरति विलोके तन मन के हरन हैं ।
तापस बेषै बनाइ, पथिक पथै सुहाइ
चले लोक-लोचननि सुफल करन हैं ।।१७।।

सवैया

बनिता वनी स्यामल गौर के बीच, बिलोकहु, री सखी ! मोहिँ सी ह्वै ।
मग जोग न, कोमल, क्यों चलिहैं ? सकुचात मही पदपंकज छ्वै ।।
तुलसी सुनि ग्रामवधू बिथकीं, पुलकीं तन ग्रौ चले लोचन च्वै ।
सब भाँति मनोहर मोहन रूप, ग्रनूप हैं भूप के बालक द्वै ।।१८।।

साँवरे गोरे सलोने सुभाय, मनोहरता जिति मैन लियो है ।
बान कमान निषंग कसे, सिर सोहैं जटा, मुनिबेष कियो है ।।
संग लिये बिधु-बैनी वधू रति को जेहि रंचक रूप दियो है ।
पाँयन तौ पनहीं न, पयादेहिँ क्यों चलिहैं ? सकुचात हियो है ।।१९।।

रानी मैं जानी ग्रजानी महा, पबि पाहन हूँ ते कठोर हियो है ।
राजहु काज ग्रकाज न जान्यो, कह्यो तिय को जिन कान कियो है ।।
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है ? ।
ग्राँखिन में, सखि ! राखिबे जोग, इन्हें किमि कै बनबास दियो है ?।।२०।।

१६—लूटक पटनि के = वस्त्रों की शोभा को लूटने या हरनेवाले । घटनि = घटाग्रों ।

१९—बिधुबैनी = चंद्रवदनी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीस जटा, उर बाहु विसाल, विलोचन लाल, तिरीछी सी भौंहैं ।
तून सरासन बान धरे, तुलसी बन-मारग में सुठि सोहैं ।।
सादर बारहिँ बार सुभाय चितै तुम त्यों हमरो मन मोहैं ।
पूछति ग्रामबधू सिय सों "कहौ साँवरे से, सखि रावरे को हैं ?" ।।२१।।

सुनि सुंदर बैन सुधारस-साने, सयानी हैं जानकी जानी भली ।
तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली ।।
तुलसी तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकति लोचन-लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग में भानु उदै बिगसीं मनो मंजुल कंज-कली ।।२२।।

धरि धीर कहैं "चलु देखिय जाइ जहाँ सजनी रजनी रहिहैं ।
कहिहै जग पोच, न सोच कछू, फल लोचन आपन तौ लहिहैं ।।
सुख पाइहैं कान सुने बतियाँ, कल आपसु में कछु पै कहिहैं" ।
तुलसी अति प्रेम लगीं पलकैं, पुलकीं लखि राम हिये महिँ हैं ।।२३।।

पद कोमल, स्यामल गौर कलेवर, राजत कोटि मनोज लजाए ।
कर बान सरासन, सीस जटा, सरसीरुह लोचन सोन सुहाए ।।
जिन देखे, सखी ! सतभायहु तें, तुलसी तिन तौ मन फेरि न पाए ।
यहि मारग आजु किसोर बधू बिधुबैनी समेत सुभाय सिधाए ।।२४।।

मुखपंकज, कंज बिलोचन मंजु मनोज-सरासन सी बनी भौंहैं ।
कमनीय कलेवर, कोमल स्यामल गौर किसोर, जटा सिर सोहैं ।।
तुलसी कटि तून, धरे धनु बान, अचानक दीठि परी तिरछौंहैं ।
केहि भाँति कहौं, सजनी ! तोहि सों मृदु मूरति द्वै निबसीं मन मो हैं ।।२५।।

प्रेम सों पीछे तिरीछे प्रियाहि चितै चित दै, चले लै चित चोरे ।
स्याम सरीर पसेऊ लसै, हुलसै तुलसी छबि सो मन मोरे ।।
लोचन लोल चलैं भ्रुकुटी, कल काम-कमानहु सो तृन तोरे ।
राजत राम कुरंग के संग, निषंग कसे, धनु सों सर जोरे ।।२६।।

सर चारिक चारु बनाइ कसे कटि, पानि सरासन सायक लै ।
बन खेलत राम फिरैं मृगया, तुलसी छबि सो बरनै किमि कै ? ।।

२१—त्यों = तन, ओर ।
२३—महिँ = महँ, में ।
२४—सोन = शोण, लाल ।
२७—सिलीमुख पंच = चार तूणीर में और एक हाथ में ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवलोकि अलौकिक रूप मृगी मृग चौंकि चकैं चितवैं चित दै ।
न डगैं न भगैं जिय जानि सिलीमुख पंच धरे रतिनायक है ।।२७।।
बिंध्य के वासी उदासी तपोव्रतधारी महा बिनु नारि दुखारे ।
गौतमतीय तरी, तुलसी, सो कथा सुनि भे मुनिबृंद सुखारे ।।
ह्वैहैं सिला सब चंद्रमुखी परसे पद-मंजुल-कंज तिहारे ।
कीन्हीं भली रघुनायकजू करुना करि कानन को पगु धारे ।।२८।।

———

अरण्य कांड

सवैया

पंचवटी वर पर्नकुटी तर बैठे हैं राम सुभाय सुहाए ।
सोहै प्रिया, प्रिय बंधु लसै, तुलसी सब अंग घने छवि छाए ।।
देखि मृगा मृगनैनी कहे प्रिय बैन, ते प्रीतम के मन भाए ।
हेमकुरंग के संग सरासन सायक लै रघुनायक धाए ।।१।।

———

किष्किधा कांड

कबित्त

जब अंगदादिन की मति गति मंद भई,
पवन के पूत को न कूदिबे को पलु गो ।
साहसी ह्वै सैल पर सहसा सकेलि आइ
चितवत चहूँ ओर, औरन को कलु गो ।।
तुलसी रसातल को निकसि सलिल आयो,
कोल कलमल्यो, अहि कमठ को बलु गो ।
चारिहू चरन के चपेट चाँपे चिपटि गो,
उचके उचकि चारि अंगुल अचलु गो ।।१।।

———

१—सकेलि = क्रीड़ा सहित, खेल ही खेल में ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुंदर कांड

कवित्त

वासव वरुन विधि वन तें सुहावनो,
दसानन को कानन वसंत को सिँगारु सो।
समय पुराने पात परत डरत, वात,
पालत, लालत रति मार को विहारु सो ॥
देखे वर वापिका तड़ाग वाग को बनाव,
रागवस भो विरागी पवनकुमार सो।
सीय की दसा विलोकि विटप असोक तर,
तुलसी विलोक्यो सो तिलोक सोक-सारु सो ॥१॥
माली मेघमाल, वनपाल विकराल भट,
नीके सब काल सींचैं सुधासार नीर को।
मेघनाद तें दुलारो प्रान तें पियारो वाग,
अति अनुराग जिय जातुधान धीर को ॥
तुलसी सो जानि सुनि, सीय को दरस पाइ,
पैठो वाटिका, वजाइ वल रघुबीर को।
विद्यमान देखत दसानन को कानन सो,
तहस-नहस कियो साहसी समीर को ॥२॥
वसन वटोरि बोरि बोरि तेल तमीचर,
खोरि खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर हैं।
तैसो कपि कौतुकी डरात ढीलो गात कै कै,
लात के अघात सहै जी में कहै 'कूर हैं' ॥
वाल किलकारी कै कै, तारी दै दै गारी देत,
पाछे लागे बाजत निसान ढोल तूर हैं।
वालधी बढ़न लागि, ठौर ठौर दीन्हीं आगि,
विंध की दवारि, कैधों कोटिसत सूर हैं ॥३॥
लाइ लाइ आगि भागे वाल-जाल जहाँ तहाँ,
लघु ह्वै निबुकि गिरि मेरु तें विसाल भो।

२—बजाइ = घोषित करके।
३—बालधी = पूँछ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौतुकी कपीस कूदि कनककँगूरा चढ़ि,
रावन भवन जाइ ठाढ़ो तेहि काल भो ।।
तुलसी विराज्यो व्योम वालधी पसारि भारी,
देखे हहरात भट काल तें कराल भो ।
तेज को निधान मानो कोटिक कृसानु भानु,
नख विकराल, मुख तैसो रिस-लाल भो ।।४।।

वालधी विसाल विकराल ज्वाल-जाल मानौं,
लंक लीलिबे को काल रसना पसारी है ।
कैधौं ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि सी उघारी है ।।
तुलसी सुरेस चाप, कैधौं दामिनी कलाप,
कैधौं चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है ।
देखे जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं,
"कानन उजारचौ अब नगर प्रजारी है" ।।५।।

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
"जरत निकेत, धाओ धाओ लागि आगि रे ।
कहाँ तात, मात, भ्रात, भगिनि, भामिनी, भाभी,
ढोटे छोटे छोहरा अभागे भोरे भागि रे।।
हाथी छोरो, घोरा छोरो, महिष बृषभ छोरो,
छेरी छोरो, सोवै सो जगाओ जागि जागि रे" ।
तुलसी बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
"बार बार कह्यो पिय कपि सों न लागि रे !" ।।६।।

देखि ज्वालजाल, हाहाकार दसकंध सुनि,
कह्यो 'धरो धरो' धाए बीर बलवान हैं ।
लिए सूल, सेल, पास, परिघ, प्रचंड दंड,
भाजन सनीर, धीर धरे धनुवान हैं ।।
तुलसी समिध सौंज लंक-जज्ञकुंड लखि,
जातुधान पुंगीफल, जव, तिल, धान हैं ।
स्रुवा सो लँगूल बलमूल, प्रतिकूल हवि,
स्वाहा महा हाँकि हाँकि हुनैं हनुमान हैं ।।७।।

७—सौंज = सामग्री । प्रतिकूल हवि = अद्भुत हवि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाज्यो कपि गाज ज्यों, विराज्यो ज्वालजाल-जुत,
भाजे बीर धीर, अकुलाइ उठ्यो रावनो ।
'धाओ धाओ धरो' सुनि धाए जातुधानधारि,
बारिधारा उलदैं जलद ज्यों न सावनो ॥
लपट झपट झहराने, हहराने बात,
भहराने भट पर्‍यो प्रबल परावनो ।
ढकनि ढकेलि पेलि सचिव चले लै ठेलि,
"नाथ न चलैगो बल अनल भयावनो" ॥८॥
बड़ो बिकराल बेष देखि, सुनि सिंहनाद,
उठ्यो मेघनाद सविषाद कहै रावनो ।
बेग जीत्यो मारुत, प्रताप मारतंड कोटि,
कालऊ करालता बड़ाई जीतो बावनो ॥
तुलसी सयाने जातुधान पछिताने मन,
"जाको ऐसो दूत सो साहब अबै आवनो" ।
काहे की कुसल रोष राम बामदेवहू के
बिषम बली सों बादि बैर को बढ़ावनो ॥९॥
'पानी पानी पानी' सब रानी अकुलानी कहैं,
जाति हैं परानी, गति जानि गजचालि है ।
बसन बिसारैं मनि भूषन सँभारत न,
आनन सुखाने कहैं "क्योंहूँ कोऊ पालिहै ?" ॥
तुलसी मँदोवै मीजि हाथ, धुनि माथ कहै
"काहू कान कियो न मैं कह्यो केतो कालि है" ।
बापुरो बिभीषन पुकारि बार बार कह्यो,
"बानर बड़ी बलाइ घने घर घालिहै" ॥१०॥
"कानन उजार्‍यो तौ उजार्‍यो न बिगार्‍यो कछु,
बानर बिचारो बाँधि आन्यो हठि हार सों ।
निपट निडर देखि काहू ना लख्यो बिसेषि,
दीन्हों ना छुड़ाइ कहि कुल के कुठार सों ॥
छोटे औ बड़ेरे मेरे पूतऊ अनेरे सब,
साँपनि सों खेलैं, मेलैं गरे छुराधार सों" ।

१०—मँदोवै = मंदोदरी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी मँदोवै रोइ रोइ कै विगोवै आपु,
"वार वार कह्यो मैं पुकारि दाढ़ीजार सों" ।।११।।
रानी अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहिं,
सकैं ना विलोकि बेष केसरीकुमार को ।
मीजि मींजि हाथ, धुनै माथ दसमाथ-तिय,
तुलसी तिलौ न भयो बाहिर अगार को ।।
सब असबाब डाढ़ो, मैं न काढ़ो तैं न काढ़ो,
जिय की परी सँभार सहन भँडार को ? ।
खीझति मँदोवै सविषाद देखि मेघनाद,
"बयो लुनियत सब याही दाढ़ीजार को" ।।१२।।
रावन की रानी जातुधानी बिलखानी कहैं
"हा हा ! कोऊ कहै बीसबाहु दसमाथ सों ।
काहे मेघनाद, काहे काहे रे महोदर ! तू
धीरज न देत, लाइ लेत क्यों न हाथ सों ? ।।
काहे अतिकाय, काहे काहे रे अकंपन !
अभागे तिय त्यागे भोंड़े भागे जात साथ सों ।
तुलसी बढ़ाय वादि साल तें विसाल बाहैं,
याही बल, बालिसो ! विरोध रघुनाथ सों !" ।।१३।।
हाट, बाट, कोट, ओट, अट्टनि, अगार, पौरि,
खोरि खोरि दौरि दौरि दीन्ही अति आगि है ।
आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,
ब्याकुल जहाँ सो तहाँ लोग चले भागि हैं ।।
बालधी फिरावै बार बार झहरावै, झरैं
बँदिया सी लंक पघिलाइ पाग पागि है ।
तुलसी विलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं
"चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहैं" ।।१४।।
'लागि लागि आगि', भागि भागि चले जहाँ तहाँ,
धीय को न माय, बाप पूत न सँभारहीं ।
छूटे बार, बसन उघारे, धूम धुंध अंध;
कहैं बारे बूढ़े 'बारि बारि' बार बार हीं ।।

११—हार = बन। अनेरे = व्यर्थ, निकम्मे। बिगोवै = श्रीहीन दशा करती है।
१३—बालिस = बालिश, मूर्ख; छोकरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हय हिहिनात भागे जात, घहरात गज;
भारी भीर ठेलि पेलि रौंदि खौंदि डारहीं।
नाम लै चिलात, बिललात अकुलात अति
"तात तात! तौंसियत, झौंसियत झारहीं" ॥१५॥
लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने पहिचाने कौन काहि रे?
पानी को ललात, बिललात, जरे गात जात,
परे पाइमाल जात, "भ्रात! तू निवाहि रे॥
प्रिया तू पराहि, नाथ नाथ! तू पराहि, बाप,
बाप! तू पराहि, पूत पूत, तू पराहि रे"।
तुलसी बिलोकि लोग व्याकुल बिहाल कहैं
"लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे" ॥१६॥
बीथिका बजार प्रति, अटनि अगार प्रति,
पँवरि पगार प्रति वानर बिलोकिए।
अध ऊर्ध वानर, विदिसि दिसि वानर हैं,
मानहु रह्यो है भरि वानर तिलोकिए॥
मूँदे आँखि हीय में, उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किए?।
"लेहु अब लेहु, तब कोऊ न सिखायो मानो,
सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिए" ॥१७॥
एक करै धौज, एक कहै काढ़ौ सौंज,
एक औँजि पानी पी कै कहै 'बनत न आवनो'।
एक परे गाढ़े, एक डाढ़त ही काढ़े, एक
देखत हैं ठाढ़े, कहैं 'पावक भयावनो'।
तुलसी कहत एक "नीके हाथ लाए कपि,
अजहूँ न छाँड़ै बाल गाल को बजावनो।
धाओ रे, बुझाओ रे कि बावरे हौ रावरे, या
औरै आगि लागी, न बुझावै सिधु सावनो" ॥१८॥

१५—तौंसियत = तपे जाते हैं।
१६—पाइमाल जात = पामाल होते हैं, नष्ट हुए जाते हैं।
१७—सतराइ जाइ = चिढ़ जाता था।
१८—धौंज—दौड़ धूप। सौंज = सामान। औंजि = ऊमस से घबराकर॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोपि दसकंध तब प्रलयपयोद बोले,
रावन रजाइ धाइ आए जूथ जोरि कै।
कह्यो लंकपति "लंक बरत बुताओ बेगि,
बानर बहाइ मारौ महा बारि बोरि कै" ॥
"भलो नाथ !" नाइ माथ चले पाथप्रदनाथ,
बरषैं मुसलधार बार बार घोरि कै।
जीवन तें जागी आगी, चपरि चौगुनी लागी,
तुलसी भभरि मेघ भागे मुख मोरि कै ॥१९॥

इहाँ ज्वाल जरे जात, उहाँ ग्लानि गरे गात,
सूखे सकुचात सब कहत पुकार हैं।
"जुग-षटभानु देखे, प्रलय-कृसानु देखे,
सेषमुख अनल बिलोके बार-बार हैं ॥
तुलसी सुन्यो न कान सलिल सर्पी समान,
अति अचरज कियो केसरीकुमार है"।
बारिद बचन सुनि धुने सीस सचिवन्ह,
कहैं "दससीस ईस-वामता-विकार है" ॥२०॥

"पावक, पवन, पानी, भानु, हिमवान, जम,
काल, लोकपाल मेरे डर डाँवाडोल हैं।
साहिब महेस सदा, संकित रमेस मोहिं,
महातपसाहस बिरंचि लीन्हे मोल हैं ॥
तुलसी तिलोक आजु दूजो न विराजै राजा,
बाजे बाजे राजनि के बेटा बेटी ओल हैं।
को है ईस नाम ? को जो वाम होत मोहू सो को ?
मालवान ? रावरे के बावरे से बोल हैं" ॥२१॥

"भूमि भूमिपाल, ब्यालपालक पताल, नाकपाल,
लोकपाल जेते सुभट समाज हैं।"

१९—घोरि कै = गरज कर। जीवन = जल।
२०—सर्पी = घृत, घी।
२१—हिमवान = चंद्रमा। ओल = किसी का अपने किसी प्रिय प्राणी को दूसरे के पास इसलिये रख छोड़ना कि यदि वह प्रतिज्ञा न पूरी करे तो दूसरा उस प्राणी के साथ जो चाहे सो करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहै मालवान "जातुधानपति रावरे कों
मनहूँ अकाज आनै ऐसो कौन आज है ? ॥
रामकोह-पावक, समीर-सीयस्वास, कीस-
ईस-वामता बिलोकु, बानर को ब्याज है।
जारत प्रचारि फेरि फेरि सो निसंक लंक,
जहाँ बाँको बीर तोसो सूर सिरताज है" ॥२२॥

पान, पकवान विधि नाना को, सँधानो, सीधो,
विविध विधान धान वरत बखारहीं।
कनक किरीट कोट, पलँग, पेटारे, पीठ
काढ़त कहार, सब जरे भरे भारहीं ॥
प्रबल अनल बाढ़ै, जहाँ काढ़ै तहाँ डाढ़ै,
झपट लपट भरै भवन भँडारही।
तुलसी अगार न पगार न बजार बच्यो,
हाथी हथिसार जरे, घोरे घोरसारहीं ॥२३॥

हाट बाट हाटक पिघलि चलो घी सो घनो,
कनक-कराही लंक तलफति ताय सों।
नाना पकवान जातुधान बलवान सब,
पागि पागि ढेरी कीन्ही भली भाँति भाय सों ॥
पाहुने कृसानु पवमान सो परोसो,
हनुमान सनमानि कै जेँवाए चित चाय सों।
तुलसी निहारि अरिनारि दै दै गारि कहैं,
"बावरे सुरारि बैर कीन्हीं रामराय सों" ॥२४॥

रावन सो राजरोग बाढ़त विराट-उर,
दिन दिन विकल सकल सुख राँक सो।
नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि,
होत न विसोक, औत पावै न मनाक सो ॥
राम के रजाय तें रसायनी समीरसूनु,
उतरि पयोधिपार सोधि सरवाक सो।

२३—सँधाना = अचार, चटनी। पीठ = पीठा, पीढ़ा, काष्ठासन। पगार = आकार, चारदीवारी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जातुधान बुट, पुटपाट लंक जातरूप,
रतन जतन जारि कियो है मृगांक सो ।।२५।।

जारि वारि कै विधूम, वारिधि बुताइ लूम,
नाइ माथो, पगनि भो ठाढ़ो कर जोरि कै।
"मातु ! कृपा कीजै, सहदानि दीजै" सुनि सीय
दीन्हीं है असीस चारु चूड़ामनि छोरिकै ।।
"कहा कहौं तात ! देखे जात ज्यों बिहात दिन,
बड़ी अवलंब ही सो चले तुम तोरि कै" ।
तुलसी सनीर नैन, नेह सों सिथिल बैन,
विकल बिलोकि कपि कहत निहोरि कै ।।२६।।

"दिवस छ सात जात जानिबे न, मातु धरु
धीर, अरि अंत की अवधि रही थोरिकै ।
बारिधि बँधाय सेतु ऐहैं भानुकुलकेतु,
सानुज कुसल कपिकटक बटोरि कै" ।।
बचन विनीत कहि सीता को प्रबोध करि,
तुलसी त्रिकूट चढ़ि कहत डफोरि कै ।
"जै जै जानकीस दससीसकरि-केसरी"
कपीस कूद्यो बातघात बारिधि हलोरि कै ।।२७।।

साहसी समीरसनु नीरनिधि लंघि, लखि
लंक सिद्धिपीठ निसि जागो है मसान सो ।
तुलसी बिलोकि महा साहस प्रसन्न भई
देवी सिया सारिखी, दियो है बरदान सो ।।
'वाटिका उजारि, अच्छ-धारि मारि, जारि गढ़,
भानुकुलभानु को प्रतापभानु भानु सो ।
करत बिसोक लोक-कोकनद, कोक-कपि',
कहै जामवंत 'आयो आयो हनुमान सो' ।।२८।।

२५—ओत = बीमारी में कुछ आराम, चैन । मनाक = थोड़ा । बुट = बूटी ।
२६—सहदानी = पहचान का चिह्न, निशान । अवलंब ही = अवलंब थी ।
२७—डफोरि कै = हाँक देकर, ललकार कर ।
२८—धारि = समूह, सेना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गगन निहारि, किलकारी भारी सुनि,
हनुमान पहिचानि भए सानंद सचेत हैं।
बूड़त जहाज बच्यो पथिकसमाज मानो
आजु जाए जानि सब अंकमाल देत हैं।।
'जै जै जानकीस जै जैं लषन कपीस' कहि
कूदैं कपि कौतुकी, नचत रेत रेत हैं।
अंगद मयंद नल नील वलसील महा,
वालधी फिरावैं, मुख नाना गति लेत हैं।।२९।।

आयो हनुमान प्रानहेतु, अंकमाल देत,
लेत पगधूरि एक चूमत लंगूल हैं।
एक बूझै वार वार सीय समाचार कहे,
पवनकुमार भो विगत-स्रम-सूल हैं।।
एक भूखे जानि आगे आने कंद मूल फल,
एक पूजे बाहुवल तोरि मूल फूल हैं।
एक कहैं तुलसी 'सकल सिधि ताके जाके
कृपापाथनाथ सीतानाथ सानुकूल हैं' ।।३०।।

सीय को सनेह सील, कथा तथा लंक की
चले कहत चाय सों, सिरानो पथ छन में।
कह्यो जुवराज बोलि बानर समाज "आजु,
खाहु फल" सुनि पेलि पैठे मधुवन में।।
मारे बागवान, ते पुकारत देवान गे,
'उजारे बाग अंगद', दिखाए घाय तन में।
कहैं कपिराय 'करि काज आए कीस,
तुलसीस की सपथ महामोद मेरे मन में' ।।३१।।

नगर कुबेर को सुमेरु की बराबरी,
विरंचि बुद्धि को बिलास लंक निरमान भो।
ईसहिं चढ़ाय सीस बीसबाहु बीर तहाँ,
रावन सो राजा रज-तेज को निधान भो।।
तुलसी त्रिलोक की समृद्धि सौंज संपदा
सकेलि चाकि राखी रासि, जाँगर जहान भो।।

२९—बालधी = पूँछ, दुम।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरे उपास बनवास सिंधुपास सो
समाज महराजजू को एक दिन दान भो ।।३२।।

लंका कांड

कबित्त

बड़े बिकराल भालु , वानर बिसाल बड़े,
तुलसी बड़े पहार लै पयोधि तोपिहैं ।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड खंड,
मंडि मेदिनी को मंडलीक-लीक लोपिहैं ।।
लंकदाहु देखे न उछाहु रह्यो काहुन को,
कहैं सब सचिव पुकारि पाँव रोपि हैं ।
"बाचिहै न पाछे त्रिपुरारि हू मुरारिहू के,
को है रन रारि को जौ कोसलेस कोपिहैं ?" ।।१।।

त्रिजटा कहति बार बार तुलसीस्वरी सों,
"राघौ बान एक ही समुद्र सातौ सोखिहैं ।
"सकुल सँघारि जातुधानधारि, जंबुकादि
जोगिनी-जमाति कालिका-कलाप तोखिहैं ।।
राज दै निवाजिहैं बजाइ कै बिभीषनै,
बजैंगे ब्योम बाजने बिबुध प्रेम पोखिहैं ।
कौन दसकंध, कौन मेघनाद बापुरो, को
कुंभकर्न कीट, जब राम रन रोखिहैं" ।।२।।

बिनय सनेह सों कहति सीय त्रिजटा सों
"पाए कछु समाचार आरजसुवन के ?" ।
"पाए जू ! बँधायो सेतु, उतरे कटक कुलि ×,
आए देखि देखि दूत दारुन दुवन के ।।

३२—चाकि राखी = अन्न की राशि को जैसे किसान गोबर की रेखा से घेर देते हैं । (जिसमें चुराने से पता लग जाय) उसी प्रकार उसने घेर रक्खा । **जाँगर** = अन्न झाड़ा हुआ डंठल ।

×. पाठा०—भानुकुलकेतु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बदनमलीन बलहीन दीन देखि मानौ
मिटे घटे तमीचर-तिमिर भुवन के।
लोकपति-सोक-कोक, मूँदे कपि-कोकनद,
दंड द्वै रहे हैं रघु आदित उवन के" ॥३॥

झूलना

सुभुज मारीच खर त्रिसिर दूषन बालि,
दलत जेहि दूसरो सर न साँध्यो।
आनि परबाम बिधिबाम तेहि राम सों
सकत संग्राम दसकंध काँध्यो॥
समुझि तुलसीस कपिकर्म घर घर घैरु,
बिकल सुनि सकल पाथोधि बाँध्यो।
बसत गढ़ लंक लंकेस नायक अछत
लंक नहिं खात कोउ भात राँध्यो ॥४॥

सवैया

बिस्वजयी भृगुनायक से बिनु हाथ भए हनि हाथ-हजारी।
बातुल मातुल की न सुनी सिख, का तुलसी कपि लंक न जारी ? ॥
अजहूँ तौ भलो रघुनाथ मिले, फिरि बूझिहै को गज, कौन गजारी।
कीर्ति बड़ो, करतूति बड़ी जन, बात बड़ी, सो बड़ोई बजारी ॥५॥

जब पाहन भे बनबाहन-से, उतरे बनरा 'जय राम' रढ़े।
तुलसी लिए सैल सिला सब सोहत, सागर ज्यों बल-बारि बढ़े ॥
करि कोप करैं रघुबीर को आयसु, कौतुक ही गढ़ कूदि चढ़े।
चतुरंग चमू पल में दलि कै रन रावन राढ़ के हाड़ गढ़े ॥६॥

घनाक्षरी

बिपुल बिसाल बिकराल कपि भालु मानौ
काल बहु बेष धए धाए किए करषा।
लिए सिला सैल, साल, ताल औ तमाल तोरि
तोपैं तोयनिधि, सुर को समाज हरषा ॥

३—लोकपति-सोक-कोक = सशोक लोकपति-कोक।
५—कीर्ति बड़ो = कीर्ति में बड़ा।
६—रढ़े = रटा, बोले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डगे दिगकुंजर , कमठ कोल कलमले,
डोले धराधर-धारि, धराधर धरषा ।
तुलसी तमकि चलै , राघौ की सपथ करैं,
को करै अटक कपि - कटक अमरषा ? ॥७॥
आए सुक सारन बोलाए, ते कहन लागे,
पुलक सरीर सेना करत फहम ही ।
'महाबली बानर बिसाल भालु काल-से
कराल हैं, रहे कहाँ, समाहिँगे कहाँ मही' ।
हँस्यो दसमाथ रघुनाथ को प्रताप सुनि,
तुलसी दुरावै मुख सूखत सहम ही ॥
राम के बिरोधे बुरो बिधि-हरि-हरहू को,
सबको भलो है राजा राम के रहम ही ॥८॥
'आयो आयो आयो सोई बानर बहोरि,' भयो
सोर चहुँ ओर लंका आए जुबराज के ।
एक काढ़ै सौंज, एक धौंज करै 'कहा ह्वैहै,
पोच भई महा', सोच सुभट समाज के ॥
गाज्यो कपिराज रघुराज की सपथ करि,
मूँदे कान जातुधान मानो गाजे गाज के ।
सहमि सुखात बातजात की सुरति करि,
लवा ज्यों लुकात तुलसी झपेटे बाज के ॥९॥
तुलसीस-बल रघुबीर जू के, बालिसुत
वाहि न गनत, बात कहत करेरी सी ।
"बखसीस ईस जू की खीस होत देखियत,
रिस काहे लागति कहत हौं मैं तेरी सी ॥
चढ़ि गढ़ मढ़ दृढ़ कोट के कँगूरे कोपि,
नेकु धका दैहैं ढैहैं ढेलन की ढेरी सी ।
सुनु दसमाथ ! नाथ-साथ के हमारे कपि
हाथ लंका लाइहैं तो रहैगी हथेरी सी ॥१०॥

७—धराधर = (१) पर्वत (२) शेष । धरषा = धर्षित हुआ ।
९—बातजात = हनुमान् ।
१०—खीस होत = नष्ट होती । मढ़ = मंडप । हाथ की हथेरी **सी** = **समतल**, सपाट ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूषन विराध खर त्रिसिर कबंध वधे,
तालऊ बिसाल बेधे, कौतुक है कालि को ।
एक ही बिसिष बस भयो बीर बाँकुरो जो,
तोहू है विदिन वल महावली वालि को ।।
तुलसी कहत हित, मानतो न नेकु संक,
मेरो कहा जैहै, फल पैहै तू कुचालि को ।
बीर-करि-केसरी कुठारपानि मानी हारि,
तेरी कहा चली, विड ! तो सो गनै घालि को ।।११।।

सवैया

तोसों कहौं दसकंधर रे, रघुनाथ-विरोध न कीजिय बौरे ।
वालि वली, खरदूषन और अनेक गिरे जे जे भीति में दौरे ।।
ऐसिय हाल भई तोहिं धौं, नतु लै मिलु सीय चहै सुख जौ रे ।
राम के रोष न राखि सकैं तुलसी विधि, श्रीपति, संकर सौ रे ।।१२।।

तू रजनीचरनाथ महा, रघुनाथ के सेवक को जन हौं हौं ।
बलवान है स्वान गली अपनी, तोहिं लाज न गाल वजावत सौहौं ।।
बीस भुजा दससीस हरौं न डरौं प्रभु आयसुभंग ते जौ हौं ।
खेत में केहरि ज्यों गजराज दलौं दल, वालि को वालक तौ हौं ।।१३।।

कोसलराज के काज हौं आज त्रिकूट उपारि लै वारिधि वोरौं ।
महाभुज-दंड द्वै अंडकटाह चपेट की चोट चटाक दै फोरौं ।।
आयसुभंग तें जौ न डरौं सब मींजि सभासद सोनित खोरौं ।
बालि को वालक जौ तुलसी दसहू मुख के रन में रद तोरौं ।।१४।।

अति कोप सों रोप्यो है पाँव सभा, सब लंक ससंकित सोर मचा ।
तमके घननाद से बीर पचारि कै, हारि निसाचर सैन पचा ।।
न टरै पग मेरुहु तें गरु भो, सो मनो महि संग विरंचि रचा ।
तुलसी सब सूर सराहत हैं "जगमें बलसालि है वालि-बचा" ।।१५।।

११—कुठारपानि = परशुराम । विड = विट, नीच, खल । घालि गनै = घलुए या पसँगे बराबर समझता है । कुछ नहीं समझता है ।
१२—धौं = जोर देने के लिये प्रयुक्त शब्द, तो ।
१४—खोरौं = स्नान करूँ, नहाऊँ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनाक्षरी

रोप्यो पाँव पैज कै विचारि रघुबीरबल,
लागे भट सिमिटि न नेकु टसकतु है ।
तज्यो धीर धरनि, धरनिधर धसकत,
धराधर धीर भार सहि न सकतु है ।
महाबली बालि को दबत दलकति भूमि,
तुलसी उछरि सिंधु मेरु मसकतु है ।
कमठ कठिन पीठि, घठा परो मंदर को,
आयो सोई काम, पै करेजो कसकतु है ।।१६।।

झूलना

कनकगिरिसृंग चढ़ि देखि मर्कट कटक,
बदति मंदोदरी परम भीता ।
"सहसभुज-मत्त-गजराज-रन-केसरी-
परसुधर-गर्ब जेहि देखि बीता ।।
दास तुलसी समरसूर कोसलधनी
ख्याल ही बालि बलसालि जीता ।
कंत ! तृन दंत गहि 'सरन श्रीराम' कहि,
अजहूँ यहि भाँति लै सौंपु सीता" ।।१७।।
"नीच मारीच बिचलाइ, हति ताड़का,
भंजि सिवचाप सुख सबहिँ दीन्ह्यो ।
सहस-दसचारि खल सहित खर-दूषनहिँ,
पठै जमधाम, तैं तउ न चीन्ह्यौ ।।
मैं जु कहौं कंत सुनु संत भगवंत सों,
बिमुख ह्वै बालि फल कौन लीन्ह्यौ ? ।
बीस भुज सीस दस खीस गए तबहिँ जब
ईस के ईस सों बैर कीन्ह्यौ" ।।१८।।
"बालि दलि काल्हि जलजान पाषान किय,
कंत ! भगवंत तैं तउ न चीन्हे ।

१६—घठा = लगातार बहुत दिनों तक दाब पड़ते रहने से कड़ा पड़ा हुआ चमड़ा, जिसमें वेदना कम होती है । घट्ठा ।
१८—पठै = पठए, भेजे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विपुल विकराल भट, भालु कपि काल से,
संग तरु तुंग गिरिसृंग लीन्हे ।।
आइगे कोसलाधीस तुलसीस जेहि
छत्र मिस मौलि दस दूरि कीन्हे ।
ईस-बकसीस जनि खीस करु ईस ! सुनु,
अजहुँ कुल कुसल बैदेहि" दीन्हे' ।।१९।।

"सैन के कपिन को को गनै अर्बुदै,
महाबलबीर हनुमान जानी ।
भूलिहै दसदिसा सेस पुनि डोलिहै,
कोपि रघुनाथ जब बान तानी ।।
बालिहू गर्ब जिय माहिँ ऐसो कियो,
मारि दहपट कियो जम की धानी ।"
कहति मंदोदरी "सुनहि, रावन ! मतो,
बेगि लै देहि बैदेहि रानी" ।।२०।।

"गहन उज्जारि पुर जारि सुत मारि तव,
कुसल गो कीस बरबेर जाको ।
दूसरो दूत पन रोपि कोप्यो सभा,
खर्ब कियो सर्ब को गर्ब थाको ।।"
दास तुलसी सभय वदति मयनंदिनी,
"मंदमति कंत ! सुनु मंत म्हाको ।
तौलौं मिलु बेगि नहिँ जौलौं रन रोष भयो,
दासरथि बीर बिरुदैत बाँको" ।।२१।।

घनाक्षरी

कानन उजारि, अच्छ मारि, धारि धूरि कीन्हीं,
नगर प्रजारयो सो बिलोक्यो बल कीस को ।
तुम्हैं बिद्यमान जातुधान-मंडली में कपि
कोपि रोप्यो पाँउ, सो प्रभाव तुलसीस को ।

२०—दहपट कियो = ध्वस्त किया ।
२१—बरबेर = बड़े शरीरवाला । थाको = (१) तुम्हारा या (२) ढीला पड़ा । म्हाको = मेरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंत ! सुनु मंत, कुल अंत किए अंत हानि,
हातो कीजै हीय तें भरोसो भुज बीस को ।
तौलौं मिलु बेगि जौलौं चाप न चढ़ायो राम,
रोषि बान काढ़्यो न दलैया दससीस को ॥२२॥
पवन को पूत देखौ दूत बीर बाँकुरो जो
बंक गढ़ लंक सो ढका ढकेलि ढाहिगो ।
बालि बलसालि को, सो काल्हि दाप दलि, कोपि
रोप्यो पाँउ, चपरि चमू को चाउ चाहिगो ॥
सोई रघुनाथ कपि साथ पाथनाथ बाँधि,
आए नाथ ! भागे ते खिरिरि खेह खाहिगो ।
तुलसी गरब तजि, मिलिबे को साज सजि,
देहि सीय नतो, पिय ! पाइमाल जाहिगो ॥२३॥
उदधि अपार उतरत नहिं लागी बार,
केसरीकुमार सो अदंड कैसो डाँड़िगो ।
वाटिका उजारि अच्छ रच्छकनि मारि, भट
भारी भारी रावरे के चाउर से काँड़िगो ॥
तुलसी तिहारे बिद्यमान जुवराज आजु,
कोपि पाँव रोपि, बस कै छोहाइ छाँड़िगो ।
कहे की न लाज, पिय ! अजहूँ न आए बाज,
सहित समाज गढ़ राँड़ कैसो भाँड़िगो ॥२४॥
जाके रोष दुसह त्रिदोष दाह दूरि कीन्हे,
पैयत न छत्रीखोज खोजत खलक में ।
माहिषमती को नाथ साहसी सहसबाहु
समर समर्थ, नाथ ! हेरिए हलक में ॥
सहित समाज महाराज सो जहाजराज
बूड़ि गयो जाके बल-बारिधि-छलक में ।
टूटत पिनाक के मनाक बाम राम से, ते
नाक बिनु भए भृगुनायक पलक में ॥२५॥

२२—हातो कीजै = दूर दीजिए ।
२३—खिरिरि = खरोंच कर ।
२५—खलक = (अ० खलक) संसार । हलक = (अ० हलक) कंठ अर्थात् हृदय । नाक = प्रतिष्ठा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीन्हीं छोनी छत्री बिनु, छोनिप-छपनहार
कठिन कुठारपानि बीर बानि जानि कै ।
परम कृपाल जो नृपाल लोकपालन पै,
जब धनु हाई ह्वैहै मन अनुमानि कै ॥
नाक में पिनाक मिस बामता बिलोकि राम
रोक्यो परलोक, लोक, भारी भ्रम भानि कै ।
नाइ दस माथ महि, जोरि बीस हाथ, पिय !
मिलिए पै नाथ रघुनाथ पहिचानि कै ॥२६॥

कह्यो मत मातुल, बिभीषनहू बार बार,
आँचर पसारि पिय पाँइ लै लै हौं परी ।
बिदित बिदेहपुर, नाथ ! भृगुनाथ-गति,
समय सयानी कीन्हीं जैसी आइ गौं परी ॥
बायस, बिराध, खर, दूषन, कबंध, बालि,
बैर रघुबीर के न पूरी काहु की परी ।
कंत बीस लोचन बिलोकिए कुमंत-फल,
ख्याल लंका लाई कपि राँड़ की सी झोंपरी ॥२७॥

सवैया

राम सों साम किए नित है हित, कोमल काज न कीजिए टाँठे ।
आपनि सूझि कहौं, पिय ! बूझिए, जूझिबे जोग न ठाहरु नाठे ॥
नाथ ! सुनी भृगुनाथ-कथा, बलि बालि गए चलि बात के साँठे ।
भाइ बिभीषन जाइ मिल्यो प्रभु आइ परे सुनि सायर-काँठे ॥२८॥

पालिबे को कपि-भालु-चमू जमकाल करालहु को पहरी है ।
लंक से बंक महागढ़ दुर्गम ढाहिबे दाहिबे को कहरी है ॥
तीतर-तोम तमीचर-सेन समीर को सूनु बड़ो बहरी है ।
नाथ भलो रघुनाथ मिले, रजनीचर-सेन हिए हहरी है ॥२९॥

२६—पै = अवश्य, निश्चय । हाई ह्वैहै = टूटेगा ।
२७—लाई = जलाई ।
२८—साँठे = पकड़े रहने से । सायर = सागर । काँठे = किनारे, तट पर ।
२९—कहरी = (अ० कहर) क्रोधी, आफत ढानेवाला । बहरी = एक प्रकार का शिकारी पक्षी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनाक्षरी

रोप्यो रन रावन, बोलाए बीर बानइत,
जानत जे रीति सब संजुग समाज की।
चलो चतुरंग चमू चपरि हने निसान,
सेना सराहन जोग रातिचर-राज को॥
तुलसी बिलोकि कपि भालु किलकत,
ललकत लखि ज्यो कँगाल पातरी सुनाज की।
राम रुख निरखि हरषे हिय हनुमान,
मानों खेलवार खोली सीसताज बाज की॥३०॥
साजिकै सनाह गजगाह सउछाह दल,
महाबली धाए बीर जातुधान धीर के।
इहाँ भालु बंदर बिसाल मेरु मंदर से,
लिए सैल साल तोरि नीरनिधि-तीर के॥
तुलसी तमकि ताकि भिरे भारी जुद्ध क्रुद्ध,
सेनप सराहैं निज निज भट भीर के।
रुंडन के भुंड भूमि भूमि भुकरे से नाचैं,
समर सुमार सूर मारे रघुबीर के॥३१॥

सवैया

तीखे तुरंग कुरंग सुरंगनि साजि चढ़े छँटि छैल छबीले।
भारी गुमान जिन्हें मन में, कबहूँ न भए रन में तनु ढीले।
तुलसी गज से लखि केहरि लौं झपटे पटके सब सूर सलीले।
भूमि परे भट घूमि कराहत, हाँकि हने हनुमान हठीले॥३२॥
सूर सँजोइल साजि सुबाजि, सुसेल धरे बगमेल चले हैं।
भारी भुजा भरी, भारी सरीर, बली बिजयी सब भाँति भले हैं॥
तुलसी जिन्हें धाए धुकै धरनीधर, धौरि धकानि सों मेरु हले हैं।
ते रन-तीर्थनि लक्खन लाखन-दानि ज्यों दारिद दाबि दले हैं॥३३॥
गहि मंदर बंदर भालु चले सो मनो उनए घन सावन के।
तुलसी उत भुंड प्रचंड भुके, भपटैं भट जे सुरदावन के॥

३१—सनाह = कवच। गजगाह = झूल, पाखर। भुकरे से = भुँझलाए से। सुमार सूर = चुने हुए वीर।

३२—सलीले = लीला से, खेल में।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिरुझे बिरुदैत जे खेत अरे, न टरे हठि बैर बढ़ावन के।
रन मारि मची उपरी उपरा, भले बीर रघुप्पति-रावन के ॥३४॥

सर तोमर सेल समूह पँवारत, मारत बीर निसाचर के।
इत तें तरु ताल तमाल चले, खर खंड प्रचंड महीधर के॥
तुलसी करि केहरि-नाद भिरे, भट खग्ग खगे, खपुवा खरके।
नख दंतन सों भुजदंड विहंडत, मुंड सों मुंड परे झर के ॥३५॥

रजनीचर मत्तगयंद-घटा विघटै मृगराज के साज लरै।
झपटै, भट कोटि मही पटकै, गरजै रघुबीर की सौंह करै॥
तुलसी उत हाँक दसानन देत, अचेत भे बीर को धीर धरै?।
बिरुझो रन मारुत को विरुदैत, जो कालहु काल सो बूझि परै ॥३६॥

जे रजनीचर बीर बिसाल कराल विलोकत काल न खाए।
ते रन रौर कपीस-किसोर बड़े बरजोर परे फँग पाए॥
लूम लपेटि अकास निहारि कै हाँकि हठी हनुमान चलाए।
सूखिगे गात, चले नभ जात, परे भ्रम-वात, न भूतल आए ॥३७॥

जो दससीस महीध्र-ईस को, बीस भुजा खुलि खेलनहारो।
लोकप दिग्गज दानव देव सबै सहमैं सुनि साहस भारो॥
बीर बड़ो बिरुदैत वली, अजहूँ जग जागत जासु पँवारो।
सो हनुमान हनी मुठिका, गिरिगो गिरिराज ज्यों गाज को मारो ॥३८॥

दुर्गम दुर्ग पहार तें भारे प्रचंड महा भुजदंड बने हैं।
लक्ख में पक्खर तिक्खन तेज जे सूर-समाज में गाज गने हैं॥
ते विरुदैत वली रन-बाँकुरे हाँकि हटी हनुमान हने हैं।
नाम लै राम दिखावत बंधु को, घूमत घायल घाय घने हैं ॥३९॥

घनाक्षरी

हाथिन सों हाथी मारे, घोड़े घोड़े सों सँहारे,
रथनि सों रथ बिदरनि बलवान की।

३५—खपुवा = भगोड़े, भरती के, निकम्मे। खगे = धँसे।
३६—साज = समान, तरह।
३७—फँग = फंदा, पंजा। भ्रम-बात = चक्कर में।
३८—पँवारा = लंबी कथा, वीर गाथा।
३९—पक्खर = लड़ाई की भूल, कवच।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंचल चपेट चोट चरन चकोट चाहैं,
हहरानी फौजें भहरानी जातुधान की ।।
बार-बार सेवक-सराहना करत राम,
तुलसी सराहै रीति साहेब सुजान की ।
लाँबी लूम लसत लपेटि पटकत भट,
देखौ देखौ, लखन ! लरनि हनुमान की ।।४०।।

दबकि दबोरे एक, बारिधि में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं ।
पकरि पछारे, कर चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे, एक मीँजि मारे लात हैं ।।
तुलसी लखत राम, रावन, बिबुध, बिधि,
चक्रपानि, चंडीपति, चंडिका सिहात हैं ।
बड़े बड़े बानइत बीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथप निपाते बातजात हैं ।।४१।।

प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड बीर,
धाए जातुधान हनुमान लियो घेरि कै ।
महाबल-पुंज कुंजरारि ज्यों गरजि भट,
जहाँ तहाँ पटके लँगूर फेरि फेरि कै ।।
मारे लात, तोरे गात, भागे जात, हाहा खात,
कहैं 'तुलसीस राखि राम की सौं' टेरि कै ।
ठहर ठहर परे कहरि कहरि उठैं,
हहरि हहरि हर सिद्ध हँसे हेरिकै ।।४२।।

जाकी बाँकी बीरता सुनत सहमत सूर,
जाकी आँच अबहूँ लसत लंक लाह सी ।
सोई हनुमान बलवान बाँके बानइत,
जोहि जातुधान सेना चलै लेत थाह सी ।।
कंपत अकंपन, सुखाय अतिकाय काय,
कुंभऊकरन आइ रह्यो पाइ आह सी ।
देखे गजराज मृगराज ज्यों गरजि धायो
बीर रघुबीर को समीरसूनु साहसी ।।४३।।

४२—तुलसीस = हनुमान् ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूलना

मत्तभट-मुकुट-दसकंध-साहस-सइल-
सृंग-बिद्दरनि जनु वज्रटाँकी ।
दसन धरि धरनि चिक्करत दिग्गज कमठ,
सेष संकुचित, संकित पिनाकी ॥
चलित महि मेरु, उच्छलित सायर सकल,
बिकल बिधि बधिर दिसि बिदिसि झाँकी ।
रजनिचर घरनि घर गर्भ-अर्भक स्रवत
सुनत हनुमान की हाँक बाँकी ॥४४॥
कौन की हाँक पर चौंक चंडीस बिधि,
चंडकर थकित फिरि तुरंग हाँके ।
कौन के तेज बलसीम भट भीम से
भीमता निरखि कर नयन ढाँके ॥
दास तुलसीस के बिरुद बरनत बिबुध,
बीर बिरुदैत बर बैरि धाँके ।
नाक नरलोक पाताल कोउ कहत किन
कहाँ हनुमान-से बीर बाँके ॥४५॥
जातुधानावली-मत्त-कुंजर-घटा
निरखि मृगराजु जनु गिरि तें टूट्यो ।
बिकट चटकन चपट, चरन गहि पटक महि,
निघटि गए सुभट, सत सब को छूट्यो ॥
दास तुलसी परत धरनि, धरकत झुकत,
हाट सी उठति जंबुकनि लूट्यो ।
धीर रघुबीर को बीर रन-बाँकुरो
हाँकि हनुमान कुलि कटक कूट्यो ॥४६॥

छप्पय

कतहुँ बिटप भूधर उपारि परसेन बरक्खत ।
कतहुँ बाजि सों बाजि, मर्दि गजराज करक्खत ॥
चरन चोट चटकन चकोट अरि उर सिर बज्जत ।
बिकट कटक बिद्दरत बीर बारिद जिमि गज्जत ॥

४५—धाँके = धाक जमा दी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंगूर लपेटत पटकि भट, 'जयति राम जय' उच्चरत ।
तुलसीस पवननंदन अटल जुद्ध क्रुद्ध कौतुक करत॥४७॥

घनाक्षरी

अंग अंग दलित ललित फूले किंसुक से,
हने भट लाखन लखन जातुधान के ।
मारि कै पछारे, कै उपारि भुजदंड चंड,
खंड खंड डारे ते बिदारे हनुमान के ॥
कूदत कबंध के कदंब बंब सी करत,
धावत दिखावत हैं लाघौ राघौ बान के ।
तुलसी महेस, विधि , लोकपाल, देवगन
देखत बिमान चढ़े कौतुक मसान के ॥४८॥

लोथिन सों लोहू के प्रवाह चले जहाँ तहाँ,
मानहुँ गिरिन गेरु-झरना झरत हैं ।
सोनित सरित घोर, कुंजर करारे भारे,
कूल तें समूल बाजि-विटप परत हैं ॥
सुभट सरीर नीरचारी भारी भारी तहाँ,
सूरनि उछाह, कूर कादर डरत हैं ।
फेकरि फेकरि फेरु फारि फारि पेट खात,
काक कंक-वालक कोलाहल करत हैं ॥४९॥

ओझरी की झोरी काँधे, आँतनि की सेल्ही बाँधे,
मूँड़ के कमंडलु, खपर किए कोरि कै ।
जोगिनी झुटुंग झुंड झुंड बनी तापसी सी
तीर तीर बैठीं सो समर-सरि खोरि कै ॥
सोनित सों सानि सानि गूदा खात सतुआ से,
प्रेत एक पियत बहोरि घोरि घोरि कै ।
तुलसी बैताल भूत साथ लिए भूतनाथ
हेरि हेरि हँसत हैं हाथ हाथ जोरि कै ॥५०॥

४९—फेरु = गीदड़ ।
५०—कोरिकै = खुरच कर, गड्ढा करके । खोरिकै = नहा करके । झुटुंग = एक प्रकार की योगिनी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

राम सरासन तें चले तीर, रहे न सरीर, हड़ावरि फूटी ।
रावन धीर न पीर गनी, लखि लै कर खप्पर जोगिनि जूटी ।।
सोनित-छींटि-छटानि-जटे तुलसी प्रभु सोहैं, महाछवि छूटी ।
मानों मरक्कत-सैल बिसाल में फैलि चलीं बर बीरबहूटी ।।५१।।

घनाक्षरी

मानी मेघनाद सों प्रचारि भिरे भारी भट,
आपने अपन पुरुषारथ न ढील की ।
घायल लषनलाल लखि बिलखाने राम,
भई आस सिथिल जगन्निवास दील की ।।
माई को न मोह, छोह सीय को न, तुलसीस,
कहैं "मैं बिभीषन की कछु न सबील की" ।
लाज बाँह बोले की, नेवाजे की सँभार सार,
साहेब न राम से, बलैया लेउँ सील की ।।५२।।

सवैया

कानन बास, दसानन सो रिपु, आननश्री ससि जीति लियो है ।
बालि महाबलसालि दल्यो, कपि पालि, बिभीषन भूप कियो है ।।
तीय हरी, रन बंधु परचो, पै भरचो सरनागत-सोच हियो है ।
बाँह-पगार उदार कृपालु, कहाँ रघुबीर सो धीर बियो है ? ।।५३।।
लीन्हो उखारि पहार बिसाल, चल्यो तेहि काल बिलंब न लायो ।
मारुतनंदन मारुत को, मन को, खगराज को बेग लजायो ।
तीखी तुरा तुलसी कहतो, पै हिए उपमा को समाउ न आयो ।
मानो प्रतच्छ परब्बत की नभ लोक लसी कपि यों धुकि धायो ।।५४।।

घनाक्षरी

चल्यो हनुमान सुनि जातुधान कालनेमि
पठयो, सो मुनि भयो, पायो फल छलि कै ।

५२—दील = दिल, मन । सबील = प्रबंध । बाँह बोले की = शरण में लेने की ।

५३—बियो = दूसरा ।

५४—धुकि = झपटकर, झोंके से चलकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहसा उखारो है पहार बहु जोजन को,
रखवारे मारे भारे भूरि भट दलि कै ।।
बेग बल साहस सराहत कृपानिधान,
भरत की कुसल अचल ल्यायो चलि कै ।
हाथ हरिनाथ के बिकाने रघुनाथ जनु,
सीलसिंधु तुलसीस भलो मान्यो भलि कै ।।५५।।

बापु दियो कानन, भो आनन सुभानन सो,
बैरी भो दसानन सो, तीय को हरन भो ।
बालि बलसालि दलि, पालि कपिराज को,
बिभीषन नेवाजि, सेतुसागर तरन भो ।।
घोर रारि हेरि त्रिपुरारि बिधि हारे हिए,
घायल लखन बीर बानर बरन, भो ।
ऐसे सोक में तिलोक कै बिसोक पल ही में,
सबही को तुलसी को साहिब सरन भो ।।५६।।

सवैया

कुंभकरन्न हन्यो रन राम, दल्यो दसकंधर, कंधर तोरे ।
पूषन-बंस-बिभूषन-पूषन तेज प्रताप गरे अरि-ओरे ।।
देव निसान बजावत गावत, साँवत गो, मनभावत भो रे !
नाचत बानर भालु सबै तुलसी कहि ,हा रे ! हहा भइ, हो रे ! ।।५७।।

घनाक्षरी

मारे रन रातिचर, रावन सकुल दल,
अनुकूल देव मुनि फूल बरखतु हैं ।
नाग नर किन्नर बिरंचि हरि हर हेरि,
पुलक सरीर, हिए हेतु, हरखतु हैं ।।
बाम ओर जानकी कृपानिधान के बिराजैं,
देखत बिषाद मिटै मोद करखतु हैं ।
आयसु भो लोकनि सिधारे लोकपाल सबै,
तुलसी निहाल कै कै दियो सरखतु हैं ।।५८।।

५५—हरिनाथ = कपिपति, हनुमान ।
५७—ओरे = ओले । सावँत = सामंतपना, अधीनता ।
५८—सरखत = परवाना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर कांड

सवैया

बालि से बीर बिदारि सुकंठ थप्यो, हरषे सुर बाजने बाजे।
पल में दल्यो दासरथी दसकंधर, लंक बिभीषन राज बिराजे॥
राम सुभाव सुने तुलसी हुलसे अलसी, हम-से गलगाजे।
कायर कूर कपूतन की हद तेउ गरीबनेवाज नेवाजे॥१॥
बेद पढ़ैं बिधि, संभु सभीत पुजावन रावन सों नित आवैं।
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरिहि तें सिर नावैं॥
ऐसेउ भाग भगे दसभाल तें जो प्रभुता कवि कोविद गावैं।
राम से बाम भए तेहि बामहि बाम सबै सुख संपति लावैं॥२॥
बेद-विरुद्ध, मही मुनि साधु ससोक किए, सुरलोक उजारो।
और कहा कहौं तीय हरी, तबहूँ करुनाकर कोप न धारो॥
सेवक-छोह तें छाँड़ी छमा, तुलसी लख्यो राम सुभाव तिहारो।
तौलौं न दाप दल्यो दसकंधर जौलौं विभीषन लात न मारो॥३॥
सोक-समुद्र निमज्जत काढ़ि कपीस कियो जग जानत जैसो।
नीच निसाचर बैरी को बंधु विभीषन कीन्ह पुरंदर कैसो॥
नाम लिए अपनाइ लियो, तुलसी सो कहौ जग कौन अनैसो।
आरत-आरति-भंजन राम, गरीबनेवाज न दूसर ऐसो॥४॥
मीत पुनीत कियो कपि भालु को, पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो।
सज्जन-सींव विभीषन भो, अजहूँ बिलसै बर बंधु-वधू जो॥
कोसलपाल बिना तुलसी सरनागतपाल कृपालु न दूजो।
कूर कुजाति कुपूत अघी सब की सुधरै जो करै नर पूजो॥५॥
तीय-सिरोमनि सीय तजी जेहिं पावक की कलुषाई दही है।
धर्म-धुरंधर बंधु तज्यो, पुरलोगनि की विधि बोलि कही है॥
कीस निसाचर को करनी न सुनी, न बिलोकी, न चित्त रही है।
राम सदा सरनागत की अनखौंही अनैसी सुभाय सही है॥६॥
अपराध अगाध भए जन तें अपने उर आनत नाहिंन जू।
गनिका गज गीध अजामिल के गनि पातक-पुंज सिराहिं न जू॥

२—बाम लावैं = बाँयाँ दे जाते हैं, दूर हटते हैं।
३—उजारो = उजाड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए बारक नाम सुधाम दियो, जिहि धाम महामुनि जाहिँ न जू ।
तुलसी भजु दीनदयालुहिँ रे, रघुनाथ अनाथहिँ दाहिन जू ॥७॥
प्रभु सत्य करी प्रहलाद-गिरा, प्रगटे नरकेहरि खंभ महाँ ।
झखराज ग्रस्यो गजराज, कृपा ततकाल, विलंब कियो न तहाँ ॥
सुर साखी दै राखी है पांडुवधू पट लूटत, कोटिक भूप जहाँ ।
तुलसी भजु सोच-विमोचन को, जन को पन राम न राख्यो कहाँ ॥८॥
नरनारि उघारि सभा महँ होत दियो पट सोच हर्यो मन को ।
प्रहलाद-बिषाद-निवारन, बानर-तारन, मीत अकारन को ॥
जो कहावत दीनदयालु सही, जेहि भार सदा अपने पन को ।
तुलसी तजि आन भरोस भजे भगवान भलो करिहैं जन को ॥९॥
ऋषिनारि उधारि, कियो सठ केवट मीत, पुनीत सुकीर्ति लही ।
निज लोक दियो सवरी खग को, कपि थाप्यो सो मालुम है सब ही ॥
दससीस-बिरोध, सभीत विभीषन भूप कियो जग लीक रही ।
करुनानिधि को भजु रे तुलसी, रघुनाथ अनाथ के नाथ सही ॥१०॥
कौसिक, बिप्रवधू, मिथिलाधिप के सब सोच दले पल माहैं ।
बालि-दसानन-बंधु कथा सुनि सत्रु सुसाहिब-सील सराहैं ॥
ऐसी अनूप कहैं तुलसी रघुनायक की अगुनी गुन-गाहैं ।
आरत दीन अनाथन को रघुनाथ करैं निज हाथ की छाँहैं ॥११॥
तेरे बेसाहे बेसाहत औरनि, और बेसाहि के बेचनहारे ।
ब्योम रसातल भूमि भरे नृप क्रूर कुसाहिब सेंतिहुँ खारे ॥
तुलसी तेही सेवत कौन मरै ? रज तें लघु को करै मेरु तें भारे ? ।
स्वामी सुसील समर्थ सुजान सो तोसों तुहीं दसरत्थ-दुलारे ॥१२॥

घनाक्षरी

जातुधान भालु कपि केवट बिहंग जो जो
पाल्यो नाथ सद्य सो सो भयो काम-काज को ।
आरत अनाथ दीन मलिन सरन आए
राखे अपनाइ, सो सुभाव महाराज को ॥
नाम तुलसी पै भोंडे भाग, सो कहायो दास,
किए अंगीकार ऐसे बड़े दगाबाज को ।

९—नरनारि = अर्जुन की स्त्री द्रौपदी ।
११—गुन-गाहैं = गुण गाथाएँ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहेब समर्थ दसरत्थ के दयालु देव,
दूसरो न तोसो तुही आपने की लाज को ॥१३॥
महाबली बालि दलि, कायर सुकंठ कपि
सखा किए, महाराज हौं न काहू काम को ।
भ्रात-घात पातकी निसाचर सरन आए,
कियो अंगीकार नाथ एते बड़े बाम को ॥
राय दसरत्थ के समर्थ तेरे नाम लिए,
तुलसी से कूर को कहत जग 'राम को' ।
आपने निवाजे को तो लाज महाराज को,
सुभाव समुझत मन मुदित गुलाम को ॥१४॥
रूप-सीलसिंधु, गुनसिंधु, बंधु दीन को,
दयानिधान जान-मनि, बीर बाहु-बोल को ।
स्राद्ध कियो गीध को, सराहे फल सबरी के,
सिला-साप-समन, निबाह्यो नेह कोल को ॥
तुलसी उराउ होत राम को सुभाव सुनि,
को न बलि जाइ, न बिकाइ बिन मोल को ? ।
ऐसेहू सुसाहेब सों जाको अनुराग न सो
बड़ोई अभागो, भाग भागो लोभ-लोल को ॥१५॥
सूर-सिरताज, महाराजनि के महाराज,
जाको नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो ।
साहब कहाँ जहान जानकीस सो सुजान,
सुमिरे कृपालु के मराल होत खूसरो ॥
केवट पखान जातुधान कपि भालु तारे,
अपनायो तुलसी सो धींग धमधूसरो ।
बोल को अटल, बाँह को पगार, दीनबंधु,
दूबरे को दानी, को दयानिधान, दूसरो ? ॥१६॥
कीबे को बिसोक लोक लोकपाल हुते सब,
कहूँ कोऊ भो न चरवाहो कपि भालु को ।
पबि को पहार कियो ख्याल ही कृपालु राम,
बापुरो बिभीषन घरौंधा हुतो बालु को ॥

१५—उराउ = हौसला, उत्साह ।
१६—पगार = प्राकार, कोट ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाम-ओट लेत ही निखोट होत खोटे खल,
चोट बिनु मोट पाइ भयो न निहालु को ? ।
तुलसी की बार बड़ी ढीलि होति, सीलसिंधु !
बिगरी सुधारिए को दूसरो दयालु को ? ॥१७॥
नाम लिए पूत को पुनीत कियो पातकीस,
आरति निवारी प्रभु पाहि कहे पील की ।
छलिन की छौंड़ी सो निगोड़ी छोटी जाति पाँति,
कीन्हीं लीन आपु में सुनारी भोंड़े भील की ॥
तुलसीयौ तारिबो बिसारिबो न अंत, मोहिं
नीके है प्रतीत रावरे सुभाव सील की ।
देव तौ दयानिकेत, देत दादि दीनन की,
मेरी बार मेरे ही अभाग नाथ ढील की ॥१८॥
आगे परे पाहन कृपा, किरात, कोलनी,
कपीस, निसिचर अपनाए नाए माथ जू ।
साँची सेवकाई हनुमान की सुजानराय,
रिनियाँ कहाए हौ बिकानो ताके हाथ जू ॥
तुलसी से खोटे खरे होत ओट नाम ही की,
तेजी माटी मगहू की मृगमद साथ जू ।
बात चले बात को न मानिबो बिलग, बलि,
काकी सेवा रीझि कै नेवाजो रघुनाथ जू ? ॥१९॥
कौसिक की चलत, पखान की परस पायँ ,
टूटत धनुष बनि गई है जनक की ।
कोल पसु सवरी बिहंग भालु रातिचर,
रतिन के लालचिन प्रापति मनक की ॥
कोटि-कला-कुसल कृपालु नतपाल, बलि,
बातहू कितिक तिन तुलसी तनक की ।
राइ दसरत्थ के समत्थ राम राजमनि,
तेरे हेरे लोपै लिपि बिधिहू गनक की ॥२०॥

१७—चोट बिनु मोट पाइ = बिना कष्ट वा श्रम के गठरी पाकर ।
१८—छौंड़ी = लड़की ।
१९—तेजी = महँगी ।
२०—मनक = मन भर । तिन = तृण ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनाक्षरी

सिला-साप-पाप, गुह गीध को मिलाप,
सवरी के पास आप चलि गए हौ सो सुनी मैं ।
सेवक सराहे कपिनायक विभीषन,
भरत सभा सादर सनेह सुरधुनीमैं ।।
आलसी-अभागी ,अघी-आरत-अनाथपाल,
साहेब समर्थ एक नीके मन गुनी मैं ।
दोष दुख दारिद दलैया दीनबंधु राम,
तुलसी न दूसरो दयानिधान दुनी मैं ।२१।।
मीत बालि-बंधु, पूत दूत, दसकंध-बंधु
सचिव, सराध कियो सवरी जटाइ को ।
लंक जरी जोहे जिय सोच सो बिभीषन को,
कहौ ऐसे साहेब की सेवा न खटाइ को ? ।।
बड़े एक एक तें अनेक लोक लोकपाल,
अपने अपने को तौ कहैगो घटाइ को ? ।
साँकरे के सेइबे सराहिबे सुमिरबे को,
राम सो न साहिब, न कुमति-कटाइको ।।२२।।
भूमिपाल, ब्यालपाल, नाकपाल, लोकपाल,
कारन-कृपालु, मैं सबै के जी की थाह ली ।
कादर को आदर नाहीं काहू के देखियत,
सबनि सोहात है सेवा-सुजानि टाहली ।।
तुलसी सुभाय कहै, नाहीं कछु पच्छपात,
कौने ईस किये कीस भालु खास माहली ।
राम ही के द्वारे पै बोलाइ सनमानियत,
मोसे दीन दूबरे कुपूत कूर काहली ।।२३।।
सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों,
बिहूनेगुन पथिक पियासे जात पथ के ।
लेखे जोखे चोखे चित तुलसी स्वारथहित,
नीके देखे देवता देवैया घने गथ के ।।

२१—सुरधुनीमै = गंगामय, पवित्र ।
२२—कटाइको = कटायक, काटनेवाला भी ।
२३—टाहली = टहलुवा, सेवक । माहली = रनिवास का सेवक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीध मानो गुरु, कपि भालु मानो मीत कै,
पुनीत गीत साके सब साहेब समत्थ के।
और भूप परखि, सुलाखि, तौलि, ताइ लेत,
लसम के खसम तुहीं पै दसरत्थ के ॥२४॥
रीति महाराज की नेवाजिए जो माँगनो सो,
दोष-दुख-दारिद-दरिद्र कै कै छोड़िए।
नाम जाको कामतरु देत फल चारि, ताहि
तुलसी बिहाइ कै बबूर रेंड़ गोड़िए॥
जाँचै को नरेस, देसदेस को कलेस करै?
देहैं तौ प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बौंड़िए।
कृपा-पाथनाथ लोकनाथ नाथ सीतानाथ,
तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िए? ॥२५॥

सवैया

जाके बिलोकत लोकप होत बिसोक, लहैं सुरलोक सुठौरहि।
सो कमला तजि चंचलता करि कोटि कला रिझवै सुरमौरहि॥
ताको कहाय, कहै तुलसी, तू लजाहि न माँगत कूकुर कौरहि।
जानकीजीवन को जन ह्वै जरि जाउ सो जीह जो जाँचत औरहि ॥२६॥
जड़ पंच मिलै जेहि देह करी, करनी लखु धौं धरनीधर की।
जन की कहु क्यों करिहै न सँभार, जो सार करै सचराचर की॥
तुलसी कहु रामसमान को आन है सेवकि जासु रमा घर की।
जग में गति जाहि जगत्पति की, परवाह है ताहि कहा नर की ॥२७॥
जग जाँचिए कोउ न, जाँचिए जो जिय जाँचिए जानकी-जानहि रे।
जेहि जाँचत जाचकता जरि जाइ जो जारति जोर जहानहि रे॥
गति देखु विचारि बिभीषन की, अरु आनु हिए हनुमानहि रे।
तुलसी भजु दारिद-दोष-दवानल, संकट-कोटि-कृपानहि रे ॥२८॥

२४—सुलाखि = सूराख करके। लसम = खोटा।
२५—बड़ी बड़ाई = बहुत बढ़कर। बौंड़ियै = दमड़ी ही।
२७—सार करना = सँभाल करना।
२८—जानकी-जान = जानकी-जानि (स्त्री); अर्थात् जिनकी स्त्री जानकी हैं, रामचंद्र।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनु कान दिए, नित नेम लिए रघुनाथहि के गुनगाथहि रे।
सुख-मंदिर सुंदर रूप-सुधा उर आनि धरे धनुभाथहि रे॥
रसना निसि बासर सादर सों तुलसी जपु जानकीनाथहि रे।
करु संग सुसील सुसंतन सों, तजि कूर कुपंथ कुसाथहि रे॥२९॥
सुत, दार, अगार, सखा, परिवार बिलोकु महा कुसमाजहि रे।
सबकी ममता तजिकै, समता सजि संतसभा न विराजहि रे? ॥
नरदेह कहा, करि देखु विचार, बिगारु गँवार न काजहि रे।
जनि डोलहि लोलुप कूकर ज्यों, तुलसी भजु कोसलराजहि रे॥३०॥
बिषया पर नारि निसा-तरुनाई, सु पाइ परचौ अनुरागहि रे।
जम के पहरू दुख रोग बियोग बिलोकतहू न विरागहि रे॥
ममतावस तैं सब भूलि गयो, भयो भोर महाभय भागहि रे।
जरटाइ दिसा, रबिकाल उग्यो, अजहूँ जड़ जीव न जागहि रे॥३१॥
जनम्यो जेहि जोनि, अनेक क्रिया सुख लागि करी, न परै बरनी।
जननी जनकादि हितू भए भूरि, बहोरि भई उर की जरनी॥
तुलसी अब राम को दास कहाइ हिए धरु चातक की धरनी।
करि हंस को बेष बड़ो सब सों, तजि दे बक बायस की करनी॥३२॥
भलि भारतभूमि, भले कुल जन्म, समाज सरीर भलो लहिकै।
करषा तजि कै परुषा बरषा, हिम मारुत घाम सदा सहिकै॥
जो भजै भगवान सयान सोई तुलसी हठ चातक ज्यों गहि कै।
नतु और सबै बिष बीज बये हर-हाटक कामदुहा नहिकै॥३३॥
सो सुकृती, सुचिमंत, सुसंत, सुजान, सुसील-सिरोमनि स्वै।
सुर तीरथ तासु मनावत आवन, पावन होत हैं ता तन छ्वै॥
गुन-गेह, सनेह को भाजन सो, सब ही सों उठाइ कहौं भुज द्वै।
सति भाय सदा छल छाँड़ि सबै तुलसी जो रहै रघुबीर को ह्वै॥३४॥
सो जननी, सो पिता, सोइ भाइ, सो भामिनि, सो सुत, सो हित मेरो।
सोई सगो, सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु, सो सुर, साहिब चेरो।
सो तुलसी प्रिय प्रानसमान, कहाँ लौं बनाइ कहौं बहुतेरो।
जो तजि देह को नेह, सनेह सों राम को सेवक होइ सबेरो॥३५॥
राम हैं मातु पिता गुरु बंधु औ संगी सखा सुत स्वामी सनेही
राम की सौंह भरोसो है राम को, राम रँग्यो रुचि राच्यो न केही॥

३२—धरनी = धरन। टेक।
३३—कामदुहा = कामधेनु। नहि कै = नाथकर, जोतकर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीयत राम, मुए पुनि राम, सदा रघुनाथहि की गति जेही ।
सोइ जियै जग में तुलसी, नतु डोलत और मुए धरि देही ॥३६॥

सियराम-सरूप अगाध अनूप विलोचन-मीनन को जलु है ।
स्रुति रामकथा, मुख राम को नाम, हिए पुनि रामहि को थलु है ॥
मति रामहिँ सों, गति रामहिँ सों, रति राम सों, रामहि को बलु है ।
सब की न कहै तुलसी के मते इतनो जग जीवन को फलु है ॥३७॥

दसरत्थ के दानि-सिरोमनि राम, पुरान-प्रसिद्ध सुन्यो जसु मैं ।
नरनाग सुरासुर जाचक जो तुम सो मन भावत पायो न कैं ॥
तुलसी कर जोरि करै विनती जो कृपा करि दीनदयाल सुनै ।
जेहि देह सनेह न रावरे सों अस देह धराइ कै जाय जियै ॥३८॥

'झूठो है, झूठो है, झूठो सदा जग' संत कहंत जे अंत लहा है ।
ताको सहै सठ संकट कोटिक, काढ़त दंत, करंत हहा है ॥
जानपनी को गुमान बड़ो, तुलसी के विचार गँवार महा है ।
जानकीजीवन जान न जान्यो तो जान कहावत जान्यो कहा है ॥३९॥

तिन्ह तें खर सूकर स्वान भले, जड़तावस ते न कहैं कछु वै ।
तुलसी जेहि राम सों नेह नहीं सो सही पसु पूँछ विखान न द्वै ॥
जननी कत भार मुई दस मास, भई किन बाँझ, गई किन च्वै ।
जरि जाउ सो जीवन, जानकीनाथ ! जियै जग मैं तुम्हरो विन ह्वै ॥४०॥

गज-बाजि-घटा, भले भूरि भटा, वनिता सुत भौंह तकैं सब वै ।
धरनी धन धाम सरीर भलो, सुरलोकहु चाहि इहै सुख स्वै ॥
सब फोकट साटक है तुलसी, अपनो न कछू सपनो दिन द्वै ।
जरि जाउ सो जीवन जानकीनाथ ! जियै जग में तुम्हरो विनु ह्वै ॥४१॥

सुरराज सो राज-समाज, समृद्धि बिरंचि, धनाधिप सो धन भो ।
पवमान सो, पावक सो, जम-सोम सो, पूषन सो, भवभूषन भो ॥
करि जोग, समीरन साधि, समाधि कै, धीर बड़ो, वसहू मन भो ।
सब जाय सुभाय कहै तुलसी जो न जानकीजीवन को जन भो ॥४२॥

काम से रूप, प्रताप दिनेस से, सोम से सील, गनेस से माने ।
हरिचंद्र से साँचे, बड़े विधि से, मघवा से महीप विषै-सुखसाने ॥
सुक से मुनि, सारद से बकता, चिरजीवन लोमस तें अधिकाने ।
ऐसे भए तो कहा तुलसी जु पैं राजिवलोचन राम न जाने ॥४३॥

४१—चाहि = अपेक्षाकृत । बढ़कर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूमत द्वार अनेक मतंग जँजीर जरे मदअंबु चुचाते।
तीखे तुरंग मनोगति चंचल, पौन के गौनहुँ तें बढ़ि जाते ॥
भीतर चंद्रमुखी अवलोकति, बाहर भूप खरे न समाते।
ऐसे भए तौ कहा तुलसी जुपै जानकीनाथ के रंग न राते ॥४४॥

राज सुरेस पचासक को, विधि के कर को जो पटो लिखि पाए !
पूत सुपूत, पुनीत प्रिया, निज सुंदरता रति को मद नाए ॥
संपति सिद्धि सबै तुलसी, मन की मनसा चितवैं चित लाए।
जानकीजीवन जाने बिना जग ऐसेउ जीव न जीव कहाए ॥४५॥

कृसगात ललात जो रोटिन को, घरवात घरे खुरपा खरिया।
तिन सोनें के मेरु से ढेरु लहे, मन तौ न भरो घर पै भरिया ॥
तुलसी दुख दूनो दसा दुहुँ देखि, कियो मुख दारिद को करिया।
तजि आस भो दास रघुपति को, दसरत्थ को दानि दया दरिया ॥४६॥

को भरिहै हरि के रितए, रितवै पुनि को हरि जौ भरिहै !
उथपै तेहि को जेहि राम थपै ? थपिहै तेहि को हरि जौ टरिहै ?
तुलसी यह जानि हिए अपने सपने नहिं कालहु ते डरिहै।
कुमया कछु हानि न औरन की, जोपै जानकीनाथ मया करिहै ॥४७॥

ब्याल कराल, महाविष, पावक, मत्तगयंदहु के रद तोरे।
साँसति संकि चली, डरपे हुते किंकर, ते करनी मुख मोरे ॥
नेकु विषाद नहीं प्रहलादहि, कारन केहरि केवल हो रे।
कौन की त्रास करै तुलसी, जोपै राखिहै राम तौ मारिहै को रे ? ॥४८॥

किरपा जिनकी कछु काज नहीं, न अकाज कछू जिनके मुख मोरे।
करैं तिनकी परवाहि ते जो बिनु पूँछ बिषान फिरैं दिन दौरे ॥
तुलसी जेहिके रघुनाथ से नाथ, समर्थ सु सेवत रीझत थोरे।
कहा भव-भीर परी तेहि धौं, बिचरै धरनी तिन सों तिन तोरे ॥४९॥

कानन, भूधर, बारि, बयारि, महाबिष, ब्याधि, दवा, अरि घेरे।
संकट कोटि जहाँ तुलसी, सुत मातु पिता हित बंधु न नेरे ॥
राखिहैं राम कृपालु तहाँ, हनुमान से सेवक हैं जेहि केरे।
नाक, रसातल, भूतल में रघुनायक एक सहायक मेरे ॥५०॥

४६—घरवात = घर का सामान।
४८—कारन हो = कारण था।
४९—तिन तोरे = नाता तोड़े हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जबै जमराज रजायसु तें मोहिँ लै चलिहैं भट बाँधि नटैया ।
तात न मात न स्वामि सखा सुत बंधु विसाल विपत्ति बँटैया ॥
साँसति घोर, पुकारत आरत, कौन सुनै चहुँ ओर डँटैया ।
एक कृपालु तहाँ तुलसी दसरत्थ को नंदन बंदि कटैया ॥५१॥
जहाँ जमजातना, घोर-नदी, भट कोटि जलच्चर दंत टेवैया ।
जहँ धार भयंकर वार न पार, न बोहित नाव, न नीक खेवैया ॥
तुलसी जहँ मातु पिता न सखा, नहिं कोऊ कहूँ अवलंब देवैया ।
तहाँ बिनु कारन राम कृपालु विसाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया ॥५२॥
जहाँ हित, स्वामि, न संग सखा, वनिता सुत बंधु न, वापु न मैया ।
काय गिरा मन के जन के अपराध सबै छल छाँड़ि छमैया ॥
तुलसी तेहि काल कृपालु विना दुजो कौन है दारुन दुःख दमैया ।
जहाँ सब संकट दुर्घट सोच तहाँ मेरो साहब राखै रमैया ॥५३॥
तापस को बरदायक देव, सबै पुनि बैर बढ़ावत बाढ़े ।
थोरेहि कोप, कृपा पुनि थोरेहि, बैठिकै जोरत तोरत ठाढ़े ॥
ठोंकि वजाय लखे गजराज, कहाँ लौं कहौं केहि सों रद काढ़े ? ।
आरत के हित, नाथ अनाथ के, राम सहाय सही दिन गाढ़े ॥५४॥
जप, जोग, विराग, महा मख-साधन, दान, दया, दम कोटि करै ।
मुनि, सिद्ध, सुरेस, गनेस, महेस से सेवत जन्म अनेक मरै ॥
निगमागम, ज्ञान पुरान पढ़ै, तपसानल में जुग-पुंज रैं जरै ।
मन सों पन रोपि कहै तुलसी रघुनाथ विना दुख कौन हरै ? ॥५५॥
पातक पीन, कुदारिद दीन, मलीन धरे कथरी करव है ।
लोक कहै विधिहू न लिख्यो, सपनेहूँ नही अपने बर बाहै ॥
राम को किंकर सो तुलसी समुझेहि भलो कहिबो न रवा है ।
ऐसे को ऐसो भयो कबहूँ न, भजे विन बानर के चरवाहै ॥५६॥
मातु पिता जग जाय तज्यो विधिहू न लिखी कछु भाल भलाई ।
नीच, निरादर-भाजन, कादर, कूकर टूकन लागि ललाई ॥
राम-सुभाउ सुन्यो तुलसी, प्रभु सों कह्यो बारक पेट खलाई ।
स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सो साहब खोरि न लाई ॥५७॥
पाप हरे, परिताप हरे, तन पूजि भो सीतल सीतलताई ।
हंस कियो वक तें वलि जाउँ, कहाँ लौं कहौं करुना अधिकाई ॥

५६—रवा = (फा०) उचित ।
५७—जाय = उत्पन्न करके ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल बिलोकि कहै तुलसी मन में प्रभु की परतीति अघाई ।
जन्म जहाँ तहँ रावरे सों निबहै भरि देह सनेह सगाई ॥५८॥
लोग कहैं अरु हौं हूँ कहौं 'जन खोटो खरो रघुनायक ही को' ।
रावरी राम बड़ी लघुता, जस मेरो भयो सुखदायक ही को ॥
कै यह हानि सहौ, बलि जाउँ, कि मोहूँ करौ निज लायक ही को ।
आनि हिए हित जानि करौ ज्यों हौं ध्यान धरौं धनुसायक ही को ॥५९॥
आपु हौं आपुको नीकै कै जानत, रावरो राम ! भरायो गढ़ायो ।
कीर ज्यों नाम रटै तुलसी सो कहै जग जानकीनाथ पढ़ायो ॥
सोई है खेद जो बेद कहै, न घटै जन जो रघुबीर बढ़ायो ।
हौं तौ सदा खर को असवार, तिहारोई नाम गयंद चढ़ायो ॥६०॥

घनाक्षरी

छार ते सँवारिकै पहार हू तें भारी कियो
गारो भयो पंच में पुनीत पच्छ पाइकै ।
हौं तौ जैसो तब तैसो अब, अधमाई कै कै
पेट भरौं राम रावरोई गुन गाइकै ॥
आपने निवाजे की पै कीजै लाज, महाराज !
मेरी ओर हेरिकै न बैठिए रिसाइकै ।
पालि कै कृपालु ब्याल-बाल को न मारिए
औ काटिए न, नाथ ! बिषहू को रूख लाइकै ॥६१॥
बेद न पुरान गान, जानौं न बिज्ञान ज्ञान,
ध्यान, धारना, समाधि, साधन-प्रबीनता ।
नाहिन बिराग, जोग, जाग भाग तुलसी के,
दया-दान-दूबरो हौं, पाप ही की पीनता ॥
लोभ-मोह-काम-कोह-दोष-कोष मोसो कौन ?
कलि हू जो सीखि लई मेरियै मलीनता ।
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
रावरे दयालु दीनबंधु, मेरी दीनता ॥६२॥
रावरो कहावौं, गुन गावौं राम रावरोई,
रोटी द्वै हौं पावौं राम रावरी ही कानि हौं ।
जानत जहान, मन मेरे हू गुमान बड़ो,
मान्यो मैं न दूसरो, न मानत, न मानिहौं ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँच की प्रतीति न, भरोसो मोहिं आपनोई,
तुम अपनायो हौं तबैहीं परि जानिहौं।
गढ़ि गुढ़ि छोलि छालि कुंद की सी भाई बातैं
जैसी मुख कहौं तैसी जीय जब आनिहौं ॥६३॥

बचन बिकार, करतबउ खुआर, मन
बिगत-बिचार, कलि मल को निधानु है।
राम को कहाइ, नाम बेंचि बेंचि खाइ, सेवा
संगति न जाइ, पाछिले को उपखानु है॥
तेहू तुलसी को लोग भलो भलो कहैं, ताको
दूसरो न हेतु, एक नीके कै निदानु है।
लोकरीति बिदित, बिलोकियत जहाँ तहाँ,
स्वामी के सनेह स्वान हू को सनमानु है ॥६४॥

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मोसों दगाबाज दूसरो न जगजाल है।
कै न आयों, करौं न करौंगो करतूति भली,
लिखी न बिरंचि हू भलाई भूलि भाल है॥
रावरी सपथ, राम ! नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो झूठो सो तिलोक तिहूँ काल है।
तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किए, कृपालु !
कीजै न बिलंब, बलि, पानी भरी खाल है ॥६५॥

राग को न साज, न बिराग जोग जाग जिय,
काया नहिं छाँड़ि देत ठाटिबो कुठाट को।
मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि,
चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाट को॥
भयो करतार बड़े कूर को कृपालु, पायो
नाम-प्रेम-पारस हौं लालची बराट को।
तुलसी बनी है राम रावरे बनाए, ना तो,
धोबी कैसो कूकर न घर को, न घाट को ॥६६॥

ऊँचो मन, ऊँची रुचि, भाग नीचो निपट ही,
लोकरीति-लायक न लंगर लबारु है।

६३—कुंद की भाई = खराद चढ़ाई हुई।
६६—बराट = कौड़ी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वारथ अगम, परमारथ की कहा चली,
पेट की कठिन, जग जीव को जवारु है ॥
चाकरी न आकरी न खेती न बनिज भीख,
जानत न कूर कछु कसब कवारु है।
तुलसी की बाजी राखी राम ही के नाम, नतु
भेंट पितरन को न मूड़ हू में बारु है ॥६७॥

अपत, उतार, अपकार को अगार जग,
जाकी छाँह छुए सहमत ब्याध बाधको।
पातक पुहुमि पालिबे को सहसानन सो,
कानन कपट को, पयोधि अपराध को ॥
तुलसी-से बाम को भो दाहिनो दयानिधान,
सुनत सिहात सब सिद्ध साधु साधको।
रामनाम ललित ललाम कियो लाखनि को,
बड़ो कूर कायर कपूत कौड़ी आध को ॥६८॥

सब-अंग-हीन, सब-साधन-विहीन, मन
बचन मलीन, हीन कुल करतूति हौं।
बुद्धि-बल-हीन, भाव-भगति-विहीन, हीन
गुन, ज्ञानहीन, हीन भाग हू बिभूति हौं ॥
तुलसी गरीब की गई-बहोर रामनाम,
जाहि जपि जीह राम हू को बैठो धूति हौं।
प्रीति रामनाम सों, प्रतीति रामनाम की,
प्रसाद रामनाम के पसारि पायँ सूतिहौं ॥६९॥

मेरे जान जब तें हौं जीव ह्वै जनम्यो जग,
तब तें बेसाह्यो दाम लोह कोह काम को।
मन तिनहीं की सेवा, तिनहीं सों भाव नीको,
बचन बनाइ कहौं 'हौं गुलाम राम को' ॥

६७––लंगर–नटखट। जवारु (फा॰ जवाल) = जंजाल, झंझट। आकरी = खान खोदने का काम। कसब (अ॰) = कारीगरी। कवारु = कबाड़, व्यवसाय, रोजगार।

६८––अपत = अपात्र, खोटा। उतार = सबसे उतरा हुआ, अधम। ललाम = भूषण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाथहू न अपनायो, लोक झूठी ह्वै परी, पै
प्रभु हू तें प्रबल प्रताप प्रभु नाम को।
आपनी भलाई भलो कीजै तौ भलोई, न तौ
तुलसी को खुलैगो खजानो खोटे दाम को ॥७०॥

जोग न बिराग जप जाग तप त्याग ब्रत,
तीरथ न धर्म जानौं बेदबिधि किमि है।
तुलसी सो पोच न भयो है, नहि ह्वैहै कहूँ,
सोचैं सब याके अघ कैसे प्रभु छमिहै॥
मेरे तौ न डरु रघुबीर सुनौ साँची कहों,
खल अनखैहैं, तुम्हैं सज्जन न गमिहै।
भले सुकृती के संग मोहि तुला तौलिये तौ,
नाम के प्रसाद भार मेरी ओर नमिहै ॥७१॥

जाति के, सुजाति के, कुजाति के, पेटागिवस,
खाए टूक सबके बिदित बात दुनी सो।
मानस बचन काय किए पाप सति भाय,
राम को कहाय दास दगाबाज पुनी सो॥
रामनाम को प्रभाउ, पाउ महिमा प्रताप,
तुलसी से जग मनियत महामुनी सो।
अतिही अभागो अनुरागत न रामपद,
मूढ़ एतो बड़ो अचरज देखि सुनी सो ॥७२॥

जायो कुल मगन, बधावनो बजायो सुनि,
भयो परिताप पाप जननी जनक को।
बारे तें ललात बिललात द्वार द्वार दीन,
जानत हो चारि फल चारि ही चनक को॥
तुलसी सो साहिब समर्थ को सुसेवक है,
सुनत सिहात सोच बिधिहू गनक को।
नाम, राम ! रावरो सयानो किधौं बावरो,
जो करत गिरी तें गरु, तृन तें तनक को ॥७३॥

७०—लोह = लोभ या लोहा।
७१—गमिहै = गम न करेंगे, परवा न करेंगे, ध्यान न देंगे।
७२—पुनी = पुनः, फिर।
७३—जानत हो = जानता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेद हू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत,
रामनाम ही सों रीझे सकल भलाई है।
कासी हू मरत उपदेसत महेस सोई,
साधना अनेक चितई न चित लाई है॥
छाछी को ललात जे ते राम-नाम के प्रसाद,
खात खुनसात सोंधे दूध की मलाई हैं।
रामराज सुनियत राजनीति की अवधि,
नाम राम! रावरो तौ चाम की चलाई है॥७४॥

सोच संकटनि सोच संकट परत, जर
जरत, प्रभाव नाम ललित ललाम को।
बूड़ियौ तरति, बिगरीयौ सुधरति बात,
होत देखि दाहिनो सुभाव बिधि बाम को॥
भागत अभाग, अनुरागत बिराग, भाग
जागत, आलसि तुलसी हू से निकाम को।
धाई धारि फिरि कै गोहारि हितकारी होति,
आई मिचु मिटति जपत रामनाम को॥७५॥

आँधरो, अधम, जड़, जाजरो जरा जवन,
सूकर के सावक ढका ढकेल्यो मग मैं।
गिरो हिए हहरि, 'हराम हो हराम हन्यो'
हाय हाय करत परीगो कालफँग मैं॥
तुलसी बिसोक ह्वै त्रिलोकपति - लोक गयो
नाम के प्रताप, बात बिदित है जग मैं।
सोई रामनाम जो सनेह सों जपत जन
ताकी महिमा क्यों कही है जाति अगमैं॥७६॥

जापकी न, तप खप कियो न तमाई जोग,
जाग न, बिराग त्याग तीरथ न तनकौ।
भाई को भरोसो न खरो सो बैर बैरीहू सों,
बल अपनो न, हितू जननी न जनकौ॥
लोक को न डर, परलोक को न सोच,
देवसेवा न सहाय, गर्ब धाम को न धन को।

७५—धारि = झुंड (लुटेरों का)।
७६—जाजरो = जर्जर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामही के नाम तें जो होइ सोई नीको लागै,
ऐसोई सुभाव कछु तुलसी के मन को ॥७७॥
ईस न, गनेस न, दिनेस न, धनेस न,
सुरेस, सुर, गौरि, गिरापति नहिं जपने ।
तुम्हरेई नाम को भरोसो भव तरिबे को,
बैठे उठे जागत वागत सोए सपने ॥
तुलसी है बावरो सो रावरोई, रावरी सौं,
रावरेऊ जानि जिय कीजिए जु अपने ।
जानकी-रमन मेरे! रावरे बदन फेरे,
ठाउँ न समाउँ कहाँ सकल निरपने ॥७८॥

जाहिर जहान में जमानो एक भाँति भयो,
बेंचिये विबुधधेनु रासभी बेसाहिए ।
ऐसेउ कराल कलिकाल में कृपालु तेरे
नाम के प्रताप न त्रिताप तन दाहिए ॥
तुलसी तिहारो मन बचन करम, तेहि
नाते नेह नेम निज ओर तें निबाहिए ।
रंक के निवाज रघुराज राज राजनि के,
उमरि दराज महाराज तेरी चाहिए ॥७९॥

स्वारथ सयानप, प्रपंच परमारथ,
कहायो राम रावरो हौं, जानत जहानु है ।
नाम के प्रताप, बाप! आजु लौं निबाही नीके,
आगे को गोसाईं स्वामी सबल सुजानु है ॥
कलि की कुचालि देखि दिन दिन दूनी देव!
पाहरुई चोर हेरि हिय हहरानु है ।
तुलसी की, बलि, बार बार ही सँभार कीबी,
जद्यपि कृपानिधान सदा सावधानु है ॥८०॥
दिन दिन दूनो देखि दारिद दुकाल दुख
दुरित दुराज, सुख सुकृत सकोचु है ।
माँगे पैँत पावत पचारि पातकी प्रचंड,
काल की करालता भले को होत पोचु है ॥

७७—खप = खप कर, पच कर । तमाइ = तमअ, लालच ।
७८—निरपने = अपने नहीं, बेगाने ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने तौ एक अवलंब अंब डिंभ ज्यों,
समर्थ सीतानाथ सब संकट-बिमोचु है।
तुलसी की साहसी सराहिए कृपालु, राम !
नाम के भरोसे परिनाम को निसोचु है ।।८१।।

मोह-मद-मात्यो, रात्यो कुमति कुनारि सों,
बिसारि बेद लोक-लाज, आँकरो अचेतु है।
भावै सो करत, मुँह आवै सो कहत, कछु
काहू की सहत नाहिं, सरकस हेतु है ।।
तुलसी अधिक अधमाई हू अजामिल तें,
ताहू में सहाय कलि कपट-निकेतु है।
जैबे को अनेक टेक, एक टेक ह्वैबे की, जो
पेट-प्रिय-पूत-हित रामनाम लेतु है ।।८२।।

जागिए न सोइए बिगोइए जनम जाय,
दुख रोग रोइए कलेस कोह काम को।
राजा, रंक, रागी औ बिरागी, भूरि भागी ये
अभागी जीव जरत, प्रभाव कलि बाम को ।।
तुलसी कबंध कैसो धाइबो बिचारु, अंध !
धंध देखियत जग सोच परिनाम को।
सोइबो जो राम के सनेह की समाधि-सुख,
जागिबो जो जीह जपै नीके रामनाम को ।।८३।।

बरन-धरम गयो, आस्रम निवास तज्यो,
त्रासन चकित सो परावनो परो सो है।
करम उपासना कुबासना बिनास्यो, ज्ञान
बचन, बिराग बेष जगत हरो सो है ।।
गोरख जगायो जोग, भगति भगायो लोग,
निगम नियोग ते सो केलि ही छरो सो है।
काय मन बचन सुभाय तुलसी है जाहि
रामनाम को भरोसो ताहि को भरोसो है ।।८४।।

८१—पैंत = दाँव। घात।
८२—आँकरो=आँकरा। गहरा। सरकस = सरकश, प्रबल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

वेद पुरान बिहाइ सुपंथ कुमारग कोटि कुचाल चली है।
काल कराल नृपाल कृपाल न, राजसमाज बड़ोई छली है॥
वर्न-विभाग न आस्रम-धर्म, दुनी दुख्ख-दोष-दरिद्र-दली है।
स्वारथ को परमारथ को कलि राम को नाम-प्रताप बली है॥८५॥

न मिटै भवसंकट दुर्घट है तप तीरथ जन्म अनेक अटो।
कलि में न विराग न ज्ञान कहूँ, सब लागत फोकट झूठ-जटो॥
नट ज्यों जनि पेट-कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो।
तुलसी जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसि बासर राम रटो॥८६॥

दम दुर्गम, दान, दया, मख कर्म, सुधर्म अधीन सबै धन को।
तप, तीरथ साधन, जोग, बिराग सों होइ नहीं दृढ़ता तन को॥
कलिकाल कराल में, राम कृपालु ! यहै अवलंब बड़ो मन को।
तुलसी सब संजमहीन सबै, इक नाम अधार सदा जन को॥८७॥

पाइ सुदेह विमोह-नदी-तरनी न लही, करनी न कछू की।
राम कथा बरनी न बनाइ सुनी न कथा प्रहलाद न ध्रू की॥
अब जोर जरा जरि गात गयो, मन मानि गलानि कुबानि न मूकी।
नीके कै ठीक दई तुलसी, अवलंब बड़ो उर आखर दू की॥८८॥

राम बिहाय 'मरा' जपते बिगरी सुधरी कवि कोकिल हू की।
नामहि तें गज की, गनिका की, अजामिल की चलि गै चल-चूकी॥
नाम-प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पाँडुबधू की !
ताको भलो अजहूँ तुलसी जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की॥८९॥

नाम अजामिल से खल तारन, तारन बारन, बारबधू को।
नाम हरे प्रहलाद बिषाद, पिता भय साँसति सागर सूको॥
नाम सों प्रीति-प्रतीति विहीन गिल्यो कलिकाल कराल न चूको।
राखिहै राम सो जासु हिए तुलसी हुलसै बल आखर दू को॥९०॥

८६—जटो = जटित, जड़ा हुआ।
कुपेटक = बुरे पिटारे से (जैसा बाजीगर रखते हैं)।
८८—मूकी = छोड़ी।
८९—बजाइ रही पति = इज्जत बनी रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीव जहान में जायो जहाँ सो तहाँ तुलसी तिहुँ दाह दहो है ।
दोस न काहू, कियो अपनो, सपनेहु नहीं सुख-लेस लहो है ।।
राम के नाम तें होउ सो होउ, न सोऊ हिए, रसना ही कहो है ।
कियो न कछू, करिबो न कछू, कहिबो न कछू, मरिबोई रहो है ।।९१।।
जीजै न ठाँउ, न आपन गाँउ, सुरालयहू को न संवल मेरे ।
नाम रटो, जमवास क्यों जाउँ, को आइ सकै जम-किंकर नेरे ?
तुम्हरो सब भाँति, तुम्हारिय सौं, तुम्हही, बलि, हौ मोकों ठाहरु हेरे ।
बैरख बाँह बसाइए पै, तुलसी घरु ब्याध अजामिल खेरे ।।९२।।
का कियो जोग अजामिल जू, गनिका कबहीं मति पेम पगाई ? ।
ब्याध को साधुपनो कहिए, अपराध अगाधनि मैं ही जनाई ।।
करुनाकर की करुना करुना-हित नाम-सुहेत जो देत दगाई ।
काहे को खीझिय ? रीझिय पै, तुलसीहु सो है बलि सोई सगाई ।।९३।।
जे मद-मार-विकार भरे ते अचार विचार समीप न जाहीं ।
है अभिमान तऊ मन में 'जन भाषिहै दूसरे दीनन पाहीं ?' ।।
जौ कछु बात बनाइ कहौं तुलसी तुममें तुमहूँ उर माहीं ।
जानकी-जीवन जानत हौ हम हैं तुम्हरे, तुम में, सक नाहीं ।।९४।।
दानव, देव, अहीस, महीस, महा मुनि, तापस, सिद्ध, समाजी ।
जग जाचक-दानि दुतीय नहीं तुमही सब की सब राखत बाजी ।।
एते बड़े तुलसीस तऊ सबरी के दिए बिनु भूख न भाजी ।
राम गरीबनेवाज ! भए हौ गरीबनेवाज गरीब नेवाजी ।।९५।।

घनाक्षरी

किसबी, किसान-कुल, बनिक, भिखारी, भाँट,
चाकर, चपल नट, चोर, चार, चेटकी ।
पेट को पढ़त, गुन गढ़त, चढ़त गिरि,
अटत गहन-बन अहन अखेट की ।।
ऊँचे नीचे करम धरम अधरम करि,
पेट ही को पचत बेंचत बेटा बेटकी ।
तुलसी बुझाइ एक राम घनस्याम ही तें,
आगि बड़वागि तें बड़ी है आगि पेट की ।।९६।।
खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी ।

९२—बैरख = (तु० बैरक) पताका ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीविका-विहीन लोग सीद्यमान सोच-वस,
कहैं एक एकन सों "कहाँ जाई, का करी ?" ॥
बेद हू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी।
दारिद-दसानन दबाई दुनी, दीनबंधु !
दुरित-दहन देखि तुलसी हहा करी ॥९७॥

कुल, करतूति, भूति, कीरति, सुरूप, गुन,
जोबन जरत जुर, परै न कल कहीं।
राजकाज कुपथ कुसाज, भोग रोगही के,
बेद-बुध बिद्या पाइ बिवस बलकहीं ॥
गति तुलसीस की लखै न कोउ जो करत,
पब्बइ तें छार, छारै पब्बइ पलक हीं।
कासों कीजै रोष ? दोष दीजै काहि ? पाहि राम !
कियो कलिकाल कुलि खलल खलक हीं ॥९८॥

बबुर बहेरे को बनाय बाग लाइयत,
रूँधिबे को सोइ सुरतरु काटियत है !
गारी देत नीच हरिचंद हू, दधीचि हू को,
आपने चना चबाइ हाथ चाटियत है ॥
आप महापातकी हँसत हरि हर हू को,
आपु है अभागी भूरिभागी डाँटियत है।
कलि को कलुष मन मलिन किए महत,
मसक की पाँसुरी पयोधि पाटियत है ॥९९॥

सुनिए कराल कलिकाल भूमिपाल तुम !
जाहि घालो चाहिए कहौ धौं राखै ताहि को ?
हौं तौ दीन दूबरो, बिगारो ढारो रावरो न,
मैं हू तैं हू ताहि को, सकल जग जाहि को ॥
काम कोह लाइ कै देखाइयत आँखि मोहिं,
एते मान अकस कीबे को आपु आहि को ? ॥
साहिब सुजान जिन स्वानहू को पच्छ कियो,
रामबोला नाम, हौं गुलाम राम-साहि को ॥१००॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

साँची कहौं कलिकाल कराल, मैं ढारो बिगारो तिहारो कहा है ? ।
काम को, कोह को, लोभ को, मोह को, मोहि सों आनि प्रपंच रहा है ।।
हौ जगनायक लायक आजु, पै मेरियौ टेव कुटेव महा है ।
जानकीनाथ बिना, तुलसी, जग दूसरे सों करिहौं न हहा है ।।१०१।।

भागीरथी जलपान करौं अरु नाम द्वै राम के लेत नितै हौं ।
मोको न लेनो न देनो कछू, कलि ! भूलि न रावरी ओर चितैहौं ।।
जानिकै जोर करौ परिनाम, तुम्हैं पछितैहो पै मैं न भितैहौं ।
ब्राह्मन ज्यौं उगिल्यो उरगारि, हौं त्योंही तिहारे हिए न हितैहौं ।।१०२।।

राजमराल के बालक पेलिकै, पालत लालत खूसर को ।
सुचि सुंदर सालि सकेलि सुबारि कै बीज बटोरत ऊसर को ।।
गुन-ज्ञान-गुमान भभेरि बड़ी, कलपद्रुम काटत मूसर को ।
कलिकाल बिचार अचार हरो, नहिं सूझै कछू धमधूसर को ।।१०३।।

कीबे कहा, पढ़िबे को कहा फल ? बूझि न बेद को भेद बिचारै ।
स्वारथ को परमारथ को कलि-कामद राम को नाम बिसारै ।।
बाद बिवाद बिषाद बढ़ाइ कै छाती पराई औ आपनी जारै ।
चारिहु को, छहु को, नव को, दस आठ को पाठ कुकाठ ज्यों फारै ।।१०४।।

आगम बेद पुरान बखानत, मारग कोटिन जाहिं न जाने ।
जे मुनि ते पुनि आपुहि आप को ईस कहावत सिद्ध सयाने ।
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे, जप जोग बिराग—'लै जीव' पराने ।
को करि सोच मरै, तुलसी, हम जानकीनाथ के हाथ बिकाने ।।१०५।।

धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ ।
काहू की बेटी सों बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगार न सोऊ ।।
तुलसी सरनाम गुलाम है राम को, जाको रुचै सो कहै कछु ओऊ ।
माँगि कै खैबो, मसीत को सोइबो, लैबे को एक न दैबे को दोऊ ।।१०६।।

घनाक्षरी

मेरे जाति पाँति, न चहौं काहू की जाति पाँति,
मेरे कोऊ काम को, न हौं काहू के काम को ।

१०४—नव = नौ व्याकरण—इंद्र, चंद्र, काशकृत्स्न, शाकटायन, पिशालि, पाणिनि, अमर, जैनेंद्र, सरस्वती । दसआठ = अष्टादश पुराण ।

१०६—मसीत = मसजिद ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक परलोक रघुनाथ ही के हाथ सब,
भारी है भरोसो तुलसी के एक नाम को ॥
अति ही अयाने उपखानो नहिं बूझैं लोग,
'साह ही को गोत गोत होत है गुलाम को।'
साधु कै असाधु, कै भलो कै पोच, सोच कहा,
का काहू के द्वार परौं, जो हौं सो हौं राम को ॥१०७॥

कोऊ कहै करत कुसाज दगाबाज बड़ो,
कोऊ कहै राम को गुलाम खरो खूब है।
साधु जानैं महा साधु, खल जानैं महा खल,
बानी झूँठी साँची कोटि उठत हबूब है ॥
चहत न काहू सों, न कहत काहू की कछु,
सबकी सहत, उर अंतर न ऊब है।
तुलसी को भलो पोच हाथ रघुनाथ ही के,
राम की भगति भूमि, मेरी मति दूब है ॥१०८॥

जागैं जोगी जंगम, जती जमाती ध्यान धरैं,
डरैं उर भारी लोभ मोह कोह काम के।
जागैं राजा राजकाज, सेवक समाज साज,
सोचैं सुनि समाचार बड़े बैरी बाम के ॥
जागैं बुध विद्याहित पंडित चकित चित,
जागैं लोभी लालच धरनि धन धाम के।
जागैं भोगी भोगही, वियोगी रोगी सोगबस,
सोवै सुख तुलसी भरोसे एक राम के ॥१०९॥

छप्पय

राम मातु पितु बंधु सुजन गुरु पूज्य परम हित।
साहेब सखा सहाय नेह नाते पुनीत चित ॥
देस कोस कुल कर्म धर्म धन धाम धरनि गति*।
जाति पाँति सब भाँति लागि रामहिं हमारि पति ॥

१०७—उपखानो = उपाख्यान, कहावत।
१०८—हबूब = बुलबुले।
* छक्कन लाल की प्रति में इस चरण के स्थान पर यह पाठ है—"निसि दिन रघुपति चरन-सरन, सपनेहु न आन गति।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परमारथ स्वारथ सुजस सुलभ राम तें सकल फल ।
कह तुलसिदास अब जब कबहुँ एक राम तें मोर भल ॥११०॥

महाराज बलि जाउँ रामसेवक सुखदायक ।
महाराज बलि जाउँ राम सुंदर सब लायक ॥
महाराज बलि जाउँ राम सब संकट-मोचन ।
महाराज बलि जाउँ राम राजीव बिलोचन ॥
बलि जाउँ राम करुनायतन प्रनतपाल पातकहरन ।
बलि जाउँ राम कलि-भय-बिकल तुलसिदास राखिय सरन ॥१११॥

जय ताड़ुका-सुबाहु-मथन, मारीच-मानहर ।
मुनिमख-रच्छन-दच्छ, सिलातारन-करुनाकर ॥
नृपगन-बल-मद-सहित संभु कोदंड बिहंडन ।
जय कुठारधर-दर्प-दलन, दिनकरकुल-मंडन ॥
जय जनक-नगर-आनंद-प्रद, सुखसागर सुखमाभवन ।
कह तुलसि दास सुर-मुकुटमनि जय जय जय जानकिरवन ॥११२॥

जय जयंत-जयकर, अनंत, सज्जनजनरंजन ।
जय बिराध-बध-बिदुष, बिबुध-मुनिगन-भयभंजन ।
जय निसिचरी-बिरूप-करन रघुबंसबिभूषन ।
सुभट चतुर्दश-सहस-दलन त्रिसिरा खरदूषन ॥
जय दंडकबन-पावन-करन तुलसिदास संसय-समन ।
जगबिदित जगतमनि जयति जय, जय जय जय जानिकरमन ॥११३॥

जय मायामृगमथन गीध-सबरी-उद्धारन ।
जय कबंधसूदन बिसाल-तरुताल-बिदारन ॥
दवन बालि बलसालि, थपन-सुग्रीव संतहित ।
कपि-कराल-भट-भालु-कटक-पालन, कृपालु-चित ॥
जय सियबियोग-दुखहेतु-कृत सेतुबंध बारिधि-दमन ।
दससीस बिभीषन-अभयप्रद जय जय जय जानकिरमन ॥११४॥

कनककुधर-केदार, बीज सुंदर सुर-मनिबर ।
सींचि कामधुक धेनु सुधामय पय बिसुद्धतर ॥
तीरथपति अंकुर-सरूप, जच्छेस रच्छ तेहि ।
मरकतमय साखा, सुपत्र मंजरिय लच्छ जेहि ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैवल्य सकल फल कल्पतरु सुभ सुभाव सब सुख बरिस ।
कह तुलसिदास रघुबंसमनि तौ कि होहि तुव कर सरिस ? ॥११५॥
जाय सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै ।
जाय सो जती कहाय विषय--वासना न छंडै ॥
जाय धनिक बिनु दान, जाय निर्धन बिनु धर्महिँ ।
जाय सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्महि ॥
सुत जाय मातु-पितु-भक्ति बिनु, तिय सो जाइ जेहि पति न हित ।
सब जाय दास तुलसी कहैं जो न रामपद नेह नित ॥११६॥
को न क्रोध निरदह्यो, काम बस केहि नहिँ कीन्हों ? ।
को न लोभ दृढ़ फंद बाँधि त्रासन करि दीन्हों ? ॥
कौन हृदय नहिँ लाग कठिन अति नारि-नयन-सर ? ।
लोचनजुत नहिँ अंध भयो श्री पाइ कौन नर ? ॥
सुर-नाग-लोक-महिमंडलहु को जु मोह कीन्हों जय न ? ।
कह तुलसिदास सो ऊबरै जेहि राख राम राजिवनयन ॥११७॥

सवैया

भौंह कमान सँधान सुठान जे नारि-बिलोकनि-बान तें बाँचे ।
कोप-कृसानु गुमान अवाँ घट ज्यों जिनके मन आँच न आँचे ॥
लोभ सबै नट के बस ह्वै कपि ज्यों जग में बहु नाच न नाचे ।
नीके हैं साधु सबै तुलसी, पै तेई रघुबीर के सेवक साँचे ॥११८॥

कवित्त

भेष सुबनाइ, सुचि बचन कहैं चुवाइ,
जाइ तौ न जरनि धरनि धन धाम की ।
कोटिक उपाय करि लालि पालियत देह,
मुख कहियत गति राम ही के नाम की ॥
प्रगटै उपासना, दुरावै दुरवासनाहिँ,
मानस निवास-भूमि लोभ-मोह-काम की ।
राग रोष ईरषा कपट कुटिलाई भरे,
तुलसी-से भगत भगति चहैँ राम की ! ॥११९॥
काल्हिही तरुन तन, काल्हि ही धरनि धन,
काल्हि ही जितौंगो रन, कहत कुचालि है ।

११५--केदार = थाला, आलबाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालिहही साधौंगो काज, कालिह ही राजा समाज,
मसक ह्वै कहै 'भार मेरे मेरु हालिहै' ॥
तुलसी यही कुभाँति घने घर घालि आई,
घरे घर घालति है, घने घर घालिहै ।
देखत सुनत समुझत हू न सूझै सोई,
कबहूँ कह्यो न 'कालहू को काल कालिह है' ॥१२०॥

भयो न तिकाल तिहूँ लोक तुलसी सो मंद,
निंदै सब साधु, सुनि मानौ न सकोचु हौं ।
जानत न जोग हिय हानि मानौं, जानकीस !
काहे को परेखो पातकी प्रपंची पोचु हौं ॥
पेट भरिबे के काज महाराज को कहायों,
महाराज हू कह्यो है प्रनत-बिमोचु हौं ।
निज अघ जाल, कलिकाल की करालता,
बिलोकि होत व्याकुल, करत सोई सोचु हौं ॥१२१॥

धरम के सेतु, जगमंगल के हेतु,
भूमि भार हरिबे को अवतार लियो नर को ।
नीति औ प्रतीति-प्रीति-पाल चालि प्रभु मान,
लोक बेद राखिबे को पन रघुबर को ॥
बानर बिभीषन की ओर के कनावड़े हैं,
सो प्रसंग सुने अंग जरैं अनुचर को ।
राखे रीति आपनी जो होइ सोई कीजै, बलि,
तुलसी तिहारो घरजायउ है घर को ॥१२२॥

नाम महाराज के निबाह नीको कीजै उर,
सबही सोहात, मैं न लोगनि सोहात हौं ।
कीजै राम बार यहि मेरी ओर चखकोर,
ताहि लगि रंक ज्यों सनेह को ललात हौं ॥
तुलसी बिलोकि कलिकाल की करालता,
कृपालु को सुभाव समुझत सकुचात हौं ।
लोक एक भाँति को, तिलोकनाथ लोकबस,
आपनो न सोच, स्वामी सोच ही सुखात हौं ॥१२३॥

१२२—घरजायउ = घरजाया, गुलाम ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौलौं लोभ, लोलुप ललात लालची लवार,
वार वार, लालच धरनि धन धाम को।
तव लौं वियोग रोग सोग भोग जातना को,
जुग सम लगत जीवन जाम जाम को॥
तौलौं दुख दारिद दहत अति नित तनु,
तुलसी है किंकर विमोह-कोह-काम को।
सब दुख आपने, निरापने सकल सुख,
जौलौं जन भयो न बजाइ राजा राम को॥१२४॥

तब लौं मलीन, हीन, दीन, सुख सपने न,
जहाँ तहाँ दुखी जन भाजन कलेस को।
तब लौं उबैने पायँ फिरत पेटैं खलाय,
बाये मुँह सहत पराभौ देस देस को॥
तब लौं दयावनो दुसह दुख दारिद को,
साथरी को सोइबो, ओढ़िबो भूने खेस को।
जब लौं न भजै जीह जानकी-जीवन राम,
राजन को राजा सो तौ साहब महेस को॥१२५॥

ईसन के ईस, महाराजन के महाराज,
देवन के देव, देव! प्रानहू के प्रान हौ।
कालहू के काल, महाभूतन के महाभूत,
कर्म हू के करम, निदान के निदान हौ॥
निगम को अगम, सुगम तुलसीहू-से को,
एते मान सीलसिंधु करुनानिधान हौ।
महिमा अपार, काहू बोल को न वारापार,
बड़ी साहिबी में नाथ बड़े सावधान हौ॥१२६॥

सवैया

आरतपालु कृपालु जो राम, जेही सुमिरे तेहि को तहँ ठाढ़े।
नामप्रताप महा महिमा, अकरे किए खोटेउ, छोटेउ बाढ़े॥

१२४—बजाइ = डंके की चोट, खुल्लमखुल्ला।
१२५—उबैने = नंगे (पाँव)। भूने = भीने, झाँझरे। खेस = पुरानी रुई के पहले का बिना हुआ खुरदुरा कपड़ा।
१२६—बोल = वाक्य, वर्णन। निदान = कारण। एते मान = इतने।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवक एक तें एक अनेक भए तुलसी तिहूँ तापन डाढ़े ।
प्रेम बदौं प्रहलादहि को जिन पाहन तें परमेस्वर काढ़े ॥१२७॥
काढ़ि कृपान, कृपा न कहूँ, पितु काल कराल बिलोकि न भागे ।
'राम कहाँ', 'सब ठाँउ है', 'खंभ में ?', 'हाँ' सुनि हाँक नृकेहरि जागे ॥
बैरी बिदारि भए बिकराल, कहे प्रहलादहि के अनुरागे ।
प्रीति प्रतीति बढ़ी तुलसी, तब तें सब पाहन पूजन लागे ॥१२८॥
अंतर्जामिहु तें बड़ बाहरजामि हैं राम, जे नाम लिए तें ।
धावत धेनु पन्हाइ लवाइ ज्यों बालक बोलनि कान किए तें ॥
आपनि बूझि कहै तुलसी, कहिबे की न बावरि बात बिए तें ।
पैज परे प्रहलादहु को प्रगटे प्रभु पाहन तें, न हिए तें ॥१२९॥
बालक बोलि दिए बलि काल को, कायर कोटि कुचाल चलाई ।
पापी है बाप बड़े परिताप तें आपनी ओर तें खोरि न लाई ॥
भूरि दई बिषमूरि, भई प्रहलाद सुधाई सुधा की भलाई ।
रामकृपा तुलसी जन को जग होत भले को भलाई भलाई ॥१३०॥
कंस करी ब्रजबासिन सों करतूति कुभाँति चली न चलाई ।
पाँडु के पूत सपूत, कुपूत सुजोधन भो कलि छोटो छलाई ॥
कान्ह कृपालु बड़े नतपालु, गए खल खेचर खीस खलाई ।
ठीक प्रतीति कहै तुलसी जग होइ भले को भलाई भलाई ॥१३१॥
अवनीस अनेक भए अवनी जिनके डर तें सुर सोच सुखाहीं ।
मानव-दानव-देव-सतावन रावन घाटि रच्यो जग माहीं ॥
ते मिलए धरि धूरि सुजोधन जे चलते बहु छत्र की छाहीं ।
बेद पुरान कहै जग जान, गुमान गोबिंदहिं भावत नाहीं ॥१३२॥
जब नैनिन प्रीति ठई ठग स्याम सों स्यानी सखी हठि हौं बरजी ।
नहिं जान्यो बियोग सो रोग है आगे झुकी तब हौं, तेहि सों तरजी ॥
अब देह भई पट नेह के घाले सों, ब्यौंत करै बिरहा दरजी ।
ब्रजराज-कुमार बिना सुनु, भृंग ! अनंग भयो जिय को गरजी ॥१३३॥

१२७—अकरा = महँगा, चोखा (अक्रय) ।
१२९—अंतर्जामी = अंतस् ही में जानने योग्य निर्गुण । बाहरजामी = बाह्य जगत् में जानने योग्य सगुण रूप । बावरी = बुरी । बिए = दूसरे ।
१३१—कलि छोटो = कलि का छोटा भाई । छलाई = छल में । खेचर = राक्षस । १३२—घाटि रच्यो = बुराई का आयोजन किया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जोग कथा पठई ब्रज को, सब सों सठ चेरी की चाल चलाकी ।
ऊधो जू ! क्यों न कहैं कुबरी जो बरी नटनागर हेरि हलाकी ।।
जाहि लगै पर जानै सोई, तुलसी सो सुहागिनि नंदलला की ।
जानी है जानपनी हरि की, अब बाँधियैंगी कछु मोटि कला की ।।१३४।।

कवित्त

पठयो है छपद छबीले कान्ह कैहू कहूँ
खोजि कै खवास खासो कूबरी सी बाल को ।
ज्ञान को गढ़ैया, बिनु गिरा को पढ़ैया, बार
खाल को कढ़ैया, सो बढ़ैया उरसाल को ।।
प्रीति को बधिक, रसरीति को अधिक, नीति
निपुन, बिबेक है निदेस देसकाल को ।
तुलसी कहे न बनै, सहे ही बनैगी सब,
जोग भयो जोग को, बियोग नंदलाल को ।।१३५।।
हनूमान ह्वै कृपालु, लाड़िले लषन लाल,
भावते भरत कीजै सेवक सहाय जू ।
बिनती करत दीन दूबरो दयावनो सो,
बिगरे तें आपही सुधारि लीजै भाय जू ।।
मेरी साहिबिनी सदा सीस पर बिलसति,
देबि ! क्यों न दास को देखाइयत पाय जू ।
खीझहू में रीझिबे की बानि, राम रीझत हैं,
रीझे ह्वैहैं राम की दुहाई रघुराय जू ।।१३६।।

सवैया

बेष बिराग को, राग भरो मनु, माय ! कहौं सतिभाव हौं तोसों ।
तेरे ही नाथ को नाम लै बेचिहौं पातकी पामर प्राननि पोसों ।।
एते बड़े अपराधी अघी कहँ, तैं कहु अंब कि मेरो तु मोसों ।
स्वारथ को परमारथ को, परिपूरन भो फिरि घाटि न हो सों ।।१३७।।

१३४—हलाकी = मार डालनेवाला, घातक । मोटि = गठरी । बाँधियैंगी = बाँधेहीगी अथवा 'बाँधिहैगी' भविष्य का दोहरा रूप जैसा देव, मुबारक आदि लाए हैं; जैसे, हौं कहौं रंग न फाबिहैगो—मुबारक ।
१३५—जोग = अवसर, संयोग, नौबत ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनाक्षरी

जहाँ बालमीकि भए व्याध तें मुनींद्र साधु,
'मरा मरा' जपे सुनि सिख रिषि सात की ।
सीय को निवास, लव-कुस को जनमथल,
तुलसी छुवत छाँह ताप गरै गात की ॥
बिटप महीप सुरसरित समीप सोहै,
सीतावट पेखत पुनीत होत पातकी ।
बारिपुर दिगपुर बीच बिलसति भूमि,
अंकित जो जानकी-चरन-जलजात की ॥१३८॥

मरकत बरन परन, फल मानिक-से,
लसै जटाजूट जनु रूख बेष हरु है ।
सुखमा को ढेरु कैधौं सुकृत-सुमेरु कैधौं
संपदा सकल मुद मंगल को घरु है ॥
देत अभिमत जो समेत प्रीति सेइए,
प्रतीति मानि तुलसी बिचारि काको थरु है ।
सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै,
रामरमनी को बट कलि कामतरु है ॥१३९॥

देवधुनि पास मुनिवास श्रीनिवास जहाँ,
प्राकृत हूँ बट बूट बसत पुरारि हैं ।
जोग जप जाग को बिराग को पुनीत पीठ,
रागिन पै सीठि, डीठि बाहरी निहारिहैं ॥
'आयसु', 'आदेस', 'बाबा', 'भलो भलो', 'भाव सिद्ध',
तुलसी बिचारि जोगी कहत पुकारि हैं ।
रामभगतन को तौ कामतरु तें अधिक,
सियबट सेए करतल फल चारि हैं ॥१४०॥

जहाँ बन पावनो सुहावनो बिहंग मृग,
देखि अति लागत अनंद खेत खूँट सो ।
सीताराम-लखन-निवास, बास मुनिन को,
सिद्ध साधु साधक सबै बिबेक बूट सो ॥

१४०—'आयसु'.....'भावसिद्ध' = साधु संतों की बोलचाल के वाक्य अर्थात् वहाँ के रहनेवाले इसी प्रकार के शिष्ट और मधुर शब्दों का व्यवहार करते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झरना झरत झारि सीतल पुनीत वारि,
मंदाकिनी मंजुल महेस जटाजूट-सो।
तुलसी जौ राम सों सनेह साँचो चाहिए
तौ सेइए सनेह सों बिचित्र चित्रकूट सो ॥१४१॥

मोह-बन कलिमल-पल-पीन जानि जिए,
साधु गाय विप्रन के भय सो नेवारिहै।
दीन्हीं है रजाइ राम, पाइ सो सहाइ लाल,
लषन समर्थ बीर हेरि हेरि मारिहै॥
मंदाकिनी मंजुल कमान असि, वान जहाँ,
वारि-धार धीर धरि सुकर सुधारिहै।
चित्रकूट अचल-अहेरी बैठ्यौ घात मानो
पातक के ब्रात घोर सावज सँहारिहै ॥१४२॥

सवैया

लागि दवारि पहार ठही लहकी कपि लंक जथा खर-खौकी।
चारु चुवा चहुँ ओर चलैं, लपटैं झपटैं सो तमीचर तौंकी॥
क्यों कहि जात महा सुखमा, उपमा तकि ताकत है कवि कौ की।
मानों लसी तुलसी हनुमान हिए जगजीति जराय की चौकी ॥१४३॥

देव कहैं अपनी अपना अवलोकन तीरथराज चलो रे।
देखि मिटै अपराध अगाध, निमज्जत साधु समाज भलो रे॥
सोहै सितासित को मिलिबो, तुलसी हुलसै हिय हेरि हलोरे।
मानों हरे तृन चारु चरैं बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे ॥१४४॥

देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा कुल कोटि उधारे।
देखि चले झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ विमान सँवारे॥
पूजा को साज बिरंचि रचैं, तुलसी जे महातम जाननहारे।
ओक की नींव परी हरिलोक बिलोकत गंग तरंग तिहारे ॥१४५॥

ब्रह्म जो व्यापक बेद कहैं, गम-नाहि गिरा गुनज्ञान गुनी को।
जो करता भरता हरता सुर साहिब, साहब दीन दुनी को॥

१४३—ठही = ठह कर, जम कर, अच्छी तरह। लहकी = लहकाई। खरखौकी = तृण खानेवाली अर्थात् आग। चुवा = चौवा, चतुष्पद, मृग। तौंकी = तौंक कर, आँच से तप कर। कौ की = कब की, बड़ी देर से।

१४४—कलोरे = बछड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोई भयो द्रव रूप सही जु है नाथ बिरंचि महेस मुनी को ।
मानि प्रतीति सदा तुलसी जल काहे न सेवत देवधुनी को ? ॥१४६॥
वारि तिहारो निहारि मुरारि भए परसे पद पाप लहौंगो ।
ईस ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समता बड़ दोष दहौंगो ॥
बरु बारहि बार सरीर धरौं, रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौंगो ।
भागीरथी ! बिनवौं करजोरि, बहोरि, न खोरि लगै सो कहौंगो ॥१४७॥

कवित्त

लालची ललात, बिललात द्वार द्वार दीन,
बदन मलीन, मन मिटै न बिसूरना ।
ताकत सराध कै बिबाह कै उछाह कछू,
डोलै लोल बूझत सबद ढोल तूरना ॥
प्यासे हू न पावै वारि, भूखे न चनक चारि,
चाहत अहारन पहार, दारि कूरना ।
सोक को अगार दुख-भार-भरो तौलों जन
जौलों देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना ॥१४८॥

छप्पय

भस्म अंग, मर्दन अनंग, संतत असंग हर ।
सीस गंग, गिरिजा अधंग, भूषन भुजंगबर ॥
मुंड माल, बिधु बाल भाल, डमरु - कपाल कर ।
बिबुध-बृंद-नवकुमुद-चंद, सुखकंद, सूलधर ।
त्रिपुरारि, त्रिलोचन, दिग्बसन, बिष-भोजन, भव-भय-हरन ।
कह तुलसिदास सेवत सुलभ सिव सिव सिव संकर सरन ॥१४९॥
गरल-असन, दिग्बसन, ब्यसन-भंजन, जनरंजन ।
कुंद-इंदु-कर्पूर-गौर, सच्चिदानंद-घन ॥
बिकट बेष, उर सेष, सीस सुरसरित सहज सुचि ।
सिव अकाम, अभिराम धाम, नित रामनाम - रुचि ॥
कंदर्पदर्प-दुर्गम-दवन, उमारवन गुनभवन हर ।
तुलसीस त्रिलोचन, त्रिगुन-पर, त्रिपुरमथन जय त्रिदसबर ॥१५०॥
अर्ध-अग अगना, नाम जोगीस जोगपति ।
बिषम असन, दिगबसन, नाम बिस्वेस बिस्वगति ॥

१४८—दारि कूरना = दाल के कूर भरे हुए अच्छे पकवानों का ढेर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर कपाल, गिर माल ब्याल, विष-भूति-बिभूषन।
नाम सुद्ध, अविरुद्ध, अमर, अनवद्य, अदूषन ॥
बिकराल, भूत-बेताल-प्रिय, भीम नाम, भव-भय-दमन।
सब विधि समर्थ महिमा अकथ तुलसिदास संसय-समन ॥१५१॥

भूतनाथ भयहरन, भीम, भय-भवन, भूमिधर।
भानुमंत भगवंत, भूति - भूषन भुजंगवर ॥
भव्य-भाव-वल्लभ, भवेस, भवभार-बिभंजन।
भूरि भोग, भैरव, कुजोग-गंजन, जन-रंजन ॥
भारती वदन, विष-अदन सिव, ससि-पतंग-पावक-नयन।
कह तुलसिदास किन भजसि मन भद्रसदन, मर्दनमयन ॥१५२॥

सवैया

नाँगो फिरै कहै माँगनो देखि "न खाँगो कछू, जनि माँगिए थोरो"।
राँकनि नाकप रीझि करै, तुलसी जग जो जुरै जाचक जोरो ॥
"नाक सवाँरत आयो हौं नाकहिँ, नाहिँ पिनाकिहिँ नेकु निहोरो"।
ब्रह्म कहै "गिरिजा! सिखओ, पति रावरो दानि है बावरो भोरो" ॥१५३॥

विष-पावक, ब्याल कराल गरे, सरनागत तौ तिहूँ ताप न डाढ़े।
भूत बेताल सखा, भव नाम, दलै पल में भव के भय गाढ़े।
तुलसीस दरिद्र-सिरोमनि सो सुमिरे दुखदारिद होहिँ न ठाढ़े।
भौन में भाँग, धतूरोई आँगन, नाँगे के आगे हैं माँगने बाढ़े ॥१५४॥

सीस बसै बरदा, बरदानि, चढ़यो बरदा, धरन्यो बरदा है।
धाम धतूरो बिभूति को कूरो, निवास तहाँ सब लै मरे दाहै ॥
ब्याली कपाली है ख्याली, चहूँ दिसि भाँग की टाटिन को परदा है।
राँकसिरोमनि काकिनिभाग बिलोकत लोकप को करदा है ॥१५५॥

दानी जो चारि पदारथ को त्रिपुरारि तिहूँ पुर में सिर-टीको।
भोरे भलो भले भाय को भूखो, भलोई कियो सुमिरे तुलसी को ॥
ता बिनु आस को दास भयो, कबहूँ न मिट्यो लघु लालच जी को।
साधो कहा करि साधन तें, जोपै राधो नहीं पति पारवती को ? ॥१५६॥
जात जरे सब लोक बिलोकि त्रिलोचन सो बिष लोकि लियो है।
पान कियो बिष-भूषन भो, करुना-बरुनालय साँइँ-हियो है ॥

१५६—राधो = आराधना की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरोई फोरिबे जोग कपार, किधौं कछु काहू लखाइ दियो है ।
काहे न कान करौ बिनती, तुलसी कलिकाल बिहाल कियो है ॥१५७॥

कवित्त

खायो कालकूट भयो अजर अमर तनु,
भवन मसान, गथ गाँठरी गरद की ।
डमरु-कपाल कर, भूषन कराल व्याल,
बावरे बड़े की रीझि बाहन-बरद की ॥
तुलसी बिसाल गोरे गात बिलसति भूति,
मानों हिमगिरि चारु चाँदनी सरद की ।
अर्थ धर्म काम मोक्ष बसत बिलोकनि में,
कासी करामाति जोगी जागत मरद की ॥१५८॥

पिंगल जटा कलाप, माथे पै पुनीत आप,
पावक नैना, प्रताप भ्रू पर बरत हैं ।
लोचन बिसाल लाल, सोहै बालचंद्र भाल
कंठ कालकूट, ब्याल भूषन धरत हैं ॥
सुंदर दिगंबर बिभूति गात, भाँग खात,
रूरे सृंगी पूरे काल-कंटक हरत हैं ।
देत न अघात, रीझि जात पात आक ही के,
भोलानाथ जोगी जब औढर ढरत हैं ॥१५९॥

देत संपदा समेत श्रीनिकेत जाचकनि,
भवन बिभूति भाँग बृषभ बहनु है ।
नाम बामदेव, दाहिनो सदा, असंग रंग,
अर्द्ध अंग अंगना, अनंग को महनु है ॥
तुलसी महेस को प्रभाव भाव ही सुगम,
निगम अगम हू को जानिबो गहनु है ।
बेष तौ भिखारि को, भयंक रूप संकर,
दयालु दीनबंधु दानि दारिद-दहनु है ॥१६०॥

चाहै न अनंग-अरि एको अंग मंगन को,
देबोई पै जानिए सुभाव-सिद्ध बानि सो ।

१६०—भयंक = भयंकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारिबुंद चारि त्रिपुरारि पर डारिए तौ
देत फल चारि, लेत सेवा साँची मानि सो ।।
तुलसी भरोसो न भवेस भोलानाथ को तौ
कोटिक कलेस करौ मरौ छार छानि सो ।
दारिद-दमन, दुख-दोष-दाह-दावानल,
दुनी न दयालु दूजो दानि सूलपानि सो ।।१६१।।
काहे को अनेक देव सेवत जागै मसान,
खोवत अपान, सठ होत हठि प्रेत रे ! ।
काहे को उपाय कोटि करत, मरत धाय,
जाचत नरेस देस देस के अचेत रे ! ।।
तुलसी प्रतीति बिनु त्यागे तैं प्रयाग तनु,
धन ही के हेतु दान देत कुरुखेत रे ।
पात द्वै धतूरे के दै भोरे कै भवेस सों
सुरेस हू की संपदा सुभाय सों न लेत रे ।।१६२।।
स्यंदन, गयंद, बाजिराजि, भले भले भट,
धन-धाम-निकर, करनि हू न पूजे क्वै ।
बनिता बिनीत, पूत पावन सोहावन, औ
बिनय बिबेक बिद्या सुभग सरीर ज्वै ।।
इहाँ ऐसो सुख, परलोक सिवलोक ओक,
ताको फल तुलसी सों सुनौ सावधान ह्वै ।
जाने, बिनु जाने, कै रिसाने, केलि कबहूँक,
सिवहिं चढ़ाए ह्वैहैं बेल के पतौवा द्वै ।।१६३।।
रति सी रवनि, सिंधु-मेखला-अवनिपति,
औनिप अनेक ठाढ़े हाथ जोरि हारि कै ।
संपदा समाज देखि लाज सुरराज हू के,
सुख सब बिधि बिधि दीन्हें हैं सँवारि कै ।।
इहाँ ऐसो सुख, सुरलोक सुरनाथ-पद,
ताको फल तुलसी सो कहैगो बिचारि कै ।
आक के पतौवा चारि, फूल कै धतूरे के द्वै
दीन्हें ह्वैहैं बारक पुरारि पर डारि कै ।।१६४।।

१६३—क्वै = कोई । ज्वै = जो कुछ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवसरि सेवौं वामदेव गाउँ रावरे ही,
नाम राम ही के माँगि उदर भरत हौं।
दीबे जोग तुलसी न लेत काहू को कछुक,
लिखी न भलाई भाल, पोच न करत हौं॥
एते पर हू जो कोऊ रावरो ह्वै जोर करै,
ताको जोर, देव दीन द्वारे गुदरत हौं।
पाइकै उराहनो उराहनो न दीजै मोहिँ,
काल-कला कासीनाथ कहे निवरत हौं॥१६५॥

चेरा राम राय को, सुजस सुनि तेरो, हर !
पाइँ तर आइ रह्यों सुरसरि तीर हौं।
वामदेव, राम को सुभाव सील जानि जिय,
नातो नेह जानियत रघुबीर भीर हौं॥
अधिभूत बेदन विषम होत, भूतनाथ !
तुलसी विकल पाहि पचत कुपीर हौं।
मारिए तौ अनायास कासीवास खास फल,
ज्याइए तौ कृपा करि निरुज सरीर हौं॥१६६॥

जीबे की न लालसा, दयालु महादेव! मोहिँ,
मालुम है तोहि मरिबेई को रहतु हौं।
कामरिपु राम के गुलामनि को कामतरु,
अवलंब जगदंब सहित चहतु हौं॥
रोग भयो भूत सो, कुसूत भयो तुलसी को,
भूतनाथ पाहि पदपंकज गहतु हौं।
ज्याइए तौ जानकी-रमन-जन जानि जिय,
मारिए तौ माँगी मीचु सूधियै कहतु हौं॥१६७॥

भूतभव ! भवत पिसाच-भूत-प्रेत-प्रिय,
आपनो समाज, सिव ! आपु नीके जानिए।
नाना वेष वाहन विभूषन वसन, बास,
खान पान, बलि पूजा विधि को बखानिए॥
राम के गुलामनि की रीति प्रीति सूधी सब,
सब सों सनेह सबही को सनमानिए।

१६७—कुसूत = कुपास, सुभीता न रहना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी की सुधरै सुधारे भूतनाथ ही के,
मेरे माय बाप गुरु संकर-भवानिए ॥१६८॥

गौरीनाथ भोलानाथ भवत भवानीनाथ,
बिस्वनाथ-पुर फिरी आन कलिकाल की ।
संकर से नर, गिरिजा सी नारी कासीवासी,
बेद कही, सही, ससिसेखर कृपालु की ॥
छमुख-गनेस तें महेस के पियारे लोग,
बिकल बिलोकियत, नगरी बिहाल की ।
पुरी-सुरबेलि केलि काटत किरात-कलि,
निठुर निहारिए उघारि डीठि भाल की ॥१६९॥

ठाकुर महेस, ठकुराइनि उमा सी जहाँ,
लोक बेद हू बिदित महिमा ठहर की ।
भट रुद्रगन, भूतगनपति , सेनापति,
कलिकाल की कुचाल काहू तो न हरकी ॥
बीसी बिस्वनाथ की बिषाद बड़ो बारानसी,
बूझिए न ऐसी गति संकर-सहर की ।
कैसे कहै तुलसी वृषासुर के बरदानि !
बानि जानि सुधा तजि पियनि जहर की ॥१७०॥

लोक बेद हू बिदित बारानसी की बड़ाई,
बासी नर नारि ईस-अंबिका - सरूप हैं ।
कालनाथ कोतवाल, दंडकारि दंडपानि,
सभासद गनप - से अमित अनूप हैं ॥
तहाँउँ कुचालि कलिकाल की कुरीति, कैधौं
जानत न मूढ़, इहाँ भूतनाथ भूप हैं ।
फलैं फूलैं फैलैं खल, सीदैं साधु पल पल,
खाती दीपमालिका, ठटाइयत सूप हैं ॥१७१॥

पंचकोस पुन्यकोस स्वारथ परारथ को,
जानि आप आपने सुपास वास दियो है ।

१६८—भूतभव = पचभूतों के कारणस्वरूप । भवत = आप ।
१७०—हरकी = मना की । बीसी बिस्वनाथ की = रुद्रबीसी जो सवत् १६६५ से १६८५ तक रही ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीच नर नारि न सँभारि सकैं आदर,
लहत फल कादर विचारि जो न कियो है ॥
बारी बारानसी बिनु कहे चक्र चक्रपानि,
मानि हितहानि सो मुरारि मन भियो है ।
रोष में भरोसो एक आसुतोष कहि जात,
बिकल बिलोकि लोक कालकूट पियो है ॥१७२॥

रचत बिरंचि, हरि पालत, हरत हर,
तेरही प्रसाद जग अगजगपालिके ।
तोहि में बिकास बिस्व, तोहि में बिलास सब,
तोहि में समात मातु भूमिधर-बालिके ॥
दीजै अवलंब जगदंब न बिलंब कीजै,
करुना-तरंगिनी कृपातरंग-मालिके ।
रोष महामारी, परितोष महतारी ! दुनी,
देखिए दुखारी मुनि-मानस-मरालिके ॥१७३॥

निपट बसेरे अघ - औगुन घनेरे नर,
नारिऊ अनेरे जगदंब चेरी चेरे हैं ।
दारिदी दुखारी देखि भूसुर भिखारी भीरु
लोभ मोह काम कोह कलिमल घेरे हैं ॥
लोकरीति राखी, राम साखी बामदेव जान,
जन की बिनति मानि मातु कहि 'मेरे हैं' ।
महामारी महेसानि महिमा की खानि मोद,
मंगल की रासि, दास कासी-बासी तेरे हैं ॥१७४॥

लोगन के पाप, कैधों सिद्ध-सुर-साप, कैधों
काल के प्रताप कासी तिहूँ - ताप-तई है ।
ऊँचे, नीचे, बीच के, धनिक रंक राजा राय,
हठनि बजाय करि डीठि पीठि दई है ।
देवता निहोरे महामारिन्ह सों कर जोरे,
भोरानाथ जानि भोरे आपनी सी ठई है ।

१७२—बारी ..... चक्र = मिथ्या वासुदेव को दंड देने के लिये कृष्ण के चक्र ने उसकी सेना का तो संहार किया ही, पर बिना आज्ञा के उसकी पुरी काशी को भी भस्म कर डाला । भियो है = डरा है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करुनानिधान हनुमान बीर बलवान,
जसरासि जहाँ तहाँ तैंहीँ लूटि लई है ॥१७५॥

संकर-सहर सर, नरनारि बारिचर,
बिकल सकल महामारी माँजा भई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भभरि भगात, जल थल मीचु मई है॥
देव न दयालु, महिपाल न कृपालुचित,
बारानसी बाढ़ति अनीति नित नई है।
पाहि रघुराज, पाहि कपिराज रामदूत,
राम हू की बिगरी तुहीँ सुधारि लई है ॥१७६॥

एक तो कराल कलिकाल सूल-मूल तामें,
कोढ़ मे की खाजु सी सनीचरी है मीन की।
वेद धर्म दूरि गए, भूमिचोर भूप भए,
साधु सीद्यमान जानि रीति पाप-पीन की॥
दूबरे को दूसरी न द्वार, राम दया-धाम!
रावरी ही गति बल-बिभव-बिहीन की।
लागैगी पै लाज वा विराजमान विरुदहिँ,
महाराज आजु जौ न देत दादि दीन की ॥१७७॥

रामनाम मातु, पितु, स्वामि, समरथ हित,
आस रामनाम की, भरोसो रामनाम को।
प्रेम रामनाम ही सों, नेम रामनाम ही को,
जानौं न मरम पद दाहिनो न बाम को॥
स्वारथ सकल, परमारथ को रामनाम,
रामनामहीन तुलसी न काहू काम को।
राम की सपथ सरबस मेरे रामनाम,
कामधेनु कामतरु मो से छीन छाम को ॥१७८॥

१७५—करि डीठि = देख सुन कर। पीठि दई = विमुख हुए।

१७७—मीन की सनीचरी = मीनराशि पर शनैश्चर की स्थिति की दशा, जिसका फल राजा प्रजा का नाश होता है। यह जोग संवत् १६६९ के आरंभ से १६७१ के मध्य तक पड़ा था। अतः यह कबित्त उसी समय के भीतर कहा गया होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सवैया

मारग मारि, महीसुर मारि, कुमारग कोटिक कै धन लीयो ।
संकर कोप सों पाप को दाम परीच्छित जाहिगो जारि कै हीयो ।।
कासी में कंटक जेते भए ते गे पाइ अघाइ कै आपनो कीयो ।
आजु कि कालिह परौं कि नरौं जड़ जाहिंगे चाटि दिवारी को दीयो ।।१७९।।
कुंकुम रंग सुअंग जितो, मुखचंद सों चंद सों होड़ परी है ।
बोलत बोल समृद्धि चुवै, अवलोकत सोच विषाद हरी है ।।
गौरी कि गंग विहंगिनि बेष, कि मंजुल मूरति मोद भरी है ।
पेखि सप्रेम पयान समै सब सोच - बिमोचन छेमकरी है ।।१८०।।

घनाक्षरी

मंगल की रासि, परमारथ की खानि जानि,
बिरचि बनाई बिधि, केसव बसाई है ।
प्रलय हू काल राखी सूलपानि सूल पर
मीचुबस नीच सोऊ चहत खसाई है ।।
छाँड़ि छितिपाल जो परीछित भए कृपालु,
भलो कियो खल को निकाई सो नसाई है ।
पाहि हनुमान ! करुनानिधान राम पाहि !
कासी-कामधेनु कलि कुहत कसाई है ।।१८१।।
बिरचि बिरंचि की बसति बिस्वनाथ की जो
प्रानहु तें प्यारी पुरी केसव कृपाल की ।
ज्योतिरूप-लिंगमई, अगनित-लिंगमई,
मोक्ष-बितरनि, बिदरनि जगजाल की ।।

१७९—परीछित = निश्चित, निश्चय रूप से । चाटि दिवारी को दीयो = ऐसा कहते हैं कि सर्प आदि दीवाली का दीया चाट कर चले जाते हैं अर्थात् दीवाली के बाद नहीं रह जाते ।

१८० कुंकुम रंग······परी है = क्षेमकरी नाम की चील, जो कत्थई या ललाई लिए पीले रंग की होती है । इसकी चोंच सफेद रंग की होती है । इसका दर्शन शुभ माना जाता है । यह दक्षिण में कारमंडल के किनारे अधिक होती है । तंत्र-सार में इसके नमस्कार का श्लोक इस प्रकार है—कुंकुमारुण सर्वांगि! कुंदेंदुधवलानने । मत्स्यमांसप्रिये देवि, क्षेमंकरि नमोस्तुते ।

१८१—कुहत = मारता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखी देव देवसरि सिद्ध मुनिवर, आस,
लोपति विलोकत कुलिपि भांड़े भाल की।
हाहा करै तुलसी दयानिधान राम! ऐसी
कासी की कदर्थना कराल कलिकाल की ॥१८२॥

आस्रम वरन कलि-विवस विकल भए,
निज निज मरजाद मोटरी सी डार दी।
संकर सरोष महामारी ही तें जानियत,
साहिव सरोष, दूनी दिन दिन दारदी॥
नारि नर आरत पुकारत, सुनै न कोउ,
काहू देवतनि मिलि मोटी मूठि मार दी।
तुलसी सभीत-पाल सुमिरे कृपालु राम,
समय सुकरुना सराहि सनकार दी ॥१८३॥

हनुमानबाहुक

छप्पय

सिंधु-तरन, सिय-सोच-हरन, रबि-बाल-बरन-तनु।
भुज विसाल, मूरति कराल, कालहु को काल जनु॥
गहन-दहन-निरदहन-लंक, निःसंक, बंकभुव।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवनसुव॥
कह तुलसिदास सेवत सुलभ, सेवक हित संतत निकट।
गुन गनत, नमत सुमिरत, जपत, समन सकल-संकट-विकट ॥१॥

स्वर्न-सैल-संकास कोटि-रवि-तरुन-तेज - घन।
उर विसाल, भुजदंड चंड, नख बज्र, बज्रतन॥
पिंग नयन, भ्रुकुटी कराल, रसना दसनानन।
कपिस केस, करकस लँगूर, खल-दल-बल-भानन॥
कह तुलसिदास बस जासु उर मारुतसुत मूरति विकट।
संताप पाप तेहि पुरुष कहँ सपनहुँ नहिँ आवत निकट ॥२॥

१८२—कदर्थना = दुर्दशा।
१८३—सनकार दी = इशारा कर दिया।
१—भुव = भ्रू, भ्रुकुटी।
२—संकास = प्रकाश, चमक। भानन = तोड़ना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झूलना

पंचमुख छमुख भृगुमुख्य भट, असुर-सुर
सर्व सरि समर समरत्थ सूरो।
बाँकुरो बीर बिरुदैत बिरुदावली,
बेद बंदी बदत पैज पूरो॥
जासु गुनगाथ रघुनाथ कह, जासु बल
बिपुलजल-भरित जग-जलधि भूरो।
दीन-दुख-दमन को कौन तुलसीस है
पवन को पूत रजपूत रूरो॥३॥

घनाक्षरी

भानु सों पढ़न हनुमान गए, भानु मन
अनुमानि सिसुकेलि कियो फेरफार सो।
पाछिले पगनि गम गगन मगनमन,
क्रम को न भ्रम, कपि-बालक-बिहार सो॥
कौतुक बिलोकि लोकपाल हरि हर बिधि,
लोचननि चकाचौंधि चित्तनि खँभार सो।
बल कैधों बीररस, धीरज कै, साहस, कै
तुलसी सरीर धरे सबनि को सार सो॥४॥
भारत में पारथ के रथकेतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरुराजदल हलबल भो।
कह्यो द्रोण भीषम समीरसुत महाबीर,
बीर-रस-बारि-निधि जाको बल जल भो॥
बानर सुभाय बालकेलि भूमि भानु लगि,
फलँग फलाँग हू तें घाटि नभतल भो।
नाइ नाइ माथ जोरि जोरि हाथ जोधा जोहैं,
हनुमान देखे जगजीवन को फल भो॥५॥

३—भृगुमुख्य = परशुराम।

४—पाछिले पगनि गम = पीछे की ओर पैरों से चलते हुए। कथा है कि जब हनुमानजी सूर्य के पास पढ़ने गए तब उन्होंने कहा कि मैं एक जगह स्थिर नहीं रहता, इससे यदि पढ़ना हो तो मेरे रथ के सामने पीछे की ओर पैर रखते साथ-साथ भागते चलो। हनुमान् ने ऐसा ही किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोपद पयोधि करि, होलिका ज्यों लाय लंक,
निपट निसंक परपुर गलबल भो ।
द्रोन सो पहार लियो ख्याल ही उखारि कर,
कंदुक ज्यों कपिखेल बेल कैसो फल भो ॥
संकटसमाज असमंजस में रामराज,
काज जुग पूगनि को करतल पल भो ।
साहसी समत्थ तुलसी को नाह जाकी बाँह
लोकपाल पालन को फिरि थिर थल भो ॥६॥

कमठ की पीठि जाके गोड़नि की गाड़ै मानो,
नाप के भाजन भरि जलनिधि-जल भो ।
जातुधानदावन, परावन को दुर्ग भयो,
महामीनवास तिमि-तोमनि को थल भो ॥
कुंभकर्न-रावन-पयोदनाद ईंधन को,
तुलसी प्रताप जाको प्रबल अनल भो ।
भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान
सारिखो त्रिकाल न त्रिलोक महाबल भो ॥७॥

दूत रामराय को, सपूत पूत पौन को,
तू अंजनी को नंदन, प्रताप भूरि भानु सो ।
सीय-सोच-समन, दुरित-दोष-दमन, सरन
आए अवन, लखनप्रिय प्रान सो ॥
दसमुख दुसह दरिद्र दरिबे को भयो
प्रगट त्रिलोक ओक तुलसी निधान सो ।
ज्ञानगुनवान बलवान सेवा-सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो ॥८॥

दवन-दुवन-दल भुवनविदित बल,
बेद जस गावत बिबुध-बंदी-छोर को ।
पाप-ताप-तिमिर-तुहिन-विघटन पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोर को ॥

६—लाय = जला कर । कपिखेल बेल = कपिकच्छु, केवाँच नाम की लता । काज जुग ...पल भो = जुग भर में पूरा होने का काम (हनुमान के) करतल में हो गया । पूगना = पूजना, पूरा होना ।

८—अवन = रक्षा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक परलोक तें बिसोक, सपने न सोक,
तुलसी के हिए है भरोसो एक ओर को।
राम को दुलारो दास बामदेव को निवास,
नाम कलि-कामतरु केसरी-किसोर को ॥९॥

महाबलसीँव, महा भीम, महा बानइत,
महाबीर बिदित बरायो रघुबीर को।
कुलिस-कठोर-तनु, जोर परे रोर रन,
करुना-कलित मन धारमिक धीर को।
दुर्जन को काल सो कराल-पाल सज्जन को,
सुमिरे हरनहार तुलसी की पीर को।
सीय सुखदायक, दुलारो रघुनायक को,
सेवक सहायक है साहसी समीर को ॥१०॥

रचिबे को बिधि जैसे, पालिबे को हरि, हर
मीच मारिबे को, ज्याइबे को सुधापान भो।
धरिबे को धरनि, तरनि तम दलिबे को,
सोखिबे कृसानु, पोषिबे को हिमभानु भो॥
खल दुख दोषिबे को, जन परितोषिबे को,
माँगिबो मलीनता को मोदक सुदान भो।
आरत की आरति निवारिबे को तिहूँ पुर,
तुलसी को साहिब हठीलो हनुमान भो ॥११॥

सेवक स्योकाई जानि जानकीस मानै कानि,
सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाक को।
देवी देव दानव दयावने ह्वै जोरैं हाथ,
बापुरे बराक और राजा राना राँक को॥
जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आँक को।
सब दिन रुरो परै पूरो जहाँ तहाँ ताहि,
जाके है भरोसो हिए हाँक हनुमान को ॥१२॥

१०—बरायो = चुना हुआ।
१२—बराक = बेचारा। बागत = घूमते फिरते।

१४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सानुग सगौरि सानुकूल सूलपानि ताहि,
लोकपाल सकल लखन राम जानकी।
लोक परलोक को बिसोक सो बिलोकि ताहि,
तुलसी तमाहि ताहि काहू बीर आन की ? ॥
केसरी-किसोर, बंदीछोर को निवाजे, सब
कीरति बिमल कपि करुनानिधान की।
बालक ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ताको
जाके हिए हुलसति हाँक हनुमान की ॥१३॥
करुनानिधान, बलबुद्धि के निधान, मोद
महिमानिधान, गुनज्ञान के निधान हौ।
बामदेवरूप, भूप राम के सनेही, नाम
लेत देत अर्थ धर्म काम निरबान हौ ॥
आपने प्रभाव, सीतानाथ के सुभाव सील
लोक-वेद-विधि के विदूष हनुमान हौ।
मन की, बचन की, करम की तिहूँ प्रकार
तुलसी तिहारो तुम साहिब सुजान हौ ॥१४॥
मन को अगम, तन सुगम किए कपीस,
काज महाराज के समाज साज साजे हैं।
देव बंदीछोर रनरोर केसरीकिसोर,
जुग जुग जग तेरे बिरद बिराजे हैं ॥
बीर बरजोर, घटि जोर तुलसी की ओर,
सुनि सकुचाने साधु, खलगन गाजे हैं।
बिगरी-सँवारि अंजनीकुमार कीजे मोहिं,
जैसे होत आए हनुमान के निवाजे हैं ॥१५॥

मत्तगयंद

सुजान सिरोमनि हौ, हनुमान ! सदा जन के मन बास तिहारो।
ढारो बिगारो मैं काको कहा ? केहि कारन खीझत, हौं तो तिहारो ॥
साहिब सेवक नाते तें हातो कियो तो तहाँ तुलसी को न चारो।
दोष सुनाए ते आगेहुँ को हुसियार ह्वैहौं, मन तो हिय हारो ॥१६॥
तेरे थपे उथपै न महेस, थपै थिर को कपि जे घर घाले ?
तेरे निवाजे गरीबनिवाज बिराजत बैरिन के उर साले ॥

१—तमाहि = तमः ही, लालच ही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकट सोच सबै तुलसी लिए नाम फटै मकरी के-से जाले ।
बूढ़ भए, बलि, मेरेहि बार, कि हारि परे बहुतै नत पाले ॥१७॥
सिंधु तरे, बड़े बीर दले खल, जारे हैं लंक से बंक मवासे ।
तैं रनकेहरि केहरि के बिदले अरि-कुंजर छैल छवा से ॥
तोसों समत्थ सुसाहिब सेइ सहै तुलसी दुख-दोष दवा से ।
बानर-बाज ! बढ़े खल खेचर, लीजत क्यों न लपेटि लवा से ? ॥१८॥
अच्छ-विमर्दन कानन-भानि दसानन आनन भा न निहारो ।
बारिदनाद अकंपन कुंभकरन्न से कुंजर केहरि-वारो ॥
राम-प्रताप हुतासन, कच्छ विपच्छ, समीर समीर दुलारो ।
पाप तें, साप तें, ताप तिहूँ तें सदा तुलसी कहँ सो रखवारो ॥१९॥

घनाक्षरी

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिए ।
सेवा-जोग तुलसी कबहुँ ! कहा चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेब सँभारिए ॥
अपराधी जानि कीजै साँसति सहस भाँति,
मोदक मरै जो, ताहि माहुर न मारिए ।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजू के,
बाँहपीर महाबीर बेगि ही निवारिये ॥२०॥
बालक बिलोकि, बलि, बारे तें आपनो कियो,
दीनबंधु दया कीन्ही निरुपाधि न्यारिये ।
रावरो भरोसो तुलसी के, रावरोई बल,
आस रावरीयै, दास रावरो बिचारिए ॥
बड़ो बिकराल कलि, काको न बिहाल कियो ?
माथे पगु बली को, निहारि सो निवारिए ।
केसरीकिसोर, रन-रोर, बरजोर बीर,
बाहुपीर राहुमातु ज्यौं पछारि मारिए ॥२१॥
उथपे-थपन, थिरथपे-उथपनहार,
केसरी कुमार बल आपनो सँभारिए ।

१९—कच्छ = तनु का पेड़, जो जल्दी जलता है । बिपच्छ = शत्रु ।
२१—राहुमातु = छायाग्राहिणी । सिंहिका ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम के गुलामनि को कामतरु रामदूत,
मोसे दीन दूबरे को तकिया तिहारिए ॥
साहिब समर्थ तोसो तुलसी के माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु, बीर ! बाँधि मारिए ।
पोखरी बिसाल बाहु, बलि बारिचर पीर,
मकरी ज्यौं पकरि कै बदन बिदारिए ॥२२॥

राम को सनेह राम, साहस लखन, सिय
राम की भगति, सोच संकट निवारिए ।
मुद-मरकट रोग-बारिनिधि हेरि हारे,
जीव जामवंत को भरोसो तेरो भारिये ॥
कूदिए कृपाल तुलसी सु प्रेम-पब्बइ तें,
सुथल सुबेल भालू बैठि कै बिचारिए ।
महाबीर बाँकुरे बराकी बाहुपीर क्यों न
लंकिनी ज्यों लातघात ही मरोरि मारिए ॥२३॥

लोक परलोक हूँ, तिलोक न बिलोकियत
तो सो समरथ चख चारिहूँ निहारिए ।
कर्म काल, लोकपाल, अग जग जीवजाल,
नाथहाथ सब निज महिमा बिचारिए ॥
खास दास रावरो, निवास तेरो तासु उर,
तुलसी सो, देव ! दुखी देखियत भारिए ।
बात तरुमूल, बाहुसूल कपिकच्छ बेलि
उपजी, सकेलि, कपि, खेल ही उखारिए ॥२४॥

करम-कराल कंस भूमिपाल के भरोसे
बकी बक भगिनी काहू तें कहा डरैगी ? ।
बड़ी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
बाहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी ॥
आई है बनाइ बेख, आप तू बिचारि देख,
पाप जाय सब को गुनी के पाले परैगी ।

२२—तकिया = भरोसा ।
२३—बराकी = बापुरी, तुच्छ ।
२४—कपिकच्छुबेल=केवाँच नाम की लता जो बंदरों को बहुत प्रिय होती है ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूतना पिसाचिनी ज्यों कपि-कान्ह तुलसी की
बाहु-पीर महाबीर, तेरे मारे मरैगी ॥२५॥

भाल की, कि काल की, कि रोष की, त्रिदोष की है
बेदन विषम, पापताप छलछाँह की।
करमन कूट की कि जंत्र मंत्र बूट की,
पराहि जाहि, पापिनी! मलीन मन माहँ की ॥
पैहहि सजाय, नतु कहत बजाय तोहि
बावरी न होहि बानि जानि कपिनाह की।
आन हनुमान की, दोहाई बलवान की,
सपथ महाबीर की जो रहै पीर बाहँ की ॥२६॥

सिंहिका सँहारि, बलि, सुरसा सुधारि छल,
लंकिनी पछारि मारि, बाटिका उजारी है।
लंका परजारि, मकरी बिदारि, बार बार
जातुधान धारि धूरिधानी करि डारी है ॥
तोरि जमकातरि मँदोदरी कढ़ोरि आनी,
रावन की रानी मेघनाद महतारी है।
भीर बाहँपीर की निपट राखी महाबीर
कौन के सँकोच, तुलसी के सोच भारी है ॥२७॥

तेरी बालकेलि, बीर! सुनि सहमत धीर,
भूलत सरीर-सुधि सक्र रवि राहु की।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहु की ॥
साम दान भेद बिधि, बेदहु लबेद सिद्धि
हाथ कपिनाथ ही के चोटी चोर साहु की।
आलस, अनख, परिहास की सिखावन है!
एते दिन रही पीर तुलसी के बाहु की! ॥२८॥

टूकनि को घर घर डोलत कंगाल बोलि
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है।
कीन्हो है सँभार सार अंजनीकुमार बीर,
आपनो बिसारि हैं न, मेरे हूँ भरोसो है ॥
एतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिनाथ सांची कहौ को त्रिलोक तोसो है?।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँसति सहत दास कीजै पेखि परिहास,
चीरी को मरन खेल बालकनि को सो है ॥२६॥

आपने ही पाप तें त्रिताप तें, कि साप तें
बड़ी है बाहुबेदन, कही न सहि जाति है।
औषध अनेक जंत्र मंत्र टोटकादि किए,
बादि भए देवता, मनाए अधिकाति है ॥
करतार, भरतार, हरतार, कर्म, काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है।
चेरो तेरो तुलसी 'तू मेरो' कह्यो रामदूत,
ढील तेरी, बीर, मोहिं पीर तें पिराति है ॥३०॥

दूत रामराय को, सपूत पूत वाय को,
समरथ हाथ पाय को, सहाय असहाय को।
बाँकी बिरुदावलि विदित बेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मूठिका के घाय को ॥
एते बड़े साहेब समर्थ को निवाजो आजु
सीदत सुसेवक बचन मन काय को।
थोरी बाहुपीर की बड़ी गलानि तुलसी को,
कौन पाप कोप, लोप प्रगट प्रभाय को ? ॥३१॥

देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हैं ॥
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम
रामदूत की रजाइ माथे मानि लेत हैं।
घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुजोग रोग,
हनुमान आन सुनि छाँड़त निकेत हैं ॥
क्रोध कीजै कर्म को, प्रबोध कीजै तुलसी को,
सोध कीजै तिनको जो दोष दुख देत है ॥३२॥

तेरे बल बानर जिताए रन रावन सों,
तेरे घाले जातुधान भए घर घर के ॥
तेरे बल रामराज किए सब सुर-काज,
सकल समाज साज साजे रघुबर के ॥

३०—इताति = इताअत, आज्ञापालन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरे गुनगान सुनि गीरवान पुलकित,
सजल विलोचन विरंचि हरि हर के।
तुलसी के माथे पर हाथ फेरौ कीसनाथ,
देखिए न दास दुखी तो-से कनिगर के ॥३३॥

पालो तेरे टूक को, परे हूँ चूक मूकिए न,
कूर कौड़ी दू को हौं आपनी ओर हेरिए।
भोरानाथ भोरे हो, सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपने न अवडेरिए॥
अंबु तू, हौं अंबुचर, अंब तू, हौं डिंभ, सो न,
बूझिए विलंब अवलंब मेरे तेरिए।
वालक विकल जानि, पाहि, प्रेम पहिचानि
तुलसी की बाँह पर लामी लूम फेरिए॥३४॥

घेरि लियो रोगनि कुलोगनि कुजोगनि ज्यौं
वासर जलद घनघटा धुकि धाई है।
वरषत बारि पीर जानिए जवासे जस,
रोष विनु दोष, धूम-मूल, मलिनाई है॥
करुनानिधान हनुमान महा वलवान!
हेरि हँसि हाँकि फूंकि फौजैं तैं उड़ाई हैं।
खायो हुतो तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरी किसोर राखे बीर वरियाई है॥३५॥

मत्तगयंद

रामगुलाम तुही हनुमान गुसाइँ सुसाइँ सदा अनुकूलो।
पाल्यौ हौं बाल ज्यों आखर दू पितुमातु ज्यौं मंगलमोद समूलो॥
बाँह की बेदन, बाँहपगार! पुकारत आरत आनँदभूलो।
श्रीरघुबीर निवारिए पीर, रहौं दरवार परो लटि लूलो॥३६॥

३३—घर घर के भए = इधर उधर बेठिकाने हो गए। गीरवान = **गीर्वाण, देवता**। कनिगर = कानिवाला, जिसे अपनी मर्यादा की लज्जा हो।

३४—मूकना = छोड़ना, त्याग करना। अवडेरिए = उद्वास करना, **बसने या रहने न देना**। डिंभ = छोटा बच्चा।

३६—बाँह पगार = हे दृढ़ कोट के समान बाहुवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घनाक्षरी

काल की करालता, करमकठिनाई कीधौं,
पाप के प्रभाव, की सुभाय बाय बावरे।
बेदन कुभाँति सो सही न जाति राति-दिन,
सोई बाँह गही जो गही समीर-डावरे॥
लायो तरु तुलसी तिहारो, सो निहारि बारि
सोँचिए मलीन भो, तयो है तिहुँ ताव रे!
भूतनि की, आपनी, पराई, हे कृपानिधान!
जानियत सबही की रीति राम रावरे॥३७॥

पाँय-पीर, पेट-पीर बाहु-पीर, मुहँ-पीर,
जरजर सकल सरीर पीरमई है।
देव, भूत, पितर, करम, खल, काल, ग्रह,
मोहिँ पर दवरि दमानक सी दई है॥
हौं तो बिन मोल ही बिकानो, बलि, बारे ही तें,
ओट रामनाम की ललाट लिखि लई है।
कुंभज के किंकर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय! ऐसी हाल कहूँ भई है?॥३८॥

बाहुक-सुबाहु नीच, लीचर-मरीच मिलि,
मुँहपीर-केतुजा, कुरोग-जातुधान हैं।
रामनाम जपजाग कियो चाहौं सानुराग,
काल कैसे दूतभूत कहा मेरे मान हैं॥
सुमिरे सहाइ रामलखन आखर दोउ,
जिनके साकेसमूह जागत जहान हैं।
तुलसी सँभारि, ताड़का सँहारि, भारी भट
बेधे बरगद से बनाइ बानवान हैं॥३९॥

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत, माँगि खात टूकटाक हौं।

३७—डावरे = बच्चे, पुत्र।
३८—दमानक = तोपों की बाढ़।
३९—लीचर = लीचरपन, अशक्ति, शिथिलता। कहा मेरे मान हैं = क्या मेरे मान के हैं? क्या मेरे इख्तियार में हैं? अर्थात् मेरी सामर्थ्य के बाहर हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परयौ लोकरीति में, पुनीत प्रीति रामराय,
मोहवस बैठो तोरि तरकि तराक हौं ॥
खोटे खोटे आचरन आचरत अपनायो,
अंजनीकुमार, सोध्यो रामपानि पाक हौं ।
तुलसी गुसाइं भयो, भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं ॥४०॥

असन-वसन हीन, विषम-विषाद-लीन,
देखि दीन दूवरो करै न हाय हाय को ? ।
तुलसी अनाथ सों सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभाय को ॥
नीच यहि बीच पति पाइ भरुआइ गो,
विहाय प्रभुभजन वचन मन काय को ।
तातें तनु पेखियत घोर बरतोर मिस,
फूटि फूटि निकसत लोन रामराय को ॥४१॥

जीवौं जग जानकीजीवन को कहाय जन,
मरिबै को बारानसी, वारि सुरसरि को ।
तुलसी के दुहूँ हाथ मोदक हैं ऐसे ठाउँ.
जाके जिए मुए सोच करिहैं न लरिको ॥
मोको झूठो साँचो लोग राम को कहत सब,
मेरे मन मान है न हर को, न हरि को ।
भारी पीर दुसह सरीर तें विहाल होत,
सोऊ रघुबीर विनु सकै दूरि करि को ॥४२॥

सीतापति साहेब, सहाय हनुमान नित,
हित उपदेस को महेस मानो गुरु कै ।
मानस वचन काय सरन तिहारे पायँ,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुर कै ॥
व्याधि भूत-जनित उपाधि काहू खल की,
समाधि कीजै तुलसी को जानि जन फुर कै ।

४०—पाक = (फारसी) पवित्र ।
४१—पति = प्रतिष्ठा । भरुआइ गो = फूल उठा, इतरा गया, अपने को भारी समझने लगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कपिनाथ, रघुनाथ, भोलानाथ, भूतनाथ !
रोगसिंधु क्यों न डारियत गायखुर कै ? ॥४३॥
कहौं हनुमान सों, सुजान रामराय सों,
कृपानिधान संकर सों, सावधान सुनिए ।
हरष-बिषाद-राग रोष-गुन-दोष-मई,
बिरची बिरंचि सब देखियतु दुनिए ॥
माया जीव काल के, करम के, सुभाय के,
करैया राम, बेद कहैं, साँची मन गुनिए ।
तुमतें कहा न होय, हाहा ! सो बुझैये मोहिँ,
हौंहूँ रहौं मौन ही, बयो सो जानि लुनिए ॥४४॥

४३—समाधि कीजै = समाधान कीजिए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीतावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीतावली

राग आसावरी

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई।
रूप-सील-गुन-धाम राम नृप-भवन प्रगट भए आई ॥ १ ॥
अति पुनीत मधुमास, लगन ग्रह बार जोग समुदाई।
हरषवंत चर अचर भूमिसुर तनरुह पुलक जनाई ॥ २ ॥
बरषहि बिबुध-निकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई।
कौसल्यादि मातु मन हरषित, यह सुख बरनि न जाई ॥ ३ ॥
सुनि दसरथ सुत जन्म लिए सब गुरु जन विप्र बोलाई !
बेद-विहित करि क्रिया परम सुचि, आनँद उर न समाई ॥ ४ ॥
सदन बेद-धुनि करत मधुर मुनि, बहु विधि बाज बधाई।
पुरबासिन्ह प्रिय नाथ हेतु निज निज संपदा लुटाई ॥ ५ ॥
मनि, तोरन, बहु केतु पताकनि पुरी रुचिर करि छाई।
मागध सूत द्वार बंदीजन जहँ तहँ करत बड़ाई ॥ ६ ॥
सहज सिँगार किए बनिता चलीं मंगल बिपुल बनाई।
गावहिँ देहिँ असीस मुदित चिरजिवौ तनय सुखदाई ॥ ७ ॥
बीथिन्ह कुंकुम कीच, अरगजा अगर अबीर उड़ाई।
नाचहिँ पुर-नर-नारि प्रेम भरि देहदसा बिसराई ॥ ८ ॥
अमित धेनु गज तुरग बसन मनि जातरूप अधिकाई।
देत भूप अनुरूप जाहि जोइ, सकल सिद्धि गृह आई ॥ ९ ॥
सुखी भए सुर, संत, भूमिसुर, खलगन मन मलिनाई।
सबइ सुमन बिकसत रवि निकसत, कुमुद-बिपिन बिलखाई ॥१०॥
जो सुख सिंधु-सकृत-सीकर तें सिव बिरंचि प्रभुताई।
सोइ सुख अवध उमँगि रह्यो दस दिसि कौन जतन कहौं गाई ॥११॥
जे रघुबीर चरन चिंतक तिन्हकी गति प्रगट दिखाई !
अबिरल अमल अनूप भगति दृढ़ तुलसिदास तब पाई ॥१२॥१॥

१—११—सकृत = एक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग जैतश्री

सहेली, सुनु सोहिलो रे !
सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सब जग आज ॥
पूत सपूत कौसिला जायो, अचल भयो कुलराज ॥ १ ॥
चैत चारु नौमी तिथि, सितपख, मध्य-गगन-गत भानु ।
नखत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल मोद निधानु ॥ २ ॥
ब्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगल मूल ।
सुर दुंदुभी बजावहिँ, गावहिँ, हरषहिँ, बरषहिँ फूल ॥ ३ ॥
भूपति सदन सोहिलो सुनि बाजैँ गहगहे निसान ।
जहँ तहँ सजहिँ कलस धुज चामर तोरन केतु बितान ॥ ४ ॥
सीँचि सुगंध रचैँ चौके गृह आँगन गली बजार ।
दल फल फूल दूब दधि रोचन घर घर मंगलचार ॥ ५ ॥
सुनि सानंद उठे दसस्यंदन सकल समाज समेत ।
लिए बोलि गुरु सचिव भूमिसुर प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥
जातकर्म करि, पूजि पितर सुर, दिए महिदेवन दान ।
तेहि औसर सुत तीनि प्रगट भए मंगल, मुद, कल्यान ॥ ७ ॥
आनँद महँ आनंद अवध, आनंद बधावन होइ ।
उपमा कहौँ चारि फल की, मोहिँ भलो न कहै कवि कोइ ॥ ८ ॥
सजि आरती विचित्र थार कर जूथ जूथ बरनारि ।
गावत चलीं बधावन लै लै निज निज कुल अनुहारि ॥ ९ ॥
असही दुसही मरहु मनहिँ मन, बैरिन बढहु बिषाद ।
नृपसुत चारि चारु चिरजीवहु संकर-गौरि-प्रसाद ॥१०॥
लै लै ढोव प्रजा प्रमुदित चले भाँति भाँति भरि भार ।
करहिँ गान करि आन राय की, नाचहिँ राजदुवार ॥११॥
गज, रथ, बाजि, बाहिनी, बाहन सबनि सँवारे साज ।
जनु रतिपति रितुपति कोसलपुर बिहरत सहित समाज ॥१२॥
घंटा घंटि पखाउज आउज झाँझ बेनु डफ तार ।
नूपुर धुनि, मंजीर मनोहर, कर कंचन-झनकार ॥१३॥

२—१०—असही दुसही = द्वेषी, वैरी (जिन्हें भलाई असह्य या दुःसह हो) ।

२—११—ढोव = भेंट की वस्तु जो मंगल के अवसर पर भार में भर कर भेजते हैं । गान करि = गीतों में नाम ले ले कर ।

२—१३—आउज = तासा । तार = ताल, मँजीरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नृत्य करहिँ नट नटी, नारि नर अपने अपने रंग।
मनहुँ मदन-रति विविध बेष धरि नटत सुदेस सुढंग ॥१४॥
उघटहिँ छंद प्रबंध गीत पद राग तान बंधान।
सुनि किन्नर गंधर्ब सराहत, बिथके हैं बिबुध-बिमान ॥१५॥
कुंकुम अगर अरगजा छिरकहिँ भरहिँ गुलाल अबीर।
नभ प्रसून झरि, पुरी कोलाहल, भइ मनभावति भीर ॥१६॥
बड़ी वयस बिधि भयो दाहिनो सुर-गुरु-आसिरवाद।
दसरथ सुकृत-सुधासागर सब उमगे हैं तजि मरजाद ॥१७॥
ब्राह्मण वेद, बंदि बिरदावलि, जय धुनि मंगल गान।
निकसत पैठत लोग परसपर बोलत लगि लगि कान ॥१८॥
वारहिँ मुकुता रतन राजमहिषी पुर-सुमुखि समान।
बगरे नगर निछावरि मनिगन जनु जवारि जव धान ॥१९॥
कीन्हि बेदविधि लोकरीति नृप, मंदिर परम हुलास।
कौसल्या कैकयी सुमित्रा रहस-विवस रनिवास ॥२०॥
रानिन दिए बसन मनि भूपन, राजा सहन-भँडार।
मागध सूत भाट नट जाचक जहँ तहँ करहिँ कबार ॥२१॥
बिप्रवधू सनमानि सुआसिनि, जन पुरजन पहिराइ।
सनमाने अवनीस, असीसत ईस रमेस मनाइ ॥२२॥
अष्टसिद्धि नवनिद्धि भूति सब भूपति भवन कमाहिँ।
समउ समाज राज दसरथ को लोकप सकल सिहाहिँ ॥२३॥
को कहि सकै अवधवासिन को प्रेम प्रमोद उछाह।
सारद सेस गनेस गिरीसहिँ अगम, निगम अवगाह ॥२४॥
सिव बिरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत बड़े भूप के भाग।
तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि उमगि अनुराग ॥२५॥२॥

राग बिलावल

आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भए।
सदन सदन सोहिलो सोहावन नभ अरु नगर निसान हए ॥ १ ॥
सजि सजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समय सुभ गान ठए।
नाचहिँ नभ अपसरा मुदित मन पुनि पुनि बरषहिँ सुमन चए ॥ २ ॥

२—१५—उघटहिँ = बार बार एक ही पद को कहते हैं।
२—२१—सहनभँडार—बाहरी खजाना। कबार = लेन देन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अति सुख बेगि बोलि गुरु भूसुर भूपति भीतर भवन गए ।
जातकरम करि, कनक बसन, मनिभूषित सुरभि समूह दए ॥ ३ ॥
दल फल फूल दूब दधि रोचन जुवतिन्ह भरि भरि थार लए ।
गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह, बँदिन्ह बाँकुरे बिरद बए ॥ ४ ॥
कनक-कलस चामर पताक धुज जहँ तहँ बंदनवार नए ।
भरहिं अबीर, अरगजा छिरकहिं, सकल लोक एक रंग रए ॥ ५ ॥
उमँगि चल्यौ आनंद लोक तिहुँ, देत सबनि मंदिर रितए ।
तुलसिदास पुनि भरेइ देखियत, रामकृपा चितवनि चितए ॥ ६ ॥३॥

राग जयतश्री

गावैं बिबुध बिमल बरबानी ।
भुवन कोटि कल्यान-कंद जो जायो पूत कौसिला रानी ॥ १ ॥
मास पाख तिथि बार नखत ग्रह जोग लगन सुभ ठानी ।
जल थल गगन प्रसन्न साधु मन, दस दिसि हिय हुलसानी ॥ २ ॥
बरषत सुमन, बधाव नगर नभ, हरष न जात बखानी ।
ज्यों हुलास रनिवास नरसहिँ त्यों जनपद रजधानी ॥ ३ ॥
अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन बिगतबिषाद-गलानी ।
मिलेहि माँझ रावन रजनीचर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥
देव पितर गुरु विप्र पूजि नृप दिए दान रुचि जानी ।
मुनि-वनिता, पुरनारि सुआसिनि सहस भाँति सनमानी ॥ ५ ॥
पाइ अघाइ असीसत निकसत जाचक जन भए दानी ।
'यों प्रसन्न कैकयी सुमित्रहि होहु महेस भवानी' ॥ ६ ॥
दिन दूसरे भूप-भामिनि दोउ भईं सुमंगल-खानी ।
भयो सोहिलो सोहिलो मो जनु सृष्टि सोहिलो-सानी ॥ ७ ॥
गावत नाचत, मो मन भावत सुख सो अवध अधिकानी ।
देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद-अघानी ॥ ८ ॥
गान निसान कुलाहल कौतुक देखत दुनी सिहानी ।
हरि-बिरंचि-हर-पूर सोभा कुलि कोसलपुरी लोभानी ॥ ९ ॥
आनँद अवनि, राजरानी सब माँगहु कोखि जुड़ानी ।
आसिष दै दै सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥१०॥

३—४—बए = कहे ।
४—४—मिलेहि माँझ = साथ ही ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिभव-बिलास बाढ़ि दसरथ की देखि न जिनहिँ सोहानी।
कीरति, कुसल, भूति, जय, रिधि, सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी ॥११॥
छठी बारही लोक-बेद-बिधि करि सुबिधान बिधानी।
राम लखन रिपुदमन भरत धरे नाम ललित गुरु ग्यानी ॥१२॥
सुकृत-सुमन तिल-मोद बासि बिधि जतन-मंत्र भरि घानी।
सुख सनेह सब दियो दसरथहिँ खरि खलेल थिरथानी ॥१३॥
अनुदिन उदय उछाह उमग जग, घर घर अवध कहानी।
तुलसी राम-जनम-जस गावत सो समाज उर आनी ॥१४॥४॥

राग केदारा

घर घर अवध बधावने मंगल साज समाज।
सगुन सोहावन मुदित मन कर सब निज निज काज ॥

छंद—निज काज सजत सँवारि पुर-नर-नारि रचना अनगनी।
गृह, अजिर, अटनि, बजार, बीथिन्ह, चारु चौकैँ बिधि धनी ॥
चामर, पताक, बितान, तोरन, कलस, दीपावलि बनी।
सुख-सुकृत-सोभामय पुरी बिधि सुमति-जननी जनु जनी ॥ १ ॥

दो०—चैत चतुरदसि चाँदनी, अमल उदित निसिराज।
उडुगन अवलि प्रकासहीं, उमगत आनँद साज ॥

छंद—आनंद उमगत आजु, बिबुध बिमान बिपुल बनाइकै।
गावत, बजावत, नटत, हरषत, सुमन बरषत आइ कै ॥
नर निरखि नभ, सुर पेखि पुरछबि, परसपर सचु पाइकै।
रघुराज-साज सराहि लोचन-लाहु लेत अघाइकै ॥ २ ॥

दो०—जागिय राम छठी सजनि रजनी रुचिर निहारि।
मंगल मोदमढी मुरति नृप के बालक चारि ॥

छंद—मूरति मनोहर चारि बिरचि बिरंचि परमारथमई।
अनुरूप भूपति जानि पूजन-जोग बिधि संकर दई ॥
तिन्हकी छठी, मंजुलमठी, जग सरन जिन्हकी सरसई।
किए नींद भामिनि जागरन, अभिरामिनी जामिनि भई ॥ ३ ॥

दो०—सेवक सजग भए समय, साधन सचिव सुजान।
मुनिवर सिखए लौकिकौ बैदिक बिबिध बिधान ॥

४—१३—खलेल = तेल की मैल या गाद। थिरथानी = लोकपाल आदि स्थिर स्थानवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छंद—बैदिक बिधान अनेक लौकिक आचरत सुनि जानिकै ।
बलिदान पूजा मूल कामिनि साधि राखीं आनिकै ।।
जे देव देवी सेइयत हित लागि चित सनमानिकै ।
ते जंत्र मंत्र सिखाइ राखत सबनि सों पहिचानिकै ।। ४ ।।

दो०—सकल सुआसिनि गुरुजन पुरजन पाहुनलोग ।
बिबुध-बिलासिनि सुर मुनी जाचक जो जेहि जोग ।।
छंद—जेहि जोग जे तेहि भाँति ते पहिराइ परिपूरन किए ।
जय कहत देत असीस तुलसीदास ज्यों हुलसत हिए ।।
ज्यों आजु कालिहु परहुँ जागन होहिंगे नेवते दिए ।
ते धन्य पुन्य-पयोधि जे तेहि समै सुख-जीवन जिए ।। ५ ।।
दो०—भूप भाग बलि सुरबर नाग सराहि सिहाहिं ।
तिय-बरबेष अली रमा सिधि अनिमादि कमाहिं ।।
छंद—अनिमादि, सारद, सैलनंदिनि बाल लालहिं पालहीं ।
भरि जनम जे पाए न ते परितोष उमा रमा लहीं ।।
निज लोक बिसरे लोकपति, घर की न चरचा चालहीं ।
तुलसी तपत तिहुँ ताप जग, जनु प्रभुछठी छाया लही ।।६।।५।।

राग जयतश्री

बाजत अवध गहागहे आनंद-बधाए ।
नामकरन रघुबरनि के नृप सुदिन सोधाए ।।
पाय रजायसु राय को रिषिराज बोलाए ।
सिष्य सचिव सेवक सखा सादर सिर नाए ।।
साधु सुमति समरथ सबै सानंद सिखाए ।
जल दल फल मनि-मूलिका कुलि काज लिखाए ।। १ ।।
गनप गौरि हर पूजिकै गोबृंद दुहाए ।
घर घर मुद मंगल महा गुन-गान सुहाए ।।
तुरत मुदित जहँ तहँ चले मन के भए भाए ।
सुरपति-सासनु घन मनौं मारुत मिलि धाए ।। २ ।।
गृह आँगन चौहट गली बाजार बनाए ।
कलस चँवर तोरन धुजा सुबितान तनाए ।।

५—६—कमाहिं = सेवा या काम करती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चित्र चारु चौकैं रची लिखि नाम जनाए ।
भरि भरि सरवर वापिका अरगजा सनाए ॥ ३ ॥
नर-नारिन्ह पल चारि में सब साज सजाए ।
दसरथपुर छवि आपनी सुरनगर लजाए ॥
विबुध बिमान बनाइ कै आनंदित आए ।
हरषि सुमन बरषन लगे गए धन जनु पाए ॥ ४ ॥
बरे विप्र चहुँ बेद के रविकुल-गुरु ज्ञानी ।
आपु बसिष्ठ अथर्वणी, महिमा जग जानी ॥
लोक-रीति विधि बेद की करि कह्यो सुवानी—
'सिसु समेत बेगि बोलिए कौसल्या रानी' ॥ ५ ॥
सुनत सुआसिनि लै चलीं गावत बड़भागीं ।
उमा रमा सारद सची लखि सुनि अनुरागीं ॥
निज रुचि बेष बिरचि कै हिलिमिलि सँग लागीं ।
तेहि अवसर तिहुँ लोक की सुदसा जनु जागीं ॥ ६ ॥
चारु चौक बैठत भईं भूप भामिनि सोहैं ।
गोद मोद-मूरति लिए, सुकृती जन जोहैं ॥
सुखमा कौतुक कला देखि सुनि मुनि मन मोहैं ।
सो समाज कहैं बरनिकै ऐसे कवि को हैं ? ॥ ७ ॥
लगे पढ़न रच्छा-रिचा रिषिराज बिराजे ।
गगन सुमन-झरि, जयजय, बहु बाजन बाजे ॥
भए अमंगल लंक में, सब संकट गाजे ।
भुवन-चारिदस के बड़े दुख-दारिद भाजे ॥ ८ ॥
बाल बिलोकि अथर्वणी हँसि हरहिं जनायो ।
सुभ को सुभ, मोद मोद को, राम' नाम सुनायो ॥
आलबाल कल कौसिला, दल बरन सोहायो ।
कंद सकल आनंद को जनु अंकुर आयो ॥ ९ ॥
जोहि जानि जपि जोरि कै करपुट सिर राखे ।
'जय जय जय करुनानिधे ! ' सादर सुर भाखे ।
सत्यसंध साँचे सदा जे आखर आखे ।
प्रनतपाल पाए सही जे फल अभिलाखे ॥१०॥

६—५—बरे = वरण किया ।
६—१०—आखे = कहे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिदेव देव देखिकै नरदेव सुखारी।
बोलि सचिव सेवक सखा पट धारि भँडारी॥
देहु जाहि जोइ चाहिए सनमानि सँभारी।
लगे देन हिय हरषि कै हेरि हेरि हँकारी॥११॥
राम-निछावरि लेन को हठि होत भिखारी।
वहुरि देत तेहि देखिए मानहु धन-धारी॥
भरत, लखन, रिपुदवनहूँ धरे नाम विचारी।
फलदायक फल चारि के दसरथ-सुत चारी॥१२॥
भए भूप-वालकनि के नाम-निरूपन नीके।
सबै सोच संकट मिटे तव तें पुर-ती के॥
सुफल मनोरथ विधि किए सब विधि सवही के।
अब होइहै गाए सुने सब के तुलसी के॥१३॥६॥

राग विलावल

सुभग सेज सोभित कौसल्या रुचिर राम-सिसु गोद लिए।
बार बार विधुवदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किए॥ १॥
कबहुँ पौढ़ि पयपान करावति, कवहूँ राखति लाइ हिए।
बालकेलि गावति हलरावति, पुलकति प्रेम-पियूष पिए॥ २॥
विधि महेस मुनि सुर सिहात सब, देखत अंबुद ओट दिए।
तुलसिदास ऐसो सुख रघुपति पै काहू तो पायो न विए॥ ३॥ ७॥

राग सोरठ

ह्वै हौ लाल कवहिं बड़े वलि भैया।
राम लखन भावते भरत रिपुदवन चारु चारचो भैया॥ १॥
बाल-विभूषन-वसन मनोहर अँग नित विरचि वनैहौं।
सोभा निरखि निछावरि करि उर लाइ वारने जैहौं॥ २॥
छगन-मगन अँगना खेलिहौ मिलि ठुमुक ठुमुक कव धैहौ।
कलवल वचन तोतरे मंजुल कहि "माँ" मोहिं बुलैहौ॥ ३॥
पुरजन सचिव राउ रानी सव सेवक सखा सहेली।
लैहैं लोचन-लाहु सुफल लखि ललित मनोरथ-वेली॥ ४॥

६—११—नरदेव = राजा।
६—१२—धनधारी = कुबेर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सुख की लालसा लटू सिव, सुक, सनकादि उदासी ।
तुलसी तेहि सुखसिंधु कौसिला मगन, पै प्रेम-पियासी ॥५॥८॥

पगनि कब चलिहौ चारौ भैया ?
प्रेम-पुलकि उर लाइ सुवन सब कहति सुमित्रा मैया ॥ १ ॥
सुंदर तनु सिसु-वसन-विभूषन नखसिख निरखि निकैया ।
दलि तृन, प्रान निछावरि करि करि लैहैं मातु बलैया ॥ २ ॥
किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहरतैया ।
मनि-खंभनि प्रतिबिंब-झलक, छवि छलकिहै भरि अँगनैया ॥ ३ ॥
बालविनोद, मोद मंजुल विधु, लीला ललित जोन्हैया ।
भूपति पुन्य-पयोधि उमँग, घर घर आनंद बधैया ॥ ४ ॥
ह्वैहैं सकल सुकृत-सुख-भाजन लोचन लाहु लुटैया ।
अनायास पाइहैं जनमफल तातरे बचन सुनैया ॥ ५ ॥
भरत, राम, रिपुदवन, लखन के चरित-सरित अन्हवैया ।
तुलसी तब के से अजहुँ जानिए रघुबर-नगर-बसैया ॥६॥९॥

राग केदारा

चुपरि उबटि अन्हवाइकै नयन आँजे,
रचि रुचि तिलक गोरोचन को कियो है ।
भ्रूपर अनूप मसिबिंदु, बारे बारे बार,
बिलसत सीस पर हेरि हरै हियो है ॥१॥
मोद-भरो गोद लिये लालति सुमित्रा देखि,
देव कहैं सबको, सुकृत उपवियो है ।
मातु, पितु, प्रिय, परिजन, पुरजन धन्य,
पुन्यपुंज पेखि पेखि प्रेमरस पियो है ॥२॥
लोहित ललित लघु चरन-कमल चारु,
चाल चाहि सो छबि सुकबि जिय जियो है ।
बालकेलि बातबस झलकि झलमलत
सोभा की दीयटि मानो रूप दीप दियो है ॥३॥
राम-सिसु सानुज चरित चारु गाइ सुनि,
सुजनन सादर जनम-लाहु लियो है ।
तुलसी बिहाइ दसरथ दसचारिपुर,
ऐसे सुखजोग बिधि बिरच्यो न बियो है ॥४॥१०॥

१०—उपवियो है = उदय हुआ है । दीप = दीप्त, चमकता हुआ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम-सिसु गोद-महामोद भरे दसरथ,
कौसिलाहु ललकि लखन लाल लए हैं।
भरत सुमित्रा लए, कैकयी सत्रुसमन,
तन प्रेम-पुलक, मगन मन भए हैं ॥१॥
मेढ़ी लटकन मनि-कनक-रचित, बाल-
भूषन बनाइ आछे अंग अंग ठए हैं।
चाहि चुचुकारि चूमि लालत, लावत उर,
तैसे फल पावत जैसे सुबीज बए हैं ॥२॥
घनओट बिबुध बिलोकि बरखत फूल,
अनुकूल बचन कहत नेह नए हैं।
ऐसे पितु, मातु, पूत, प्रिय, परिजन बिधि,
जानियत आयु भरि येई निरमए हैं ॥३॥
'अजर अमर होहु' 'करौ हरि हर छोहु'
जरठ जठेरिन्ह आसिरबाद दए हैं।
तुलसी सराहैं भाग तिन्हके जिन्हके हिए,
डिभ-रामरूप - अनुराग - रंग रए हैं ॥४॥११॥

राग आसावरी

आजु अनरसे हैं भोर के, पय पियत न नीके।
रहत न बैठे ठाढ़े, पालने झुलावतहू, रोवत राम मेरो, सो सोच सबही के ॥
देव, पितर, ग्रह पूजिए तुला तौलिए घी के।
तदपि कबहुँ कबहुँक सखी ऐसेहि अरत जब परत दृष्टि दुष्ट ती के ॥
बेगि बोलि कुलगुरु छुओ माथे हाथ अमी के।
सुनत आइ रिषि कुस हरे नरसिंह मंत्र पढ़े, जो सुमिरत भय भी के ॥
जासु नाम सर्बस सदासिव पारबती के।
ताहि झरावति कौसिला, यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के ॥
माथे हाथ रिषि जब दियो राम किलकन लागे।
महिमा समुझि, लीला बिलोकि, गुरु सजल नयन, तनु पुलक, रोम रोम जागे ॥

११—मेढ़ी = आगे के बाल को दोनों ओर गूँथकर बीच की चोटी के साथ बांध देते हैं, जिसे मेढ़ी कहते हैं।
१२—भी = डर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए गोद, धाए गोद तें मोद मुनि मन अनुरागे ।
निरखि मातु हरषी हिए आली ओट कहति मृदु वचन प्रेम के-से पागे ॥
तुम्ह सुरतरु रघुबंस के, देत अभिमत माँगे ।
मेरे विसेषि गति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल अमंगल भागे ॥
अमिय-विलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए ।
तब तें राम अरु भरत लषन रिपुदवन, सुमुखि सखि ! सकल सुवन सुख सोए ॥
सुमित्रा लाय हिए फनि मनि ज्यों गोए ।
तुलसी नेवछावर करति मातु अति प्रेम मगन मन, सजल सुलोचन कोए ॥
मातु सकल, कुलगुरु-वधू, प्रिय सखी सुहाई ।
सादर सब मंगल किए महि-मनि-महेस पर सवनि सुधेनु दुहाई ॥
बोलि भूप भूसुर लिए अति विनय बड़ाई ।
पूजि पायँ सनमानि दान दिए लहि असीस सुनि बरषैं सुमन सुरसाईं ॥
घर घर पुर बाजन लगीं आनंद बधाई ।
सुख सनेह तेहि समय को तुलसी जानै जाको चोरयो है चित चहुँ भाई ।१२॥

राग धनाश्री

या सिसु के गुन नाम बड़ाई ।
को कहि सकै सुनहु नरपति श्रीपति समान प्रभुताई ॥
जद्यपि बुधि, वय, रूप, सील, गुन समय चारु चारयो भाई ।
तदपि लोल-लोचन-चकोर-ससि राम भगत-सुखदाई ॥
सुर, नर, मुनि करि अभय, दनुज हति, हरिहि धरनि गरुआई ।
कीरति बिमल विस्व-अघमोचनि रहिहि सकल जग छाई ॥
याके चरन-सरोज कपट तजि जे भजिहैं मन लाई ।
ते कुल जुगल सहित तरिहैं भव, यह न कछू अधिकाई ॥
सुनि गुरुबचन पुलक तन दंपति, हरष न हृदय समाई ।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख प्रभु मन में मुसुकाई ॥१३॥

राग बिलावल

अवध आजु आगमी एकु आयो ।
करतल निरखि कहत सब गुनगन, बहुत न परिचौ पायो ॥
बूढ़ो बड़ो प्रमानिक ब्राह्मन संकर नाम सुहायो ।
संग सुसिष्य, सुनत कौसल्या भीतर भवन बुलायो ॥
पाँय पखारि पूजि दियो आसन, असन बसन पहिरायो ।
मेले चरन चारु चारयो सुत, माथे हाथ दिवायो ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नखसिख बाल बिलोकि बिप्रतनु पुलक, नयन जल छायो ।
लै लै गोद कमल-कर निरखत, उर प्रमोद न अमायो ।।
जनम प्रसंग कह्यो, कौसिक मिसि सीय स्वयंबर गायो ।
राम, भरत, रिपुदवन, लखन को जय सुख सुजस सुनायो ।।
तुलसिदास रनिवास रहसवस, भयो सबको मन भायो ।
सनमान्यौ महिदेव असीसत सानँद सदन सिधायो ।।१४।।

राग केदारा

पौढ़िए लालन, पालने हौं झुलावौं ।
कर, पद, मुख, चख कमल लसत लखि लोचन-भँवर भुलावौं ।।
बाल-बिनोद-मोद मंजुलमनि किलकनि खानि खुलावौं ।
तेइ अनुराग ताग गुहिबे कहँ मति मृगनयनि बुलावौं ।।
तुलसी भनित भली भामिनि उर सो पहिराइ फुलावौं ।
चारु चरित रघुवर तेरे तेहि मिलि गाइ चरन चितु लावौं ।।१५।।

सोइए लाल लाडिले रघुराई ।
मगन मोद लिए गोद सुमित्रा बार बार बलि जाई ।।
हँसे हँसत, अनरसे अनरसत, प्रतिबिंबनि ज्यों झाँई ।
तुम सबके जीवन के जीवन, सकल सुमंगलदाई ।।
मूल मूल, सुरबीथि-बेलि, तम-तोम-सुदल अधिकाई ।
नखत-सुमन, नभ-बिटप बौंडि मानो छपा छिटकि छबि छाई ।।
हौ जँभात अलसात, तात ! तेरी बानि जानि मैं पाई ।
गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुख नीँदरी सुहाई ।।
बछरु छबीलो छगन-मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई ।
सानुज हिय हुलसति तुलसी के प्रभु की ललित लरिकाई ।।१६।।

ललन लोने लेरुआ, बलि मैया ।
सुख सोइए नींद बेरिया भई चारु-चरित चारचौ भैया ।।
कहति मल्लाइ लाइ उर छिन छिन छगन छबीले छोटे छैया ।
मोद-कंद कुल-कुमुद-चंद्र मेरे रामचंद्र रघुरैया ।।
रघुबर बालकेलि संतन की सुभग सुभद सुरगैया ।
तुलसी दुहि पीवत सुख जीवत पय सप्रेम घनी घैया ।।१७।।

१४—आगमी = दैवज्ञ, ज्योतिषी ।
१७—लेरुआ = बछवा । घैया=थन से निकलती हुई दूध की धार ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख नींद कहति आलि आइहौं ।
राम, लखन, रिपुदवन, भरत सिसु करि सब सुमुख सोआइहौं ॥
रोवनि, धोवनि, अनखानि, अनरसनि, डिठि-मुठि निठुर नसाइहौं ।
हँसनि, खेलनि, किलकनि, आनंदनि भूपति-भवन बसाइहौं ॥
गोद विनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहौं ।
तनु तिल तिल करि वारि राम पर लैहौं रोग बलाइ हौं ॥
रानी राउ सहित सुत परिजन निरखि नयन-फल पाइहौं ।
चारु चरित रघुबंस-तिलक के तहँ तुलसी मिलि गाइहौं ॥१८॥

राग आसावरी

कनक-रतन-मय पालनो रच्यो मनहुँ मार-सुतहार ।
बिबिध खेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुकुताहार ॥
रघुकुल-मंडन राम लला ॥१॥
जननि उबटि अन्हवाइकै मनिभूषन सजि लिए गोद ।
पौढ़ाए पटु पालने, सिसु निरखि मगन मन मोद ॥
दसरथनंदन राम लला ॥२॥
मदन, मोर कै चंद की झलकनि निदरति तनु-जोति ।
नील कमल, मनि जलद की उपमा कहे लघु मति होति ॥
मातु-सुकृत-फल राम लला ॥३॥
लघु लघु लोहित ललित हैं पद, पानि, अधर एक रंग ।
को कवि जो छवि कहि सकै नखसिख सुंदर सब अंग ॥
परिजन-रंजन राम लला ॥४॥
पग नूपुर, कटि किंकिनी, कर कंकन पहुँची मंजु ।
हिय हरिनख अद्भुत बन्यौ मनो मनसिज मनि-गन-गंजु ॥
पुरजन-सिरमनि राम लला ॥५॥
लोयन नील सरोज-से, भ्रू पर मसि-बिंदु बिराज ।
जनु बिधु-मुख-छवि-अमिय को रच्छक राखे रसराज ॥
सोभासागर राम लला ॥६॥

१८—डिठि मुठि = डीठ मूठ, नजर और टोना ।
१९—१—सुतहार = खाट बीननेवाला बढ़ई ।
१९—६—मसिबिंदु = डिठौना ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गभुआरी अलकावली लसै, लटकन ललित ललाट।
जनु उडुगन विधु मिलन को चले तम विदारि करि बाट ॥
सहज सोहावनो राम लला ॥७॥
देखि खेलौना किलकहीं पद पानि विलोचन लोल।
विचित्र विहँग अलि जलज ज्यौं सुखमा-सर करत कलोल ॥
भगत-कल्पतरु राम लला ॥८॥
बाल-बोल विनु अरथ के सुनि देत पदारथ चारि।
जनु इन्ह बचनन्हि तें भए सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥
नाम-कामधुक राम लला ॥९॥
सखी सुमित्रा वारहीं मनि भूषन बसन विभाग।
मधुर झुलाइ मल्हावहीं गावैं उमँगि उमँगि अनुराग ॥
हैं जन-मंगल राम लला ॥१०॥
मोती जायो सीप में अरु अदिति जन्यो जग-भानु।
रघुपति जायो कौसिला गुन-मंगल-रूप-निधानु ॥
भुवन-विभूषन राम लला ॥११॥
राम प्रगट जब तें भए गए सकल अमंगल मूल।
मीत मुदित, हित उदित हैं,नित बैरिन के चित सूल ॥
भव-भय-भंजन राम लला ॥१२॥
अनुज सखा सिसु संग लै खेलन जैहैं चौगान।
लंका खरभर परैगो, सुरपुर बाजिहैं निसान ॥
रिपुगन-गंजन राम लला ॥१३॥
राम अहेरे चलहिंगे जब गज रथ बाजि सँवारि।
दसकंधर उर धकधकी अब जनि धावै धनु धारि ॥
अरि-करि-केहरि राम लला ॥१४॥
गीत सुमित्रा सखिन्ह के सुनि सुनि सुर मुनि अनुकूल।
दै असीस जय जय कहैं हरषैं बरषैं फूल ॥
सुर-सुखदायक राम लला ॥१५॥
बालचरित-मय चंद्रमा यह सोरह-कला-निधान।
चित चकोर तुलसी कियो कर प्रेम-अमिय-रस पान ॥
तुलसी को जीवन राम लला ॥१६॥१९॥

१९—७—गभुआरी = [सं० गर्भ, प्रा० गब्भ + प्र० आर] गर्भ अर्थात् पेट की।

१९—९—कामधुक = कामधेनु।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग कान्हरा

पालने रघुपतिहिँ झुलावै ।
लै लै नाम सप्रेम सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ।।
केकिकंठ दुति, स्याम वरन वपु, वाल-विभूषन विरचि वनाए ।
अलकैं कुटिल, ललित लटकन भ्रु, नील नलिन दोउ नयन सुहाए ।।
सिसु सुभाय सोहत जव कर गहि वदन निकट पद-पल्लव लाए ।
मनहुँ सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत सुधा ससि सों सचु पाए ।।
उपर अनूप विलोकि खेलौना किलकत पुनि पुनि पानि पसारत ।
मनहुँ उभय अंभोज अरुन सों विधु-भय विनय करत अति आरत ।।
तुलसिदास वहु-वास-विवस अलि गुंजत सुछवि न जाति वखानी ।
मनहुँ सकल स्रुति रिचा मधुप ह्वै विसद सुजस वरनत वर वानी।।२०।।

राग विलावल

झूलत राम पालने सोहैं ।
भूरि-भाग जननी जन जोहैं ।।
तन मृदु मंजुल मेचकताई ।
झलकति वाल विभूषन झाँई ।।
अधर पानि पद लोहित लोने ।
सर-सिंगार-भव सारस सोने ।।
किलकत निरखि विलोल खेलौना।
मनहुँ विनोद लरत छवि छौना ।।
रंजित अंजन कंज-विलोचन ।
भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ।।
लस मसिविंदु वदन-विधु नीको ।
चितवत चित चकोर तुलसी को ।।२१।।

राग कल्याण

राजत सिसुरूप राम सकल गुन निकाय धाम,
कौतुकी कृपालु ब्रह्म जानु-पानि - चारी ।
नीलकंज जलदपुंज मरकतमनि सरिस स्याम,
काम कोटि सोभा अँग अंग उपर वारी ।।
हाटक-मनि-रत्न-खचित रचित इंद्र-मंदिराभ,
इंदिरानिवास सदन विधि रच्यो सँवारी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहरत नृप-अजिर अनुज सहित बालकेलि कुसल,
नील जलज-लोचन हरि मोचन भय भारी।
अरुन चरन अंकुस धुज कंज कुलिस चिन्ह रुचिर,
भ्राजत अति नूपुर बर मधुर मुखरकारी।
किंकिनी विचित्र जाल, कंबुकंठ ललित माल,
उर विसाल केहरि नख, कंकन कर धारी॥
चारु चिबुक नासिका कपोल, भाल तिलक, भ्रुकुटि,
स्रवन अधर सुंदर, द्विज-छवि अनूप न्यारी।
मनहुँ अरुन कंजकोस मंजुल जुगपाँति प्रसव,
कुंदकली जुगल जुगल परम सुभ्रवारी।
चिक्कन चिकुरावली मनो षडंघ्रि-मंडली
बनी, विसेषि गुंजत जनु बालक किलकारी।
इक टक प्रतिबिंब निरखि पुलकत हरि हरषि हरषि,
लै उछंग जननी रस-भंग जिय विचारी॥
जा कहँ सनकादि संभु नारदादि सुक मुनींद्र,
करत विविध जोग, काम क्रोध लोभ जारी।
दसरथ गृह सोइ उदार, भंजन संसार-भार,
लीला अवतार तुलसिदास त्रासहारी॥२२॥

राग कान्हरौ

आँगन फिरत घुटुरुवनि धाए।
नील-जलज-तनु-स्याम राम सिसु जननि निरखि मुख निकट बोलाए॥१॥
बंधुक-सुमन - अरुन पदपंकज अंकुस प्रमुख चिन्ह बनि आए।
नूपुर जनु मुनिवर-कलहंसनि रचे नीड़, दै बाँह बसाए॥२॥
कटि मेखल, बर हार, ग्रीव-दर रुचिर बाँह भूषन पहिराए।
उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए॥३॥
सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका स्रवन कपोल मोहिँ अति भाए।
भ्रू सुंदर करुनारस-पूरन, लोचन मनहुँ जुगल जलजाए॥४॥

२२—जानु पानि-चारो = घुटनों के बल चलनेवाले। षडंघ्रि = षट्पद, भौंरा।
२३—२—नीड़ = घोसला।
२३—४—जलजाए = जलजात, कमल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाल बिसाल ललित लटकन वर, बालदसा के चिकुर सोहाए।
मनु दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥
उपमा एक अभूत भई तव जब जननी पट पीत ओढ़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत तजि सुभाव मनों तड़ित छपाए ॥६॥
अंग अंग पर मार-निकर मिलि छविसमूह लै लै जनु छाए।
तुलसिदास, रघुनाथ-रूप-गुन तौ कहौं जौ बिधि होहिँ बनाए ॥७॥२३॥

राग केदारा

रघुवर-बाल छवि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव, कोटि मनोज-सोभाहरनि ॥१॥
बसी मानहुँ चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किंकिनी मन हरति रुनझुनु करनि ॥ २ ॥
मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिंगार सिसु-तरु फर्यो है अद्भुत फरनि ॥३॥
भुजनि भुजंग, सरोज नयननि, वदन विधु जित्यो लरनि।
रहे कुहरनि, सलिल, नभ उपमा अपर दुरि डरनि ॥४॥
लसत कर प्रतिबिंब मनि-आँगन घुटुरुवनि चरनि।
जलज-संपुट सुछवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥
पुन्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथ-घरनि।
बसति तुलसी-हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि ॥६॥२४॥

नेकु बिलोकि धौं रघुवरनि।
चारि फल त्रिपुरारि तोको दिए कर नृप-घरनि ॥१॥
बाल-भूषन-वसन, तन सुंदर रुचिर रज-भरनि।
परसपर खेलनि अजिर, उठि चलनि, गिरि गिरि परनि ॥२॥
झुकनि झाँकनि, छाँह सों किलकनि, नटनि, हठि लरनि।
तोतरी बोलनि, बिलोकनि मोहिनी मनहरनि ॥३॥
सखि वचन सुनि कौसिला लखि सुढर पासे ढरनि।
लेति भरि भरि अंक सैंतति पैंत जनु दुहुँ करनि ॥४॥
चरित निरखत बिबुध तुलसी ओट दै जलधरनि।
चहत सुर सुरपति भयो, सुरपति भयो चहै तरनि ॥५॥२५॥

२५—४—सैंतना = संचय और रक्षा करना। पैंत = दाँव में रखा हुआ द्रव्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग जयतश्री

भूमितल भूप के बड़े भाग ।
राम लखन रिपुदमन भरत सिसु निरखत अति अनुराग ॥१॥
बाल-बिभूषन लसत पायँ मृदु मंजुल अंग-बिभाग ।
दसरथ सुकृत-मनोहर-बिरवनि रूप करह जनु लाग ॥२॥
राजमराल बिराजत बिहरत जे हर-हृदय-तड़ाग ।
ते नृप-अंजिर जानु-कर धावत धरन चटक चल काग ॥३॥
सिद्ध सिहात, सराहत मुनिगन, कहैं सुर किन्नर नाग ।
"ह्वै बरु बिहँग बिलोकिय बालक बसि पुर उपवन बाग" ॥४॥
परिजन सहित राय रानिन्ह कियो मज्जन प्रेम-प्रयाग ।
तुलसी फल ताके चारयो मनि मरकत पंकजराग ॥५॥२६॥

राग आसावरी

छँगन-मँगन अँगना खेलत चारु चारयो भाई ।
सानुज भरत लाल लखन राम लोने लोने,
लरिका लखि मुदित मातु-समुदाई ॥१॥
बाल-बसन-भूषन धरे नखसिख छबि छाई ।
नील पीत मनसिज, सरसिज मंजुल,
मालनि मानो है देहनि तें दुति पाई ॥२॥
ठुमुक ठुमुक पग धरनि, नटनि, लरखरनि सुहाई ।
भजनि मिलनि रूठनि तूठनि किलकनि,
अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ॥३॥
जननि सकल चहुँ ओर आलबाल मनि-अँगनाई ।
दसरथ सुकृत-बिबुध-बिरवा बिलसत,
बिलोकि जनु बिधि बर बारि बनाई ॥४॥
हरि बिरंचि हर हेरि राम प्रेम-परबसताई ।
सुख-समाज रघुराज के बरनत,
बिसुद्ध मन सुरनि सुमन झरि लाई ॥५॥

२६—२—करह = नया कल्ला ।
२६—५—पंकजराग = पद्मराग, मानिक ।
२७—४—बिबुध-बिरवा = कल्पवृक्ष ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुमिरत श्रीरघुवरन की लीला लरिकाई।
तुलसिदास अनुराग अवध आनँद,
अनुभवत तव को सो अजहुँ अघाई ॥६॥२७॥

राग बिलावल

आँगन खेलत आनँदकंद।
रघुकुल कुमुद सुखद चारु चंद।
सानुज भरत लखन सँग सोहैं।
सिसु-भूषन भूषित मन मोहैं॥
तन दुति मोरचंद जिमि झलकैं।
मनहु उमँगि अँग अँग छवि छलकैं ॥१॥
कटि किंकिनि, पग पैंजनि वाजैं।
पंकज-पानि पहुँचियाँ राजैं॥
कठुला कंठ बघनहा नीके।
नयन-सरोज मयन-सरसी के ॥२॥
लटकन लसत ललाट लटूरी।
दमकति द्वै द्वै दँतुरियाँ रूरी॥
मुनि-मन हरत मंजु मसि-बुंदा।
ललित बदन, बलि, बालमुकुंदा ॥३॥
कुलही चित्र-विचित्र झँगूली।
निरखत मातु मुदित मन फूली॥
गहि मनि खंभ डिंभ डगि डोलत।
कलबल बचन तोतरे बोलत ॥४॥
किलकत झुकि झाँकत प्रतिबिंबनि।
देत परम सुख पितु अरु अंबनि॥
सुमिरत सुखमा हिय हुलसी है।
गावत प्रेम पुलकि तुलसी है ॥५॥२८॥

राग कान्हरा

ललित सुतहि लालति सचु पाए।
कौसल्या कल कनक अजिर महँ सिखवति चलन अँगुरियाँ लाए ॥१॥
कटि किंकिनी, पैंजनी पाँयनि बाजति रुनझुनु मधुर रेंगाए।
पहुँची करनि, कंठ कठुला बन्यो केहरिनख मनि-जरित जराए ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीत पुनीत बिचित्र झँगुलिया सोहति स्याम सरीर सोहाए।
दँतियाँ द्वै द्वै मनोहर मुखछवि, अरुन अधर चित लेत चोराए ॥३॥
चिबुक कपोल नासिका सुंदर, भाल तिलक मसिबिंदु बनाए।
राजत नयन मंजु अंजनजुत खंजन कंज मीन मद नाए ॥४॥
लटकन चारु भ्रुकुटिया टेढ़ी, मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाए।
किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि, डरपति जननि पानि छुटकाए ॥५॥
गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देखाए।
बाल-केलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनँद न अमाए ॥६॥
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराए।
तुलसिदास जे रसिक न एहि रस ते जन जड़ जीवन जग जाए ॥७॥२९॥

राग ललित

छोटी छोटी गोड़ियाँ अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-जोति मोती मानो कमल-दलनि पर।
ललित आँगन खेलैं, ठुमुकु ठुमुकु चलैं,
झुंझुनु झुंझुनु पाँय पैंजनी मृदु मुखर॥
किंकिनी कलित कटि हाटक-जटित मनि,
मंजु कर कंजनि पहुँचियाँ रुचिरतर।
पियरी झीनी झँगुली साँवरे सरीर खुली,
बालक दामिनि ओढ़ी मानो बारे बारिधर ॥१॥

उर बघनहा, कंठ कठुला, झँडूले केस,
मेढ़ी लटकन मसिबिंदु मुनि-मन-हर।
अंजन-रंजित नैन, चित चोरै चितवनि,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असमसर॥
चुटकी बजावती नचावती कौसल्या माता,
बालकेलि गावति मल्हावति सुप्रेम-भर।
किलकि किलकि हँसैं, द्वै द्वै दँतुरियाँ लसैं,
तुलसी के मन बसैं तोतरे बचन बर ॥२॥३०॥

सादर सुमुखि बिलोकि राम-सिसु, रूप अनूप भूप लिए कनियाँ।
सुंदर स्याम-सरोज-बरन तनु, नखसिख सुभग सकल सुखदनियाँ ॥१॥
अरुन चरन नखजोति जगमगति, रुनुझुनु करति पाँय पैजनियाँ।
कनक-रतन मनि-जटित रटति कटि किंकिनि, कलित पीतपट-तनियाँ॥२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुँची करनि, पदिक हरिनख उर, कठुला कंठ, मंजु गजमनियाँ ।
रुचिर चिबुक, रद अधर मनोहर, ललित नासिका लसति नथुनियाँ ॥३॥
विकट भ्रुकुटि सुखमानिधि आनन कल कपोल काननि नगफनियाँ ।
भाल तिलक मसिबिंदु बिराजत, सोहति सीस लाल चौतनियाँ ॥४॥
मनमोहनी तोतरी बोलनि, मुनि-मन-हरनि हँसनि किलकनियाँ ।
बाल सुभाय बिलोल बिलोचन, चोरति चितहि चारु चितवनियाँ ॥५॥
सुनि कुलवधू झरोखनि झाँकति रामचंद्र-छवि चंदवदनियाँ ।
तुलसिदास प्रभु देखि मगन भई प्रेमविवस कछु सुधि न अपनियाँ ॥६॥३१॥

राग विलावल

सोहत सहज सुहाए नैन ।
खंजन मीन कमल सकुचत तव जव उपमा चाहत कवि दैन ॥१॥
सुंदर सव अंगन सिसु-भूषन राजत जनु सोभा आए लैन ।
बड़ो लाभ, लालची लोभ वस रहि गए लखि सुखमा बहु मैन ॥२॥
भोर भूप लिए गोद मोद भरे, निरखत वदन, सुनत कल बैन ।
बालक-रूप अनूप राम-छवि निवसति तुलसिदास-उर-ऐन ॥३॥३२॥

राग-विभास

भोर भयो जागहु , रघुनंदन !
गत-ब्यलीक, भगतनि-उर-चंदन ॥
ससि करहीन, छीनदुति तारे ।
तमचुर मुखर, सुनहु मेरे प्यारे ! ॥
विकसित कंज, कुमुद बिलखाने ।
लै पराग - रस मधुप उड़ाने ॥
अनुजसखा सव बोलनि आए ।
बंदिन्ह अति पुनीत गुन गाए ॥
मनभावतो कलेऊ कीजै ।
तुलसिदास कहँ जूँठनि दीजै ॥३३॥

राग विभास

प्रात भयो तात, बलि, मातु, विधु वदन पर,
मदन वारौं कोटि, उठौ प्रानप्यारे ! ।
सूत मागध बंदि बदत विरुदावली,
द्वार सिसु-अनुज प्रियतम तिहारे ।

३३—ब्यलीक = कपट ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोक गतसोक अवलोकि ससि छीनछवि,
अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे।
मनहुँ रवि-बाल-मृगराज तमनिकर-करि
दलित, अति ललित मनिगन बिथारे।
सुनहु तमचुर मुखर, कीर कलहंस पिक,
केकि रव कलित, बोलत विहंग बारे ॥३४॥

मनहुँ मुनिबृंद, रघुबंसमनि! रावरे
गुनत गुन आस्रमनि सपरिवारे।
सरनि विकसित कंजपुंज मकरंद वर,
मंजुतर मधुर मधुकर गुँजारे।
मनहुँ प्रभुजन्म सुनि चैन अमरावती,
इंदिरानंद मंदिर सँवारे।
प्रेम-संमिलित वर वचन-रचना अकनि,
राम राजीव-लोचन उघारे।
दास तुलसी मुदित, जननि करै आरती,
सहज सुंदर अजिर पाँव धारे ॥३५॥

जागिए कृपानिधान जानराय रामचंद्र!
जननि कहै बार बार भोर भयो प्यारे।
राजिवलोचन विसाल, प्रीति-वापिका-मराल,
ललित कमल-बदन उपर मदन कोटि वारे॥
अरुन उदित, विगत सर्बरी, ससांक किरनिहीन,
दीन दीपजोति, मलिन-दुति समूह तारे।
मनहुँ ज्ञान घन प्रकास, बीते सब भव-विलास
आस-त्रास-तिमिर-तोम-तरनि-तेज जारे॥
बोलत खगनिकर मुखर मधुर-करि प्रतीत
सुनहु स्रवन, प्रानजीवन धन, मेरे तुम बारे।
मनहुँ बेद बंदी मुनिबृंद सूत मागधादि बिरुद
वदत 'जय जय जय जयति कैटभारे'॥
विकसित कमलावली, चले प्रपुंज चंचरीक
गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे।
जनु बिराग पाइ सकल-सोक-कूप-गृह बिहाइ
भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनत वचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल विपुल, दुख-कदंब दारे।
तुलसिदास अति अनंद, देखिकै मुखारविंद,
छूटे भ्रमफंद परम मंद द्वंद्व भारे ॥३६॥

बोलत अवनिप-कुमार ठाढ़े नृपभवन-द्वार,
रूपसील-गुन उदार जागहु मेरे प्यारे।
बिलखित कुमुदिनि, चकोर, चक्रवाक हरष भोर,
करत सोर तमचुर खग, गुंजत अलि न्यारे ॥
रुचिर मधुर भोजन करि, भूषन सजि सकल अंग,
संग अनुज बालक सब विविध विधि सँवारे।
करतल गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकर-दाप,
कटितट पटपीत, तून-सायक अनियारे ॥
उपवन मृगया -विहार-कारन गवने कृपाल,
जननी मुख निरखि पुन्यपुंज निज विचारे।
तुलसिदास सँग लीजै, जानि दीन अभय कीजै
दीजै मति विमल गावैं चरित वर तिहारे ॥३७॥

राग नट

खेलन चलिए आनँदकंद।
सखा प्रिय नृपद्वार ठाढ़े विपुल बालक-बृंद ॥१॥
तृषित तुम्हरे दरस कारन चतुर चातक-दास।
बपुष-बारिद बरषि छबि-जल हरहु लोचन-प्यास ॥२॥
बंधु-बचन बिनीत सुनि उठे मनहुँ केहरि-बाल।
ललित लघु सर चाप कर, उर नयन बाहु बिसाल ॥३॥
चलत पद प्रतिबिंब राजत अजिर सुखमा पुंज।
प्रेमबस प्रति चरन महि मानो देति आसन कंज ॥४॥
निरखि परम बिचित्र सोभा चकित चितवहिं मात।
हरष-बिबस न जात कहि, 'निज भवन बिहरहु, तात' ॥५॥
देखि तुलसीदास प्रभु-छबि रहे सब पल रोकि।
थकित निकर- चकोर मानहुँ सरद-इंदु बिलोकि ॥६॥३८॥

३६—कदंब = समूह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहरत अवध-बीथिन राम ।
संग अनुज अनेक सिसु नव-नील-नीरद-स्याम ॥१॥
तरुन अरुन-सरोज-पद बनी कनकमय पदत्रान ।
पीत पट कटि तून वर, कर ललित लघु धनु वान ॥२॥
लोचननि को लहत फल छबि निरखि पुर-नर-नारि ।
बसत तुलसीदास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥३९॥

जैसे राम ललित तैसे लोने लषन लालु ।
तैसेई भरत सील-सुखमा-सनेह-निधि तैसेई सुभग सँग सत्रुसालु ॥१॥
धरे धनु सर कर, कसे कटि तरकसी, पीरे पट ओढ़े चले चारु चालु ।
अंग अंग भूषन जराय के जगमगत, हरत जन के जी को तिमिरजालु॥२॥
खेलत चौहट हाट बीथी बाटिकनि प्रभु सिव सुप्रेम-मानस-मरालु ।
सोभा-दान दै दै सनमानत जाचकजन करत लोक-लोचन निहालु ॥३॥
रावन-दुरित-दुख दलैं सुर कहैं आजु 'अवध सकल सुख को सुकालु' ।
तुलसी सराहैं सिद्ध सुकृत कौसल्या जू के, भूरि-भाग-भाजन भुवालु॥४॥४०॥

राग ललित

ललित ललित लघु लघु धनु सर कर,
तैसी तरकसी , कटि कसे पट पियरे ।
ललित पनही पाँय पैंजनी-किंकिनि-धुनि,
सुनि सुख लहै मनु रहै नित नियरे ॥
पहुँची अंगद चारु, हृदय पदिक हारु,
कुंडल-तिलक-छबि गड़ी कवि जियरे ।
सिरसि टिपारो लाल, नीरज-नयन विसाल,
सुंदर वदन ठाढ़े सुरतरु सियरे ॥
सुभग सकल अंग, अनुज बालक संग,
देखि नर-नारि रहैं ज्यों कुरंग दियरे ।
खेलत अवध खोरि , गोली भौंरा चक-डोरि
मूरति मधुर बसै तुलसी के हियरे ॥४१॥
छोटिऐ धनुहियाँ, पनहियाँ पगनि छोटी,
छोटिऐ कछौटी कटि, छोटिऐ तरकसी ।

४१—टिपारा = ऊँची दीवार की टोपी के आकार का मुकुट । दियरा = बड़ा सालूक, जो शिकारी हिरनों को आकर्षित करने के लिए जलाते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लसत झँगूली झीनी, दामिनि की छवि छीनी,
सुंदर वदन, सिर पगिया जरकसी ।।
वय-अनुहरत विभूषन विचित्र अँग,
जोहे जिय आवति सनेह की सरक सी ।
मूरति की सूरति कही न परै तुलसी पै,
जानै सोई जाके उर कसकै करक-सी ।।४२।।

राग टोड़ी

राम लषन इक ओर, भरत रिपुदवन लाल इक ओर भए ।
सरजुतीर सम सुखद भूमि-थल गनि गनि गोइयाँ बाँटि लए ।।
कंदुक-केलि-कुसल हय चढ़ि चढ़ि, मन कसि कसि, ठोंकि ठोंकि खए ।
कर-कमलनि विचित्र चौगानैं, खेलन लगे खेल रिझए ।।
ब्योम विमाननि विबुध विलोकत खेलक पेखक छाँह छए ।
सहित समाज सराहि दसरथहिँ बरषत निज तरु कुसुम चए ।।
एक लै बढ़त, एक फेरत, सब प्रेम-प्रमोद-विनोद-मए ।
एक कहत भइ हारि राम जू की, एक कहत भइया भरत जए ।।
प्रभु बकसत गज वाजि बसन मनि, जय-धुनि गगन निसान हए ।
पाइ सखा सेवक जाचक भरि जनम न दुसरे द्वार गए ।।
नभ-पुर परति निछावरि जहँ तहँ, सुर सिद्धनि वरदान दए ।
भूरि-भाग अनुराग उमँगि जे गावत सुनत चरित नित ए ।।
हारे हरष होत हिय भरतहिँ, जिते सकुच सिर नयन नए ।
तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रंग-रए ।।४३।।

खेलि खेल सुखेलनिहारे ।
उतरि उतरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जोहारे ।। १ ।।
बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह सँभारे ।
दिए बसन गज वाजि साजि सुभ साज सुभाँति सँवारे ।। २ ।।
मुदित नयन-फल पाइ, गाइ गुन सुर सानंद सिधारे ।
सहित समाज राजमंदिर कहँ राम राउ पगु धारे ।। ३ ।।
भूप-भवन घर-घर घमंड, कल्यान कोलाहल भारे ।
निरखि हरषि आरती निछावरि करत-सरीर बिसारे ।। ४ ।।

४२—सरक = शराब या शराब का खुमार ।
४३—खए = बाहुमूल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित नए मंगल मोद अवध सब, सब विधि लोग सुखारे ।
तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्हके प्रभु तें प्रभु-चरित पियारे ।।५।।४४।।

राग सारंग

चहत महामुनि-जाग जयो ।
नीच निसाचर देत दुसह दुख, कृस तनु ताप तयो ।। १ ।।
सापे पाप, नए निदरत खल, तब यह मंत्र ठयो ।
विप्र-साधु-सुर-धेनु-धरनि-हित हरि अवतार लयो ।। २ ।।
सुमिरत श्रीसारंगपानि छन में सब सोच गयो ।
चले मुदित कौसिक कोसलपुर, सगुननि साथ दयो ।। ३ ।।
करत मनोरथ जात पुलकि, प्रगटत आनंद नयो ।
तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगल मूल भयो ।।४।।४५।।

आजु सकल सुकृत फलु पाइहौं ।
सुख की सींव, अवधि आनँद की, अवध बिलोकि हौं पाइहौं ।।१।।
सुतनि सहित दसरथहिँ देखिहौं, प्रेम पुलकि उर लाइहौं ।
रामचंद्र-मुखचंद्र-सुधा-छवि नयन-चकोरनि प्याइहौं ।।२।।
सादर समाचार नृप बूझिहैं, हौं सब कथा सुनाइहौं ।
तुलसी ह्वै कृतकृत्य आस्रमहिँ राम लखन लै आइहौं ।।३।।४६।।

राग नट

देखि मुनि ! रावरे पद आज ।
भयो प्रथम गनती में अब तें हौं जहँ लौं साधु-समाज ।। १ ।।
चरन बंदि कर जोरि निहोरत, "कहिय कृपा करि काज ।
मेरे कछु न अदेय राम बिनु, देह, गेह, सब राज" ।। २ ।।
भली कही भूपति-त्रिभुवन में को सुकृती-सिरताज ?
तुलसि राम-जनमहि तें जनियत सकल सुकृत को साज ।।३।।४७।।

राजन ! राम लखन जौं दीजै ।
जस रावरो, लाभ ढोटनिहूँ, मुनि सनाथ सब कीजै ।। १ ।।
डरपत हौं साँचे सनेह-बस सुत-प्रभाव बिनु जाने ।
बूझिय बामदेव अरु कुलगुरु, तुम पुनि परम सयाने ।। २ ।।
रिपु रन दलि, मख राखि, कुसल अति अलप दिननि घर ऐहैं ।
तुलसिदास रघुबंस-तिलक की कविकुल कीरति गैहैं ।।३।।४८।।

४५—जयो = यजन किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे ठगिसे नृपति सुनि मुनिवर के वयन।
कहि न सकत कछु, राम-प्रेमवस पुलक गात भरे नीर नयन ॥ १ ॥
गुरु वसिष्ठ समुझाय कह्यो तव हिय हरषाने सेष-सयन।
सौंपे सुत गहि पानि पाँय परि, भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥
तुलसी प्रभु जोहत पोहत चित, सोहत मोहत कोटि मयन।
मधु माधव मूरति दोउ सँग मानो दिनमनि गवन कियो उतर ग्रयन ॥३॥
४६॥

राग सारंग

रिषि सँग हरषि चले दोउ भाई।
पितु-पद बंदि सीस लियो ग्रायसु,सुनि सिख ग्रासिख पाई ॥१॥
नील पीत पाथोज-वरन वपु, वय किसोर वनि ग्राई।
सर धनु पानि, पीत पत कटितट कसे निखंग वनाई ॥ २ ॥
कलित कंठ मनि-माल, कलेवर चंदन खौरि सुहाई।
सुंदर वदन, सरोरुह-लोचन, मुखछवि वरनि न जाई ॥ ३ ॥
पल्लव पंख सुमन सिर सोहत, क्यों कहौं बेष लुनाई ?
मनु मूरति धरि उभय भाग भइ त्रिभुवन सुंदरताई ॥ ४ ॥
पैठत सरनि, सिलनि चढ़ि चितवत खग-मृग-वन-रुचिराई।
सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बुलाई ॥ ५ ॥
एक तीर तकि हती ताड़का, विद्या विप्र पढ़ाई।
राख्यो जज्ञ जीति रजनीचर, भइ जग विदित बड़ाई। ६ ॥
चरन-कमल-रज-परस ग्रहल्या निज पति-लोक पठाई।
तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि सुरसरि कथा सुनाई ॥७॥५०॥

राग नट

दोउ राजसुवन राजत मुनि के संग।
नखसिख लोने, लोने वदन, लोने लोयन दामिनि-वारिद-वरवरन ग्रंग ॥१॥
सिरनि सिखा सुहाइ, उपबीत पीत पट, धनु सर कर, कसे कटि निखंग।
मानो मख-रुज-निसिचर हरिबे को सुत पावक के साथ पठए पतंग ॥२॥
करत छाँह घन, वरषैँ सुमर सुर, छवि वरनत ग्रतुलित ग्रनंग।
तुलसी प्रभु विलोकि मग-लोग, खग-मृग प्रेममगन रँगे रूप रंग ॥३॥५१॥

५३—पतंगसुत = सूर्य के पुत्र ग्रश्विनीकुमार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग कल्याण

मुनि के संग बिराजत बीर ।
काकपच्छ धर, कर कोदंड सर, सुभग पीतपट कटि तूनीर ॥ १ ॥
बदन इंदु, अंभोरुह लोचन, स्याम गौर सोभा-सदन सरीर ।
पुलकत रिषि अवलोकि अमित छबि, उर न समाति प्रेम की भीर ॥२॥
खेलत चलत करत मग कौतुक बिलँबत सरित-सरोवर-तीर ।
तोरत लता सुमन सरसीरुह, पियत सुधा सम सीतल नीर ॥ ३ ॥
बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर, पुनि पुनि बरनत छाँह समीर ।
देखत नटत केकि, कल गावत मधुप मराल कोकिला कीर ॥ ४ ॥
नयननि को फल लेत निरखि खग मृग सुरभी ब्रजबधू अहीर ।
तुलसी प्रभुहिँ देत सब आसन निज निज मन-मृदु-कमल-कुटीर ॥५॥५२॥

राग कान्हरा

सोहत मग मुनि सँग दोउ भाई ।
तरुन तमाल चारु चंपक-छबि कबि सुभाय कहि जाई ॥ १ ॥
भूषन बसन अनुहरत अंगनि, उमगति सुंदरताई ।
बदन-सरोज सरोज-लोचननि रही है लुभाइ लुनाई ॥ २ ॥
अंसनि धनु, सर कर-कमलनि, कटि कसे हैं निखंग बनाई ।
सकल-भुवन-सोभा-सरवसु लघु लागति निरखि निकाई ॥ ३ ॥
महि मृदु पथ, घन छाँह, सुमन सुर बरषि, पवन सुखदाई ।
जल-थल-रुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥
सकुच सभीत बिनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई ।
खग मृग चित्र बिलोकत बिच बिच लसति ललित लरिकाई ॥ ५ ॥
बिद्या दई जानि बिद्यानिधि, बिद्यहु लही बड़ाई ।
ख्याल दली ताड़ुका, देखि रिषि देत असीस अघाई ॥ ६ ॥
बूझत प्रभु सुरसरि प्रसंग कहि निज-कुल कथा सुनाई ।
गाधिसुवन-सनेह-सुख-संपति उर-आस्रम न समाई ॥ ७ ॥
बनवासी बटु जती जोगि-जन साधु सिद्ध-समुदाई ।
पूजत पेखि प्रीति पुलकत तनु, नयन लाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥

५२—नटत = नाचते हैं । ब्रज = अहीरों का टोल या बाड़ा ।
५४—अंसनि = कंधों पर ।
५३—५—चित्र = रंग बिरंग ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मख राख्यो खलदल दलि भुजबल, बाजत बिबुध बधाई ।
नित पथ-चरित-सहित तुलसी-चित बसत लखन-रघुराई ॥६॥५३॥

मंजुल मंगलमय नृप ढोटा ।
मुनि, मुनितिय, मुनिसिसु बिलोकि कहैं मधुर मनोहर जोटा ॥१॥
नाम-रूप-अनुरूप बेष बय, राम लखन लाल लोने ।
इन्हतें लही है मानो घन दामिनि दुति मनसिज मरकत सोने ॥२॥
चरन-सरोज, पीतपट कटितट, तून-तीर-धनुधारी ।
केहरिकंध, काम-करि-करवर बिपुल बाहु, बल भारी ॥ ३ ॥
दूषन-रहित समय सम भूषन पाइ सुअंगनि सोहैं ।
नव-राजीव-नयन, पूरन-बिधु-बदन मदन मन मोहैं ॥ ४ ॥
सिरनि सिखंड, सुमन-दल-मंडन बाल सुभाय बनाए ।
केलि-अंक तनु रेनु पंक जनु प्रगटत चरित चोराए ॥ ५ ॥
मख राखिबे लागि दसरथ सों माँगि आस्रमहिँ आने ।
प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय गाधिसुवन सनमाने ॥ ६ ॥
साधन-फल साधक सिद्धनि के, लोचन-फल सबही के ।
सकल सुकृत-फल मातु पिता के, जीवन-धन तुलसी के ॥७॥५४॥

राग सूहो

रामपद-पदुम-पराग परी ।
रिषितिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबिमय देह धरी ॥ १ ॥
प्रबल पाप पति-साप-दुसह-दव दारुन जरनि जरी ।
कृपा-सुधा सिँचि बिबुध बेलि ज्यौं फिरि सुख-फरनि फरी ॥ २ ॥
निगम-अगम मूरति महेस-मति-जुवति बराय बरी ।
सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ इकटक तें न टरी ॥ ३ ॥
बरनति हृदय सरूप सील गुन प्रेम-प्रमोद-भरी ।
तुलसिदास अस केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ? ॥४॥५५॥

परत पद-पंकज-रज रिषि-रवनी ।
भई है प्रगट अति दिव्य देह धरि मनो त्रिभुवन-छवि-छवनी ॥१॥

५४—सिखंड = मोरपक्ष । केलिअंक......चुराए = खेल के चिह्न स्वरूप जो धूल और कीचड़ शरीर में लगा है वह मानों उस चरित्र को प्रकट करता है जो विश्वामित्र से चुरा कर किया गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखि वड़ो ग्राचरज पुलकि तनु कहति मुदित मुनि-भवनी ।
जो चलिहैं रघुनाथ पयादेहि सिला न रहिहि ग्रवनी ॥ २ ॥
परसि पुनीत पाँय जो सिव-सिर सोहै तीनि-पथ-गवनी ।
तुलसिदास तेहि चरन-रेनु की महिमा कहै मति कवनी ।३॥५६॥

भूरिभाग-भाजनु भई ।
रूपरासि ग्रवलोकि बंधु दोउ प्रेम-सुरंग रई ॥ १ ॥
कहा कहैं, केहि भाँति सराहैं, नहिँ करतूति नई ।
बिनु कारन करुनाकर रघुवर केहि केहि गति न दई ? ॥ २ ॥
करि वहु विनय, राखि उर मूरति मंगल-मोदमई ।
तुलसी ह्वै बिसोक पति-लोकहिँ प्रभुगुन गनत गई ॥३॥५७॥

राग कान्हरा

कौसिक के मख के रखवारे ।
नाम राम ग्ररु लखन ललित ग्रति दसरथ-राज-दुलारे ॥ १ ॥
मेचक पीत कमल कोमल कल काकपच्छ-धर वारे ।
सोभा सकल सकेलि मदन-विधि सुकर सरोज सँवारे ॥ २ ॥
सहस समूह सुबाहु सरिस खल समर सूर भट भारे ।
केलि-तून-धनु-बान-पानि रन निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥
रिषितिय तारि स्वयंवर पेखन जनक-नगर पगु धारे ।
मग नरनारि निहारत सादर कहैं वड़ भाग हमारे ॥ ४ ॥
तुलसी सुनत एक एकनि सों चलत बिलोकनिहारे ।
मूकनि वचन-लाहु, मानो ग्रंधनि लहे हैं विलोचन-तारे ॥५॥५८॥

राग टोड़ी

ग्राए सुनि कौसिक जनक हरषाने हैं ।
बोलि गुरु भूसुर समाज सों मिलन चले,
जानि वड़े भाग ग्रनुराग ग्रकुलाने हैं ॥ १ ॥
नाइ सीस पगनि, ग्रसीस पाइ प्रमुदित
पाँवड़े ग्ररघ देत ग्रादर सों ग्राने हैं ।
ग्रसन वसन वास कै सुपास सव विधि,
पूजि प्रिय पाहुने, सुभाय सनमाने हैं ॥ २ ॥
विनय वड़ाई रिषि-राजऊ परसपर
करत पुलकि प्रेम ग्रानँद ग्रघाने है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखे राम लखन निमेषैं विथकित भईं,
प्रानहुँ ते प्यारे लागे विनु पहिचाने हैं ॥ ३ ॥
ब्रह्मानंद हृदय, दरस-सुख लोयननि
अनुभए उभय, सरस राम जाने हैं।
तुलसी विदेह की सनेह की दसा सुमिरि
मेरे मन माने राउ निपट सयाने हैं ॥४॥५६॥

राग मलार

कोसलराय के कुअँरोटा।
राजत रुचिर जनक-पुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा ॥ १ ॥
चौतनि सिरनि, कनक-कली काननि, कटि पट पीत सोहाए।
उर मनि-माल, विसाल विलोचन, सीय-स्वयंवर आए ॥ २ ॥
बरनि न जात, मनहिँ मन भावत, सुभग अवहिँ वय थोरी।
भई हैं मगन विधुवदन विलोकत वनिता चतुर चकोरी ॥ ३ ॥
कहँ सिवचाप लरिकवनि बूझत विहँसि चितै तिरछौहैं।
तुलसी गलिन भीर, दरसन लगि लोग अटनि आरोहैं ॥४॥६०॥

ये अवधेस के सुत दोऊ।
चढ़ि मंदिरनि विलोकत सादर जनकनगर सब कोऊ ॥ १ ॥
स्याम गौर सुंदर किसोर तनु, तून-वान-धनुधारी।
कटि पट पीत, कंठ मुकुतामनि, भुज विसाल, वलभारी ॥ २ ॥
मुखमयंक, सरसीरुह-लोचन, तिलक भाल टेढ़ी भौंहैं।
कल कुंडल, चौतनी चारु अति, चलत मत्त-गज-गौं हैं ॥ ३ ॥
विस्वामित्र हेतु पठए नृप, इनहि ताड़ुका मारी।
मख राख्यो रिपु जीति जान जग, मग मुनिवधू उधारी ॥४ ॥
प्रिय पाहुने जानि नरनारिन नयननि अयन दए।
तुलसिदास प्रभु देखि लोग सब जनक समान भए ॥५॥६१॥

५६—४—सरस = बढ़कर।
६१—गौं = ढब, चाल। जनक समान = विदेह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग टोड़ी

बूझत जनक 'नाथ ढोटा दोउ काके हैं' ?
तरुन तमाल-चारु-चंपक-बरन-तनु,
कौन बड़े भागी के सुकृत परिपाके हैं ॥ १ ॥
सुख के निधान पाए, हिय के पिधान लाए,
ठग के से लाड़ू खाए, प्रेम मधु छाके हैं।
स्वारथ-रहित परमारथी कहावत हैं,
भे सनेह-बिबस बिदेहता बिबाके हैं ॥ २ ॥
सील सुधा के अगार, सुखमा के पारावार,
पावत न पैरि पार, पैरि पैरि थाके हैं।
लोचन ललकि लागे, मन अति अनुरागे,
एक रसरूप चित सकल सभा के हैं ॥ ३ ॥
जिय जिय जोरत सगाई राम लखन सों,
आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं।
प्रीति को, प्रतीति को, सुमिरिबे को,
सेइबे को, सरन को समरथ तुलसिहू ताके हैं ॥४॥६२॥

ए कौन, कहाँ तें आए ?
नील-पीत-पाथोज-बरन, मन-हरन सुभाय सुहाए ॥ १ ॥
मुनिसुत किधौं भूप-बालक, किधौं ब्रह्म-जीव जग जाए।
रूप-जलधि के रतन, सुछबि तिय लोचन ललित ललाए ॥ २ ॥
किधौं रवि-सुवन, मदन-रितुपति, किधौं हरि-हर बेष बनाए।
किधौं आपने सुकृत-सुरतरु के सुफल रावरेहि पाए ॥ ३ ॥
भए बिदेह बिदेह नेहबस देहदसा बिसराए।
पुलक गात, न समात हरष हिय, सलिल सुलोचन छाए ॥ ४ ॥
जनक-बचन मृदु मंजु मधु-भरे-भगति कौसिकहिँ भाए।
तुलसी अति आनंद उमँगि उर राम लखन गुन गाए ॥५॥६३॥

कौसिक कृपाल हू को पुलकित तनु भो।
उमँगत अनुराग, सभा के सराहे भाग,
देखि दसा जनक की कहिबे को मनु भो ॥ १ ॥
प्रीति के न, पातकी, दिएहूँ साप पाप बड़ो,
मख-मिस मेरो तब अवध-गवनु भो।

६२—बिबाके = बेबाक किया, छोड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रानहू ते प्यारे सुत माँगे दिए दसरथ,
सत्यसिंधु सोच सहे, सूनो सो भवनु भो ॥ २ ॥
काकसिखा सिर, कर केलि-तून-धनु-सर
बालक-विनोद जातुधाननि सों रनु भो ।
बूझत विदेह अनुराग-आचरज-बस,
रिषिराज-जाग भयो महाराज अनुभो ॥ ४ ॥
भूमिदेव नरदेव सचिव परसपर
कहत हमहिँ सुरतरु सिवधनु भो ।
सुनत राजा की रीति, उपजी प्रतीति प्रीति,
भाग तुलसी के, भले साहेब को जनु भो ॥४॥६४॥

चारचो भले बेटा देव दसरथ राय के ।
जैसे राम-लखन, भरत-रिपुहन तैसे,
सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ॥ १ ॥
ताड़का सँहारि मख राखे, नीके पाले व्रत,
कोटि कोटि भट किए एक एक घाय के ।
एक बान बेगही उड़ाने जातुधान जात,
सूखि गए गात हैं पतौआ भए बाय के ॥ २ ॥
सिलाछोर छुवत अहल्या भई दिव्य देह,
गुन पेखे पारस के पंकरुह पाँय के ।
राम के प्रसाद गुरु गौतम खसम भए,,
रावरेहु सतानंद पूत भयो माय के ॥ ३ ॥
प्रेम-परिहास-पोखे-बचन परसपर
कहत सुनत सुख सबही सुभाय के ।
तुलसी सराहैं भाग कौसिक जनक जू के,
बिधि के सुढर होत सुढर सुदाय के ॥४॥६५॥

ए दोऊ दसरथ के बारे ।
नाम राम घनस्याम, लखन लघु नखसिख अँग उजियारे ॥ १ ॥
निज हित लागि माँगि आने मैं धर्मसेतु रखवारे ।
धीर बीर बिरुदैत बाँकुरे महाबाहु बल भारे ॥ २ ॥

६४—प्रीति के न पातकी = यज्ञ में विघ्न करनेवाले पातकी राक्षस प्रीति के पात्र नहीं थे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक तीर तकि हती ताडुका, किए सुर साधु सुखारे ।
जज्ञ राखि जग साखि, तोषि रिषि, निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥
मुनितिय तारि स्वयंवर पेखन आए सुनि वचन तिहारे ।
एउ देखिहैं पिनाकु नेकु जेहि नृपति लाज-ज्वर जारे ॥ ४ ॥
सुनि सानंद सराहि सपरिजन वारहिँ वार निहारे ।
पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहिँ भूपति सदन सिधारे ॥ ५ ॥
सोचत सत्य-सनेह-विवस निसि नृपहिँ गनत गए तारे ।
पठए बोलि भोर गुरु के सँग रंगभूमि पगु धारे ॥ ६ ॥
नगर लोग सुधि पाइ मुदित सवही सव काज विसारे ।
मनहुँ मघा-जल उमगि उदधि-रुख चले नदी-नद-नारे । ७ ॥
ए किसोर, धनु घोर वहुत, विलखात विलोकनिहारे ।
टरयो न चाप तिन्हते जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उखारे॥ ८ ॥
ए जाने विनु जनक जानियत करि पन भूप हँकारे ।
नतरु सुधासागर परिहरि कत कूप खनावत खारे ॥ ९ ॥
सुखमा सील सनेह सानि मानो रूप विरंचि सँवारे ।
रोम रोम पर सोम काम सत कोटि वारि फेरि डारे ॥१०॥
कोउ कहै तेज प्रताप पुंज चितए नहिँ जात, भिया रे !
छुअत सरासन-सलभ जरैगो ये दिनकर-बंस-दिया रे ॥११॥
एक कहै कछु होउ सुफल भए जीवन जनम हमारे ।
अवलोके भरि नयन आजु तुलसी के प्रानपियारे ॥१२॥६६॥

जनक विलोकि वार वार रघुबर को ।
मुनिपद सीस नाय, आयसु असीस पाय,
एई वात कहत गवन कियो घर को ॥ १ ॥
नींद न परति राति, प्रेम पन एक भाँति,
सोचत सकोचत विरंचि हरि हर को ।
तुम्हतें सुगम सव देव देखिबे को अव,
जस हंस किए जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥
त्यागे संग कौसिक, सुनाए कहि गुनगन,
आए देखि दिनकर-कुल-दिनकर को ।

६६—भिया रे = भैया रे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी तेऊ सनेह को सुभाउ वाउ मानो ,
चलदल को सो पात करै चित चर को ॥ ३ ॥६७॥

राग केदार

109273

रंग-भूमि भोरेही जाइकै ।
राम लखन लखि लोग लूटिहैं लोचन-लाभ ग्रघाइकै ॥ १ ॥
भूप-भवन घर घर, पुर वाहर इहै चरचा रही छाइकै ।
मगन मनोरथ मोद नारि नर प्रेम-विवस उठैं गाइकै ॥ २ ॥
सोचत विधि-गति समुझि परसपर कहत वचन विलखाइकै ।
कुँवर किसोर कठोर सरासन, ग्रसमंजस भयो ग्राइकै ॥ ३ ॥
सुकृत सँभारि मनाइ पितर सुर सीस ईसपद नाइकै ।
रघुवर-कर धनु-भंग चहत सव ग्रपनो सो हितु चितु लाइकै ॥ ४ ॥
लेत फिरत कनसुई सगुन, सुभ बूझत गनक बोलाइकै ।
सुनि ग्रनुकूल मुदित मन मानहुँ धरत धीरजहिं धाइकै ॥ ५ ॥
कौसिक-कथा एक एकनि सों कहत प्रभाउ जनाइकै ॥
सीय-राम-संजोग जानियत रच्यो विरंचि वनाइकै ॥ ६ ॥
एक सराहि सुवाहु-मथन वर वाहु उछाह वढ़ाइकै ।
सानुज राज-समाज विराजिहैं राम पिनाक चढ़ाइकै ॥ ७ ॥
वड़ी सभा, वड़ो लाहु जस, वड़ी वड़ाई पाइकै ।
को सोहिहै ग्रौर को लायक रघुनायकहि विहाइकै ? ॥ ८ ॥
गवनिहैं गँवहिं गँवाइ गरव गृह नृपकुल वलहि लगाइकै ।
भली भाँति साहव तुलसी के चलिहैं ब्याहि वजाइकै ॥ ९ ॥६८॥

राग टोड़ी

भोर फूल बीनबे को गए फुलवाई हैं ।
सीसनि टिपारे, उपबीत, पीत पट कटि,
दोना वाम करनि सलोने भे सवाई हैं ॥ १ ॥
रूप के ग्रगार भूप के कुमार सुकुमार,
गुरु के प्रानग्रधार संग सेवकाई हैं ।

६७—चलदल = पीपल का वृक्ष ।

६८—कनसुई लेना = गोबर की गौर चलनी में रखकर स्त्रियाँ पृथ्वी पर फेंकती हैं । यदि वह गौर सीधी गिरती है तो सगुन ग्रौर उलटी या ग्राड़ी गिरती है तो ग्रपसगुन मानती हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीच ज्यों टहल करैं, राखैं रुख अनुसरैं,
कौसिक से कोही वस किये दुहुँ भाई हैं ॥ २ ॥
सखिन सहित तेहि औसर विधि के सँजोग,
गिरिजा जू पूजिबे को जानकी जू आई हैं ।
निरखि लखन राम जाने रितुपति काम,
मोहि मानो मदन मोहनी मूड़ नाई हैं ॥ ३ ॥
राघौजू-श्रीजानकीजी-लोचन मिलिबे को मोद,
कहिबे को जोग न, मैं बातैं सी बनाई हैं ।
स्वामी सीय सखिन्ह लखन तुलसी को तैसो ।
तैसो मन भयो जाकी जैसिए सगाई हैं ॥ ४ ॥ ६९ ॥

पूजि पारवती भले भाय पाँय परिकै ।
सजल सुलोचन सिथिल तनु पुलकित,
आवै न वचत मनु रह्यो प्रेम भरिकै ॥ १ ॥
अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सों हौं,
कही चाहौं बात, मातु अंत तौ हौं लरिकै ।
मूरति कृपालु मंजु माल दै बोलत भई,
पूजो मन कामना भावतो वरु बरिकै ॥ २ ॥
राम कामतरु पाइ बेलि ज्यों बौंड़ी वनाइ
माँग कोखि तोषि पोषि फैलि फूलि फरिकै ।
रहौगी कहौगी तब साँची कही अंबा सिय,
गहे पाँय द्वै उठाय माथे हाथ धरिकै ॥ ३ ॥
मुदित असीस सुनि सीस नाइ पुनि पुनि,
बिदा भई देवी सों जननि डर डरिकै ।
हरषीं सहेली, भयो भावतो, गावतीं गीत,
गवनी भवन तुलसीस हियो हरिकै ॥ ४ ॥ ७० ॥

रंगभूमि आए दसरथ के किसोर हैं ।
पेखनो सो पेखन चले हैं पुर-नर-नारि,
बारे बूढ़े अंध पंगु करत निहोर हैं ॥ १ ॥
नील - पीत - नीरज - कनक - मरकत - घन -
दामिनि - वरन तनु रूप के निचोर हैं ।
सहस सलोने राम लखन ललित नाम,
जैसे सुने तैसेई कुँवर सिरमौर हैं ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरन-सरोज, चारु जंघा जानु ऊरु कटि,
कंधर विसाल, वाहु वड़े वरजोर हैं।
नीके कै निषंग कसे, कर कमलनि लसै,
वान विसिखासन मनोहर कठोर हैं॥ ३॥
काननि कनकफूल, उपबीत अनुकूल,
पियरे दुकूल विलसत आछे छोर हैं।
राजिव-नयन विधुवदन टिपारे सिर,
नख सिख अंगनि ठगौरी ठौर ठौर हैं॥ ४॥
सभा - सरवर, लोक - कोकनद - कोकगन,
प्रमुदित मन देखि दिनमनि भोर हैं।
अवुध असैले मन-मैले महिपाल भए,
कछुक उलूक, कछु कुमुद चकोर हैं॥ ५॥
भाई सों कहत वात कौसिकहि सकुचात,
बोल घन घोर से वोलत थोर थोर हैं।
सनमुख सवहि विलोकत सवहि नीके,
कृपा सों हेरत हँसि तुलसी की ओर हैं॥ ६॥ ७१॥

एई राम लखन जे मुनि सँग आए हैं।
चौतनी चोलना काछे, सखि ! सोहैं आगे पाछे,
आछेहू तें आछे, आछे आछे भाय भाए हैं॥ १॥
साँवरे गोरे सरीर, महावाहु महाबीर,
कटि तून तीर धरे धनुष सुहाए हैं।
देखत कोमल कल, अतुल बिपुल वल,
कौसिक कोदंड-कला विपुल सिखाए हैं॥ २॥
इन्हहीं ताड़का मारी, गौतम की तिय तारी,
भारी भारी भूरि भट रन विचलाए हैं।
रिषि-मख रखवारे दसरथ के दुलारे,
रंगभूमि पगु धारे, जनक बुलाए हैं॥ ३॥
इन्हके विमल गुन गनत पुलकि तनु,
सतानंद कौसिक नरेसहिं सुनाए हैं।

७१—पेखनो = तमाशा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभुपद मन दिए सो समाज चित्त किए,
हुलसि हुलसि हिए तुलसिहुँ गाए हैं ।। ४ ।। ७२ ।।

राग कान्हरा

सीय स्वयंवरु, माई, दोउ भाई आए देखन ।
सुनत चलीं प्रमदा प्रमुदित मन,
प्रेम पुलकि तन मनहुँ मदन मंजुल पेखन ।।
निरखि मनोहरताई सुख पाई कहैं एक एक सों,
'भूरि भाग हम धन्य, आली ! ए दिन, ए खन ।'
तुलसी सहज सनेह सुरँग सब,
सो समाज चित-चित्रसार लागी लेखन ।। ७३ ।।

राग गौरी

राम लखन जब दृष्टि परे, री !
अवलोकत सब लोग जनकपुर मानो विधि विविध विदेह करे, री ।। १ ।।
धनुषजज्ञ कमनीय अवनि-तल कौतुकही भए आय खरे, री ।।
छवि सुरसभा मनहुँ मनसिज के कलित कलपतरु रुख फरे, री ।। २ ।।
सकल काम बरखत मुख निरखत, करखत चित हित हरख भरे, री ।
तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैंत पासे सुढर ढरे, री ।। ३ ।। ७४ ।।

नेकु ! सुमुखि, चित लाइ चितौ, री ।
राजकुँवर-मूरति रचिबे को रुचि सुबिरंचि स्रम कियो है कितौ, री ।। १ ।।
नख सिख सुंदरता अवलोकत कह्यो न परत सुख होत जितौ, री ।
साँवर-रूप-सुधा भरिबे कहँ नयन-कमल-कल-कलस रितौ, री ।। २ ।।
मेरे जान इन्हैं बोलिबे कारन चतुर जनक ठयो ठाट इतौ, री ।
तुलसी प्रभु भंजिहैं संभु-धनु भूरि भाग सिय मातु पितौ, री ।। ३ ।। ७५ ।।

राग सारंग

जबतें राम लखन चितए, री ।
रहे इकटक नर-नारि जनकपुर, लागत पलक कलप बितए, री ।। १ ।।
प्रेम-बिबस माँगत महेस सों देखत ही रहिए नित ए, री ।
कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि, कै ए नयन जाहु जित ए, री ।। २ ।।
कोउ समुझाइ कहै किन भूपहिं बड़े भाग आए इत ए, री ।
कुलिस कठोर कहाँ संकर-धनु, मृदु मूरति किसोर कित ए, री ।। ३ ।।
बिरचत इन्हहिं बिरंचि भुवन सब सुंदरता खोजत रितए, री ।
तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम बच जिन्हके हित ए, री ।।४।।७६।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो, री ।
जेहि प्रसाद अवधेस-कुँवर दोउ नगर-लोग अवलोकि जियो, री ॥ १ ॥
मानि प्रतीति कहे मेरे तैं कत सँदेह-वस करति हियो, री ।
तौलौं है यह संभु सरासन श्रीरघुबीर जौलौं न लियो, री ॥ २ ॥
जेहि विरंचि रचि सीय सँवारी औ रामहिं ऐसो रूप दियो, री ।
तुलसिदास तेहि चतुर विधाता निज कर यह संयोग सियो, री ॥ ३ ॥७७॥

अनुकूल नृपहिँ सूलपानि हैं ।
नीलकंठ कारुन्यसिंधु हर दीनबंधु दिनदानि हैं ॥ १ ॥
जो पहिलेही पिनाक जनक कहँ गए सौंपि जिय जानि हैं ।
बहुरि त्रिलोचन लोचन के फल सवहि सुलभ किए आनि हैं ॥ २ ॥
सुनियत भव-भावते राम हैं, सिय भावती-भवानि हैं ।
परखत प्रीति प्रतीति पैज पनु रहे काज ठटु ठानि हैं ॥ ३ ॥
भए विलोकि विदेह नेहवस वालक विनु पहिचानि हैं ।
होत हरे होने विरवनि दल सुमति कहति अनुमानि हैं ॥ ४ ॥
देखियत भूप भोर के-से उडुगन, गरत गरीव गलानि हैं ।
तेज प्रताप बढ़त कुँवरन को जदपि सँकोची वानि हैं ॥ ५ ॥
वय किसोर वरजोर वाहुवल मेरु मेलि गुन तानिहैं ।
अवसि राम राजीव-विलोचन संभु-सरासन भानिहैं ॥ ६ ॥
देखिहैं ब्याह-उछाह नारि-नर सकल सुमंगल-खानि हैं ।
भूरि भाग तुलसी तेऊ जे सुनिहैं, गाइहैं, वखानिहैं ॥ ७ ॥ ७८ ॥

राग केदारा

रामहिँ नीके कै निरखि, सुनैनी !
मनसहु अगम समुझि यह अवसरु कत सकुचति पिकबैनी ॥ १ ॥
वड़े भाग मख-भूमि प्रकट भइ सीय सुमंगल-ऐनी ।
जा कारन लोचन-गोचर भइ मूरति सव सुखदैनी ॥ २ ॥
कुलगुरु तिय के मधुर वचन सुनि जनक-जुवति मति-पैनी ।
तुलसी सिथिल देह सुधि बुधि करि सहज-सनेह-विषैनी ॥ ३ ॥ ७९ ॥

मिलो वरु सुंदर सुंदरि सीतहि लायकु,
साँवरो सुभग, सोभा हूँ को परम सिँगारु ।

७७—सियो = सज्यो, उत्पन्न किया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनहूँ को मन मोहै, उपमा को को है ?
सोहै सुखमासागर-संग अनुज राजकुमारु ॥ १ ॥
ललित सकल अंग, तनु धरे कै अनंग,
नैंननि को फल कैधौं, सिय को सुकृत-सारु ।
सरद-सुधा-सदन-छबिहिँ निंदै बदन,
अरुन आयत नवनलिन-लोचन चारु ॥ २ ॥
जनक-मन की रीति जानि बिरहित प्रीति,
ऐसीऔ मूरति देखे रह्यो पहिलो बिचारु ।
तुलसी नृपहिँ ऐसो कहि न बुझावै कोउ,
'पन औ कुँवर दोऊ प्रेम की तुला धौं तारु' ॥ ३ ॥ ८० ॥

देखि देखि री ! दोउ राजसुवन ।
गौर स्याम सलोने लोने, लोने लोयननि,
जिन्हकी सोभा तें सोहै सकल भुवन ॥ १ ॥
इन्हहीं ताडुका मारी, मग मुनि-तिय तारी,
रिषिमख राख्यो, रन दले हैं दुवन ।
तुलसी प्रभु को अब जनकनगर-नभ,
सुजस-बिमल-बिधु चहत उवन ॥ २ ॥ ८१ ॥

राग टोड़ी

राजा रंगभूमि आज बैठे जाइ जाइकै ।
आपने आपने थल, आपने आपने साज,
आपनी आपनी वर वानिक बनाइ कै ॥ १ ॥
कौसिक सहित राम, लखन ललित नाम,
लरिका ललाम लोने पठए बुलाइकै ।
दरस-लालसा-वस लोग चले भाय भले,
विकसत-मुख निकसत धाइ धाइ कै ॥ २ ॥
सानुज सानंद हिए आगे ह्वै जनक लिए,
रचना रुचिर सब सादर देखाइ कै ।
दिए दिव्य आसन सुपास सावकास अति,
आछे आछे बीछे बीछे बिछौना बिछाइ कै ॥ ३ ॥

८०—तारु = तौल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूपति-किसोर दुहुँ ओर, बीच मुनिराउ,
देखिबे को दाउँ, देखौ देखिबो विहाइ कै ।
उदय-सैल सोहैं सुंदर कुँवर, जोहैं,
मानौ भानु-भोर भूरि किरनि छिपाइ कै ॥ ४ ॥

कौतुक कोलाहल निसान गान पुर नभ,
बरसत सुमन विमान रहे छाइ कै ।
हित अनहित, रत विरत विलोकि बाल,
प्रेम-मोद-मगन जनम-फल पाइ कै ॥ ५ ॥

राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ,
सतानंद ल्याए सिय सिविका चढ़ाइ कै ।
रूप-दीपिका निहारि मृग-मृगी नर-नारि,
विथके विलोचन निमेषँ विसराइ कै ॥ ६ ॥

हानि लाहु अनख उछाहु, बाहुबल कहि,
बंदि बोले विरद अकस उपजाइ कै ।
दीप दीप के महीप आए सुनि पैज पन,
कीजै पुरुषारथ को अवसर भो आइ कै ॥ ७ ॥

आनाकानी, कंठ हँसी मुहाँ-चाही होन लगी,
देखि दसा कहत विदेह बिलखाइ कै ।
घरनि सिधारिए सुधारिए आगिलो काज,
पूजि पूजि धनु कीजै विजय बजाइ कै ॥ ८ ॥

जनक-वचन छुए बिरवा लजारू के से,
बीर रहे सकल सकुचि सिर नाइ कै ।
तुलसी लखन माखे, रोखे, राखे रामरुख,
भाखे मृदु परुष सुभायन रिसाइ कै ॥ ९ ॥ ८२ ॥

भूपति विदेह कही नीकियै जो भई है ।
बड़े ही समाज आजु राजनि की लाज-पति,
हाँकि आँक एक ही पिनाक छीनि लई है ॥ १ ॥
मेरो अनुचित न, कहत लरिकाई-बस,
पन परमिति और भाँति सुनि गई है ।
नतरु प्रभु प्रताप ऊतरु चढ़ाय चाप,
देतो पै देखाइ बल, फल पापमई है ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि के हरैया उखरैया भूमि-धरनि के,
विधि विरचे प्रभाउ जाको जग-जई है ।
विहँसि हिए हरषि हटके लखन राम,
सोहत सकोच-सील-नेह नारि नई है ॥ ३ ॥
सहमी सभा सकल, जनक भए विकल,
राम लखि कौसिक असीस आज्ञा दई है ।
तुलसी सुभाय गुरुपाँय लागि रघुराय,
रिषिराज की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८३ ॥

सोचत जनक पोच पेच परि गई है ।
जोरि कर-कमल निहोरि कहैं कौसिक सों,
'आयसु भो राम को सो मेरे दुचितई है ॥ १ ॥
वान जातुधानपति भूप दीप सातहूँ के,
लोकप बिलोकत पिनाक भूमि लई है ।
जोतिलिंग-कथा सुनि जाको अंत पाए विनु,
आए विधि हरि हारि सोई हाल भई है ॥ २ ॥
आपुही विचारिए निहारिए सभा की गति,
बेद-मरजाद मानौ हेतुवाद हई है ।
इन्हके जितौहैं मन, सोभा अधिकानी तन,
मुखन की सुखमा सुखद सरसई है ॥ ३ ॥
रावरो भरोसो बल, कै है कोऊ कियो छल,
कैधौं कुल को प्रभाव, कैधौं लरिकई है ? ।
कन्या, कल-कीरति, विजय विस्व की बटोरि,
कैधों करतार इन्हहीं को निरमई है ॥ ४ ॥
पन को न मोह, न विसेष चिंता सीता हू की,
लुनिहै पै सोई सोई जोई जेहि वई है ।
रहै रघुनाथ की निकाई नीकी नीके नाथ,
हाथ सों तिहारे करतूति जाकी नई है' ॥ ५ ॥

८३—नारि नई है = नार या गरदन नीची हुई है ।

८४—जोतिलिंग = शैव पुराणों में कथा है कि जब शिव का ज्योतिर्लिंग प्रकट हुआ तब ब्रह्मा और विष्णु उस पर घूमते ही रह गए । किसी को उसका अंत न मिला । हेतुवाद = तर्क शास्त्र ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहि 'साधु साधु' गाधि-सुवन सराहे राउ,
'महराज ! जानि जिय ठीक भली दई है' ।
हरखे लखन, हरखाने बिलखाने लोग,
तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है ॥ ६ ॥ ८४ ॥

सुजन सराहैं जो जनक बात कही है ।
रामहि सोहानी जानि, मुनिमन-मानी सुनि,
नीच महिपावली दहन बिनु दही है ॥ १ ॥
कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों,
'नृपगति अगह, गिरा न जाति गही है ।
देखे सुने भूपति अनेक झूँठे झूँठे नाम,
साँचे तिरहुतिनाथ साखि देति मही है ॥ २ ॥
रागऊ बिराग, भोग जोग जोगवत मन,
जोगी जागवलिक प्रसाद सिद्धि लही है ।
ताते न तरनि तें, न सीरे सुधाकरहू तें,
सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥
ऐसेउ अगाध बोध रावरे सनेह-बस,
बिकल बिलोकति दुचितई सही है ।
कामधेनु-कृपा हुलसानी तुलसीस - उर,
पन-सिसु हेरि, मरजाद बाँधी रही है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

रिषिराज राजा आजु जनक समान को ?
आपु यहि भाँति प्रीति सहित सराहियत,
रागी औ बिरागी बड़भागी ऐसो आन को ? ॥ १ ॥
भूमि भोग करत अनुभवत जोग-सुख,
मुनि-मन-अगम अलख गति जान को ?
गुरु–हर-पद-नेह गेह बसि भो बिदेह,
अगुन सगुन-प्रभु-भजन-सयान को ? ॥२२ ॥
कहनि रहनि एक, बिरति बेबेक नीति,
बेद-बुध-संमत पथी न निरवान को ? ।
गाँठि बिनु गुन की कठिन जड़-चेतन की,
छोरी अनायास, साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥
सुनि रघुबीर की बचन-रचना की रीति,
भयो मिथिलेस मानो दीपक बिहान को ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिटचो महामोह जी को, छूटचो पोच सोच सी को,
जान्यो अवतार भयो पुरुष-पुरान को ।। ४ ।।
सभा नृप गुरु, नर-नारि पुर, नभ सुर,
सब चितवत मुख करुनानिधान को ।
एकै एक कहत प्रगट एक प्रेम-बस,
तुलसीस तोरिए सरासन इसान को ।। ५ ।। ८६ ।।

राग मारू

'सुनो भैया भूप सकल दै कान ।
बज्ररेख गजदसन जनक-पन-बेद-बिदित, जग जान ।। १ ।।
घोर कठोर पुरारि-सरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु ।
जो दसकंठ दियो बाँवों, जेहि हर-गिरि कियो है मनाकु ।। २ ।।
भूमि-भाल भ्राजत न चलत सो ज्यों बिरंचि को आँकु ।
धनु तोरै सोइ बरै जानकी राउ होइ की राँकु' ।। ३ ।।
सुनि आमरखि उठे अवनीपति, लगे बचन जनु तीर ।
टरै न चाप, करैं अपनी सी महा महा बलबीर ।। ४ ।।
नमित-सीस सोचहिँ सलज्ज सब श्रीहत भए सरीर ।
बोले जनक बिलोकि सीय तनु दुखित सरोष अधीर ।। ५ ।।
सप्त दीप नव खंड भूमि के भूपति बृंद जुरे ।
बड़ो लाभ कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप मुरे ।। ६ ।।
डग्यौ न धनु, जनु बीर-बिगत महि, किधौं कहुँ सुभट दुरे ।
रोखे लखन बिकट भृकुटी करि, भुज अरु अधर फुरे ।। ७ ।।
'सुनहु भानुकुल-कमल-भानु ! जो अब अनुसासन पावौं ।
का बापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं ।। ८ ।।
देखौ निज किंकर को कौतुक क्यों कोदंड चढ़ावौं ।
लै धावौं, भंजौं मृनाल ज्यौं तौ प्रभु अनुग कहावौं ।। ९ ।।
हरषे पुर-नर-नारि सचिव नृप कुँवर कहे बर बैन ।
मृदु मुसकाइ राम बरज्यौ प्रिय बंधु नयन की सैन ।।१०।।
कौसिक कह्यौ उठहु रघुनंदन जगबंदन बलऐन ।
तुलसिदास प्रभु चले मृगपति ज्यौं निज भगतनि सुखदैन ।।११।।८७।।

जबहिँ सब नृपति निरास भए ।
गुरुपद-कमल बंदि रघुपति तब चाप-समीप गए ।। १ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्याम-तामरस-दाम-वरन बपु, उर भुज नयन विसाल ।
पीत वसन कटि, कलित कंठ सुंदर सिंधुर - मनि-माल ॥ २ ॥
कल कुंडल, पल्लव प्रसून सिर चारु चौतनी लाल ।
कोटि-मदन-छवि-सदन वदन-विधु, तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥
रूप अनूप विलोकत सादर पुरजन राजसमाज ।
लखन कह्यो थिर होहु धरनिधरु धरनि, धरनिधर आज ॥ ४ ॥
कमठ कोल दिग-दंति सकल अँग सजग करहु प्रभु-काज ।
चहत चपरि सिव-चाप चढ़ावन दसरथ को जुवराज ॥ ५ ॥
गहि करतल, मुनि पुलक सहित, कौतुकहि उठाइ लियो ।
नृपगन-मुखनि समेत नमित करि सजि सुख सबहि दियो ॥ ६ ॥
आकरष्यो सिय-मन समेत हरि, हरष्यो जनक-हियो ।
भंज्यो भृगुपति-गर्व सहित, तिहुँ लोक विमोह कियो ॥ ७ ॥
भयो कठिन कोदंड-कोलाहल प्रलय-पयोद समान ।
चौंके सिव, विरंचि, दिसिनायक रहे मूँदि कर कान ॥ ८ ॥
सावधान ह्वै चढ़े विमाननि चले बजाइ निसान ।
उमगि चल्यो आनंद नगर, नभ जयधुनि मंगलगान ॥ ९ ॥
विप्र-वचन सुनि सखी सुआसिनि चलीं जानकिहिँ ल्याइ ।
कुँवर निरखि जयमाल मेलि उर कुँवरि रही सकुचाइ ॥१०॥
बरषहिँ सुमन असीसहिँ सुर मुनि, प्रेम न हृदय समाइ ।
सीय राम की सुंदरता पर तुलसिदास वलि जाइ ॥११॥ ८८ ॥

राग मलार

जब दोउ दसरथ-कुँवर विलोके ।
जनक-नगर नर-नारि मुदित मन निरखि नयन पल रोके ॥ १ ॥
बय किसोर घन-तड़ित-बरन तनु नखसिख अंग लोभारे ।
दै चित, कै हित, लै सब छवि-वित्त विधि निज हाथ सँवारे ॥ २ ॥
संकट नृपहि, सोच अति सीतहि, भूप सकुचि सिर नाए ।
उठे राम रघुकुल-कल-केहरि गुरु अनुसासन पाए ॥ ३ ॥
कौतुक ही कोदंड खंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई ।
तुलसिदास कीरति रघुपति की मुनिन्ह तिहूँ पुर गाई ॥ ४ ॥८९॥

८९—लोभारे = लुभावने ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग टोड़ी

मुनि-पद-रेनु रघुनाथ माथे धरी है ।
रामरुख निरखि, लखन की रजाइ पाइ,
धरा धराधरनि सुसावधान करी है ।। १ ।।
सुमिरि गनेस गुरु गौरि हर भूमिसुर,
सोचत सकोचत सकोची वानि धरी है ।
दीनबंधु, कृपासिंधु, साहसिक, सीलसिंधु,
सभा को सँकोच, कुलहू की लाज परी है ।। २ ।।
पेखि पुरुषारथ परखि पन पेम नेम,
सिय-हिय की विसेखि वड़ी खरभरी है ।
दाहिनो दियो पिनाकु, सहमि भयो मनाकु,
महाब्याल विकल विलोकि जनु जरी है ।। ३ ।।
सुर हरषत वरषत फूल वार वार,
सिद्ध मुनि कहत सगुन सुभ घरी है ।
रामवाहु-विपट विसाल बौंड़ी देखियत,
जनक-मनोरथ कलपबेलि फरी है ।। ४ ।।
लख्यो न चढ़ावत, न तानत, न तोरत हू,
घोर धुनि सुनि सिव की समाधि टरी है ।
प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत सुख,
एक ही सुलाभ सवही की हानि हरी है ।। ५ ।। ९० ।।

राग सारंग

राम कामरिपु-चाप चढ़ायो ।
मुनिहिँ पुलक, आनंद नगर नभ निरखि निसान वजायो ।। १ ।।
जेहि पिनाक विनु नाक किए नृप, सवहि विषाद वढ़ायो ।
सोइ प्रभु कर परसत टूट्यो जनु हुतो पुरारि पढ़ायो ।। २ ।।
पहिराई जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो ।
तुलसी सुमन वरषि हरषे सुर, सुजस तिहूँ पुर छायो ।। ३ ।। ९१ ।।

राग टोड़ी

जनक मुदित मन टूटत पिनाक के ।
वाजे हैं वधावने सुहावने मंगल-गान,
भयो सुख एकरस रानी राजा राँक के ।। १ ।।

९०—जरी = जड़ी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुंदुभी बजाइ गाइ हरषि, बरषि फूल,
सुरगन नाचैं नाच नायकहू नाक के ।
तुलसी महीस देखे दिन-रजनीस जैसे,
सूने परे सून से मनो मिटाए आँक के ॥ २ ॥ ९२ ॥

लाज तोरि, साजि साज राजा राढ़ रोखे हैं ।
कहा भौ चढ़ाए चाप, ब्याह ह्वैहै बड़े खाए,
बोलैं, खोलैं सेल असि चमकत चोखे हैं ॥ १ ॥
जानि पुरजन त्रसे, धीर दै लखन हँसे,
बल इनको पिनाक नीके नापे जोखे हैं ।
कुलहि लजावैं बाल, बालिस बजावैं गाल,
कैधौं कूर कालवस तमकि त्रिदोखे हैं ॥ २ ॥
कुँवर चढ़ाई भौंहैं, अब को बिलोकै सौंहैं,
जहँ तहँ भे अचेत, खेत के-से धोखे हैं ।
देखे नर-नारि कहैं, साग खाइ जाए माइ,
बाहु पीन पाँवरनि पीना खाइ पोखे हैं ॥ ३ ॥
प्रमुदित-मन लोक-कोकनद-कोकगन,
राम के प्रताप-रवि सोच-सर सोखे हैं ।
तब के देखैया तोखे, तब के लोगनि भले,
अब के सुनैया साधु तुलसिहुँ तोखे हैं ॥ ४ ॥ ९३ ॥

जलमाल जानकी जलज-कर लई है ।
सुमन सुमंगल सगुन की बनाइ मंजु,
मानहुँ मदन-माली आपु निरमई है ॥ १ ॥
राज-रुख लखि गुरु भूसुर सुआसिनिन्ह,
समय समाज की ठवनि भली ठई है ।
चलीं गान करत, निसान बाजे गहगहे,
लहलहे लोयन सनेह सरसई है ॥ २ ॥
हनि देव दुंदुभी हरषि बरषत फूल,
सफल मनोरथ भो, सुख सुचितई है ।

९३—बड़े खाए = (मुहा०) बड़ी कठिनता से । धोखे = खेत में पशु पक्षियों को डराने के लिये खड़ा किया हुआ चीथड़ों का पुतला । पीना = तिल की खली अर्थात् निःसार भोजन ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरजन परिजन रानी राउ प्रमुदित,
मनसा अनूप राम-रूप-रंग रई है॥ ३॥
सतानंद सिख सुनि पाँय परि पहिराई–
माल सिय पिय-हिय सोहत सो भई है।
मानस तें निकसि बिसाल सु तमाल पर,
मानहुँ मरालपाँति बैठी बनि गई है॥ ४॥
हितनि के लाह की, उछाह की, बिनोद मोद,
सोभा की अवधि नहिँ, अब अधिकई है।
याते बिपरीत अनहितन की जानि लीबी,
गति, कहे प्रकट खुनिस खासी खई है॥ ५॥
निज निज बेद की सप्रेम जोग-छेम-मई,
मुदित असीस बिप्र बिदुषनि दई है।
छबि तेहि काल की कृपालु सीतादूलह की,
हुलसति हिए तुलसी के नित नई है॥ ६॥ ९४॥

राग केदारा

लेहु री लोचननि को लाहु।
कुँवर सुंदर साँवरो, सखि सुमुखि! सादर चाहु॥ १॥
खंडि हर-कोदंड ठाढ़े, जानु-लंबित बाहु।
रुचिर उर जयमाल राजति, देत सुख सब काहु॥ २॥
चितै चित हित-सहित नखसिख अंग-अंग निबाहु।
सुकृत निज, सियरामरूप, बिरंचि-मतिहि सराहु॥ ३॥
मुदित मन बरबदन-सोभा उदित अधिक उछाहु।
मनहुँ दूरि कलंक करि ससि समर सूद्यो राहु॥ ४॥
नयन सुखमा-अयन हरत सरोज-सुंदरताहु।
बसत तुलसीदास-उर-पुर जानकी को नाहु॥ ५॥९५॥

राग सारंग

भूप के भाग की अधिकाई।
टूटयो धनुष, मनोरथ पूज्यौ, बिधि सब बात बनाई॥ १॥

९४—खई = झगड़ा लड़ाई।
९४—सूद्यो—सूदन किया। नाश किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तव तें दिन दिन उदय जनक को जव तें जानकी जाई ।
अब यहि ब्याह सफल भयो जीवन, त्रिभुवन विदित बड़ाई ॥ २ ॥
बारहि वार पहुनई ऐहैं राम लखन दोउ भाई ।
एहि आनंद मगन पुरवासिन्ह देह-दसा बिसराई ॥ ३ ॥
सादर सकल विलोकत रामहिँ काम-कोटि-छवि छाई ।
यह सुख-समउ समाज एक मुख क्यों तुलसी कहै गाई ? ॥४॥९६॥

राग सोरठ

मेरे बालक कैसे धौं मग निवहहिँगे ?
भूख, पियास, सीत, स्रम सकुचनि क्यों कौसिकहिँ कहहिँगे ? ॥ १ ॥
को भोर ही उवटि अन्हवैहै, काढ़ि कलेऊ दैहै ?
को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचन-सुख लैहै ? ॥ २ ॥
नयन निमेषनि ज्यों जोगवैं नित पितु परिजन महतारी ।
ते पठए रिषि साथ निसाचर मारन, मख रखवारी ॥ ३ ॥
सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छ-धर दोऊ ।
तुलसी निरखि हरखि उर लैहौं बिधि ह्वैहै दिन सोऊ ? ॥ ४ ॥९७॥

रिषि नृप-सीस ठगौरी सी डारी ।
कुलगुरु, सचिव, निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥
सिरिस-सुमन-सुकुमार कुँवर दोउ, सूर सरोष सुरारी ।
पठए विनहिँ सहाय पयादेहि केलि-बान-धनु-धारी ॥ २ ॥
अति सनेह कातर माता कहै, सुनि सखि ! वचन दुखारी ।
बादि बीर-जननी-जीवन जग, छत्रि-जाति-गति भारी ॥ ३ ॥
जो कहिहै फिरे राम लखन घर करि मुनिमख-रखवारी ।
सो तुलसी प्रिय मोहिँ लागिहै ज्यों सुभाय सुत चारी ॥ ४४ ॥९८॥

जब तें लै मुनि संग सिधाए ।
राम लखन के समाचार, सखि ! तव तें कछुक न पाए ॥ १ ॥
बिनु पानही गमन, फल भोजन, भूमि सयन तरुछाहीं ।
सर सरिता जलपान, सिसुन के संग सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥
कौसिक परम कृपालु परमहित, समरथ, सुखद, सुचाली ।
बालक सुठि सुकुमार सकोची, समुझि सोच मोहि, आली ! ॥ ३ ॥

९८—नेव = नायब, मंत्री । अवरेब = टेढ़ी स्थिति, कठिनाई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचन सप्रेम सुमित्रा के सुनि सब सनेहबस रानी ।
तुलसी ग्राइ भरत तेहि ग्रौसर कही सुमंगल-बानी ॥ ४ ॥ ९९ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए ।
पितु-समीप सब समाचार सुनि मुदित मातु पहँ ग्राए ॥ १ ॥
सजल नयन, तनु पुलक, ग्रधर फरकत लखि प्रीति सुहाई !
कौसल्या लिए लाइ हृदय 'बलि, कहौ कछु है सुधि पाई ?' ॥ २ ॥
सतानंद उपरोहित ग्रपने तिरहुति-नाथ पठाए ।
खेम कुसल रघुबीर-लखन की ललित पत्रिका ल्याए ॥ ३ ॥
दलि ताड़ुका, मारि निसिचर, मख राखि, बिप्र-तिय तारी ।
दै बिद्या, लै गए जनकपुर, हैं गुरु संग सुखारी ॥ ४ ॥
करि पिनाक-पन, सुता-स्वयंबर सजि, नृप-कटक बटोरचो ।
राजसभा रघुबर मृनाल ज्यों संभु-सरासन तोरचो ॥ ५ ॥
यों कहि सिथिल सनेह बंधु दोउ ग्रंब ग्रंक भरि लीन्हें ।
बार बार मुख चूमि, चारु मनि बसन निछावरि कीन्हें ॥ ६ ॥
सुनत सुहावनि चाह ग्रवध घर घर ग्रानंद बधाई ।
तुलसिदास रनिवास रहस-बस, सखी सुमंगल गाई ॥ ७ ॥ १०० ॥

राग कान्हरा

राम लखन सुधि ग्राई, बाजै ग्रवध बधाई ।
ललित लगन लिखि पत्रिका,
उपरोहित के कर जनक-जनेस पठाई ॥ १ ॥
कन्या भूप बिदेह की रूप की ग्रधिकाई ।
तासु स्वयंबर सुनि सब ग्राए,
देस देस के नृप चतुरंग बनाई ॥ २ ॥
पन पिनाक, पबि मेरु तें गुरुता कठिनाई ।
लोकपाल महिपाल बान बानइत,
दसानन सके न चाप चढ़ाई ॥ ३ ॥
तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई ।
भंजि सरासन संभु को जग-जय कल कीरति,
तिय तियमनि सिय पाई ॥ ४ ॥

१००—चाह = खबर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई ।
मातु मुदित मंगल सजैं, कहैं, मुनि-
प्रसाद भए सकल सुमंगल, माई ॥ ५ ॥
गुरु आयसु मंडप रच्यो सब साज सजाई ।
तुलसिदास दसरथ-बरात सजि,
पूजि गनेसहिँ चले निसान बजाई ॥ ६ ॥ १०१ ॥

राग केदारा

मन में मंजु मनोरथ हो री ! ।
सो हर-गौरि-प्रसाद एक तें, कौसिक-कृपा चौगुनो भो, री ! ॥ १ ॥
पन-परिताप, चाप चिंता-निसि, सोच-सकोच-तिमिर नहिँ थोरी ।
रविकुल-रवि अवलोकि सभा-सर हित-चित-वारिज-बन बिकसो री ॥ २ ॥
कुँवर-कुँवरि सब मंगलमूरति नृप दोउ धरम धुरंधर धोरी ।
राजसमाज भूरि-भागी जिन लोचन-लाहु लह्यो एक ठौरी ॥ ३ ॥
ब्याह-उछाह राम-सीता को सुकृत सकेलि बिरंचि रच्यो, री ।
तुलसिदास जानै सोइ यह सुख जेहि उर बसति मनोहर जोरी ॥४॥१०२॥

राजति राम जानकी जोरी ।
स्याम-सरोज जलद-सुंदर वर, दुलहिनि तड़ित-बरन तनु गोरी ॥ १ ॥
ब्याह समय सोहति वितान तर, उपमा कहुँ न लहति मति मोरी ।
मनहुँ मदन-मंजुल-मंडप महँ छवि सिँगार सोभा इक ठौरी ॥ २ ॥
मंगलमय दोउ, अंग मनोहर ग्रथित चूनरी पीत पिछोरी ।
कनककलस कहँ देत भाँवरी, निरखि रूप सारद भइ भोरी ॥ ३ ॥
इत बसिष्ठ मुनि उतहिं सतानँद, बंस-बखान करैं दोउ ओरी ।
इत अवधेस उतहिँ मिथिलापति, भरत अंक सुख-सिंधु हिलोरी ॥ ४ ॥
मुदित जनक, रनिवास रहसबस, चतुर नारि चितवहिँ तृन तोरी ।
गान निसान बेदधुनि सुनि सुर बरषत सुमन, हरष कहैं को री ? ॥ ५ ॥
नयनन को फल पाइ प्रेमबस सकल असीसत ईस निहोरी ।
तुलसी जेहि आनंद-मगन मन क्यों रसना बरनै सुख सो री ! ॥५॥१०३॥

दूलह राम, सीय दुलही री ! ।
घन-दामिनि-बर बरन, हरन-मन सुंदरता नखसिख निबही, री ॥ १ ॥

१०२—हो = था ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्याह-विभूषन-बसन-विभूषित, सखि-अवली लखि ठगि सी रही, री ।
जीवन-जनम-लाहु लोचन-फल है इतनोइ, लह्यो आजु सही, री ॥२॥
सुखमा-सुरभि सिँगार-छीर दुहि मयन अमिय-मय कियो है दही, री ।
मथि माखन सिय राम सँवारे, सकल-भुवन-छवि मनहुँ मही, री ॥ ३ ॥
तुलसिदास जोरी देखत सुख सोभा अतुल न जाति कही, री ।
रूप-रासि बिरची बिरंचि मनो, सिला लवनि रति-काम लही री ॥४॥१०४॥

जैसे ललित लखन लाल लोने ।
तैसिये ललित उरमिला, परसपर लखत सुलोचन-कोने ॥ १ ॥
सुखमासार सिँगारसार करि कनक रचे हैं तिहि सोने ।
रूपप्रेम-परमिति न परत कहि, बिथकि रही मति मौने ॥ २ ॥
सोभा सील सनेह सोहावने, समउ केलिगृह गौने ।
देखि तियनि के नयन सफल भए, तुलसीदास हू के होने ॥३॥१०५॥

राग बिलावल

जानकी-वर सुंदर, माई ।
इंद्रनील-मनि-स्याम सुभग अँग अंग मनोजनि बहु छवि छाई ॥ १ ॥
अरुन चरन, अंगुली मनोहर, नख दुतिवंत कछुक अरुनाई ।
कंज-दलनि पर मनहुँ भौम दस बैठे अचल सु सदसि बनाई ॥ २ ॥
पीन जानु उरु चारु जटित मनि नूपुर पद कल मुखर सोहाई ।
पीतपराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लखि रहे लोभाई ॥ ३ ॥
किंकिनि कनककंज-अवली मृदु मरकत सिखर मध्य जनु जाई ।
गई न उपर सभीत नमित-मुख, बिकसि चहूँ दिसि रही लोनाई ॥ ४ ॥
नाभि गँभीर उदर रेखा वर, उर भृगु-चरन-चिन्ह सुखदाई ।
भुज प्रलंब भूषन अनेक जुत, बसन पीत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥
जज्ञोपवीत विचित्र हेममय, मुक्तामाल उरसि मोहिँ भाई ।
कंद-तड़ित बिच जनु सुरपति-धनु निकट बलाकपाँति चलि आई ॥ ६ ॥
कंबु कंठ, चिबुकाधर सुंदर, क्यों कहौं दसनन की रुचिराई ?
पदुमकोस महँ बसे वज्र मानो निज सँग तड़ित-अरुन-रुचि लाई ॥ ७ ॥

१०४—सिला = शीला, जो दाने खेत काटने समय खेत में गिर जाते हैं । लवनि = लवनी, अनाज की फसल का वह थोड़ा सा बोझ, जो मजदूरों को दिया जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नासिक चारु, ललित लोचन, भ्रू कुटिल, कचनि अनुपम छवि पाई ।
रहे घेरि राजीव उभय मनो चंचरीक कछु हृदय डेराई ॥ ८ ॥
भाल तिलक, कंचन किरीट सिर, कुंडल लोल कपोलनि झाँई ।
निरखहिं नारि-निकर विदेहपुर निमि नृप की मरजाद मिटाई ॥ ९ ॥
सारद सेस संभु निसि वासर चितत रूप न हृदय समाई ।
तुलसिदास सठ क्यों करि वरनै यह छवि, निगम नेति कह गाई।।१०।।१०६।।

राग कान्हरा

भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी ।
क्यों तोरचौ कोमल कर-कमलनि संभु-सरासन भारी ? ।। १ ।।
क्यों मारीच सुवाहु महावल प्रवल ताड़का मारी ?
मुनि-प्रसाद मेरे राम लखन की विधि वड़ि करवर टारी ।। २ ।।
चरनरेनु लै नयननि लावति, क्यों मुनिवधू उधारी ।
कहौ धौं तात ! क्यों जीति सकल नृप वरी है विदेहकुमारी ।।३।।
दुसह रोष-मूरति भृगुपति अति नृपति-निकर-खयकारी ।
क्यों सौंप्यो सारंग हारि हिय, करी है वहुत मनुहारी ।। ४ ।।
उमँग उमँगि आनंद विलोकति वधुनसहित सुत चारी ।
तुलसिदास आरती उतारति प्रेम-मगन महतारी ।।५।।१०७।।

मुदित-मन आरती करै माता ।
कनक वसन मनि वारि वारि करि पुलक प्रफुल्लित गाता ।। १ ।।
पाँलागनि दुलहियन सिखावति सरिस सासु सत-साता ।
देहिँ असीस ते 'वरिस कोटि लगि अचल होउ अहिवाता' ।। २ ।।
रामसीय-छवि देखि जुवतिजन करहिँ परसपर वाता ।
अव जान्यो साँचहू सुनहु, सखि ! कोविद वड़ो विधाता ।। ३ ।।
मंगल-गान निसान नगर नभ, आनँद कह्यो न जाता ।
चिरजीवहु अवधेस-सुवन सव तुलसिदास-सुखदाता ।।४।।१०८।।

१०६—कंद = बादल ।
१०७—करवर = संकट, कठिनाई ।

१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अयोध्या कांड

राग सोरठ

नृप कर जोरि कह्यो गुरु पाहीं ।
तुम्हरी कृपा असीस, नाथ ! मेरी सबै महेस निवाहीं ॥ १ ॥
राम होहिँ जुवराज जियत मेरे यह लालच मन माहीँ ।
बहुरि मोहिँ जियबे मरिबे की चित चिंता कछु नाहीँ ॥ २ ॥
महाराज, भलो काज बिचार्‌यो बेगि बिलंब न कीजै ।
विधि दाहिनो होइ तौ सव मिलि जनम-लाहु लुटि लीजै ॥ ३ ॥
सुनत नगर आनंद बधावन, कैकेयी बिलखानी ।
तुलसीदास देवमायाबस कठिन कुटिलता ठानी ॥४॥ १ ॥

राग गौरी

सुनहु राम मेरे प्रानपियारे ।
बारौं सत्यवचन स्रुति-सम्मत जाते हौं बिछुरत चरन तिहारे ॥ १ ॥
बिनु प्रयास सब साधन को फल प्रभु पायो सो तो नाहिँ सँभारे ।
हरि तजि धरमसील भयो चाहत, नृपति नारिवस सरवस हारे ॥ २ ॥
रुचिर काँचमनि देखि मूढ़ ज्यों करतल तें चिंतामनि डारे ।
मुनि-लोचन-चकोर, ससि-राघव, सिय-जीवनधन सोउ न बिचारे ॥ ३ ॥
जद्यपि नाथ तात ! मायावस सुखनिधान सुत तुम्हहिँ बिसारे ।
तदपि हमहिँ त्यागहु जनि रघुपति दीनबंधु दयालु मेरे बारे ॥ ४ ॥
अतिसय प्रीति बिनीत बचन सुनि प्रभु कोमल-चित चलत न पारे ।
तुलसिदास जो रहौं मातु-हित, को सुर-बिप्र-भूमि-भय टारे ? ॥५॥२॥

रहि चलिए सुंदर रघुनायक ।
जो सुत तात-बचन-पालन-रत, जननिउ तात ! मानिबे लायक ॥ १ ॥
बेदबिदित यह बानि तुम्हारी रघुपति सदा संत-सुखदायक ।
राखहु निज मरजाद निगम की, हौं बलि जाउँ धरहु धनुसायक ॥ २ ॥
सोक-कूप पुर परिहि, मरिहि नृप, सुनि सँदेस रघुनाथ-सिधायक ।
यह दूषन बिधि, तोहिँ होत अब रामचरन-बियोग-उपजायक ॥ ३ ॥
मातु-बचन सुनि स्रवत नयन जल, कछु सुभाउ जनु नरतनु-पायक ।
तुलसिदास सुरकाज न साध्यौ तौ तो दोष होय मोहिँ महि आयक ॥४॥३॥

३—रघुनाथ-सिधायक = रघुनाथ के सिधारने का । नरतनुपायक = नरशरीर पाने का । महिआयक = पृथ्वी पर आने का ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग सोरठ

राम ! हौं कौन जतन घर रहिहौं ?
बार बार भरि अंक गोद लै ललन कौन सों कहिहौं ॥ १ ॥
इहि आँगन विहरत मेरे बारे ! तुम जो संग सिसु लीन्हे ।
कैसे प्रान रहत सुमिरत सुत, बहु विनोद तुम्ह कीन्हे ॥ २ ॥
जिन्ह स्रवननि कल वचन तिहारे सुनि सुनि हौं अनुरागी ।
तिन्ह स्रवननि वनगवन सुनति हौं, मो तें कौन अभागी ? ॥ ३ ॥
जुग सम निमिष जाहिं रघुनंदन-वदनकमल विनु देखे ।
जो तनु रहै वरष बीते, वलि, कहा प्रीति इहि लेखे ? ॥ ४ ॥
तुलसीदास प्रेमवस श्रीहरि देखि विकल महतारी ।
गदगद कंठ, नयन जल, फिरि फिरि आवन कह्यो मुरारी ॥५॥४॥

राग विलावल

रहहु भवन हमरे कहे, कामिनि !
सादर सासु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे अति हित गृह-स्वामिनि ॥ १ ॥
राजकुमारि कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौ मृदु पग गजगामिनि ।
दुसह वात, वरषा, हिम, आतप कैसे सहिहौ अगनित दिन जामिनि ?॥ २ ॥
हौं पुनि पितु-आज्ञा प्रमान करि ऐहौं बेगि सुनहु दुति-दामिनि ।
तुलसिदास प्रभु-विरह-वचन सुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ॥३॥
॥५॥

कृपानिधान सुजान प्रानपति संग विपिन ह्वै आओंगी।
गृह तें कोटि-गुनित सुख मारग चलत, साथ सचु पाओंगी ॥ १ ॥
थाके चरन कमल चापौंगी, स्रम भए वाउ डोलाओंगी ।
नयन-चकोरनि मुख-मयंक-छवि सादर पान कराओंगी ॥ २ ॥
जो हठि नाथ राखिहौ मो कहँ तौ सँग प्रान पठाओंगी ।
तुलसिदास प्रभु-विनु जीवत रहि क्यों फिर वदन देखाओंगी ? ॥३॥६॥

कहौ तुम्ह बिनु गृह मेरो कौन काजु ? ।
विपिन कोटि सुरपुर समान मोको जोपै पिय परिहर्‌यो राजु ॥ १ ॥
बलकल विमल दुकूल मनोहर, कंद मूल फल अमिय नाजु ।
प्रभुपद कमल विलोकिहैं छिन-छिन, इहि तें अधिक कहा सुख-समाजु?॥२॥
तुलसिदास ऐसे विरह-बचन सुनि कठिन हियो विहरो न आजु ॥३॥७॥

पिय निठुर बचन कहे कारन कवन ?
जानत हौ सब के मन की गति, मृदु चित, परम कृपालु, रवन !॥१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राननाथ सुंदर सुजानमनि, दीनबंधु, जग-आरति-दवन।
तुलसिदास प्रभु-पद-सरोज तजि रहिहौं कहा करौंगी भवन? ॥२॥८॥

मैं तुम्ह सों सतिभाव कही है।
बूझति और भाँति भामिनि कत, कानन कठिन कलेस सही है ॥ १ ॥
जौ चलिहौ तो चलौ चलि कै वन, सुनि सिय मन अवलंब लही है।
बूड़त बिरह-वारिनिधि मानहुँ नाह बचन मिस बाँह गही है ॥ २ ॥
प्राननाथ के साथ चलीं उठि अवध सोक-सरि उमँगि वही है।
तुलसी सुनी न कवहुँ काहु कहुँ, तनु परिहरि परिछाँहि रही है ॥३॥९॥

जबहिँ रघुपति-सँग सीय चली।
विकल-वियोग लोग पुरतिय कहैं अति अन्याउ, अली ॥ १ ॥
कोउ कहै मनिगन तजत काँच लगि, करत न भूप भली।
कोउ कहै कुल-कुबेलि कैकेयी दुख-विष-फलनि फली ॥ २ ॥
एक कहैं वन जोग जानकी! विधि बड़ विषम वली।
तुलसी कुलिसहु की कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३ ॥१०॥

ठाढ़े हैं लखन कमल कर जोरे।
उर धकधकी न कहत कछु सकुचनि, प्रभु परिहरत सवनि तृन तोरे ॥१॥
कृपासिंधु अवलोकि बंधु तन, प्रान-कृपान बीर सी छोरे।
तात बिदा माँगिए मातु सों, बनिहै वात उपाइ न औरे ॥ २ ॥
जाइ चरन गहि आयसु जाँचौ, जननि कहत वहुभाँति निहोरे।
सिय-रघुवर-सेवा सुचि ह्वैहौ तौ जानिहौं सही सुत मोरे ॥ ३ ॥
कीजहु इहै विचार निरंतर राम समीप सुकृत नहिँ थोरे।
तुलसी सुनि सिख चले चकित-चित
उड़्यो मानो विहग वधिक भए भोरे ॥४॥११॥

राग सोरठ

मोको विधुवदन विलोकन दीजै।
राम लखन मेरी यहै भेंट, वलि, जाउँ जहाँ मोहिं मिलि लीजै ॥ १ ॥
सुनि पितु-वचन चरन गहे रघुपति, भूप अंक भरि लीन्हें।
अजहुँ अवनि विदरत दरार मिस सो अवसर-सुधि कीन्हें ॥ २ ॥
पुनि सिर नाइ गवन कियो प्रभु, मुरछित भयो भूप न जाग्यो।
करम-चोर नृप-पथिक मारि मानो राम-रतन लै भाग्यो ॥ ३ ॥
तुलसी रविकुल-रवि रथ चढ़ि चले तकि दिसि दखिन सुहाई।
लोग नलिन भए मलिन अवध-सर, बिरह-विषम-हिम पाई ॥४॥१२॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग बिलावल

कहौ सो बिपिन है धौं केतिक दूरि ।
जहाँ गवन कियो कुँवर कोसलपति, बूझति सिय पिय-पतिहि बिसूरि ।।१।।
प्राननाथ परदेस पयादेहि चले सुख सकल तजे तृन तूरि ।
करौं बयारि बिलंबिय बिटपतर, झारौं हौं चरन-सरोरुह-धूरि ।। २ ।।
तुलसिदास प्रभु प्रियाबचन सुनि नीरज नयन नीर आए पूरि ।
कानन कहाँ अबहिं, सुनु, सुंदरि, रघुपति फिरि चितए हित भूरि ।।३।।१३।।

फिरि फिरि राम सीय तनु हेरत ।
तृषित जानि जल लेन लखन गए, भुज उठाइ ऊँचे चढ़ि टेरत ।। १ ।।
अवनि कुरंग, बिहँग द्रुम-डारन रूप निहारत पलक न प्रेरत ।
मगन, न डरत निरखि कर-कमलनि सुभग सरासन सायक फेरत ।। २ ।।
अवलोकत मग-लोग चहूँ दिसि मनहुँ चकोर चंद्रमहिं घेरत ।
ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम-पथिक-पद जे रत ।।३।।१४।।

नृपति-कुँवर राजत मग जात ।
सुंदर बदन, सरोरुह-लोचन मरकत-कनक-बरन मृदुगात ।। १ ।।
अंसनि चाप, तून कटि मुनिपट, जटा मुकुट बिच नूतन पात ।
फेरत पानि-सरोजनि सायक, चोरत चितहिं सहज मुसुकात ।। २ ।।
संग नारि सुकुमारि सुभग सुठि, राजति बिन भूषन नव-सात ।
सुखमा निरखि ग्राम-बनितनि के नलिन-नयन बिकसित मनो प्रात ।।३।।
अंग अंग अगनित अनंग-छवि उपमा कहत सुकबि सकुचात ।
सिय समेत नित तुलसिदास चित, बसत किसोर पथिक दोउ भ्रात ।।४।।१५।।

तू देखि देखि री ! पथिक परम सुंदर दोऊ ।
मरकत-कलधौत-बरन, काम-कोटि कांतिहरन,
चरन-कमल कोमल अति, राजकुँवर कोऊ ।। १ ।।
कर सर-धनु, कटि निषंग, मुनिपट सोहैं सुभग अंग,
संग चंद्रबदनि बधू, सुंदरि सुठि सोऊ ।
तापस बर बेष किए सोभा सब लूटि लिए,
चित के चोर बय किसोर, लोचन भरि जोऊ ।। २ ।।

१५—नव-सात = सोलह शृंगार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनकर-कुल-मनि निहारि प्रेम-मगन ग्राम-नारि,
परसपर कहैं, सखि ! अनुराग ताग पोऊ ।
तुलसी यह ध्यान-सुधन जानि मानि लाभ सघन,
कृपन ज्यों सनेह सों हिए-सुगेह गोऊ ॥३॥१६॥

कुँवर साँवरो, री सजनी ! सुंदर सब अंग ।
रोम रोम छवि निहारि आलि वारि फेरि डारि,
कोटि भानु-सुवन सरद-सोम, कोटि अनंग ॥ १ ॥
वाम अंग लसत चाप, मौलि मंजु जटा-कलाप,
सुचि सर कर, मुनिपट कटि-तट कसे निषंग ।
आयत उर बाहु नैन, मुख-सुखमा को लहै न
उपमा अवलोकि लोक, गिरामति-गति भंग ॥ २ ॥
यों कहि भई मगन बाल, बिथकीं सुनि जुवति-जाल,
चितवत चले जात संग मधुप, मृग, विहंग ।
बरनौं किमि तिनकी दसहि, निगम-अगम प्रेम-रसहि,
तुलसी मन-वसन रँगे रुचिर रूपरंग ॥३॥१८॥

राग कल्यान

देखु कोऊ परम सुंदर सखि ! बटोही ।
चलत महि मृदु चरन अरुन-वारिज-बरन
भूपसुत, रूपनिधि निरखि हौं मोही ॥ १ ॥
अमल मरकत स्याम, सील-सुखमा-धाम,
गौरतनु सुभग सोभा सुमुखि जोही ।
जुगल बिच नारि सकुमारि सुठि सुंदरी,
इंदिरा इंदु-हरि मध्य जनु सोही ॥ २ ॥
करनि बर धनु तीर, रुचिर कटि तूनीर,
धीर, सुर-सुखद , मर्दन-अवनि-द्रोही ।
अंबुजायत नयन, बदन छवि बहु मयन,
चारु चितवनि चतुर लेति चित पोही ॥ ३ ॥
वचन प्रिय सुनि स्रवन राम करुनाभवन,
चितए सब अधिक हित सहित कछु ओही ।
दास तुलसी नेह-बिबस बिसरी देह,
जान नहिँ आपु तेहि काल धौं को ही ॥ ४ ॥१८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग केदारा

सखि ! नीके कै निरखि कोऊ सुठि सुंदर बटोही ।
मधुर मूरति मदनमोहन जोहन-जोग,
वदन सोभा-सदन देखि हौं मोही ॥ १ ॥
साँवरे गोरे किसोर, सुर मुनि चित्त-चोर,
उभय-अंतर एक नारि सोही ।
मनहुँ बारिद बिधु बीच ललित अति,
राजति तड़ित निज सहज बिछोही ॥ २ ॥
उर धीरजहि धरि, जन्म सफल करि,
सुनहि सुमुखि ! जनि बिकल होही ।
को जानै कौने सुकृत लह्यौ है लोचन-लाहु,
ताहि तें बारहि बार कहति तोही ॥ ३ ॥
सखिहि सुसिख दई, प्रेम-मगन भई,
सुरति बिसरि गई आपनी ओही ।
तुलसी रही है ठाढ़ी, पाहन गढ़ी सी काढ़ी,
न जानै कहाँ तें आई, कौन की को ही ॥४॥१६॥

माई ! मन के मोहन जोहन-जोग, जोही ।
थोरी ही बयस गोरे साँवरे सलोने लोने,
लोयन ललित, बिधु-बदन बटोही ॥ १ ॥
सिरनि जटा-मुकुट मंजुल सुमनजुत,
जैसियै लसति नव पल्लव खोही ।
किए मुनि - बेष बीर, धरे धनु तून तीर,
सोहैं मग, को हैं लखि परैं न मोही ॥ २ ॥
सोभा को साँचो सँवारि रूप जातरूप,
ढारि नारि बिरची बिरंचि संग सोही ।
राजत रुचिर तनु सुंदर स्रम के कन,
चाहे चकचौंधी लागै, कहौं का तोही ? ॥ ३ ॥
सनेह-सिथिल सुनि बचन सकल, सिय
चितई अधिक हित सहित ओही ।

१६—निज सहज बिछोही = अपना चंचल स्वभाव छोड़कर ।
२०—खोही=पत्तों का बना हुआ छाता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी मनहुँ प्रभु कृपा की मूरति फिरि
हेरि कै हरषि हिए लियौ है प ही ॥ ४ ॥२०॥

सखि ! सरद -विमल-बिधु-बदनि वधूटी ।
ऐसी ललना सलोनी न भई, न है, न होनी,
रत्यौ रची बिधि जो छोलत छबि छूटी ॥ १ ॥
साँवरे गोरे पथिक बीच सोहति अधिक,
तिहुँ त्रिभुवन-सोभा मनहुँ लूटी ।
तुलसी निरखि सिय प्रेमबस कहैं तिय,
लोचन-सिसुन्ह देहु अमिय घूटी ॥ २ ॥ २१ ॥

सोहैं साँवरे पथिक, पाछे ललना लोनी ।
दामिनि-वरन गोरी, लखि सखि तृन तोरी,
बीती हैं वय किसोरी, जोबन होनी ॥ १ ॥
नीके कै निकाई देखि, जनम सुफल लेखि,
हम सी भूरि-भागिनि नभ न छोनी ।
तुलसी-स्वामी-स्वामिनि जोहे मोही हैं भामिनि,
सोभा-सुधा पिए करि अँखिया दोनी ॥ २ ॥ २२ ॥

पथिक गोरे साँवरे सुठि लोने ।
संग सुतिय जाके तनु तें लही है दुति सोन-सरोरुह, सोने ॥ १ ॥
बय किसोर-सरि-पार मनोहर वयस सिरोमनि होने ।
सोभा-सुधा अलि ! अँचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने ॥ २ ॥
हेरत हृदय हरत, नहिँ फेरत चारु विलोचन कोने ।
तुलसी-प्रभु किधौं प्रभु को प्रेम, पढ़े प्रगट कपट विनु टोने ॥ ३ ॥ २३ ॥

मनोहरता के मानो ऐन ।
स्यामल गौर किसोर पथिक दोउ, सुमुखि ! निरखि भरि नैन ॥ १ ॥
बीच वधू विधुवदनि विराजति उपमा कहुँ कोउ है न ।
मानहुँ रति रितुनाथ सहित मुनि-बेष वनाए है मैन ॥ २ ॥
किधौं सिँगार-सुखमा-सुप्रेम मिलि चले जग-चित-वित लैन ।
अद्भुत त्रयी किधौं पठई है विधि मग-लोगन्हि सुख दैन ॥ ३ ॥
सुनि सुचि सरल सनेह-सुहावने ग्रामवधुन्ह के बैन ।
तुलसी प्रभु तरु तर विलँबे किए प्रेम कनौड़े कै न ? ॥ ४ ॥ २४ ॥

२३—सोन = लाल । बयस सिरोमनि = युवावस्था ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वय किसोर गोरे साँवरे धनुवान धरे हैं ।
सब अँग सहज सोहावने, राजीव जिते नैननि, वदननि विधु निदरे हैं ॥१॥
तून सुमुनिपट कटि कसे, जटा मुकुट करे हैं ।
मंजु मधुर मृदु मूरति, पानह्यों न पायनि, कैसे धौं पथ विचरे हैं ॥२॥
उभर बीच वनिता वनी लखि मोहि परे हैं ।
मदन सप्रिया, सप्रिय सखा मुनि-बेष वनाए लिए मन जात हरे हैं ॥३॥
सुनि जहँ तहँ देखन चले अनुराग भरे हैं ।
राम-पथिक छवि निरखि कै, तुलसी,
मग-लोगनि धाम-काम विसरे हैं ॥ ४ ॥ २५ ॥

कैसे पितु मातु, कैसे ते प्रिय परिजन हैं ?
जग-जलधि ललाम, लोने लोने गोरे-स्याम,
जिन पठए हैं ऐसे बालकनि बन हैं ॥ १ ॥
रूप के पारावार, भूप के कुमार मुनि-बेष,
देखत लोनाई लघु लागत मदन हैं ।
सुखमा की मूरति सी, साथ निसिनाथ-मुखी,
नखसिख अंग सब सोभा के सदन हैं ॥ २ ॥
पंकज-करनि चाप, तीर तरसक कटि,
सरद सरोजहु तें सुंदर चरन हैं ।
सीता राम लखन निहारि ग्रामनारि कहैं,
हेरि, हेरि, हेरि ! हेली हिय के हरन हैं ॥ ३ ॥
प्रानहुँ के प्रान से, सुजीवन के जीवन से,
प्रेमहू के प्रेम, रंक कृपिन के धन हैं ।
तुलसी के लोचन-चकोरनि के चंद्रमा-से,
आछे मन-मोर चित-चातक के घन हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥

राग भैरव

देखि ! द्वै पथिक गोरे साँवरे सुभग हैं ।
सुतिय सलोनी संग सोहत सुभग हैं ॥ १ ॥
सोभासिंधु-संभव से नीके नीके नग हैं ।
मातु-पिता-भाग-बस गए परि फँग हैं ॥ २ ॥
पाइँ पनह्यौं न, मृदु पंकज-से पग हैं ।
रूप की मोहिनी मेलि मोहे अग जग हैं ॥ ३ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुनि-बेष धरे धनु सायक सुभग हैं।
तुलसी हिए लसत लोने लोने डग हैं ॥ ४ ॥ २७ ॥

पथिक पयादे जात पंकज-से पाय हैं।
मारग कठिन कुस-कंटक-निकाय हैं ॥ १ ॥
सखी भूखे प्यासे पै चलत चित चाय हैं।
इन्हके सुकृत सुर संकर सहाय हैं ॥ २ ॥
रूप सोभा प्रेम के से कमनीय काय हैं।
मुनिबेष किए किधौं ब्रह्म-जीव-माय हैं ॥ ३ ॥
बीर बरियार धीर धनुधर-राय हैं।
दसचारि-पुर-पाल आली उरगाय हैं ॥ ४ ॥
मग-लोग देखत करत हाय हाय हैं।
वन इनको तो वाम विधि कै बनाय हैं ॥ ५ ॥
धन्य ते जे मीन-से अवधि-अंबु-आय हैं।
तुलसी प्रभु सों जिन्हहूँ के भले भाय हैं ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग आसावरी

सजनी ! हैं कोउ राजकुमार।
पंथ चलत मृदु पद-कमलनि दोउ सील-रूप-आगार ॥ १ ॥
आगे राजिवनैन स्याम-तनु सोभा अमित अपार।
डारौं वारि अंग अंगनि पर कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥
पाछे गोर किसोर मनोहर, लोचन बदन सुढार।
कटि तूनीर कसे, कर सर-धनु, चले हरन छिति-भार ॥ ३ ॥
जुगुल बीच सुकुमारि नारि इक राजति बिनहि सिँगार।
इंद्रनील, हाटक, मुकुतामनि जनु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥
अवलोकहु भरि नैन, बिकल जनि होहु, करहु सुबिचार।
पुनि कहँ यह सोभा, कहँ लोचन, देह गेह संसार ? ॥ ५ ॥
सुनि प्रिय वचन चितै हित कै रघुनाथ कृपा-सुख-सार।
तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के मन, तन रही न सँभार ॥६॥२९॥

२७—सुलग = पास।

२८—उरगाय = उरुगाय, विष्णु । कै बनाय हैं = बनाय कै हैं, बहुत ही अधिक हैं। अवधि-अंबु-आय = जिनकी आयु अवधि रूपी जल ही तक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग टोड़ी

देखु री सखी ! पथिक नख-सिख नीके हैं ।
नीले पीले कमल से कोमल कलेवरनि
तापस हू, बेष किए काम कोटि फीके हैं ।। १ ।।
सुकृत सनेह सील सुखमा सुख सकेलि
विरचे विरंचि किधौं अमिय अमी के हैं ।
रूप की सी दामिनि सुभामिनी सोहति संग,
उमहुँ रमा तें आछे अंग अंग ती के हैं ।। २ ।।
वन-पट कसे कटि, तून तीर धनु धरे,
धीर बीर पालक कृपालु सवही के हैं ।
पानही न, चरन-सरोजनि चलत मग,
कानन पठाए पितु-मातु कैसे ही के हैं ? ।। ३ ।।
आली अवलोकि लेहु, नयननि के फलु येहु,
लाभ के सुलाभ, सुखजीवन-से जी के हैं ।
धन्य नर नारि जे निहारि विनु गाहक हूँ
आपने आपने मन मोल विनु बीके हैं ।। ४ ।।
विबुध बरखि फूल हरषि हिए कहत,
ग्राम-लोग मगन सनेह सिय-पी के हैं ।
जोगीजन-अगम-दरस पायो पावँरनि,
प्रमुदित मन सुनि सुरप सची के हैं ।। ५ ।।
प्रीति के सुबालक से लालत सुजन मुनि,
मग चारु चरित लखन-राम-सी के हैं ।
जोग न बिराग जाग, तप न तीरथ त्याग,
एही अनुराग भाग खुले तुलसी के हैं ।। ६ ।। ३० ।।

रीति चलिबे की चाहि प्रीति पहिचानि कै ।
आपनी आपनी कहैं प्रेम परबस अहैं,
मंजु मृदु वचन सनेह-सुधा सानि कै ।। १ ।।
साँवरे कुँवर के वराइ कै चरन के चिन्ह,
बधू पग धरति कहा धौं जिय जानि कै ।
जुगल कमल-पद-अंक जोगवत जात,
गोरे गात कुँवर महिमा महा मानि कै ।। २ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी कहनि नीकी, रहनि लखन-सी की,
तिनकी गहनि जे पथिक उर आनि कै।
लोचन सजल, तन पुलक, मगन मन,
होत भूरिभागी जस तुलसी बखानि कै॥ ३॥ ३१॥

राग केदारा

जेहि जेहि मग सिय राम लखन गएं,
तहँ तहँ नर नारि बिनु छर छरिगे।
निरखि निकाई-अधिकाई बिथकित भए
बच, बिय-नैन-सर सोभा-सुधा भरिगे॥ १॥

जोते बिनु, बए बिनु निफन निराए बिनु,
सुकृत-सुखेत सुख-सालि फूलि फरिगे।
मुनिहुँ मनोरथ को अगम अलभ्य लाभ
सुगम सो राम लघु लोगनि को करिगे॥ २॥

लालची कौड़ी के कूर, पारस परे हैं पाले,
जानत न को हैं, कहा कीबो, सो बिसरिगे।
बुधि न बिचार, न बिगार, न सुधार सुधि
देह-गेह-नेह-नाते मन से निसरिगे॥ ३॥

बरखि सुमन सुर हरखि हरखि कहैं
'अनायास भवनिधि नीच नीके तरिगे'।
सो सनेह समउ सुमिरि तुलसीहू के-से,
भली भाँति भले पैंत भले पाँसे परिगे॥४॥३२॥

बोले राज देन को, रजायसु भो कानन को,
आनन प्रसन्न, मन मोद, बड़ो काजु भो।
मातु-पिता-बंधु-हित आपनो परम हित,
मोको बीसहू कै ईस अनुकूल आजु भो॥ १॥
असन अजीरन को समुझि तिलक तज्यौ,
बिपिन-गवनु भले भूखे को सुनाजु भो।

३२--बिनु छर छरिगे = बिना छाँटे हुए छँट कर साफ हो गए (चावल के समान), कना अलग करने के लिये चावल को फिर फटक कर साफ करने को 'छरना' कहते हैं। निफन = अच्छी तरह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरम-धुरीन धीर बीर रघुबीरजू को
कोटि राज सरिस भरत जू को राजु भो ॥ २ ॥
ऐसी बातैं कहत सुनत मग-लोगन की
चले जात बंधु दोउ मुनि को सो साज भो ।
ध्याइबे को, गाइबे को, सेइबे सुमिरिबे को,
तुलसी को सब भाँति सुखद समाज भो ॥३॥३३॥
सिरिस-सुमन-सुकुमारि सुखमा की सींव
सीय, राम बड़े ही सकोच संग लई है ।
भाई के प्रान समान, प्रिया के प्रान के प्रान,
जानि बानि प्रीति रीति कृपा-सील-मई है ॥ १ ॥
आलवाल-अवध सुकामतरु कामबेलि
दूरि करि केकई विपत्ति-बेलि बई है ।
आप, पति, पूत, गुरुजन, प्रिय परिजन,
प्रजाहू को कुटिल दुसह दसा दई है ॥ २ ॥
पंकज-से पगनि पानह्यौं न, परुष पंथ,
कैसे निबहे हैं निबहैंगे गति नई है ? ।
ऐही सोच-संकट-मगन मग-नर-नारि,
सबकी सुमति राम-राग-रंग-रई है ॥ ३ ॥
एक कहैं बाम बिधि दाहिनो हम को भयो,
उत कीन्हीं पीठि, इत को सुडीठि भई है ।
तुलसी सहित बनवासी मुनि हमरिऔ,
अनायास अधिक अघाइ बनि गई है ॥४॥३४॥

राग गौरी

नीके कै मैं न बिलोकन पाए ।
सखि ! यह मग जुग पथिक मनोहर, बधु बिधु-बदनि समेत सिधाए ॥१॥
नयन सरोज, किसोर वयस बर, सीस जटा रचि मुकुट बनाए ।
कटि मुनि-बसन तून, धनु-सर कर, स्यामल गौर सुभाय सोहाए ॥२॥
सुंदर बदन, बिसाल बाहु उर, तनु-छवि कोटि मनोज लजाए ।
चितवत मोहिं लगी चौंधी सी जानौं न कौन कहाँ तें धौं आए ॥ ३ ॥
मनु गयो संग, सोचबस लोचन मोचत बारि, कितौ समुझाए ।
तुलसिदास लालसा दरस की सोइ पुरवै जेहि आनि देखाए ॥४॥३५॥

३३—बीसहू कै = बीसो बिस्वे, पूरी तरह से ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनि न फिरे दोउ बीर बटाऊ ।
स्यामल गौर सहज सुंदर, सखि ! वारक वहुरि विलोकिबे काऊ ॥ १ ॥
कर-कमलनि सर सुभग सरासन, कटि मुनि वसन निषंग सोहाए ।
भुज प्रलंब, सब अंग मनोहर, धन्य सो जनक जननि जेहि जाए ॥ २ ॥
सरद-बिमल-विधु-वदन, जटा सिर, मंजुल अरुन-सरोरुह लोचन ।
तुलसिदास मनमय मारग में राजत कोटि-मदन-मदमोचन ॥३॥३६॥

राग केदारा

आरी ! काहू तौ बूझौ न पथिक कहाँ धौं सिधैहैं ।
कहाँ तें आए हैं, को हैं, कहा नाम स्याम गोरे,
काज कै कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ? ॥ १ ॥
उठति वयस, मसि भीँजति, सलोने सुठि,
सोभा-देखवैया विनु वित्त ही विकैहैं ।
हियो हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत
लोयननि लाहु देत जहाँ जहाँ जैहैं ॥ २ ॥
राम-लषन-सिय-पंथि की कथा पृथुल,
प्रेम विथकी कहति सुमुखि सबै हैं ।
तुलसी तिन्ह सरिस तेऊ भूरिभाग जेऊ
सुनि कै सुचित तेहि समै समैहैं ॥३॥३७॥

वहुत दिन बीते सुधि कछु न लही ।
गए जो पथिक गोरे साँवरे सलोने,
सखि ! संग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥
जानि पहिचानि विनु आपु तें आपुनेहु तें,
प्रानहुँ तें प्यारे प्रियतम उपही ।
सुधा के, सनेह हू के सार लै सँवारे विधि,
जैसे भावते हैं भाँति जाति न कही ॥ २ ॥
वहुरि विलोकिबे कवहुँक, कहत
तनु पुलक, नयन जलधार बही ।
तुलसी प्रभु सुमिरि ग्रामजुवती सिथिल,
विनु प्रयास परीं प्रेम सही ॥३॥३८॥

३७—सुचित समैहैं = चित्त में समवाएँगे अर्थात् धारण करेंगे ।
३८—उपही = ऊपरी, बायबी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग भैरव

आली री ! पथिक जे एहि पथ परौं सिधाए ।
तेतौ राम लखन अवध तें आए ॥ १ ॥
संग सिय सब अंग सहज सोहाए ।
रति, काम, रितुपति कोटिक लजाए ॥ २ ॥
राजा दसरथ रानी कौसिला जाए ।
कैकेयी कुचालि करि कानन पठाए ॥ ३ ॥
वचन कुभामिनी के भूपहिं क्यों भाए ?
हाय हाय राम वाम विधि भरमाए ॥ ४ ॥
कुलगुरु सचिव काहु न समुझाए ।
काँच मनि लै अमोल मानिक गवाँए ॥ ५ ॥
भाग मग-लोगनि के देखन जे पाए ।
तुलसी सहित जिन गुन-गन गाए ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सखि ! जबतें सीता समेत देखे दोउ भाई ।
तब तें परै न कल, कछु न सोहाई ॥ १ ॥
नखसिख नीके, नीके निरखि निकाई ।
तन सुधि गई, मन अनत न जाई ॥ ३ ॥
हेरनि हँसनि हिय लिए हैं चोराई ।
पावन-प्रेम-विवस भई हौं पराई ॥ ३ ॥
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई ।
जीवत जीव के जीवन बनहिं पठाई ॥ ४ ॥
समउ सो चित करि हित अधिकाई ।
प्रीति ग्रामवधुन की तुलसिहुँ गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा

जब तें सिधारे यहि मारग लखन राम
जानकी सहित तब तें न सुधि लही है ।
अवध गए धौं फिरि, कैधौं चढ़े विंध्यगिरि,
कैधौं कहुँ रहे सो कछू न काहू कही है ॥ १ ॥
एक कहैं चित्रकूट निकट नदी के तीर
परनकुटीर करि बसे, बात सही है ।
सुनियत भरत मनाइबे को आवत हैं,
होइगी पै सोई जो विधाता चित्त चही है ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्यसंध धरम-धुरीन रघुनाथजू को
आपनी निवाहिबे नृप की निरवही है।
दस-चारि वरिस विहार वन पदचार
करिबे पुनीत सैल, सर, सरि, मही है ॥ ३ ॥
मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज,
बिगरि बिगरि जहाँ जहाँ जाकी रही है।
पुन पाउँ धारिहैं उधारिहैं तुलसी हूँ से जन,
जिन जिन जानि कै गरीबी गाढ़ी गही है ॥ ४ ॥ ४१ ॥

राग सारंग

ये उपही कोउ कुँवर अहेरी।
स्याम गौर धनु-वान-तूनधर चित्रकूट अव आइ रहे, री ॥ १ ॥
इन्हहिँ बहुत आदरत महामुनि समाचार मेरे नाह कहे, री।
बनिता बंधु समेत वसे बन, पितु हित कठिन कलेस सहे, री ॥ २ ॥
बचन परसपर कहति किरातिनि पुलक गात, जल नयन वहे, री।
तुलसी प्रभुहि बिलोकति एकटक लोचनु जनु बिनु पलक लहे, री ॥ ३ ॥ ४२ ॥

राग चंचरी

चित्रकूट अति बिचित्र, सुंदर वन महि पवित्र,
पावनि पय सरित सकल मल-निकंदिनी।
सानुज जहँ वसत राम, लोक-लोचनाभिराम,
वाम अंग वामावर विस्व-बंदिनी ॥ १ ॥
चितवत मुनिगन चकोर, बैठे निज ठौर ठौर,
अच्छय अकलंक सरद-चंद-चंदिनी।
उदित सदा बन-अकास, मुदित वदत तुलसिदास,
जय जय रघुनंदन, जय जनकनंदिनी ॥ २ ॥ ४३ ॥

---

* टी० बैजनाथ वाली प्रति में तथा एक हस्तलिखित प्रति में इसके आगे ये चार चरण और हैं—
ऋषिबर तहँ छंद बास, गावत कलकंठ हास, कीर्तन उनभाय काय क्रोधकंदिनी।
बर बिधान करत गान, वारत धन मान प्रान, झरना झर झिग झिग झिगजल-तरंगिनी।
बर बिहार चरन चारु पाँड़र चंपक चनार करनहार वार पार पुर पुरंगिनी।
जोबन नव ढरत ढार, दुत्त मत्त मृग मराल, मंद मंद गुंजत हैं अलि अलिगिनि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फटिकसिला मृदु विसाल, संकुल सुरतरु तमाल,
ललित-लता-जाल हरति छवि बितान की ।
मंदाकिनि तटिनि तीर मंजुल-मृग-विहग-भीर,
धीर मुनिगिरा गभीर साम-गान की ॥ १ ॥
मधुकर पिक बरहि मुखर, सुंदर गिरि निर्भर भर,
जल-कन घन छाँह, छन प्रभा न भान की ।
सब रितु रितुपति प्रभाउ, संतत बहै त्रिविध बाउ,
जनु बिहार-बाटिका नृप पंचबान की ॥ २ ॥
बिरचित तहँ पर्नसाल, अति बिचित्र लखन लाल,
निवसत जहँ नित कृपालु राम जानकी ।
निजकर राजीवनयन पल्लव-दल रचित सयन
प्यास परसपर पियूष प्रेम-पान की ॥ ३ ॥
सिय अँग लिखैं धातुराग, सुमननि भूषन-विभाग,
तिलक करनि का कहौं कलानिधान की ।
माधुरी बिलास हास, गावत जस तुलसिदास,
बसति हृदय जोरी प्रिय परम प्रान की ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा

लोने लाल लखन, सलोने राम, लोनी सिय,
चारु चित्रकूट बैठे सुरतरु तर हैं ।
गोरे साँवरे सरीर पीत-नील नीरज-से,
प्रेम-रूप सुखमा के मनसिज-सर हैं ॥ १ ॥
लोने नख-सिख, निरुपम निरखन जोग,
बड़े उर कंधर बिसाल भुज बर हैं ।
लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने,
लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥
लोने लोने धनुष, बिसिख कर-कमलनि,
लोने मुनिपट, कटि लोने सर-घर हैं ।
प्रिया प्रिय बंधु को दिखावत बिटप, बेलि,
मंजु कुंज, सिलातल, दल, फूल, फर हैं ॥ ३ ॥

४४—सयन = शयनासन, बिस्तर ।
४५—सरघर = तरकश, तूणीर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिषिन के आश्रम सराहैं, मृग नाम कहैं,
लागि मधु, सरित, झरत निर्झर हैं।
नाचत वरहि नीके, गावत मधुप पिक,
बोलत विहंग, नभ-जल-थल-चर हैं ॥ ४ ॥
प्रभुहिँ विलोकि मुनिगन पुलके कहत
भूरिभाग भये सब नीच नारि-नर हैं।
तुलसी सो सुख-लाहु लूटत किरात कोल
जाको सिसकत सुर-विधि-हरि-हर हैं ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग सारंग

आइ रहे जब तें दोउ भाई।
तब तें चित्रकूट-कानन-छवि दिन दिन अधिक अधिक अधिकाई ॥ १ ॥
सीता-राम-लखन-पद-अंकित अवनि सोहावनि वरनि न जाई।
मंदाकिनि मज्जत अवलोकत त्रिविध पाप त्रयताप नसाई ॥ २ ॥
उकठेउ हरित भए-जल-थल-रुह, नित नूतन राजीव सुहाई।
फूलत फलत पल्लवत पलुहत विटप बेलि अभिमत सुखदाई ॥ ३ ॥
सरित सरनि सरसीरुह-संकुल सदन सँवारि रमा जनु छाई।
कूजत विहँग, मंजु गुंजत अलि, जात पथिक जनु लेत बुलाई ॥ ४ ॥
त्रिविध समीर नीर झर झरनहि जहँ तहँ रहे रिषि कुटी बनाई।
सीतल सुभग सिलनि पर तापस करत जोग जप तप मन लाई ॥ ५ ॥
भए सब साधु किरात किरातिनि, राम-दरस मिटि गइ कलुषाई।
खग मृग मुदित एक सँग विहरत सहज विषम बड़ बैर बिहाई ॥ ६ ॥
कामकेलि बाटिका, विबुध-बन, लघु उपमा कवि कहत लजाई।
सकल भुवन सोभा सकेलि मनौ राम-विपिन विधि आनि बसाई ॥ ७ ॥
बन मिस मुनि, मुनितिय, मुनि-बालक बरनत रघुबर-विमल-बड़ाई।
पुलक सिथिल तनु, सजल सुलोचनु प्रमुदित मन जीवन फलु-पाई ॥ ८ ॥
क्यों कहौं चित्रकूट-गिरि संपति महिमा मोद मनोहरताई।
तुलसी जहँ बसि लखन राम सिय आनँद-अवधि अवध बिसराई ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग गौरी

देखत चित्रकूट वन मन अति होत हुलास।
सीता-राम - लखन - प्रिय, तापस-बृंद-निवास ॥ १ ॥
सरित सोहावनि पावनि, पापहरनि पय नाम।
सिद्ध-साधु-सुर-सेवित देति सकल मन काम ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटप बेलि नव किसलय, कुसुमित सघन सुजाति ।
कंदमूल, जलथल-रुह, अगनित अनवन भाँति ॥ ३ ॥
बंजुल मंजु, बकुल कुल सुरतरु, ताल, तमाल ।
कदलि, कदंब, सुचंपक, पाटल, पनस, रसाल ॥ ४ ॥
भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग ।
वन विलोकि लघु लागहिँ विपुल विबुध-वन-बाग ॥ ५ ॥
जाइ न बरनि राम-वन चितवत चित हरि लेत ।
ललित-लता-द्रुम-संकुल मनहुँ मनोज-निकेत ॥ ६ ॥
सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग ।
गुंजत मंजु मधुपगन कूजत विविध विहंग ॥ ७ ॥
लखन कहेउ रघुनंदन देखिय विपिन-समाज ।
मानहुँ चयन मयन-पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥
चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुरागु ।
सखा सहित जनु रतिपति आयउ खेलन फागु ॥ ९ ॥
झिलिल झाँझ, झरना डफ, पनव मृदंग, निसान ।
भेरि उपंग, भृंग रव ताल, कीर कलगान ॥१०॥
हंस कपोत, कबूतर बोलत चक्क चकोर ।
गावत मनहुँ नारिनर मुदित नगर चहुँ ओर ॥११॥
चित्र विचित्र विविध मृग डोलत डोँगर डाँग ।
जनु पुरबीथिन विहरत छैल सँवारे स्वाँग ॥१२॥
नचहिँ मोर, पिक गावहिँ, सुर बर राग बँधान ।
निलज तरुन तरुनी जनु खेलहिं समय समान ॥१३॥
भरि भरि सुंड करिनि करि जहँ तहँ डारहिँ वारि ।
भरत परसपर पिचकनि मनहुँ मुदित नर नारि ॥१४॥
पीठि चढ़ाइ सिसुन्ह कपि कूदत डारहिँ डार ।
जनु मुँह लाइ गेरु मसि भए खरनि असवार ॥१५॥
लिए पराग सुमनरस डोलत मलय समीर ।
मनहुँ अरगजा छिरकत, भरत गुलाल अबीर ॥१६॥
काम कौतुकी यहि विधि प्रभुहित कौतुक कीन्ह ।
रीझि राम रतिनाथहिँ जगविजयी बर दीन्ह ॥१७॥
दुखवहु मोरे दास जनि, मानेहु मोरि रजाइ ।
'भलेहि नाथ' माथे धरि आयसु चलेउ बजाइ ॥१८॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुदित किरात किरातिनि रघुवर-रूप निहारि ।
प्रभुगुन गावत नाचत चले जोहारि जोहारि ॥१९॥
देहिँ असीस प्रसंसहिँ मुनि, सुर वरषहिँ फूल ।
गवने भवन राखि उर मूरति मंगलमूल ॥२०॥
चित्रकूट कानन छवि को कवि वरनै पार ।
जहँ सिय लखन सहित नित रघुवर करहिँ विहार ॥२१॥
तुलसिदास चाँचरि मिस कहे राम गुन-ग्राम ।
गावहिँ सुनहिँ नारि नर पावहिँ सब अभिराम ॥२२॥४७॥

राग वसंत

आजु बन्यो है विपिन देखो, राम धीर ।
मानो खेलत फागु मुद मदन बीर ॥ १ ॥
वट वकुल कदंब पनस रसाल ।
कुसुमित तरु-निकर कुरव तमाल ॥
मानो विविध बेष धरे छैल-जूथ ।
विच बीच लता ललना - वरूथ ॥ २ ॥
पनवानक निर्झर, अलि उपंग ।
बोलत पारावत मानो डफ मृदंग ॥
गायक सुक कोकिल, झिल्लि ताल ।
नाचत वहु भाँति वरहिँ मराल ॥ ३ ॥
मलयानिल सीतल सुरभि मंद ।
वह सहित सुमन - रस रेनु - बृंद ॥
मनु छिरकत फिरत सबनि सुरंग ।
भ्राजत उदार लीला अनंग ॥ ४ ॥
क्रीड़त जीते सुर असुर नाग ।
हठि सिद्ध मुनिन के पंथ लाग ॥
कह तुलसिदास तेहि छाँड़ मैन ।
जेहि राख राम राजीवनैन ॥ ५ ॥ ४८ ॥
रितुपति आए भलो बन्यो वनसमाज ।
मानो भए हैं मदन महाराज आज ॥ १ ॥

४७—अनवन = भिन्न भिन्न, नाना । डोंगर = ऊँची ज़मीन या टीला । डांग = घना वनखंड ।

४८—कुरव = कुरवक, कटसरैया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनो प्रथम फागु मिस करि अनीति ।
होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥
मारुत मिस पत्र-प्रजा उजारि ।
नय नगर बसाए बिपिन झारि ॥ २ ॥
सिंहासन सैल सिला सुरंग ।
कानन छवि रति, परिजन कुरंग ॥
सित छत्र सुमन, बल्ली बितान ।
चामर समीर, निर्झर निसान ॥ ३ ॥
मनो मधु माधव दोउ अनिप धीर ।
बर बिपुल बिटप बानैत बीर ॥
मधुकर सुक कोकिल बंदि-बृंद ।
बरनहिं बिसुद्ध जस बिविध छंद ॥ ४ ॥
महि परत सुमन-रस फल पराग ।
जनु देत इतर नृप कर-बिभाग ॥
कलि सचिव सहित नय-निपुन मार ।
कियो बिस्व बिबस चारिहु प्रकार ॥ ५ ॥
बिरहिन पर नित नइ परै मारि ।
डाँड़ियत सिद्ध साधक प्रचारि ॥
तिनकी न काम सकै चापि छाँह ।
तुलसी जे बसहिं रघुबीर-बाँह ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार

सब दिन चित्रकूट नीको लागत ।
बरषारितु प्रबेस बिसेष गिरि देखत मन अनुरागत ॥ १ ॥
चहुँदिसि बन संपन्न, बिहँग मृग बोलत सोभा पावत ।
जनु सुनरेस देस पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत ॥ २ ॥
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि ।
मनहुँ आदि अंभोज बिराजत सेवित सुर-मुनि-भृंगनि ॥ ३ ॥
सिखर परसि घन घटहिं, मिलति बग पाँति सो छवि कवि बरनी ।
आदि बराह बिहरि बारिधि मनो उठ्यो है दसन धरि धरनी ॥ ४ ॥
जल-जुत बिमल सिलनि झलकत नभ, बन-प्रतिबिंब तरंग ।
मानहुँ जग-रचना बिचित्र बिलसति बिराट अँग अंग ॥ ५ ॥
मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे ।
तुलसी सकल सुकृत सुख लागे मानौ राम भगति के पाछे ॥ ६ ॥ ५० ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग सोरठ

आजु को भोर और सो, माई ।
सुनौं न द्वार बेद बंदी धुनि गुनिगन-गिरा सोहाई ॥ १ ॥
निज निज सुंदर पति सदननि तें रूप-सील-छवि छाई ।
लेन असीस सीय आगे करि मोपै सुतवधू न आई ॥ २ ॥
बूझी हौं न बिहँसि मेरे रघुवर 'कहाँ री ! सुमित्रा माता ?' ।
तुलसी मनहुँ महासुख मेरो देखि न सकेउ विधाता ॥ ३ ॥ ५१ ॥

जननी निरखति बान धनुहियाँ ।
बार बार उर नैननि लावति प्रभुजू की ललित पनहियाँ ॥ १ ॥
कवहुँ प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय वचन सवारे ।
"उठहु तात ! बलि मातु वदन पर, अनुज सखा सब द्वारे" ॥ २ ॥
कवहुँ कहति यों "बड़ी बार भइ जाहु भूप पहँ, भैया ।
बंधु बोलि जेंइय जो भावै गई निछावरि मैया" ॥ ३ ॥
कवहुँ समुझि बनगमन राम को रहि चकि चित्रलिखी सी ।
तुलसिदास वह समय कहे तें लागति प्रीति सिखी सी ॥ ४ ॥ ५२ ॥

माई री ! मोहिँ कोउ न समुझावै ।
राम-गवन साँचो किधौं सपनो, मन परतीति न आवै ॥ १ ॥
लगेइ रहत मेरे नैननि आगे राम लखन अरु सीता ।
तदपि न मिटत दाह या उर को, बिधि जो भयो बिपरीता ॥ २ ॥
दुख न रहै रघुपतिहिँ बिलोकत, तनु न रहै बिनु देखे ।
करत न प्रान पयान सुनहु, सखि ! अरुझि परी यहि लेखे ॥ ३ ॥
कौसल्या के बिरह-वचन सुनि रोइ उठीं सब रानी ।
तुलसिदास रघुबीर-बिरह की पीर न जात बखानी ॥ ४ ॥ ५३ ॥

जब जब भवन बिलोकति सूनो ।
तब तब बिकल होति कौसिल्या दिन दिन प्रति दुख दूनो ॥ १ ॥
सुमिरत बाल-बिनोद राम के सुंदर मुनि-मन-हारी ॥
होत हृदय अति सूल समुझि पदपंकज अजिर-बिहारी ॥ २ ॥
को अब प्रात कलेऊ माँगत रूठि चलैगो, माई !
स्याम-तामरस-नैन स्रवत जल काहि लेउँ उर लाई ॥ ३ ॥
जीवों तो बिपति सहौं निसिबासर मरौं तौ मन पछितायो ।
चलत बिपिन भरि नयन राम को बदन न देखन पायो ॥ ४ ॥
तुलसिदास यह दुसह दसा अति, दारुन बिरह घनेरो ।
दूरि करै को भूरि कृपा बिनु सोकजनित रुज मेरो ? ॥ ५ ॥ ५४ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरो यह अभिलाषु विधाता ।
कब पुरवै सखि सानुकूल ह्वै हरि सेवक - सुख - दाता ॥ १ ॥
सीता सहित कुसल कोसलपुर आवत हैं सुत दोऊ ।
स्रवन-सुधा-सम वचन सखी कब आइ कहैगो कोऊ ? ॥ २ ॥
सुनि संदेस प्रेम-परिपूरन संभ्रम उठि धावौंगी ।
वदन विलोकि रोकि लोचन-जल हरषि हिए लावौंगी ॥ ३ ॥
जनकसुता कब सासु कहै मोहिँ, राम लखन कहैं मैया ।
बाहु जोरि कब अजिर चलहिँगे स्यामगौर दोउ भैया ॥ ४ ॥
तुलसिदास यहि भाँति मनोरथ करत प्रीति अति बाढ़ी ।
थकित भई उर आनि राम-छवि मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी ॥ ५ ॥ ५५ ॥

सुन्यो जब फिरि सुमंत पुर आयो ।
कहिहै कहा प्रानपति की गति, नृपति विकल उठि धायो ॥ १ ॥
पाँय परत मंत्री अति व्याकुल, नृप उठाइ उर लायो ।
दसरथ-दसा देखि न कह्यो कछु हरि जो सँदेस पठायो ॥ २ ॥
बूझि न सकत कुसल प्रीतम की हृदय यहै पछितायो ।
साँचेहु सुत-वियोग सुनिबे कहँ धिग विधि मोहिं जिआयो ॥ ३ ॥
तुलसिदास प्रभु जानि निठुर हौं न्याय नाथ विसरायो ।
हा ! रघुपति कहि परयो अवनि जनु जल तें मीन विलगायो ॥ ४ ॥५६॥

मुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ ।
नारिवस न विचारि कीन्हों काज, सोचत राउ ॥ १ ॥
तिलक को बोल्यो, दियो वन, चौगुनो चित चाउ ।
हृदय दाड़िम ज्यौं न विदरयो समुझि सील सुभाउ ॥ २ ॥
सीय रघुवर लखन विनु, भय भभरि भगी न आउ ।
मोहिं बूझि न परत यातें कौन कठिन कुघाउ ॥ ३ ॥
सुनि सुमंत ! कि आनि सुंदर सुवन सहित जिआउ ।
दास तुलसी नतरु मोको मरन-अमिय पिआउ ॥ ४ ॥ ५७ ॥

अवध विलोकि हौं जीवत रामभद्र-विहीन ।
कहा करिहैं आइ सानुज भरत धरमधुरीन ॥ १ ॥
राम-सोक-सनेह-संकुल, तनु विकल, मनु लीन ।
टूटि तारो गगन-मग ज्यों होत छिन छिन छीन ॥ २ ॥
हृदय समुझि सनेह सादर प्रेम-पावन-मीन ।
करी तुलसीदास दसरथ प्रीति-परमिति पीन ॥ ३ ॥ ५८ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग गौरी

करत राउ मन मों अनुमान ।
सोक-विकल मुख वचन न आवै बिछुरे कृपानिधान ॥ १ ॥
राज देन कहि बोलि नारि - बस मैं जो कह्यौं बन जान ।
आयसु सिर धरि चले हरषि हिय कानन भवन समान ॥ २ ॥
ऐसे सुत के बिरह-अवधि लौं जौ राखौं यह प्रान ।
तौ मिटि जाइ प्रीति की परिमिति, अजस सुनौं निज कान ॥ ३ ॥
राम गए अजहूँ हौं जीवत समुझत हिय अकुलान ।
तुलसिदास तनु तजि रघुपति हित कियो प्रेम परवान ॥ ४ ॥ ५९ ॥

ऐसे तैं क्यों कटु वचन कह्यो, री ?
'राम जाहु कानन' कठोर तेरो कैसे धौं हृदय रह्यो री ॥ १ ॥
दिनकर-बंस, पिता दसरथ - से, राम - लखन - से भाई ।
जननी ! तू जननी ? तौ कहा कहौं विधि केहि खोरि न लाई ? ॥ २ ॥
हौं लहिहौं सुख राजमातु ह्वै, सुत सिर छत्र धरैगो ।
कुल-कलंक मल-मूल मनोरथ तव बिनु कौन करैगो ? ॥ ३ ॥
ऐहैं राम, सुखी सब ह्वैहैं, ईस अजस मेरो हरिहैं ।
तुलसिदास मोको बड़ो सोच, तू जनम कौनि विधि भरिहै ॥ ४ ॥ ६० ॥

तातें हौं देत न दूषन तोहूँ ।
रामबिरोधी उर कठोर तें प्रगट कियो है विधि मोहूँ ॥ १ ॥
सुंदर सुखद सुसील सुधानिधि, जरनि जाइ जिहिँ जोए ।
विष-बारुनी-बंधु कहियत बिधु ! नातो मिटत न धोए ॥ २ ॥
होते जौ न सुजान-सिरोमनि राम सब के मन माहीं ।
तौ तोरी करतूति, मातु ! सुनि, प्रीति प्रतीति कहा हीं ? ॥ ३ ॥
मृदु मंजुल सीँची-सनेह सुचि सुनत भरत-बर-बानी ।
तुलसी 'साधु साधु' सुर नर मुनि कहत प्रेम पहिचानी ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जो पै हौं मातु मते महँ ह्वैहौं ।
तौ जननी ! जग में या मुख की कहाँ कालिमा ध्वैहौं ? ॥ १ ॥
क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि ? कौन मानिहै साँची ? ।
महिमा-मृगी कौन सुकृती की खल-वच-बिसिखन बाँची ? ॥ २ ॥
गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै ।
दीनबंधु कारुन्य-सिंधु बिनु कौन हिए की बूझै ? ॥ ३ ॥
तुलसी रामबियोग-बिषम-बिष-बिकल नारिनर भारी ।
भरत-सनेह-सुधा सींचे सब भए तेहि समय सुखारी ॥ ४ ॥ ६२ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काहे को खोरि कैकइहि लावौं ?
धरहु धीर बलि जाउँ, तात ! मोको ग्राज विधाता बावौं ॥ १ ॥
सुनिबे जोग वियोग राम को हौं न होउँ मेरे प्यारे ।
सो मेरे नयननि ग्रागे तें रघुपति वनहिं सिधारे ॥ २ ॥
तुलसिदास समुझाइ भरत कहँ ग्राँसु पोंछि उर लाए ।
उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित, मनहुँ राम फिरि ग्राए ॥ ३ ॥ ६३ ॥

मेरो ग्रवध धौं कहहु कहा है ।
करहु राज रघुराज-चरन तजि, लै लटि लोगु रहा है ॥ १ ॥
धन्य मातु, हौं धन्य, लागि जेहि राज-समाज ढहा है ।
तापर मोकों प्रभु करि चाहत, सब बिनु दहन दहा है ॥ २ ॥
राम-सपथ कोउ कछू कहै जनि, मैं दुख दुसह सहा है ।
चित्रकूट चलिए सब मिलि, बलि, छमिए मोहिं हहा है ॥ ३ ॥
यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है ।
सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥
जानहिं सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है ।
कै तुलसी जाको राम-नाम सों प्रेम-नेम निवहा है ॥ ५ ॥ ६४ ॥

माई ! हौं ग्रवध कहा रहि लैहौं ।
राम-लखन-सिय-चरन बिलोकन काल्हि काननहिं जैहौं ॥ १ ॥
जद्यपि मोतें, कै कुमातु तें, ह्वै ग्राई ग्रति पोची ।
सन्मुख गए सरन राखहिंगे रघुपति परम सँकोची ॥ २ ॥
तुलसी यों कहि चले भोरहीं, लोग विकल सँग लागे ।
जनु वन जरत देखि दारुन दव निकसि विहँग मृग भागे ॥ ३ ॥ ६५ ॥

सुक सों गहवर हिए कहै सारो ।
बीर कीर ! सिय राम लखन बिनु लागत जग ग्रँधियारो ॥ १ ॥
पापिनि चेरि, ग्रयानि रानि, नृप हित ग्रनहित न विचारो ।
कुलगुरु सचिव साधु सोचतु, विधि को न बसाइ उजारो ? ॥ २ ॥
ग्रवलोके न चलत भरि लोचन, नगर कोलाहल भारो ।
सुने न वच करुनाकर के जब पुर परिवार सँभारो ॥ ३ ॥
भैया भरत भावते के सँग बन सब लोग सिधारो ।
हम पँख पाइ पींजरनि तरसत, ग्रधिक ग्रभाग हमारो ॥ ४ ॥

६४--लै लटि लोग रहा है = इसी धुन में लोग हैरान हो रहे हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनि खग कहत अंब ! मौंगी रहि समुझि प्रेमपथ न्यारो ।
गए ते प्रभुहि पहुँचाइ फिरे पुनि करत करम गुन गारो ॥ ५ ॥
जीवन जग जानकी लखन को, मरन महीप सँवारो ।
तुलसी और प्रीति की चरचा करत कहा कछु चारो ॥ ६ ॥ ६६ ॥

कहै सुक सुनहि सिखावहि, सारो ।
बिधि करतब बिपरीत बाम गति, रामप्रेम-पथ न्यारो ॥ १ ॥
को नर-नारि अवध खग मृग जेहि जिवन राम तें प्यारो ।
बिद्यमान सब के गवने बन, बदन करम को कारो ॥ २ ॥
अंब अनुज प्रिय सखा सुसेवक देखि बिषाद बिसारो ।
पंछी परबस परे पीँजरनि लेखो कौन हमारो ॥ ३ ॥
रही नृप की, बिगरी है सब की, अब एक सँवार निहारो ।
तुलसी प्रभु निज चरन-पीठ-मिस भरत-प्रान रखवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

ता दिन शृंगबेरपुर आए ।
राम-सखा तें समाचार सुनि बारि बिलोचन छाए ॥ १ ॥
कुस साथरी देखि रघुपति की हेतु अपनपौ जानी ।
कहत कथा सिय राम लखन की बैठेहि रैनि बिहानी ॥ २ ॥
भोरहि भरद्वाज आश्रम ह्वै करि निषादपति आगे ।
चले जनु तक्यो तड़ाग तृषित गज घोर घाम के लागे ॥ ३ ॥
बूझत 'चित्रकूट कहँ', जेहि तेहि मुनि बालकनि बतायो ।
तुलसी मनहुँ फनिक मनि ढूँढ़त निरखि हरषि हिय धायो ॥ ४ ॥ ६८ ॥

राग केदारा

बिलोके दूरि तें दोउ बीर ।
उर आयत, आजानु सुभग भुज, स्यामल गौर सरीर ॥ १ ॥
सीस जटा, सरसीरुह लोचन, बने परिधन मुनिचीर ।
निकट निषंग, संग सिय सोभित, करनि धुनत धनु तीर ॥ २ ॥
मन अगहुँड़ तनु पुलक सिथिल भयो, नलिन-नयन भरे नीर ।
गड़त गोड़ मानों सकुच-पंक महँ, कढ़त प्रेम-बल धीर ॥ ३ ॥
तुलसिदास दसा देखि भरत की उठि धाए अतिहि अधीर ।
लिए उठाइ उर लाइ कृपानिधि बिरह-जनित हरी पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

६६—सारो = शारिका, मैना । मौंगी रहि = चुपचाप रह ।
६९—धुनत = क्रीड़ावश धनुष की डोरी पर मारते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भरत भए ठाढ़े कर जोरि।
ह्वै न सकत सामुहें सकुचवस समुझि मातुकृत खोरि॥ १॥
फिरिहैं किधौं फिरन कहिहैं प्रभु कलपि कुटिलता मोरि।
हृदय सोच, जल भरे विलोचन, नेह देह भइ भोरि॥ २॥
बनवासी, पुरलोग, महामुनि किए हैं काठ के-से कोरि।
दै दै स्रवन सुनिबे को जहँ तहँ रहे प्रेम मन बोरि॥ ३॥
तुलसी राम-सुभाव सुमिरि उर धरि धीरजहि वहोरि।
बोले वचन विनीत उचित हित करुना-रसहिँ निचोरि॥ ४॥ ७०॥

जानत हौ सवही के मन की।
तदपि कृपालु करौं विनती सोइ सादर सुनहु दीन हित जन की॥ १॥
ए सेवक संतत अनन्य अति ज्यों चातकहि एक गति घन की।
यह विचारि गवनहु पुनीत पुर, हरहु दुसह आरति परिजन की॥ २॥
मेरो जीवन जानिय ऐसोइ जैसो अहि जासु गई मनि फन की।
मेटहु कुलकलंक कोसलपति आज्ञा देहु नाथ मोहिँ वन की॥ ३॥
मोकों जोइ लाइय लागै सोइ, उतपति है कुमातु तें तन की।
तुलसिदास सब दोष दूरि करि प्रभु अब लाज करहु निज पन की॥४॥७१॥

तात! विचारो धौं हौं क्यौं आवौं।
तुम्ह सुचि सुहृद सुजान सकल विधि, वहुत कहा कहि कहि समुझावौं॥१
निज कर खाल खैंचि या तनु तें जौ पितु-पग-पानहीं करावौं।
होउँ न उरिन पिता दसरथ तें, कैसे ताके वचन मेटि पति पावौं॥ २॥
तुलसिदास जाको सुजस तिहूँ पुर क्यों तेहि कुलहिँ कालिमा लावौं।
प्रभु रुख निरखि निरास भरत भए, जान्यो है सवहि भाँति विधि वावौं?
॥ ३॥ ७२॥

राग सोरठ

वहुरो भरत कह्यो कछु चाहैं।
सकुच-सिंधु बोहित विवेक करि बुधि वल वचन निवाहैं॥ १॥
छोटे हुतें छोह करि आए, मैं सामुहें न हेरो।
एकहि वार आजु विधि मेरो सील सनेह निबेरो॥ २॥
तुलसी जो फिरिबो न वनै प्रभु तौ हौं आयसु पावौं।
घर फेरिए लखन लरिका हैं, नाथ साथ हौं आवौं॥ ३॥ ७३॥

७०—कोरि = छीलछाल कर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रघुपति ! मोहि संग किन लीजै ।
बारबार 'पुर जाहु' नाथ ! केहि कारन आयसु दीजै ॥ १ ॥
जद्यपि हौं अति अधम कुटिल मति अपराधिनि को जायो ।
प्रनतपाल कोमल-सुभाव जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥
जो मेरे तजि चरन आन गति, कहौं हृदय कछु राखी ।
तौ परिहरहु दयालु दीनहित प्रभु अभिअंतर-साखी ॥ ३ ॥
ताते, नाथ ! कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं ।
भजन-हीन नरदेह बृथा खर स्वान फेरु की नाईं ॥ ४ ॥
बंधु-वचन सुनि स्रवन नयन राजीव नीर भरि आए ।
तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बाँह भरत उर लाए ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि हिये हौ ?
प्रीति नीति गुन सील धर्म कहँ तुम अवलंब दिये हौ ॥ १ ॥
तात ! जात जानिबे न ए दिन; करि प्रमान पितु बानी ।
ऐहौं बेगि, धरहु धीरज उर कठिन कालगति जानी ॥ २ ॥
तुलसिदास अनुजहिं प्रबोधि प्रभु चरनपीठ निज दीन्हें ।
मनहुँ सबनि के प्रान-पाहरू भरत सीस धरि लीन्हें ॥ ३ ॥ ७५ ॥

बिनती भरत करत कर जोरे ।
दीनबंधु दीनता दीन की कबहुँ परै जिनि भोरे ॥ १ ॥
तुम्ह-से तुम्हहिं नाथ मोको, मोसे जन तुमको बहुतेरे ।
इहै जानि पहिचानि प्रीति छमिए अब औगुन मेरे ॥ २ ॥
यों कहि सीय-राम-पाँयनि परि लखन लाइ उर लीन्हें ।
पुलक सरीर नीर भरि लोचन कहत प्रेम-पन कीन्हें ॥ ३ ॥
तुलसी बीते अवधि प्रथम दिन जो रघुबीर न ऐहौ ।
तो प्रभु चरन-सरोज-सपथ जीवत परिजनहिँ न पैहौ ॥ ४ ॥ ७६ ॥

अवसि हौं आयसु पाइ रहौंगो ।
जनमि कैकयी-कोखि कृपानिधि ! क्यों कछु चपरि कहौंगो ॥ १ ॥
'भरत भूप, सिय राम लखन बन', सुनि सानंद सहौंगो ।
पुर परिजन अवलोकि मातु सब सुख संतोष लहौंगो ॥ २ ॥
प्रभु जानत जेहि भाँति अवधि लौं बचन पालि निबहौंगो ।
आगे की बिनती तुलसी तब जब फिरि चरन गहौंगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

प्रभु सों मैं ढीठो बहुत दई है ।
कीबी छमा नाथ आरति तें कही कुजुगति नई है ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यों कहि बार बार पाँयनि परि पाँवरि पुलकि लई है ।
अपनो अदिन देखि हौं डरपत जेहि विष बेलि वई है ॥ २ ॥
आए सदा सुधारि गोसाईं जन तें बिगरि गई है ।
थके वचन पैरत सनेह-सरि परयो मानो घोर घई है ॥ ३ ॥
चित्रकूट तेहि समय सबनि की बुद्धि विषाद हई है ।
तुलसी राम-भरत के बिछुरत सिला सप्रेम भई है ॥ ४ ॥ ७८ ॥

जब तें चित्रकूट तें आए ।
नंदिग्राम खनि अवनि, डासि कुस, परनकुटी करि छाए ॥ १ ॥
अजिन बसन, फल असन, जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हें ।
प्रभुपद-प्रेम नेमव्रत निरखत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हें ॥ २ ॥
सिंहासन पर पूजि पादुका बारहिं बार जोहारे ।
प्रभु-अनुराग माँगि आयसु पुरजन सब काज सँवारे ॥ ३ ॥
तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेज तनु त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई ।
भए, न हैं, न होहिंगे कबहूँ भुवन भरत-से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

राग रामकली

राखी भगति भलाई भली भाँति भरत ।
स्वारथ परमारथ पथी जय जय जग करत ॥ १ ॥
जो व्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत ।
सो व्रत लिए चातक ज्यों सुनत पाप हरत ॥ २ ॥
सिंहासन सुभग राम-चरन-पीठ धरत ।
चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥
आपु अवध, बिपिन बंधु, सोच जरनि जरत ।
तुलसी सम विषम, सुगम अगम लखि न परत ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहिँ भावति, कहि आवति नहिँ भरतजू की रहनि ।
सजल नयन, सिथिल वयन प्रभु-गुन-गन कहनि ॥ १ ॥
असन-बसन-अयन-सयन धरम-गरुअ-गहनि ।
दिन दिन पन प्रेम नेम निरुपधि निरबहनि ॥ २ ॥
सीता-रघुनाथ - लखन-बिरह-पीर सहनि ।
तुलसी तजि उभय लोक राम-चरन-चहनि ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानी है संकर हनुमान लखन भरत-रामभगति ।
कहत सुगम, करत अगम, सुनत मीठी लगति ॥ १ ॥

७८—घई = भँवर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लहत सकृत चहत सकल, जुग जुग जगमगति ।
राम-प्रेम-पथ तें कवहुँ डोलति नहिँ डगति ॥ २ ॥
रिधि, सिधि, विधि चारि सुगति जा विनु गति अगति ।
तुलसी तेहि सनमुख विनु विषय-ठगिनि ठगति ॥ ३ ॥ ८२ ॥

राग गौरी

कैकयी करी धौं चतुराई कौन ? ।
राम लखन सिय बनहिँ पठाए, पति पठए सुरभौन ॥ १ ॥
कहा भलौ धौं भयो भरत को लगे तरुन-तन दौन ।
पुरवासिन्ह के नयन नीर बिनु कवहुँ तो देखति हौं न ॥ २ ॥
कौसल्या दिन राति बिसूरति बैठि मनहिँ मन मौन ।
तुलसी उचित न होइ रोइबो प्रान गए सँग जौ न ॥ ३ ॥ ८३ ॥

हाथ मींजिबो हाथ रह्यो ।
लगी न संग चित्रकूटहु तें ह्याँ कहा जात वह्यो ॥ १ ॥
पति सुरपुर, सिय राम लखन वन, मुनिब्रत भरत गह्यो ।
हौं रहि घर मसान-पावक ज्यों मरिबोइ मृतक दह्यो ॥ २ ॥
मेरोइ हिय कठोर करिबे कहँ विधि कहुँ कुलिस लह्यो ।
तुलसी वन पहुँचाइ फिरी सुत, क्यों कछु परत कह्यो ? ॥ ३ ॥ ८४ ॥

राग सोरठ

हौं तो समुझि रही अपनो सो ।
राम लखन सिय को सुख मो कहँ भयो, सखी ! सपनो सो ॥ १ ॥
जिन्हके विरह विषाद बँटावन खग मृग जीव दुखारी ।
मोहिँ कहा सजनी समुझावति हौं तिन्हकी महतारी ॥ २ ॥
भरत-दसा सुनि, सुमिरि भूपगति, देखि दीन पुरवासी ।
तुलसी 'राम' कहति हौं सकुचति ह्वैहै जग उपहाँसी ॥ ३ ॥ ८५ ॥

आली ! हौं इन्हहिं बुझावौं कैसे ? ।
लेत हिए भरि भरि पति को हित मातुहेतु सुत जैसे ॥ १ ॥
वार वार हिहिनात हेरि उत जो बोलै कोउ द्वारे ।
अंग लगाइ लिए वारे तें करुनामय सुत प्यारे ॥ २ ॥

८४—मरिबोई मृतक दह्यो = मानो मृत्यु रूपी मृतक को ही जला डाला है अर्थात् मैं मरती भी नहीं हूँ ।

८७—सार = खबरदारी, सँभाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोचन सजल, सदा सोवत - से, खान पान विसराए ।
चितवत चौंकि नाम सुनि, सोचत राम सुरति उर लाए ।। ३ ।।
तुलसी प्रभु के विरह वधिक हठि राजहंस - से जोरे ।
ऐसेहु दुखित देखि हौं जीवति राम लखन के घोरे ।। ४ ।। ८६ ।।

राघौ ! एक वार फिरि आवौ ।
ए वर वाजि विलोकि आपने बहुरो वनहिँ सिधावौ ।। १ ।।
जे पय प्याइ पोखि कर-पंकज वार वार चुचुकारे ।
क्यों जीवहिँ, मेरे राम लाडिले ! ते अव निपट विसारे ।। २ ।।
भरत सौगुनी सार करत हैं अति प्रिय जानि तिहारे ।
तदपि दिनहिँ दिन होत झाँवरे मनहुँ कमल हिममारे ।। ३ ।।
सुनहु पथिक ! जो राम मिलहिँ वन कहियो मातु सँदेसो ।
तुलसी मोहिँ और सवहिन तें इन्हको वड़ो अँदेसो ।। ४ ।। ८७ ।।

राग केदारा

काहू सों काहू समाचार ऐसे पाए ।
चित्रकूट तें राम लखन सिय सुनियत अनत सिधाए ।। १ ।।
सैल, सरित, निर्झर, वन, मुनिथल देखि देखि सव आए ।
कहत सुनत सुमिरत सुखदायक मानस सुगम सुहाए ।। २ ।।
वड़ि अवलंव वाम-विधि-विघटित, विषम विषाद वढ़ाए ।
सिरिस सुमन सुकुमार मनोहर वालक विंध्य चढ़ाए ।। ३ ।।
अवध सकल नर नारि विकल अति अँकनि वचन अनभाए ।
तुलसी राम-वियोग-सोग-वस समुझत नहिँ समुझाए ।। ४ ।। ८८ ।।

सुनी मैं, सखि ! मंगल चाह सुहाई ।
सुभ पत्रिका निषादराज की आजु भरत पहँ आई ।। १ ।।
कुँवर सो कुसल-छेम अलि ! तेहि पल कुलगुरु कहँ पहुँचाई ।
गुरु कृपालु संभ्रम पुर घर घर सादर सवहिँ सुनाई ।। २ ।।
वधि विराध, सुर साधु सुखी करि, रिषि सिख आसिख पाई ।
कुंभज सिष्य समेत संग सिय मुदित चले दोउ भाई ।। ३ ।।
बीच विंध्य रेवा सुपास थल वसे हैं परन गृह छाई ।
पंथ-कथा रघुनाथ पथिक की तुलसिदास सुनि गाई ।। ४ ।। ८९ ।।

—:०:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरण्य कांड

राग मलार

देखे राम-पथिक नाचत मुदित मोर ।
मानत सतड़ित मनहुँ ललित घन, धनु सुरधनु, गरजनि टंकोर ॥ १ ॥
कँपै कलाप बर बरहि फिरावत, गावत कल कोकिल-किसोर ।
जहँ जहँ प्रभु विचरत तहँ तहँ सुख दंडकवन कौतुक न थोर ॥ २ ॥
सघन छाँह तम-रुचिर रजनि भ्रम, बदन-चंद चितवत चकोर ।
तुलसी मुनि खग मृगनि सराहत भए हैं सुकृत सब इन्हकी ओर ॥३॥१॥

राग कल्याण

सुभग सरासन सायक जोरे ।
खेलत राम फिरत मृगया वन बसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥
पीत बसन कटि, चारु चारि सर, चलत कोटि नट सो तृन तोरे ।
स्यामल तनु स्रम-कन राजत ज्यों नव घन सुधा-सरोवर खोरे ॥
ललित कंध, बर भुज, विसाल उर, लेहिँ कंठ रेखैं चित चोरे ।
अवलोकत मुख देत परम सुख लेत सरद-ससि की छवि छोरे ॥
जटा मुकुट सिर सारस-नयननि गौहैं तकत सुभौंह सकोरे ।
सोभा अमित समाति न कानन, उमगि चली चहुँ दिसि मिति फोरे ॥
चितवत चकित कुरंग कुरंगिनि सब भए मगन मदन के भोरे ।
तुलसिदास प्रभु बान न मोचत, सहज सुभाय प्रेमवस थोरे ॥ २ ॥

राग सोरठ

बैठे हैं राम लखन अरु सीता ।
पंचवटी बर परनकुटी तर कहैं कछु कथा पुनीता ॥
कपट-कुरंग कनकमनिमय लखि प्रिय सों कहति हँसि बाला ।
पाए पालिबे जोग मंजु मृग, मारेहुँ मंजुल छाला ॥
प्रिया-वचन सुनि विहँसि प्रेमवस गवहिँ चाप सर लीन्हें ।
चल्यो भाजि फिरि फिरि चितवत मुनिमख-रखवारे चीन्हें ॥

१—कँपै = कँपा कर । कलाप = मोर की पूंछ ।

२—चलत ... तोरे = नट भी उनकी सुंदर द्रुत गति पर मोहित होकर तिनका तोड़ते हैं, जिसमें उन्हें नजर न लगे । (स्त्रियाँ बच्चों को नजर से बचाने के लिये तिनका तोड़ने का टोटका करती हैं ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोहति मधुर मनोहर मूरति हेम-हरिन के पाछे ।
धावनि, नवनि, विलोकनि, विथकनि बसै तुलसि उर आछे ॥ ३ ॥

राग कल्याण

कर सर धनु, कटि रुचिर निषंग ।
प्रिया-प्रीति-प्रेरित, बन-बीथिन्ह बिचरत कपट-कनक-मृग संग ॥
भुज विसाल, कमनीय कंध उर, स्रम-सीकर सोहैं साँवरे अंग ।
मनु मुकुता मनि मरकत-गिरि पर लसत ललित रवि-किरनि प्रसंग ॥
नलिन नयन, सिर जटा मुकुट बिच सुमन-माल मनु सिव-सिर गंग ।
तुलसिदास ऐसी मूरति की बलि, छबि बिलोकि लाजैं अमित अनंग ॥ ४ ॥

राग केदारा

राघव, भावति मोहि विपिन की बीथिन्ह धावनि ।
अरुन-कंज-बरन चरन सोकहरन, अंकुस-कुलिस-केतु-अंकित अवनि ॥
सुंदर स्यामल अंग, बसन पीत सुरंग, कटि निषंग परिकर मेरवनि ।
कनक-कुरंग संग साजे कर सर चाप, राजिवनयन इत उत चितवनि ॥
सोहत सिर मुकुट-जटा-पटल, निकर-सुमन लता सहित, रची बनवनि ।
तैसेई स्रम-सीकर रुचिर राजत मुख, तैसिए ललित भृकुटिन्ह की नवनि ॥
देखत खग-निकर, मृग-रवँनिन्ह जुत, थकित बिसारि जहाँ तहाँ की भँवनि ।
हरि-दरसन-फल पायो है ज्ञान बिमल, जाँचत भगति मुनि चाहत जवनि ॥
जिन्हके मन मगन भए हैं रस सगुन, तिन्हके लेखे अगुन मुकुति कवनि ।
स्रवन सुख करनि, भवसरिता तरनि, गावत तुलसिदास कीरति पवनि॥ ५॥

राग सोरठ

रघुबर दूरि जाइ मृग मार्‌यो ।
लखन पुकारि, राम हरुए कहि, मरतहुँ बैर सँभार्‌यो ॥
सुनहु तात ! कोउ तुम्हहिं पुकारत प्राननाथ की नाईं ।
कह्यो लखन, हत्यो हरिन, कोपि सिय हठि पठयो बरिआई ॥
बंधु बिलोकि कहत तुलसी-प्रभु "भाई ! भली न कीन्हीं ।
मेरे जान जानकी काहू खल छल करि हरि लीन्हीं" ॥ ६ ॥

आरत बचन कहति बैदेही ।
बिलपति भूरि बिसूरि 'दूरि गए मृग सँग परम सनेही' ॥

३—गवहिं = धीरे से, चुपचाप ।
५—मेरवनि = मिलान । भँवनि = भ्रमण, घूमना । पवनि = पावन, पवित्र ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहे कटु बचन, रेख नाँघी मैं, तात छमा सो कीजै ।
देखि वधिक-वस राजमरालिनि लखन लाल ! छिनि लीजै ।
बनदेवनि सिय कहन कहति यों छल करि नीच हरी हौं ।
गोमर-कर सुरधेनु, नाथ ! ज्यों, त्यों पर-हाथ परी हौं ॥
तुलसिदास रघुनाथ-नाम-धुनि अकनि गीध धुकि धायो ।
'पुत्रि पुत्रि ! जनि डरहि, न जैहै नीचु ? मीचु हौं आयो' ॥ ७ ॥
फिरत न वारहि वार पचारचो ।
चपरि चोंच चंगुल हय हति, रथ खंड खंड करि डारचो ॥
बिरथ बिकल कियो, छीनि लीन्हि सिय, घन घायनि अकुलान्यौ ।
तब असि काढ़ि काटि पर पाँवर लै प्रभु-प्रिया परान्यौ ॥
रामकाज खगराज आजु लरचो जियत न जानकि त्यागी ।
तुलसिदास सुर सिद्ध सराहत धन्य विहँग वड़भागी ॥ ८ ॥

राम गौरी

हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुल-मनि,
लखन ललित कर लिए मृगछाल ।
आस्रम आवत चले, सगुन न भए भले,
फरके वाम वाहु लोचन बिसाल ॥ १ ॥
सरित जल मलिन, सरनि सूखे नलिन,
अलि न गुंजत, कल कूजैं न मराल ।
कोलिनि कोल किरात जहाँ तहाँ विलखात,
वन न विलोकि जात खग - मृग - माल ॥ २ ॥
तरु जे जानकी लाए, ज्याये हरि करि कपि,
हेरैं न हुँकरि, झरैं फल न रसाल ।
जे सुक सारिका पाले, मातु ज्यों ललकि लाले,
तेऊ न पढ़त, न पढ़ावैं मुनिवाल ॥ ३ ॥
समुझि सहमे सुठि, प्रिया तौ न आई उठि,
तुलसी बिबरन परन-तृन-साल ।
औरै सो सव समाजु, कुसल न देखौं आजु,
गहवर हिय कहैं कोसलपाल ॥ ४ ॥ ९ ॥
आस्रम निरखि भूले, द्रुम न फले फूले,
अलि खग मृग मानो कबहुँ न हे ।
मुनि न मुनिबधूटी, उजरी परनकुटी,
पंचवटी पहिचानि ठाढ़ेइ रहे ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठी न सलिल लिए प्रेम प्रमुदित हिए-
प्रिया, न पुलकि प्रिय वचन कहे ।
पल्लव-साल न हेरी, प्रानवल्लभा न टेरी,
विरह बिथकि लखि लखन गहे ॥ २ ॥
देखे रघुपति-गति विबुध विकल अति,
तुलसी गहन विनु दहन दहे ।
अनुज दियो भरोसो, तौलों है सोचु खरो सो,
सिय-समाचार प्रभु जौलों न लहे ॥ ३ ॥ १० ॥

राग सोरठ

जबहिं सिय-सुधि सब सुरनि सुनाई ।
भए सुनि सजग विरह-सरि पैरत थके थाह-सी पाई ॥
कसि तूनीर तीर धनु-धर-धुर धीर बीर दोउ भाई ।
पंचवटी गोदहि प्रनाम करि कुटी दाहिनी लाई ॥
चले बूझत वन बेलि विटप खग मृग अलि अवलि सुहाई ।
प्रभु की दसा सो समौ कहिबे को कवि उर आह न आई ॥
रटनि अकनि पहिचानि गीध फिरे करुनामय रघुराई ।
तुलसी रामहिँ प्रिया विसरि गई सुमिरि सनेह सगाई ॥११॥

मेरे एकौ हाथ न लागी ।
गयो वपु बीति वादि कानन ज्यों कलपलता दव दागी ॥
दसरथ सों न प्रेम प्रतिपाल्यो हुतो जो सकल जग साखी ।
बरबस हरत निसाचरपति सों हठि न जानकी राखी ॥
मरत न मैं रघुबीर विलोके तापस बेष बनाए ।
चाहत चलन प्रान पाँवर बिनु सिय-सुधि प्रभुहिँ सुनाए ॥
बारबार कर मीँजि सीस धुनि गीधराज पछिताई ।
तुलसी प्रभु कृपालु तेहि औसर आइ गए दोउ भाई ॥ १२ ॥

राघौ गीध गोद करि लीन्हों ।
नयन-सरोज सनेह-सलिल सुचि मनहुँ अरघ-जल दीन्हों ॥
सुनहु लखन ! खगपतिहि मिले बन मैं पितु-मरण न जान्यौ ।
सहि न सक्यौ सो कठिन विधाता बड़ो पछु आजुहि भान्यौ ॥
बहु विधि राम कह्यो तनु राखन परम धीर नहिँ डोल्यो ।
रोकि प्रेम, अवलोकि बदन-विधु बचन मनोहर बोल्यौ ॥

११—गोदहिं = गोदावरी को । आह = हिम्मत, साहस ।
१२—न धोखो लैहौं = धोखा न लगाऊँगा, न चुकूँगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखा लैहौं ।
जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहिँ कहाँ पुनि पैहौं ? ॥ १३ ॥

नीके कै जानत राम हियो हौँ ।
प्रनतपाल, सेवक-कृपालु-चित, पितु पटतरहि दियो हौँ ॥
त्रिजगजोनि-गत गीध जनम भरि खाइ कुजंतु जियो हौँ ।
महाराज सुकृती-समाज सब-ऊपर आजु कियो हौँ ॥
स्रवन वचन, मुख नाम, रूप चख, राम उछंग लियो हौँ ।
तुलसी मो समान बड़भागी को कहि सकै वियो हौँ ॥ १४ ॥

मेरे जान तात कछू दिन जीजै ।
देखिय आपु सुवन-सेवासुख मोहिँ पितु को सुख दीजै ॥
दिव्य-देह इच्छा-जीवन जग विधि मनाइ मँगि लीजै ।
हरि-हर-सुजस सुनाइ, दरस दै लोग कृतारथ कीजै ॥
देखि वदन, सुनि वचन अमिय, तन रामनयन जल भीजै ।
बोल्यो विहग विहँसि 'रघुवर वलि कहौं सुभाय पतीजै ॥
मेरे मरिबे सम न चारि फल होहिँ तौ क्यों न कहीजै ? ॥
तुलसी प्रभु दियो उतरु मौन ही परी मानो प्रेम सहीजै ॥ १५ ॥

मेरो सुनियो तात ! सँदेसो ।
सीय-हरन जनि कहेहु पिता सोँ ह्वैहैं अधिक अँदेसो ॥
रावरे पुन्यप्रताप-अनल महँ अलप दिननि रिपु दहिहैं ।
कुल समेत सुरसभा दसानन समाचार सव कहिहैं ॥
सुनि प्रभु-वचन राखि उर मूरति चरनकमल सिर नाई ।
चल्यो नभ सुनत राम-कल-कीरति अरु निज भाग वड़ाई ॥
पितु ज्यों गीध-क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो ।
ऐसो प्रभु विसारि तुलसी सठ तू चाहत सुख पायो ॥ १६ ॥

राग सूहो

सबरी सोइ उठी, फरकत वाम विलोचन वाहु ।
सगुन सुहावने सूचत मुनि-मन-अगम उछाहु ।
मुनि-अगम उर आनंद लोचन सजल तनु पुलकावली ।
तृन-पर्नसाल वनाइ, जल भरि कलस, फल चाहन चली ॥
मंजुल मनोरथ करति, सुमिरति विप्र-वर-वानी भली ।
ज्यों कल्प वेलि सकेलि सुकृत सुफूल-फूली सुख फली ॥ १ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनप्रिय पाहुने ऐहैं राम लखन मेरे आजु ।
जानत जन-जिय की मृदु चित राम गरीबनिवाजु ।।
मृदु चित्त गरीबनिवाज आजु विराजिहैं गृह आइकै ।।
ब्रह्मादि-संकर-गौरि-पूजित पूजिहौं अब जाइकै ।।
लहि नाथ हौं रघुनाथ-वानो पतितपावन पाइकै ।
दुहुँ ओर लाहु अघाइ तुलसी तीसरेहु गुन गाइकै ।। २ ।।
दोना रुचिर रचे पूरन कंद मूल फल फूल ।
अनुपम अमियहू तें अंबक अवलोकत अनुकूल ।।
अनुकूल अंबक अंब ज्यों निज डिंभ हित सब आनिकै ।
सुंदर सनेह सुधा सहस जनु सरस राखे सानिकै ।।
छन भवन, छन वाहर बिलोकति पंथ भू पर पानि कै ।।
दोउ भाइ आए सबरिका के प्रेम-पन पहिचानि कै ।। ३ ।।
स्रवन सुनत चली आवत देखि लखन रघुराउ ।
सिथिल सनेह कहै, 'है सपना विधि, कैधों सति भाउ' ।।
सति भाउ कै सपनो ? निहारि कुमार कोसलराय के ।
गहे चरन जे अघहरन नत-जन-वचन-मानस-काय के ।।
लघु-भाग-भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुख चित चाय के ।
सो जननि ज्यों आदरी सानुज, राम भूखे भाय के ।। ४ ।।
प्रेम पट पाँवड़े देत सुअरघ बिलोचन-वारि ।
आश्रम लै दिए आसन पंकज-पाँय पखारि ।।
पद-पंकजात पखारि पूजे पंथ - स्रम-विरहित भए ।
फल फूल अंकुर मूल धरे सुधारि भरि दोना नए ।।
प्रभु खात पुलकित गात, स्वाद सराहि आदर जनु जए ।
फल चारिहू फल चारि दहि परचारि फल सबरी दए ।। ५ ।।
सुमन बरषि हरषे सुर, मुनि मुदित सराहि सिहात ।
केहि रुचि केहि छुधा सानुज माँगि माँगि प्रभु खात !
प्रभु खात माँगत देति सबरी राम भोगी जाग के ।
पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि भाजन-भाग के ।।
बालक सुमित्रा कौसिला के पाहुने फल साग के ।
सुनु समुझि तुलसी जानु रामहिं बस अमल अनुराग के ।। ६ ।।
रघुवर अँचइ उठे सबरी करि प्रनाम कर जोरि ।
हौं बलि बलि गई पुरई मंजु मनोरथ मोरि ।।
पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहु पूरन करी ।
अघ अवगुनन्हि की कोठरी करि कृपा मुदमंगल भरी ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तापस किरातिनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरी।
सिर नाइ आयसु पाइ गवनी परमनिधि पाले परी ।। ७ ।।
सिय-सुधि सब कही नख सिख निरखि निरखि दोउ भाइ।
दै दै प्रदच्छिना करति प्रनाम न प्रेम अघाइ ।।
अति प्रीति मानस राखि रामहिँ, राम-धामहिँ सो गई।
तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जलअंजलि दई ।।
तुलसी-भनति सबरी-प्रनति, रघुबर प्रकृति करुनामई।
गावत, सुनत, समुझत भगति हिय होय प्रभुपद नित नई ।।८।।१७।।

———

किष्किंधा कांड

राग केदारा

भूषन बसन बिलोकत सिय के।
प्रेम-बिबस मन, कंप पुलक तनु, नीरज-नयन नीर भरे पिय के ।।
सकुचत कहत, समुझि उर उमगत, सील सनेह सुगुनगन तिय के।
स्वामिदसा लखि लखन सखा कपि, पिघले हैं आँच माठ मानो घिय के ।।
सोचत हानि मानि मन, गुनि गुनि, गये निघटि फल सकल सुकिय के।
बरने जामवंत तेहि अवसर, बचन बिबेक, बीररस बिय के ।।
धीर बीर सुनि समुझि परसपर, बल उपाय उघटत निज हिय के।
तुलसिदास यह समउ कहे तें कबि लागत निपट निठुर जड़ जिय के ।। १ ।।

प्रभु कपि-नायक बोलि कह्यो है।
बरषा गई, सरद आई, अब लगि नहिँ सिय-सोधु लह्यो है।
जा कारन तजि लोकलाज तनु राखि बियोग सह्यो है।
ताको तो कपिराज आज लगि कछु न काज निबह्यो है ।।
सुनि सुग्रीव सभीत नमित-मुख उतरु न देन चह्यो है।
आइ गए हरि-जूथ देखि उर पूरि प्रमोद रह्यो है ।।
पठए बदि बदि अवधि दसहुँ दिसि, चले बलु सबनि गह्यौ है।
तुलसी सिय लगि भव-दधि-निधि मनु फिर हरि चहत मह्यो है ।।२।।

———

१७—फलचारिहू ...... सबरी दये = चारो फलों (अर्थ, धर्म आदि) को (शबरी के दिए) चार फलों से जलाकर ललकारकर शबरी को फल दिए अर्थात् शबरी को चारों फलों से कहीं बढ़कर फल दिए।

१—सुकिय = सुकृत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुंदर कांड

राग केदारा

रजायसु राम को जब पायो ।
गाल मेलि मुद्रिका मुदित मन पवनपूत सिर नायो ।।
भालुनाथ नल नील साथ चले, बली बालि को जायो ।
फरकि सुअँग भए सगुन, कहत मानो मग मुद-मंगल छायो ।।
देखि बिवर सुधि पाइ गीध सों अपने बल अनुमायो ।
सुमिरि राम, तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ।।
खोजत घर घर जनु दरिद्र-मन फिरत लागि धन धायो ।
तुलसी सिय बिलोकि पुलक्यो तनु भूरि भाग भयो भायो ।। १ ।।

देखी जानकी जब जाइ ।
परम धीर समीरसुत के प्रेम उर न समाइ ।
कृस सरीर सुभाय सोभित, लगी उड़ि उड़ि धूलि ।
मनहुँ मनसिज मोहनी-मनि गयो भोरे भूलि ।।
रटति निसि बासर निरंतर राम राजिवनैन ।
जात निकट न बिरहिनी-अरि अकनि ताते बैन ।
नाथ के गुनगान कहि कपि दई मुँदरी डारि ।
कथा सुनि उठि लई कर बर रुचिर नाम निहारि ।।
हृदय हरष बिषाद अति पति-मुद्रिका पहिचानि ।
दास तुलसी दसा सो केहि भाँति कहै बखानि ? ।। २ ।।

राग सोरठ

बोलि, बलि, मूँदरी ! सानुज कुसल कोसलपालु ।
अमिय बचन सुनाइ मेटहि बिरह-ज्वाला-जालु ।।
कहत हित अपमान मैं कियो, होत हिय सोइ सालु ।
रोष छमि सुधि करत कबहूँ ललित लछिमन लालु ?
परसपर पति देवरहि का होति चरचा चालु ।
देवि ! कहु केहि हेतु बोले बिपुल बानर भालु ।।
सीलनिधि समरथ सुसाहिब दीनबंधु दयालु ।
दास तुलसी प्रभुहि काहु न कह्यो मेरो हालु ।। ३ ।।

१—अनुमायो = अनुमान किया, अंदाज किया । लूक = उल्का ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सदल सलखन हैं कुसल किरपालु कोसल-राउ ।
सील-सदन सनेह-सागर सहज सरल सुभाउ ॥
नींद भूख न देवरहि परिहरे को पछिताउ ।
धीरधुर रघुबीर को नहिँ सपनेहूँ चित चाउ ॥
सोधु बिनु, अनुरोधु रितु के, बोध बिहित उपाउ ।
करत हैं सोइ समय साधन फलति बनत बनाउ ॥
पठै कपि दिसि दसहुँ जे प्रभुकाज कुटिल न काउ ।
बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥
दई हौं संकेत कहि कुसलात सियहिँ सुनाउ ।
देखि दुर्ग बिसेषि जानकि जानि रिपु-गति आउ ॥
कियो सीय प्रबोध मुँदरी, दियो कपिहि लखाउ ।
पाइ अवसर नाइ सिर तुलसीस गुनगन गाउ ॥ ४ ॥
सुवन समीर को धीर धुरीन बीर बड़ोइ ।
देखि गति सिय मुद्रिका की बाल ज्यों दियो रोइ ॥
अकनि कटु बानी कुटिल की क्रोध-बिंध्य बढ़ोइ ।
सकुचि सम भयो ईस-आयसु-कलसभव जिय जोइ ॥
बुद्धि बल साहस पराक्रम अछत राखे गोइ ।
सकल साज समाज साधन समउ कहै सब कोइ ॥
उतरि तरु तें नमत पद, सकुचात सोचत सोइ ।
चुके अवसर मनहुँ सुजनहिँ सुजन सनमुख होइ ॥
कहे बचन बिनीत प्रीति प्रतीति नीति निचोइ ।
सीय सुनि हनुमान जान्यौ भली भाँति भलोइ ॥
देवि ! बिनु करतूति कहिबो जानिहैं लघु सोइ ।
कहौंगो मुख की समरसरि कालि कारिख धोइ ॥
करत कछू न बनत हरि हिय हरष सोक समोइ ।
कहत मन तुलसीस लंका करहुँ सघन घमोइ ॥ ५ ॥

राग केदारा

हौं रघुबंसमनि को दूत ।
मातु मानु प्रतीति जानकि ! जानि मारुतपूत ॥

५—कलसभव = अगस्त्य, जिन्होंने विंध्यपर्वत को बढ़ने से रोक दिया था। तुलसीस = हनुमान। घमोइ = सत्यानाशी या भँडभाँड़ नाम का पौधा जो खँडहरों में प्रायः उगता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं सुनी बातें असैली जे कही निसिचर नीच ।
क्यों न मारै गाल बैठो काल-डाढ़नि बीच ॥
निदरि अरि रघुबीर - बल लै जाउँ जौ हठि आज ।
डरौँ आयसु-भंग तें, अरु बिगरिहै सुरकाज ॥
बाँधि बारिधि, साधि रिपु दिन चारि में दोउ बीर ।
मिलहिँगे कपि-भालु-दल सँग, जननि उर धरु धीर ॥
चित्रकूट कथा कुसल कहि सीस नायो कीस ।
सुहृद सेवक नाथ को लखि दई अचल असीस ।
भए सीतल स्रवन तन मनु सुने बचन-पियूष ।
दास तुलसी रही नयननि दरस ही की भूख ॥ ६ ॥

तात ! तोहूँ सों कहत होति हिए गलानि ।
मन को प्रथम पन समुझि अछत तनु
लखि नइ गति भइ मति मलानि ॥
पिय को बचन परिहरचो जिय के भरोसे,
सँग चली बन बड़ो लाभ जानि ।
पीतम-बिरह तौ सनेह सरबसु, सुत !
औसर को चूकियो सरिस न हानि ॥
आरज-सुवन के तो दया दुनवहुँ पर,
मोहिँ सोच मोतें सब बिधि नसानि ।
आपनी भलाई भलो कियो नाथ सबही को,
मेरे ही अदिन बस बिसरी बानि ॥
नेम तौ पपीहा ही के, प्रेम प्यारो मीन ही के,
तुलसी कही है नीके हृदय आनि ।
इतनी कही सो कही सीय, ज्योंही त्योंही,
रही, प्रीति परी सही, बिधि सों न बसानि ॥ ७ ॥

मातु काहे को कहति अति बचन दीन ?
तब की तुही जानति अब की हौं ही कहत,
सबके जिय की जानत प्रभु प्रबीन ॥
ऐसो तो सोचहिँ न्याय-निठुर-नायक-रत
सलभ, खग, कुरंग, कमल, मीन ।

६—असैली = शैलीविरुद्ध, रीति-नीति-विरुद्ध ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करुनानिधान को तो ज्यों ज्यों तनु छीन भयो
त्यों त्यों मनु भयो तेरे प्रेम पीन ।।
सिय को सनेह, रघुवर की दसा सुमिरि
पवनपूत देखि भयो प्रीति-लीन ।
तुलसी जन को जननी प्रबोध कियो,
"समुझि तात ! जग विधि-अधीन" ।। ८ ।।

राग जयतश्री

कहु कपि कब रघुनाथ कृपा करि, हरिहैं निज वियोग-संभव दुख ।
राजिवनयन मयन-अनेक-छवि रविकुल-कुमुद सुखद मयंक-मुख ।।
बिरह-अनल स्वासा-समीर निज तनु जरिबे कहँ रही न कछू सक ।
अति बल जल बरषत दोउ लोचन दिन अरु रैन रहत एकहि तक ।।
सुदृढ़ ज्ञान अवलंबि सुनहु सुत ! राखति प्रान बिचारि दहन मत ।
सगुन रूप, लीला-विलास-सुख सुमिरन करति रहति अंतरगत ।।
सुनु हनुमंत ! अनंत-बंधु करुनास्वभाव सीतल कोमल अति ।
तुलसिदास यहि त्रास जानि जिय बरु दुख सहौं प्रगट कहि न सकति ।। ९ ।।

राग केदारा

कबहूँ, कपि ! राघव आवहिंगे ?
मेरे नयन चकोर प्रीतिवस राकाससि मुख दिखरावहिंगे ।।
मधुप मराल मोर चातक ह्वै लोचन बहु प्रकार धावहिंगे ।
अंग अंग छवि भिन्न भिन्न सुख निरखि निरखि तहँ तहँ छावहिंगे ।।
बिरह-अगिनि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि-जल पलुहावहिंगे ।
निज-वियोग-दुख जानि दयानिधि मधुर वचन कहि समुझावहिंगे ।।
लोकपाल-सुर-नाग-मनुज सब परे बंदि कब मुकुतावहिंगे ।
रावन-बध रघुनाथ-विमल-जस नारदादि मुनिजन गावहिंगे ।।
यह अभिलाष रैन दिन मेरे राज विभीषन कब पावहिंगे ।
तुलसिदास प्रभु मोहजनित भ्रम भेद बुद्धि कब बिसरावहिंगे ? ।।१०।।

सत्य वचन सुनु मातु जानकी ! ।
जन के दुख रघुनाथ दुखित अति, सहज प्रकृति करुनानिधान की ।।
तुव वियोग-संभव दारुन दुख बिसरि गई महिमा सुबान की ।
ननु कहु कहँ रघुपति-सायक रवि, तम अनीक कहँ जातुधान की ।।

९—एकहि तक = एकताक, एकतार, एकरस ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहँ हम पसु साखामृग चंचल, बात कहौं मैं विद्यमान की ।
कहँ हरि सिव-अज-पूज्य ज्ञानघन नहिँ बिसरति वह लगनि कान की ॥
तुव दरसन, सँदेस सुनि हरि को बहुत भई अवलंब प्रान की ।
तुलसिदास गुन सुमिरि राम के प्रेम मगन, नहिँ सुधि अपान की ॥११॥

राग कान्हरा

रावन ! जु पै राम रन रोखे ।
को कहि सकै सुरासुर समरथ बिसिख काल-दसननि तें चोखे ॥
तपबल, भुजबल, कै सनेह-बल सिव बिरंचि नीकी बिधि तोखे ।
सो फल राज समाज सुवन जन, आपुन नास आपने पोषे ॥
तुला पिनाक, साहु नृप, त्रिभुवन भट बटोरि सबके बल जोखे ।
परसुराम से सूर-सिरोमनि पल में भए खेत के-से धोखे ॥
कालि की बात बालि की सुधि करि समुझिहि ता हित खोलि झरोखे ।
कह्यो कुमंत्रिन को न मानिए, बड़ी हानि, जिय जानि त्रिदोषे ॥
जासु प्रसाद जनमि जग पुरुषनि सागर सृजे, खने अरु सोखे ।
तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो नयन बीस मंदिर के-से मोखे ॥१२॥

राग मारू

जो हौं प्रभु-आयसु लै चलतो ।
तौ यहि रिस तोहिँ सहित दसानन जातुधान दल दलतो ॥
रावन सो रसराज सुभट-रस सहित लंक खल खलतो ।
करि पुटपाक नाक-नायकहित घने घने घर घलतो ॥
बड़े समाज लाज-भाजन भयो, बड़ो काज बिनु छल तो ।
लंकनाथ रघुनाथ-बैरु-तरु आजु फैलि फूलि फलतो ॥
काल-करम दिगपाल सकल जग-जाल जासु करतल तो ।
ता रिपु सों पर भूमि रारि रन जीवन मरन सुथल तो ॥
देखी मैं दसकंठ-सभा, सब, मोतें कोउ न सबल तो ।
तुलसी अरि उर आनि एक अब इती गलानि न गलतो ॥१३॥

१२—मोखे = गवाक्ष, झरोखा ।

१३—रसराज = पारा । खलतो = खरल में डालकर घोंट डालता । बिनु छल तो = बिना छल के था अर्थात् होता । अरि उर ...... गलतो = इस प्रकार एक एक शत्रु को (अर्थात् उनके बल को) समझ बूझकर भी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौलौं, मातु ! आपु नीके रहिबो ।
जौलौं हौं ल्यावौं रघुबीरहिँ, दिन दस और दुसह दुख सहिबो ।।
सोखि कै खेत, कै बाँधि सेतु करि, उतरिबो उदधि न बोहित चहिबो ।
प्रबल दनुज-दल दलि पल आध में, जीवत दुरित-दसानन गहिबो ।।
बैरि-बृंद-बिधवा-बनितनि को, देखिबो बारि-बिलोचन बहिबो ।
सानुज सेन समेत स्वामिपद निरखि परम मुद मंगल लहिबो ।।
लंक-दाह उर आनि मानिबो साँचु राम-सेवक को कहिबो ।
तुलसी प्रभु सुर सुजस गाइहैं, मिटि जैहै सबको सोचु-दव दहिबो ।।१४।।

कपि के चलत सिय को मनु गहवरि आयो ।
पुलक सिथिल भयो सरीर, नीर नयनन्हि छायो ।।
कहन चह्यो संदेस, नहिँ कह्यो, पिय के जिय की जानि हृदय दुसह दुख दुरायो।
देखि दसा ब्याकुल हरीस, ग्रीषम के पथिक ज्यों धरनि तरनि-तायो ।।
मीच तें नीच लगी अमरता, छल को न बल को निरखि थल परुष प्रेम पायो।
कै प्रबोध मातु प्रीति सों असीस दीन्ही ह्वैहै तिहारोई मन भायो ।।
करुना कोप लाज भय भरो कियो गौन, मौन ही चरन-कमल सीस नायो।
यह सनेह-सरबस समौ तुलसी रसना रूखी ताही तें परत गायो ।।१५।।

राग वसंत

रघुपति ! देखो आयो हनूमंत । लंकेस-नगर खेल्यो बसंत ।
श्रीराम-काज-हित सुदिन सोधि । साथी प्रबोधि लाँघ्यो पयोधि ।।
सिय-पाँय पूजि आसिषा पाइ । फल अमिय सरिस खायो अघाइ ।।
कानन दलि होरी रचि बनाइ । हठि तेल बसन बालधि बँधाइ ।।
लिए ढोल चले सँग लोग लागि । बरजोर दई चहुँ ओर आगि ।।
आखत आहुति किए जातुधान । लखि लपट भभरि भागे बिमान ।।
नभतल कौतुक, लंका बिलाप । परिनाम पचहिँ पातकी पाप ।।
हनुमान हाँक सुनि बरषि फूल । सुर बार बार बरनहिँ लँगूर ।।
भरि भुवन सकल कल्यान धूम । पुर जारि बारिनिधि बोरि लूम ।।

१५--गहवरि आयो = करुणा से भर आया । मीच तें नीच...... प्रेम पायो = (सीताजी का ऐसा विरह दुःख देखकर) हनुमान जी को अपनी अमरता मृत्यु से अधिक दुःखदायिनी लगी, और उन्होंने उस स्थल पर बल छल का अवसर न देख अपने प्रेम को बहुत कठोर और दारुण पाया । समौ = प्रसंग, अवसर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानकी तोषि पोषेउ प्रताप । जय पवन-सुवन दलि दुअ्रन-दाप ॥
नाचहिँ कूदहिँ कपि करि विनोद । पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥
यों कहत लखन गहे पाँय आइ । मुनि सहित मुदित भेंट्यो उठाइ ॥
लगे सजन सेन भयो हिय हुलास । जय जय जस गावत तुलसिदास ॥१६॥

राग जयतश्री

सुनहु राम विश्रामधाम हरि ! जनकसुता, अति विपति जैसे सहति ।
हे सौमित्रि-बंधु करुनानिधि मन महँ रटति प्रगट नहिँ कहति ॥
निजपद-जलज विलोकि सोकरत नयननि वारि रहत न एक छन ।
मनहुँ नील नीरज ससि-संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधाकन ॥
बहु राच्छसी सहित तरु के तर तुम्हरे विरह निज जनम बिगोवति ।
मनहुँ दुष्ट इंद्रिय संकट महँ बुद्धि विवेक-उदय मगु जोवति ॥
सुनि कपि वचन विचारि हृदय हरि अनपायनी सदा सो एक मन ।
तुलसिदास दुख-सुखातीत हरि सोच करत मानहुँ प्राकृत जन ॥१७॥

राग केदारा

रघुकुल-तिलक वियोग तिहारे ।
मैं देखी जब जाइ जानकी मनहु विरह-मूरति मन मारे ॥
चित्र-से नयन अरु गढ़े-से चरन-कर, मढ़े-से स्रवन नहिँ सुनति पुकारे ।
रसना रटति नाम, कर सिर चिर रहै, नित निज-पद-कमल निहारे ॥
दरसन-आस-लालसा मन महँ राखे प्रभु ध्यान प्रान-रखवारे ।
तुलसिदास पूजति त्रिजटा नीके रावरे गुन-गन-सुमन सँवारे ॥१८॥

अतिहि अधिक दरसन की आरति ।
राम-वियोग असोक-विटप तर सीय निमेष कलप सम टारति ॥
वार वार वर वारिजलोचन भरि भरि वरत वारि उर ढारति ।
मनहुँ विरह के सद्य घाय हिये लखि तकि तकि धरि धीरज तारति ।
तुलसिदास जद्यपि निसि वासर छिन छिन प्रभु मूरतिहि निहारति ।
मिटति न दुसह ताप तउ तनु की, यह बिचारि अंतरगति हारति ॥१९॥

तुम्हरे विरह भई गति जौन ।
चित दै सुनहु, राम करुनानिधि ! जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ॥
लोचन-नीर कृपिन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचनन-कोन ।

१९—वरत = तपता हुआ, गरम । तारति = तरेरा या पानी की धारा देती है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हा धुनि'-खगी लाज-पिँजरी महँ राखि हिए बड़े बधिक हठि मौन ॥
जेहि वाटिका वसति तहँ खग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन ।
स्वास-समीर भेंट भइ भोरेहुँ तेहि मग पगु न धर्‌यो तिहुँ पौन ॥
तुलसिदास प्रभु ! दसा सीय की मुख करि कहत होति अति गौन ।
दीजै दरस दूरि कीजै दुख हौ तुम्ह आरत-आरति-दौन ॥२०॥

कपि के सुनि कल कोमल बैन ।
प्रेम पुलकि सब गात सिथिल भए, भरे सलिल सरसीरुह नैन ॥
सिय-वियोग-सागर नागर मनु बूड़न लग्यो सहित चित-चैन ।
लही नाव पवनज प्रसन्नता, बरबस तहाँ गह्यो गुन मैन ॥
सकत न बूझि कुसल, बूझे बिन गिरा विपुल व्याकुल उर ऐन ।
ज्यों कुलीन सुचि सुमति बियोगिनि सनमुख सहै बिरह-सर पैन ॥
धरि धरि धीर बीर कोसलपति किए जतन सके उतरु दै न ।
तुलसिदास प्रभु सखा अनुज सों सैनहिँ कह्यौ चलहु सजि सैन ॥२१॥

राग मारू

जब रघुबीर पयानो कीन्हों ।
छुभित सिंधु, डगमगत महीधर, सजि सारँग कर लीन्हों ॥
सुनि कठोर टंकोर घोर अति चौंके विधि त्रिपुरारि ।
जटा-पटल तें चली सुरसरी सकत न संभु सँभारि ॥
भए बिकल दिगपाल सकल, भय भरे भुवन दसचारि ।
खरभर लंक, ससंक दसानन, गर्भ स्रवहिँ अरि-नारि ॥
कटकटात भट भालु विकट मरकट करि केहरि-नाद ।
कूदत करि रघुनाथ-सपथ उपरी-उपरा बदि बाद ॥
गिरि-तरुधर नख मुख कराल रद कालहु करत बिषाद ।
चले दस दिसि रिस भरि, धरु धरु कहि, को बराक मनुजाद ॥
पवन पंगु, पावक पतंग ससि दुरि गए, थके बिमान ।
जाचक सुर निमेष, सुरनायक नयन-भार अकुलान ॥
गए पूरि सर धूरि, भूरि भय अग थल जलधि समान ।
नभ निसान हनुमान हाँक सुनि समुझत कोउ न अपान ॥
दिग्गज कमठ कोल सहसानन धरत धरनि धरि धीर ।

२०—गौन = गौण, अर्थात् कहने में उसका महत्त्व नहीं आ सकता, कम-सा हो जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारहिं बार ग्रमरषत करषत करकैं परीं सरीर ॥
चली चमू, चहुँ ग्रोर सोर, कछु बनै न बरने भीर ।
किलकिलात, कसमसत, कोलाहल होत नीरनिधि-तीर ॥
जातुधानपति जानि कालवस मिले विभीषन ग्राइ ।
सरनागत-पालक कृपाल कियो तिलक, लियो ग्रपनाइ ॥
कौतुकहीं बारिधि बँधाइ उतरे सुबेल - तट जाइ ।
तुलसिदास गढ़ देखि फिरे कपि प्रभु ग्रागमन सुनाइ ॥२२॥

राग ग्रासावरी

ग्राए देखि दूत सुनि सोच सठ मन में ।
बाहर बजावै गाल, भालु कपि कालवस
मोसे बीर सों चहत जीत्यो रारि रन मैं ।
राम छाम, लरिका लखन, बालि-बालकहि
घालि कौ गनत ? रीछ जल ज्यौं न घन मैं ।
काज को न कपिराज, कायर कपि-समाज,
मेरे ग्रनुमान हनुमान हरि-गन मैं ॥
समय सयानी मृदु बानी रानी कहै 'पिय !
पावक न होउ जातुधान - बेनु-बन मैं ।
तुलसी जानकी दिए स्वामी सों सनेह किए
कुसल, नतरु सब ह्वैहै छार छन मैं' ॥२३॥
ग्रापनी ग्रापनी भाँति सब काहू कही है ।
मंदोदरी, महोदर, मालवान महामति,
राजनीति-पहुँच जहाँ लौं जाकी रही है ॥
महामद-ग्रंध दसकंध न करत कान;
मीचु-बस नीच हठि कुगहनि गही है ।
हँसि कहै 'सचिव सयाने मोसों यों कहत,
चहै मेरु उड़न बड़ी बयारि बही है ।'
भालु, नर, बानर ग्रहार निसिचरनि को,
सोऊ नृप-बालकनि माँगी धारि लही है ।

२२—ग्रग = पर्वत ।
२३—घालि = घलुग्रा ग्रर्थात् कुछ नहीं । रीछ......घन में = जामवंत जलहीन बादल के समान ग्रर्थात् निस्सार है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखो काल-कौतुक पिपीलिकनि पंख लागो,
भाग मेरे लोगनि के भई चित-सही है।
तोसों न तिलोक ग्राजु साहस समाज-साजु,
महाराज-ग्रायसु भो जोई सोई सही है।
तुलसी प्रनाम कै विभीषन विनती करै
'ख्याल, बेधे ताल, कपि केलि लंका दही है ॥२४॥

दूसरो न देखतु साहिव सम रामै।
बेदऊ पुरान कवि कोविद विरद-रत,
जाको जस सुनत, गावत गुनग्रामै ॥
माया, जीव, जग-जाल, सुभाउ, करमकाल,
सवको सासकु, सवमैं; सव जामैं।
विधि से करनिहार, हरि से पालनिहार,
हर से हरनिहार जपैं जाके नामैं ॥
सोइ नरबेष जानि जन की विनती मानि,
मतो नाथ सोई जा तें भलो परिनामैं।
सुभट-सिरोमनि कुठारपानि सारिखेहू
लखी ग्रौ लखाई इहाँ किए सुभ सामैं ॥
वचन-विभूषन विभीषन-वचन सुनि
लागे दुख दूषन से दाहिनेउ वामैं।
तुलसी हुमुकि हिए हन्यो लात, भले तात
चल्यो सुरतरु ताकि तजि घोर घामैं ॥२५॥

जाय माय पायँ परि कथा सो सुनाई है।
समाधान करति विभीषन को वार वार,
'कहा भयो तात, लात मारे, वड़ो भाई है ॥
साहिव पितु समान, जातुधान को तिलक,
ताके ग्रपमान तेरी वड़िए वड़ाई है।
गरत गलानि जानि सनमानि सिख देति,
रोष किए दोष सहें समुझें भलाई है ॥
इहाँ तें विमुख भए राम की सरन गए
भलो नेकु लोक राखे निपट निकाई है।
मातु पग सीस नाइ, तुलसी ग्रसीस पाइ
चले भले सगुन कहत मन भाई है ॥२६॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाई को सो करौं डरौं कठिन कुफेरै ।
सुकृत-संकट परचो जात गलानिन्ह गरचो,
'कृपानिधि को मिलौं पै मिलि कै कुबेरै' ॥
जाइ गहे पाँय, धाइ धनद उठाइ भेंटचो,
समाचार पाइ पोच सोचत सुमेरै ।
तहँई मिले महेस, दियो हित-उपदेस,
'राम की सरन जाहि, सुदिनु न हेरै ॥
जाको नाम कुंभज कलेस-सिंधु सोखिबे को,
मेरो कह्यो मानि, तात ! बाँधै जिनि बेरै ।'
तुलसी मुदित चले, पाए हैं सगुन भले,
रंक लूटिबे को मानों मनिगन-ढेरै ॥२७॥

राग केदारा

संकर सिख आसिष पाइकै ।
चले मनहिँ मन कहत विभीषन सीस महेसहिँ नाइकै ॥
गए सोच, भए सगुन सुमंगल दस दिसि देत देखाइकै ।
सजल नयन, सानंद हृदय तनु प्रेम पुलक अधिकाइकै ॥
अंतहु भाव भलो भाई को कियो अनभलो मनाइकै ।
भइ कूवर की लात विधाता राखी बात बनाइकै ॥
नाहिंत क्यों कुबेर-घर मिलि हर हितु कहते चित लाइकै ।
जो सुनि सरन राम ताके मैं निज वामता बिहाइकै ॥
अनायास अनुकूल सूलधर मग मुदमूल जनाइकै ।
कृपासिंधु सनमानि जानि जन दीन लियो अपनाइकै ॥
स्वारथ परमारथ करतलगत स्रमपथ गयो सिराइकै ।
सपने कै सौतुक सुख-सस सुर सींचत देत निराइकै ॥
गुरु गौरीस साइँ सीतापति हित हनुमानहिँ जाइकै ।
मिलिहौं मोहिँ कहा कीबे अब अभिमत अवधि अघाइकै ॥
मरतो कहाँ जाइ, को जाने, लटि लालची ललाइकै ।
तुलसिदास भजिहौं रघुबीरहिँ अभय-निसान वजाइकै ॥२८॥

२७—सुकृत-संकट = धर्मसंकट ।

२८—कूवर की लात = ऐसी लात जिससे कुबड़ी पीठ सीधी हो जाय, अर्थात् बात बन जाय । सस = शस्य, खेतीबारी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदपदुम गरीबनिवाज के ।
देखिहौं जाइ पाइ लोचनफल हित सुर-साधु-समाज के ।।
गई बहोर, ओर निरबाहक, साजक बिगरे साज के ।
सबरी सुखद, गीध गतिदायक, समनसोक कपिराज के ।।
नाहिंन मोहिँ और कतहूँ कछु जैसे काग जहाज के ।
आयो सरन सुखद पदपंकज चोँथे रावन बाज के ।।
आरतिहरन सरन समरथ सब दिन अपने की लाज के ।
तुलसी पाहि कहत नत-पालक मोहुँ-से निपट निकाज के ।।२९।।

महाराज राम पहँ जाउँगो ।
सुख स्वारथ परिहरि करिहौं सोइ ज्यों साहिबहिँ सुहाउँगो ।।
सरनागत सुनि बेगि बोलिहैं, हौं निपटहिं सकुचाउँगो ।
राम गरीबनिवाज निवाजिहैं, जानिहैं ठाकुर ठाउँ गो ।।
धरिहैं नाथ हाथ माथे एहि तें केहि लाभ अघाउँगो ?
सपनो सो अपनो न कछू लखि लघु लालच न लोभाउँगो ।।
कहिहौं बलि, रोटिहा रावरो, बिनु मोलही बिकाउँगो ।
तुलसी पट ऊतरे ओढ़िहौं, उबरी जूठनि खाउँगो ।।३०।।

आइ सचिव बिभीषन के कही ।
कृपासिंधु दसकंध-बंधु लघु चरन-सरन आयो सही ।।
बिषम बिषाद-बारिनिधि बूड़त थाह कपीस-कथा लही ।
गए दुख दोष देखि पदपंकज अब न साध एकौ रही ।।
सिथिल सनेह सराहत नखसिख नीक निकाई निरबही ।
तुलसी मुदित दूत भयो मानहुँ में अमिय-लाहु माँगत मही ।।३१।।

बिनती सुनि प्रभु प्रमुदित भए ।
रीछराज, कपिराज, नील, नल, बोलि बालिनंदन लए ।।
बूझिए कहा ? रजाइ पाइ नय धरम सहित ऊतर दए ।
बली बंधु ताको जेहिँ बिमोह-बस बैर-बीज बरबस बए ।।
बाँह-पगार द्वार तेरे तैं सभय न कबहूँ फिरि गए ।
तुलसी असरन-सरन स्वामि के बिरद बिराजत नित नए ।।३२।।

हिय बिहँसि कहत हनुमान सोँ ।
सुमति साधु सुचि सुहृद बिभीषन, बूझि परत अनुमान सोँ ।।

३०—ठाकुर ठाउँ गो = ठाकुर और ठिकाना नहीं रह गया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'हौं बलि जाउँ, और को जानै ?' कही कपि कृपानिधान सों ।
छली न होइ स्वामि सनमुख ज्यों तिमिर सातहय-जान सों ॥
खोटो खरो सभीत पालिए सो सनेह सनमान सों ।
तुलसी प्रभु कीबो जो भलो सोइ बूझि सरासन बान सों ॥३३॥

साँचेहु बिभीषन आइ है ?
बूझत बिहँसि कृपालु, लखन सुनि कहत सकुचि सिर नाइ है ॥
ऐहै कहा, नाथ ? आयो ह्याँ, क्यों कहि जाति बनाइ है ।
रावन-रिपुहि राखि रघुबर बिनु को त्रिभुवनपति पाइ है ॥
प्रभु प्रसन्न सब सभा सराहति दूत-बचन मन भाइ है ।
तुलसी 'बोलिए बेगि' लखन सों भइ महराज रजाइ है ॥३४॥

चले लेन लषन हनुमान हैं ।
मिले मुदित बूझि कुसल परसपर सकुचत करि सनमान हैं ॥
भयो रजायसु पाँउ धारिए, बोलत कृपानिधान हैं ।
दूरि तें दीनबंधु देखे जनु देत अभय बरदान हैं ॥
सील सहस हिमभानु, तेज सत कोटि भानुहूँ के भानु हैं ।
भगतनि को हित कोटि मातुपितु, अरिन्ह को कोटि कृसानु हैं ॥
जन गुन रज गिरि गनि सकुचत, निज गुन गिरि रज परमान हैं ।
बाँह-पगारु बोल को अबिचल, बेद करत गुनगान हैं ॥
चारु चाप तूनीर तामरस करनि सुधारत बान हैं ।
चरचा चलति बिभीषन की सोइ सुनत सुचित दै कान हैं ॥
हरषत सुर बरषत प्रसून सुभ सगुन कहत कल्यान हैं ।
तुलसी ते कृतकृत्य जे सुमिरत समय सुहावनो ध्यान हैं ॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारिकै ।
उठे उमँगि आनंद-प्रेम-परिपूरन बिरद बिचारिकै ॥
भयो बिदेह बिभीषन उत, इत प्रभु अपनपौ बिसारिकै ।
भली भाँति भावते भरत ज्यों भेंट्यौ भुजा पसारिकै ॥
सादर सबहिं मिलाइ समाजहिं निपट निकट बैठारिकै ।
बूझत छेम कुसल सप्रेम अपनाइ भरोसे भारिकै ॥
नाथ ! कुसल कल्यान सुमंगल बिधि सुख सकल सुधारिकै ।
देत लेत जे नाम रावरो बिनय करत मुख चारि कै ॥

३३—सातहय-जान = सात घोड़े जिसके यान में जुते हैं अर्थात् सूर्य ।
३५—हिमभानु = चंद्रमा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो मूरति सपने न विलोकत मुनि, महेस मन मारिकै ।
तुलसी तेहि हौं लियो ग्रंक भरि, कहत कछू न सँवारिकै ।।३६।।

करुनाकर की करुना भई ।
मिटी मीचु, लहि लंक संक गइ, काहू सों न खुनिस खई ।।
दसमुख तज्यो दूध-माखी ज्यों ग्रापु काढ़ि साढ़ी लई ।
भव-भूषन सोइ कियो विभीषन मुद-मंगल-महिमामई ।।
विधि हरि हर मुनि सिद्ध सराहत, मुदित देव दुंदुभी दई ।
वारहिँ वार सुमन वरषत, हिय हरषत कहि जै जै जई ।।
कौसिक-सिला-जनक-संकट हरि भृगुपति की टारी टई ।
खग मृग सवर निसाचर सवकी पूँजी विनु वाढ़ी सई ।
जुग जुग कोटि कोटि करतव करनी न कछू वरनी नई ।।
राम-भजन-महिमा हुलसी हिय तुलसीहू की वनि गई ।।३७।।

मंजुल मूरति मंगलमई ।
भयो विसोक विलोकि विभीषन नेह देह-सुधि-सीँव गई ।।
उठि दाहिनी ग्रोर तेँ सनमुख सुखद माँगि बैठक लई ।
नखसिख निरखि निरखि सुख पावत, भावत कछु, कछु ग्रौर भई ।।
वार कोटि सिर काटि साटि लटि रावन संकर पै लई ।
सोइ लंका लखि ग्रतिथि ग्रनवसर राम तृनासन ज्यों दई ।।
प्रीति प्रतीति-रीति-सोभासरि थाहत जहँ जहँ तहँ घई ।
वाहु-वली, वानैत बोल को, बीर विस्वविजयी जई ।
को दयालु दूसरो दुनी जेहि जरनि दीन-हिय की हई ? ।
तुलसी काको नाम जपत जग जगती जामति विनु वई ।।३८।।

सब भाँति विभीषन की वनी ।
कियो कृपालु ग्रभय कालहु तेँ गइ संसृति साँसति घनी ।।
सखा लखन हनुमान संभु गुरु धनी राम कोसलधनी ।
हिय ही ग्रौर ग्रौर कीन्हीं विधि, रामकृपा ग्रौरै ठनी ।।
कलुष-कलंक कलेस-कोस भयो जो पद पाय रावन रनी ।
सोइ पद पाय विभीषन भो भव-भूषन दलि दूषन-ग्रनी ।।
वाँह-पगार उदार-सिरोमनि नत-पालक पावन-पनी ।
सुमन वरषि रघुवर-गुन वरनत हरषि देव दुंदुभी हनी ।।

३७—टही = टही, घात । सई = वृद्धि, बरकत ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रंक-निवाज रंक राजा किए, गए गरब गरि गरि गनी।
राम-प्रनाम महा महिमा-खनि सकल सुमंगलमनि जनी॥
होय भलो ऐसे ही अजहुँ गए राम-सरन परिहरि मनी।
भुजा उठाइ साखि संकर करि कसम खाइ तुलसी भनी॥३९॥

कहो क्यों न बिभीषन की बनै ?
गयो छाँड़ि छल सरन राम की जो फल चारि चारयौं जनै॥
मंगलमूल प्रनाम जासु जग मूल अमंगल को खनै।
तेहि रघुनाथ हाथ माथे दियो, को ताकी महिमा भनै ?॥
नाम-प्रताप पतित-पावन किए जे न अघाने अघ अनै।
कोउ उलटो, कोउ सूधो जपि भए राजहंस बायस-तनै॥
हुतो ललात कृसगात खात खरि मोद पाइ कोदो-कनै।
सो तुलसी चातक भयौ जाँचत राम स्यामसुंदर घनै॥४०॥

अति भाग बिभीषन के भले।
एक प्रनाम प्रसन्न राम भए दुरित दोष दारिद दले॥
रावन कुंभकरन बर माँगत सिव बिरंचि बाचा छले।
राम-दरस पायो अविचल पद, सुदिन सगुन नीके चले॥
मिलनि बिलोकि स्वामि सेवक की उकठे तरु फूले फले।
तुलसी सुनि सनमान बंधु को दसकंधर हँसि हिए जले॥४१॥

गये राम सरन सबकौ भलो।
गनी-गरीब, बड़ो-छोटो, बुध-मूढ़, हीनबल-अति बली॥
पंगु अंध निरगुनी निसंबल जो न लहै जाँचे जलो।
सो निबह्यो नीके जो जनमि जग राम-राजमारग चलो॥
नाम-प्रताप-दिवाकर-कर खर गरत तुहिन ज्यों कलिमलो।
सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो खलो॥
प्रभुपद-प्रेम प्रनाम कामतरु सद्य बिभीषन को फलो।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थलो॥४२॥

सुजस सुनि स्रवन हौं नाथ ! आयों सरन।
उपल केवट गीध सबरी संसृत-समन,
सोक-स्रम-सीँव सुग्रीव आरतिहरन॥
राम राजीव लोचन बिमोचन बिपति,

३९—मनी = (फा०) अभिमान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्याम नव तामरस-दाम बारिद-बरन।
लसत जट-जूट सिर चारु मुनि चीर कटि,
धीर रघुबीर तूनीर-सर-धनु-धरन ॥
जातुधानेस - भ्राता बिभीषन नाम
बंधु अपमान गुरु ग्लानि चाहत गरन।
पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु !
राखिए मोहिँ सौमित्रि-सेवित-चरन ॥
दीनता-प्रीति-संकलित मृदु बचन सुनि,
पुलकि तन प्रेम, जल नयन लागे भरन।
बोलि, लंकेस कहि अंक भरि भेंटि प्रभु,
तिलक दियो दीन-दुख-दोष-दारिद-दरन।
रातिचर-जाति आराति सब भाँति गत,
कियो सो कल्यान-भाजन सुमंगल-करन।
दास तुलसी सदय हृदय रघुबंसमनि
पाहि कहे काहि कीन्हों न तारनतरन ? ॥४३॥

दीन-हित बिरद पुराननि गायो।
आरत-बंधु, कृपालु, मृदुल-चित जानि सरन हौं आयो ॥
तुम्हरे रिपु को अनुज बिभीषन, बंस निसाचर जायो।
सुनि गुन सील सुभाउ नाथ को मैं चरननि चितु लायो ॥
जानत प्रभु दुख सुख दासनि को तातेँ कहि न सुनायो।
करि करुना भरि नयन बिलोकहु तब जानौँ अपनायो ॥
बचन बिनीत सुनत रघुनायक हँसि करि निकट बुलायो।
भेंट्यो हरि भरि अंक भरत ज्यौं लंकापति मन भायो ॥
कर पंकज सिर परसि अभय कियो, जन पर हेतु दिखायो।
तुलसिदास रघुबीर-भजन करि को न परमपद पायो ? ॥४४॥

राग धनाश्री

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ।
सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम्हसन कौन दुराउ ॥
सब बिधि हीन दीन अति जड़मति जाको कतहुँ न ठाउँ।
आयो सरन भजौं, न तजौं तिहि, यह जानत रिषिराउ ॥
जिन्हके हौं हित सब प्रकार चित नाहिँन और उपाउ।
तिनहिँ लागि धरि देह करौं सब, डरौं न सुजस नसाउ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं सकल सभा पतिआउ ।
नहिँ कोऊ प्रिय मोहिँ दास सम कपट प्रीति बहि जाउ ॥
सुनि रघुपति के वचन विभीषन प्रेम मगन मन चाउ ।
तुलसिदास तजि आस त्रास सब ऐसे प्रभु कहँ गाउ ॥४५॥

नाहिँन भजिबे जोग बियो ।
श्रीरघुबीर समान आन को पूरन कृपा हियो ॥
कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो ? ।
कौने गीध अधम को पितु ज्यों निज कर पिंड दियो ? ॥
कौन देव सबरी के फल करि भोजन सलिल पियो ? ।
वालित्रास-वारिधि बूड़त कपि केहि गहि बाहँ लियो ? ॥
भजन प्रभाउ विभीषन भाष्यौ सुनि कपि-कटक जियो ।
तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो ॥४६॥

राग जयतश्री

कब देखौंगी नयन वह मधुर मूरति ?
राजिवदल-नयन, कोमल-कृपाअयन, मयननि बहु छवि अंगनि दूरति ॥
सिरसि जटा-कलाप, पानि सायक चाप, उरसि रुचिर बनमाल लूरति ।
तुलसिदास रघुबीर की सोभा सुमिरि, भई है मगन नहिं तन की सूरति ॥४७

राग केदारा

कहु कबहुँ देखिहौं आली ! आरज-सुवन ।
सानुज सुभग-तनु, जब तें बिछुरे बन, तब तें दव-सी लगी तीनिहूँ भुवन ॥
मूरति सूरति किए प्रगट प्रीतम हिए, मन के करन चाहैं चरन छुवन ।
चित चढ़िगो वियोग दसा न कहिबे जोग, पुलक गात, लागे लोचन चुवन ॥
तुलसी त्रिजटा जानी सिय अति अकुलानी, मृदुबानी कह्यौ ऐहैं दवन-दुवन ।
तमीचर-तमहारी सुर-कंज सुखकारी, रबिकुल-रबि अब चाहत उवन॥४८॥

अबलों मैं तोसों न कहे री ।
सुन त्रिजटा ! प्रिय प्राननाथ बिनु बासर निसि दुख दुसह सहे री ॥
बिरह बिषम-बिष-बेलि बढ़ी उर, ते सुख सकल सुभाय दहे री ।
सोइ सींचिबे लागि मनसिज के रहँट नयन नित रहत नहे री ।
सर-सरीर सूखे प्रान-बारिचर जीवन आस तजि चलनु चहे री ॥
तैं प्रभु-सुजस-सुधा सीतल करि राखे तदपि न तृप्ति लहे री ॥

४६—बरियो = बली ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिपु-रिस घोर नदी, बिबेक-बल, धीर सहित हुते जात बहे री।
दै मुद्रिका-टेक तेहि औसर, सुचि समीरसुत पैरि गहे री ॥
तुलसिदास सब सोच-पोच मृग मन-कानन भरि पूरि रहे री ।
अब सखि सिय संदेह परिहरु हिय आइ गए दोउ बीर अहेरी ॥४९॥

राग बिलावल

सो दिन सोने को कहु कब ऐहै ?
जा दिन बँध्यौ सिंधु त्रिजटा सुनि तू संभ्रम आनि मोहिँ सुनैहै ।
बिस्वदवन सुर-साधु-सतावन रावन कियो आपनो पैहै ।
कनक-पुरी भयो भूप बिभीषन, बिबुध-समाज बिलोकन धैहै ॥
दिब्य दुंदुभी, प्रसंसिहैं मुनिगन, नभतल बिमल बिमाननि छैहैं ।
बरषिहैं कुसुम भानुकुल-मनि पर, तब मोको पवनपूत लै जैहैं ॥
अनुज सहित सोभिहैं कपिन महँ, तनु-छबि कोटि मनोज लजैहैं ।
इन नयनन्हि यहि भाँति प्रानपति, निरखि हृदय आनँद न समैहै ॥
बहुरो सदल, सनाथ, सलछिमन, कुसल कुसल बिधि अवध देखैहै ।
गुरु, पुर लोग, सास, दोउ देवर, मिलत दुसह उर-तपनि बुतैहै ॥
मंगल-कलस, बधावने घर घर, पैहैं माँगने जो जेहि भैहै ।
बिजय राम राजाधिराज की, तुलसिदास पावन जस गैहै ॥५०॥

सिय ! धीरज धरिये राघौ अब ऐहैं ।
पवनपूत पै पाइ तिहारी सुधि सहज कृपालु बिलंब न लैहैं ॥
सेन साजि कपि भालु काल सम कौतुक ही पाथोधि बँधैहैं ।
घेरोइ पै देखिबो लंकगढ़ बिकल जातुधानी पछितैहैं ॥
निसिचर सलभ कृसानु राम-सर उड़ि उड़ि परत जरत खल जैहैं ।
रावन करि परिवार अगमनो जमपुर जात बहुत सकुचैहैं ॥
तिलक सारि अपनाय बिभीषन अभय बाँह दै अमर बसैहैं ।
जय धुनि मुनि बरषिहैं सुमन सुर, ब्योम बिमान निसान बजैहैं ।
बंधु समेत प्रानवल्लभपद परसि सकल परिताप नसैहैं ।
राम बाम दिसि देखि तुमहिँ सब नयनवंत लोचन फल पैहैं ॥
तुम अति हित चितइहौ नाथ-तनु, बार बार प्रभु तुमहिँ चितैहैं ।
यह सोभा सुख समय बिलोकत काहू तो पलकैं नहिँ लैहैं ॥
कपिकुल लखन सुजस जय जानकि सहित कुसल निज नगर सिधैहैं ।
प्रेम पुलकि आनंद मुदित मन तुलसिदास कल कीरति गैहैं ॥५१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लंका कांड

राग मारू

मानु अजहूँ सिख परिहरि क्रोधु ।
पिय पूरो आयो अब काहि कहु करि रघुबीर-विरोधु ॥
जेहि ताड़ुका सुबाहु मारि मख राखि जनायो आपु ।
कौतुक ही मारीच-नीच-मिस प्रगट्यो विसिख-प्रतापु ॥
सकल भूप बल गरब-सहित तोर्यो कठोर सिवचापु ।
ब्याही जेहि जानकी जीति जग हर्यौ परसुधर-दापु ॥
कपट काक साँसति प्रसाद करि बिनु स्रम बध्यो बिराधु ।
खर दूषन त्रिसिरा कबंध हति कियो सुखी सुर-साधु ॥
एकहि बान बालि मार्यो जेहि जो बल-उदधि अगाधु ।
कहु धौं कंत कुसल बीती केहिं किए राम-अपराधु ॥
लाँघि न सके लोक-विजयी तुम जासु अनुज-कृत-रेखु ।
उतरि सिंधु जार्यो प्रचारि पुर जाको दूत बिसेखु ॥
कृपासिंधु खल-वन-कृसानु-सम, जस गावत स्रुति सेखु ।
सोइ बिरुदैत बीर कोसलपति नाथ समुझि जिय देखु ॥
मुनि पुलस्त्य के जस-मयंक महँ कत कलंक हठि होहि ।
और प्रकार उबार नहीं कहुँ मैं देख्यों जग टोहि ॥
चलु मिलु बेगि कुसल सादर सिय सहित अग्र करि मोहिं ।
तुलसिदास प्रभु सरन सबद सुनि अभय करैंगे तोहिं ॥ १ ॥

राग कान्हरा

तू दसकंठ भले कुल जायो ।
तामहँ सिव-सेवा बिरंचि-बर, भुजबल बिपुल जगत जस पायो ॥
खर, दूषन, त्रिसिरा, कबंध रिपु जेहि बाली जमलोक पठायो ।
ताको दूत पुनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ॥
श्रीमद नृप-अभिमान मोहवस जानत अनजानत हरि लायो ।
तजि ब्यलीक भजु कारुनीक प्रभु दै जानकिहिं सुनहि समुझायो ॥
जातें तव हित होइ कुसल कुल अचल राज चलिहै न चलायो ।
नाहिं त रामप्रताप-अनल महँ ह्वै पतंग परिहै सठ धायो ॥
जद्यपि अंगद नीति परम हित कह्यो तथापि न कछु मन भायो ।
तुलसिदास सुनि बचन क्रोध अति पावक जरत मनहुँ घृत नायो ॥ २ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तैं मेरो मरम कछू नहिँ पायो ।
रे कपि कुटिल ढीठ पसु पाँवर! मोहिँ दास ज्यों डाँटन आयो ॥
भ्राता कुंभकरन रिपुघातक, सुत सुरपतिहिँ बंदि करि ल्यायो ।
निज भुजवल अति अतुल कहौं क्यों कंदुक लौं कैलास उठायो ॥
सुर नर असुर नाग खग किन्नर सकल करत मेरो मन भायो ।
निसिचर रुचिर अहार मनुज-तनु ताको जस खल मोहिँ सुनायो ॥
कहा भयो बानर सहाय मिलि करि उपाय जो सिंधु बँधायो ।
जो तरिहै भुज बीस घोरनिधि ऐसो को त्रिभुवन में जायो ? ॥
सुनि दससीस-वचन कपि-कुंजर बिहँसि ईस-मायहि सिर नायो ।
तुलसिदास लंकेस कालवस गनत न कोटि जतन समझायो ॥ ३ ॥

सुनु खल मैं तोहिँ वहुत बुझायो ।
एते मान सठ भयो मोहवस जानतहूँ चाहत विष खायो ॥
जगत-बिदित अति बीर वालि-बल जानत हौ किधौं अब बिसरायो ।
बिनु प्रयास सोउ हत्यो एक सर सरनागत पर प्रेम देखायो ॥
पावहुगे निज-करम-जनित फल, भले ठौर हठि बैर वढ़ायो ।
बानर भालु चपेट लपेटनि मारत तब ह्वैहै पछितायो ॥
हौँ ही दसन तोरिबे लायक कहा करौं जो न आयसु पायो ।
अब रघुबीर बान बिदलित उर सोवहिगो रनभूमि सुहायो ॥
अबिचल राज विभीषन को सब जेहिँ रघुनाथ-चरन चित लायो ।
तुलसिदास यहि भाँति वचन कहि गरजत चल्यो वालि नृप-जायो ॥ ४ ॥

राग केदारा

राम लखन उर लाय लए हैं ।
भरे नीर राजीवनयन सब अँग परिताप तए हैं ॥
कहत ससोक बिलोकि बंधु-मुख वचन प्रीति गुथए हैं ।
सेवक सखा भगति भायप गुन चाहत अब अथए हैं ॥
निज कीरति करतूति तात ! तुम सुकृती सकल जए हैं ।
मैं तुम्ह बिनु तनु राखि लोक अपने अपलोक लए हैं ॥
मेरे पन की लाज इहाँ लौं हठि प्रिय प्रान दये हैं ।
लागति साँगि बिभीषन-ही पर सीपर आपु भए हैं ॥
सुनि प्रभु वचन भालु-कपि -गन सुर सोच सुखाइ गए हैं ।
तुलसी आइ पवनसुत-बिधि मानो फिरि निरमए नए हैं ॥ ५ ॥

५—सीपर = (फा० सिपर) ढाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग सोरठ

मोपै तौ न कछू ह्वै आई।
ओर निवाहि भली विधि भायप चल्यौ लखन सो भाई ।।
पुर पितु मातु सकल सुख परिहरि जेहि वन-विपति बँटाई।
ता सँग हौं सुरलोक सोक तजि सक्यौं न प्रान पठाई ।।
जानत हौं या उर कठोर तें कुलिस कठिनता पाई।
सुमिरि सनेह सुमित्रा-सुत को दरकि दरार न जाई ।।
तात-मरन, तिय-हरन, गीध-वध, भुज दाहिनी गँवाई।
तुलसी मैं सब भाँति आपने कुलहिँ कालिमा लाई ।। ६ ।।

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
विपति बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको ?।।
सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर फेरयो वदन विधाता।
ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लखन सो भ्राता ।।
गिरि कानन जैहैं साखामृग, हौं पुनि अनुज सँघाती।
ह्वैहै कहा विभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ।।
तुलसी सुनि प्रभु-वचन भालु कपि सकल विकल हिय हारे।
जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि प्रचारे ।। ७ ।।

राग मारू

जो हौं अब अनुसासन पावौं।
तौ चंद्रमहिँ निचोरि चैल ज्यों आनि सुधा सिर नावौं ।।
कै पाताल दलौं व्यालावलि अमृत-कुंड महि लावौं।
भेदि भुवन करि भानु वाहिरो तुरत राहु दै तावौं ।।
विबुध-बैद बरबस आनौं धरि तौ प्रभु अनुग कहावौं।
पटकौं मीच नीच मूषक ज्यों सबहि को पापु बहावौं ।।
तुम्हरिहि कृपा प्रताप तिहारेहि नेकु बिलंब न लावौं।
दीजै सोइ आयसु तुलसीप्रभु जेहि तुम्हरे मन भावौं ।। ८ ।।

सुनि हनुमंत-वचन रघुबीर।
सत्य समीर-सुवन सब लायक कह्यो राम धरि धीर ।।
चहिए बैद, ईस-आयसु धरि सीस कीस बलऐन।
आन्यो सदन-सहित सोवत ही जौलौं पलक परै न ।।
जियै कुँवर निसि मिलै मूलिका, कीन्ही विनय सुखेन।
उठयो कपीस सुमिरि सीतापति चल्यो सँजीवनि लेन ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कालनेमि दलि बेगि विलोक्यौ द्रोनाचल जिय जानि।
देखी दिव्य ग्रौषधी जहँ तहँ जरी न परि पहिचानि॥
लियो उठाय कुधर कंदुक ज्यों, बेग न जाइ बखानि।
ज्यों धाए गजराज उधारन सपदि सुदरसनपानि॥
ग्रानि पहार जोहारे प्रभु, कियो बैदराज उपचार।
करुनासिंधु बंधु भेंटचो, मिटि गयो सकल दुख-भार॥
मुदित भालु-कपि-कटक लह्यो जनु समर-पयोनिधि-पार।
बहुरि ठौरही राखि महीधर ग्रायो पवनकुमार॥
सेन सहित सेवकहिं सराहत पुनि पुनि राम सुजान।
बरषि सुमन हिय हरषि प्रसंसत बिबुध बजाइ निसान॥
तुलसिदास सुधि पाइ निसाचर भए मनहुँ बिनु प्रान।
परी भोरही रोर लंकगढ़, दई हाँक हनुमान॥ ९॥

राग केदारा

कौतुक ही कपि कुधर लियो है।
चल्यो नभ नाइ माथ रघुनाथहिं, सरिस न बेग बियो है॥
देख्यो जात जानि निसिचर बिनु फर सर हयो हियो है।
परचो कहि राम, पवन राख्यो गिरि, पुर तेहि तेज पियो है॥
जाइ भरत भरि ग्रंक भेंटि निज जीवन-दान दियो है।
दुख लघु लखन मरम-घायल सुनि, सुख बड़ो कीस जियो है॥
ग्रायसु इतहि स्वामि-संकट उत, परत न कछू कियो है।
तुलसिदास बिहरचो ग्रकास सो कैसेकै जात सियो है॥१०॥

भरत सत्रुसूदन बिलोकि कपि चकित भयो है।
राम लखन रन जीति ग्रवध ग्राए, कैधौं मोहिं भ्रम, कैधौं काहू कपट ठयो है॥
प्रेम पुलकि पहिचानि कै पदपदुम नयो है।
कह्यो न परत जेहि भाँति दुहुँ भाइन सनेह सों उर लाय लयो है॥
समाचार कहि गहरु भो, तेहि ताप तयो है।
कुधर सहित चढ़ौ बिसिख, बेगि पठवौं, सुनि हरिहिय गरब गूढ़ उपयो है।
तीर तें उतरि जस कह्यो चहैं, गुनगननि जयो है।
धनि भरत! धनि भरत! करत भयो मगन मौन, रह्यो, मन ग्रनुराग रयो है॥
यह जलनिधि खन्यो, मथ्यो, लँघ्यो, बाँध्यो, ग्रँचयो है।
तुलसिदास रघुबीर-बंधु-महिमा को सिंधु तरि को कबि पार गयो है॥११॥

११—उपयो है = उत्पन्न हुग्रा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होतो नहिँ जो जग जनम भरत को ।
तौं कपि कहत, कृपान-धार-मग चलि आचरत वरत को ?
धीरज-धरम-धरनिधर-धुरहू तें गुरु धुर धरनि धरत को ?
सब सद्गुन सनमानि आनि उर, अघ औगुन निदरत को ?
सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को ?
सृजि निज जस-सुरतरु तुलसी कहँ अभिमत फरनि फरत को ॥१२॥

सुनि रन घायल लखन परे हैं ।
स्वामि-काज संग्राम सुभट सों लोहे ललकारि लरे हैं ॥
सुवन-सोक संतोष सुमित्राहिँ रघुपति-भगति वरे हैं ।
छिन छिन गात सुखात छिनहि छिन हुलसत होत हरे हैं ॥
कपि सों कहति सुभाय अंव के अंवक अंबु भरे हैं ।
रघुनंदन विनु बंध कुअवसर जद्यपि घनु दुसरे हैं ॥
'तात ! जाहु कपि सँग' रिपुसूदन उठि कर जोरि खरे हैं ।
प्रमुदित पुलकि पैंत पूरे जनु विधिवस सुढर ढरे हैं ॥
अंव-अनुज-गति लखि पवनज भरतादि गलानि गरे हैं ।
तुलसी सब समुझाइ मातु तेहि समय सचेत करे हैं ॥१३॥

विनय सुनाइबी पाँर पाय ।
कहौं कहा कपीस तुम्ह सुचि सुमति सुहृद सुभाय ॥
स्वामि संकट हेतु हौं, जड़ जननि जनम्यो जाय ।
समौ पाइ कहाइ सेवक वट्यो तौ न सहाय ॥
कहत सिथिल सनेह भो जनु धीर घायल घाय ।
भरत-गति लखि मातु सब रहि ज्यों गुडी विनु वाय ॥
भेंट कहि कहिबो, कह्यो यों कठिन-मानस माय ।
'लाल ! लोने लखन-सहित, सुललित लागत नाँय" ॥
देखि बंधु-सनेह अंव-सुभाउ, लखन कुठाय ।
तपत तुलसी तरनि त्रासकु सहि नए तिहुँ ताय ॥१४॥

हृदय-घाउ मेरे पीर रघुबीरै ।
पाइ सँजीवनि जागि कहत यों प्रेमपुलकि विसराय सरीरै ॥
मोहिँ कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै ।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै ॥

१३—घनु = अर्थात् शत्रुघ्न । पैंत = पाँसा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी सुनि सौमित्रि-वचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै।
उपमा राम-लखन की प्रीति की क्यों दीजै खीरै-नीरै ॥१५॥

राग कान्हरा

राजत राम काम-सत सुंदर।
रिपु रन जोति अनुज सँग सोभित, फेरत चाप बिसिख बनरुह-कर ॥
स्याम सरीर रुचिर स्रमसीकर, सोनित-कन बिच बीच मनोहर।
जनु खद्योत-निकर हरिहित-गन भ्राजत मरकत सैल-सिखर पर ॥
घायल बीर बिराजत चहुँ दिसि, हरषित सकल रिच्छ अरु बनचर।
कुसुमित किंसुक-तरु-समूह महँ तरुन तमाल बिसाल बिटप बर ॥
राजिव-नयन बिलोकि कृपा करि किए अभय मुनि-नाग-बिबुध-नर।
तुलसिदास यह रूप अनूपम हिय सरोज बसि दुसह बिपतिहर ॥१६॥

राग आसावरी

अवधि आजु किधौं औरो दिन द्वै हैं।
चढ़ि धौरहर बिलोकि दखिन दिसि बूझ धौं पथिक कहाँ ते आए वै हैं ॥
बहुरि बिचारि हारि हिय सोचति, पुलकि गात लागे लोचन च्वै हैं।
निज बासरनि बरष पुरवैगो बिधि मेरे तहाँ करम कठिन कृत कै हैं ॥
बन रघुबीर, मातु गृह जीवति, निलज प्रान सुनि सुनि सुख स्वैहैं।
तुलसिदास मोसी कठोर-चित कुलिससाल-भंजनि को ह्वैहैं ॥१७॥
आली! अब राम-लखन कित ह्वैहैं।
चित्रकूट तज्यौ तब तें न लही सुधि बधू-समेत कुसल सुत द्वै हैं ॥
बारि बयारि बिषम हिम आतप सहि बिनु बसन भूमितल स्वैहैं।
कंद मूल फल फूल असन बन, भोजन समय मिलत कैसे वैहैं ॥
जिन्हहिं बिलोकि सोचिहैं लता द्रुम खग मृग मुनि लोचन जल च्वैहैं।
तुलसिदास तिन्हकी जननी हौं, मो सो निठुर चित औरो कहुँ ह्वैहैं ॥१८॥

राग सोरठ

बैठी सगुन मनावति माता।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि बाता ॥
दूध भात की दोनी दैहौं सोने चोंच मढ़ैहौं।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि राम-लखन उर लैहौं ॥
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी।
गनक बोलाइ पाँय परि पूछति प्रेम-मगन मृदु बानी ॥

१६—बनरुह = कमल। हरिहित = इंद्रबधूटी. बीरबहूटी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो ।
प्रभु-आगमन सुनत तुलसी मनो मीन मरत जल पायो ॥१९॥

राग गौरी

छेमकरी बलि बोलि सुबानी ।
कुसल छेम सिय राम लखन कब ऐहैं, अंब ? अवध रजधानी ॥
ससिमुखि, कुंकुम-बरनि, सुलोचनि, मोचनि-सोचनि बेद बखानी ।
देवि! दया करि देहि दरस-फल जोरि पानि बिनवहिँ सब रानी ॥
सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल कै मँडरानी ।
सुभ मंगल आनंद गगन-धुनि अकनि अकनि उर जरनि जुड़ानी ।
फरकन लगे सुअंग बिदिसि दिसि, मन प्रसन्न दुख-दसा सिरानी ।
करहिँ प्रनाम सप्रेम पुलकि तनु मानि बिबिध बलि सगुन सयानी ॥
तेहि अवसर हनुमान भरत सों कही सकल कल्यान-कहानी ।
तुलसिदास सोइ चाह सँजीवनि बिषम बियोग ब्यथा बड़ि भानी ॥२०॥

राग धनाश्री

सुनियत सागरसेतु बँधायो ।
कोसलपति की कुसल सकल सुधि कोउ इक दूत भरत पहँ ल्यायो ॥
बध्यो बिराध त्रिसिर खर दूषन, सूर्पनखा को रूप नसायो ।
हति कबंध, बल-अंध बालि दलि, कृपासिंधु सुग्रीव बसायो ॥
सरनागत अपनाइ बिभीषन रावन सकुल समूल बहायो ।
बिबुध-समाज-निवाजि बाँह दै बंदिछोर बर बिरद कहायो ॥
एक एक सों समाचार सुनि नगरलोग जहँ तहँ सब धायो ।
घन-धुनि अकनि मुदित मयूर ज्यों बूड़त जलधि पार सो पायो ॥
'अवधि आजु', यों कहत परसपर बेगि बिमान निकट पुर आयो ।
उतरि अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विजगन चरननि सिर नायो ॥
जो जेहि जोग राम तेहि बिधि मिलि सबके मन अति मोद बढ़ायो ।
भेंटी मातु, भरत, भरतानुज, क्यों कहौं प्रेम अमित अनमायो ॥
तेही दिन मुनिबृंद अनंदित तुरत तिलक को साज सजायो ।
महाराज रघुबंस-नाथ को सादर तुलसिदास गुन गायो ॥२१॥

राग जयतश्री

रन जीति राम राउ आए ।
सानुज सदल ससीय कुसल आजु अवध आनंद-बधाए ॥

२०—चाह = खबर, समाचार । २१—अनमायो = जिसकी माप नहीं हो सकती ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरिपुर जारि, उजारि, मारि रिपु, बिबुध सुबास बसाए।
धरनि धेनु महिदेव साधु सबके सब सोच नसाए॥
दई लंक, थिर थपे बिभीषन, बचन पियूष पिआए।
सुधा सीँचि कपि, कृपा नगर-नर-नारि निहारि जिआए॥
मिलि गुरु-बंधु-मातु-जन-परिजन भए सकल मन भाए।
दरस हरष दसचारि बरष के दुख पल में बिसराए॥
बोलि सचिव सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए।
महाराज अभिषेक बरषि सुर सुमन निसान बजाए॥
लै लै भेंट नृप, अहिप, लोकपति अति सनेह सिर नाए।
पूजि प्रीति पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए॥
दान मान सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए।
गए सोक-सर सूखि, मोद-सरिता-समुद्र गहिराए॥
प्रभु, प्रताप-रबि अहित-अमंगल-अघ-उलूक-तम ताए।
किए बिसोक हित-कोक-कोकनद, लोक सुजस सुभ छाए॥
राम राज कुलकाज सुमंगल सबनि सबै सुख पाए।
देहिँ असीस भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढ़ाए॥
आस्रम-धरम-बिभाग बेदपथ पावन लोग चलाए।
धर्म-निरत सिय-राम-चरन-रत मनहुँ राम-सिय-जाए॥
कामधेनु महि, बिटप कामतरु, कोउ बिधि बाम न लाए।
ते तब, अब तुलसी तेउ जिन्ह हित-सहित राम-गुन गाए॥२२॥

राग टोड़ी

आजु अवध आनंद बधावन रिपु रन जीति राम आए।
सजि सुबिमान निसान बजावत मुदित देव देखन धाए॥
घर घर चारु चौक चंदन मनि, मंगल-कलस सबनि साजे।
ध्वज पताक तोरन बितान बर, बिबिध भाँति बाजन बाजे॥
राम-तिलक सुनि दीप दीप के नृप आए उपहार लिए।
सीय सहित आसीन सिँहासन निरखि जोहारत हरष हिए॥
मंगल गान, बेदधुनि जयधुनि मुनि-असीस-धुनि भुवन भरे।
बरषि सुमन सुर सिद्ध प्रसंसत, सबके सब संताप हरे॥
राम-राज भइ कामधेनु महि सुख संपदा लोक छाए।
जनम जनम जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए॥२३॥

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर कांड

राग सोरठ

वन तें आइकै राजा राम भए भुवाल ।
मुदित चौदह भुवन, सब सुख सुखी सब सब काल ।।
मिटे कलुष कलेस कुलखन कपट कुपथ कुचाल ।
गए दारिद दोष दारुन दंभ दुरित दुकाल ।।
कामधुक महि, कामतरु तरु, उपल मनिगन लाल ।
नारि-नर तेहि समय सुकृती भरे भाग सुभाल ।।
वरन-आस्रम-धरम-रत, मन - वचन - बेष मराल ।
राम-सिय-सेवक सनेही साधु सुमुख रसाल ।।
राम-राज-समाज वरनत सिद्ध, सुर, दिगपाल ।
सुमिरि सो तुलसी अजहुँ हिय हरष होत बिसाल ।। १ ।।

राग ललित

भोर जानकीजीवन जागे ।
सूत मागध प्रबीन, बेनु बीना धुनि द्वारे, गायक सरस राग रागे ।।
स्यामल सलोने गात, आलसवस जँभात प्रिया-प्रेमरस पागे ।
उनींदे लोचन चारु, मुख सुखमा सिँगार हेरि हारे मार भूरि भागे ।।
सहज सुहाई छवि, उपमा न लहैं कवि, मुदित विलोकन लागे ।
तुलसिदास निसि वासर अनूप रूप रहत प्रेम-अनुरागे ।। २ ।।

राग कल्यान

रघुपति राजीवनयन, सोभा तनु कोटि मयन,
करुनारस-अयन चयन-रूप भूप, माई ।
देखो सखि अतुलित छवि, संत-कंज-कानन-रवि,
गावत कल कीरति कवि-कोविद-समुदाई ।।
मज्जन करि सरजुतीर ठाढ़े रघुबंसबीर,
सेवत पद-कमल धीर निरमल चित लाई ।
ब्रह्ममंडली - मुनींद्रबृंद - मध्य इंदुवदन
राजत सुखसदन लोकलोचन सुखदाई ।।
विथुरित सिररुह - वरूथ कुंचित विच सुमन-जूथ,
मनिजुत सिसु-फनि-अनीक ससि समीप आई ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनु सभीत दै अँकोर राखे जुग रुचिर मोर,
कुंडल-छवि निरखि चोर सकुचत अधिकाई ॥
ललित भ्रुकुटि तिलक भाल, चिबुक अधर द्विज रसाल,
हास चारुतर, कपोल नासिका सुहाई ।
मधुकर जुग पंकज बिच सुक बिलोकि नीरज पर
लरत मधुप-अवलि, मानो बीच कियो जाई ॥
सुंदर पट पीत बिसद, भ्राजत बनमाल उरसि,
तुलसिका-प्रसून-रचित बिबिध बिधि बनाई ।
तरु तमाल अधबिच जनु त्रिविध कीरपाँति रुचिर,
हेमजाल अंतर परि तातें न उड़ाई ॥
संकर-हृदि-पुंडरीक निसि बस हरि-चंचरीक,
निर्व्यलीक मानस-गृह संतत रहे छाई ।
अतिसय आनंदमूल तुलसिदास सानुकूल,
हरन सकल सूल, अवध-मंडन रघुराई ॥ ३ ॥

राजत रघुबीर धीर, भंजन भव-भीर, पीर
हरन सकल, सरजुतीर निरखहु, सखि ! सोहैं ।
संग अनुज मनुज-निकर, दनुज-बल-बिभंग-करन,
अंग अंग छवि अनंग अगनित मन मोहैं ॥
सुखमा-सुख-सील-अयन नयन निरखि निरखि नील
कुंचित कच, कुंडल कल नासिक चित पोहैं ।
मनहुँ इंदुबिंब मध्य कंज मीन खंजन लखि
मधुप मकर कीर आए तकि तकि निज गौं हैं ॥
ललित गंड मंडल, सुबिसाल भाल तिलक झलक
मंजुतर मयंक-अंक, रुचिर बंक भौंहैं ।
अरुन अधर, मधुर बोल, दसन दमक दामिनि दुति,
हुलसति हिय हँसनि चारु, चितवनि तिरछौहैं ॥
कंबु कंठ, भुज बिसाल, उरसि तरुन तुलसिमाल,
मंजुल मुकतावलि जुत जागति जिय जोहैं ।
जनु कलिंदनंदिनि मनि-इंद्रनील-सिखर परसि
धँसति लसति हंससेनि संकुल अधिकौहैं ॥

३—बीच कियो = बीच-बिचाव किया, बीच में पड़कर झगड़ा छुड़ाया ।
निर्व्यलीक = कपट-रहित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिब्यतर दुकूल भव्य, नव्य रुचिर चंपक चय,
चंचला-कलाप, कनक-निकर अलि, किधौं हैं।
सज्जन-चख-झख-निकेत, भूषन मनिगन समेत,
रूप-जलधि-वपुष लेत मन-गयंद बोहैं॥
अकनि वचन चातुरी, तुरीय पेखि प्रेम मगन
पग न परत इत उत सब चकित तेहि समौ हैं।
तुलसिदास यह सुधि नहिँ कौन की, कहाँ तें आई,
कौन काज, काके ढिग, कौन ठाउँ को हैं॥ ४॥

देखु सखि! आजु रघुनाथ सोभा वनी।
नील-नीरद-वरन-वपुष, भुवनाभरन,
पीत-अंवर-धरन हरन दुति-दामिनी॥
सरजु मज्जन किए संग सज्जन लिए,
हेतु जन पर हिए, कृपा कोमल घनी।
सजनि आवत भवन, मत्त-गजवर-गवन,
लंक मृगपति ठवनि कुँवर कोसलधनी॥
सघन चिक्कन कुटिल चिकुर विलुलित मृदुल,
करनि विवरत चतुर सरस सुखमा जनी।
ललित अहि-सिसु-निकर मनहुँ ससि सन समर,
लरत, धरहरि करत रुचिर जनु जुग फनी॥
भाल भ्राजत तिलक, जलज लोचन, पलक
चारु भ्रू नासिका सुभग सुक-आननी।
चिबुक सुंदर, अधर अरुन, द्विज दुति सुघर,
वचन गंभीर, मृदुहास भव-भाननी॥
स्रवन कुंडल, विमल गंड मंडित चपल,
कलित कल कांति अति भाँति कछु तिन्ह तनी।
जुगल कंचन-मकर मनहुँ विधुकर मधुर
पियत पहिचानि करि सिंधुकीरति भनी॥
उरसि राजत पदिक, ज्योति रचना अधिक,
माल सुबिसाल चहुँ पास बनि गजमनी।
स्याम नव जलद पर निरखि दिनकर-कला

४—बोहैं लेत = डुब्बी लेता है, अवगाहन करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौतुकी मनहुँ रही घेरि उडुगन-अनी ॥
मंदिरनि पर खरी नारि आनँद-भरी,
निरखि बरषहिँ विपुल कुसुम कुंकुम-कनी ।
दास तुलसी राम परम करुनाधाम,
काम सत कोटि मद हरत छवि आपनी ॥ ५ ॥

आजु रघुबीर छवि जाति नहिँ कछु कही ।
सुभग सिहासनासीन सीतारमन,
भुवन अभिराम बहु काम सोभा सही ॥
चारु चामर ब्यजन, छत्र मनिगन विपुल,
दाम मुकुतावली जोति जगमगि रही ।
मनहुँ राकेस सँग हंस उडुगन वरहि
मिलन आए हृदय जानि निज नाथही ॥
मुकुट सुंदर सिरसि, भालवर तिलक भ्रू
कुटिल कच, कुंडलनि परम आभा लही ।
मनहुँ हर-डर जुगल मारध्वज के मकर
लागि स्रवननि करत मेरु की वतकही ॥
अरुन-राजीव-दल-नयन करुना-अयन,
बदन सुषमासदन, हास त्रय-तापही ।
बिविध कंकन हार, उरसि गजमनि-माल
मनहुँ वग-पाँति जुग मिलि चली जलद ही ॥
पीत निर्मल चपल, मनहुँ मरकत सैल,
पृथुल दामिनि रही छाइ तजि सहज ही ।
ललित सायक चाप, पीन भुज वल अतुल
मनुज तनु दनुज वन-दहन मंडन-मही ॥
जासु गुन रूप नहिँ कलित निर्गुन सगुन,
संभु सनकादि सुक भक्ति दृढ़ करि गही ।
दास तुलसी राम-चरन-पंकज सदा
वचन मन कर्म चहै प्रीति नित निर्बही ॥ ६ ॥

५—धरहरि करत = बीच-बिचाव करते हैं । तनी = तानी, फैलाई ।
६—मेरु की बतकही = मेल की बातचीत । त्रयतापही = तीनों तापों का हनन करनेवाला । तजि सहज = (चंचल) स्वभाव छोड़कर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामराज राजमौलि मुनिवर-मन-हरन सरन
लायक, सुखदायक रघुनायक देखौ, री ।
लोक-लोचनाभिराम, नीलमनि-तमाल-स्याम,
रूप सीलधाम, अंग छवि अनंग को री ? ॥
भ्राजत सिर मुकुट पुरट-निर्मित मनि-रचित चारु,
कुंचित कच रुचिर परम, सोभा नहिँ थोरी ।
मनहुँ चंचरीक-पुंज कंजबृंद प्रीति लागि
गुंजत कल गान तान दिनमनि रिझयो री ॥
अरुनकंज-दल-विसाल लोचन भ्रू तिलक भाल
मंडित स्रुति कुंडल वर सुंदरतर जोरी ।
मनहुँ संवरारि मारि, ललित मकर-जुग विचारि,
दीन्हें ससि कहँ पुरारि, भ्राजत दुहुँ ओरी ॥
सुंदर नासा कपोल चिबुक, अधर अरुन, बोल
मधुर, दसन राजत जब चितवत मुख मोरी ।
कंज-कोस भीतर जनु कंजराग-सिखर निकर,
रुचिर रचित विधि विचित्र तड़ित-रंग बोरी ॥
कंबु कंठ, उर विसाल तुलसिका नवीन माल,
मधुकर वर वास विवस उपमा सुनु सो री !
जनु कलिदजा सुनील सैल तें धँसी समीप,
कंद-बृंद बरषत छवि मधुर घोरि घोरी ॥
निर्मल अति पीत चैल-दामिनि जनु जलद नील,
राखी निज सोभाहित बिपुल बिधि निहोरी ।
नयनन्हि को फल विसेष ब्रह्म अगुन सगुन बेष
निरखहु तजि पलक, सफल जीवन लेखौ री ॥
सुंदर सीता समेत सोभित करुनानिकेत,
सेवक सुख देत, लेत चितवत चित चोरी ।
वरनत यह अमित रूप थकित निगम नागभूप,
तुलसिदास छवि विलोकि सारद भइ भोरी ॥ ७ ॥

७—पुरट = सोना, स्वर्ण । संवरारि = कामदेव, (प्रद्युम्न ने, जो काम के अवतार थे, शंवर को मारा था) । कंजराग = पद्मराग मणि । कंद = बादल । घोरि घोरी = गरज गरजकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग केदारा

सखि ! रघुनाथ-रूप निहारु ।
सरद-विधु रवि-सुवन मनसिज-मान-भंजनिहारु ॥
स्याम सुभग सरीर जनु मन-काम-पूरनिहारु ।
चारु चंदन मनहुँ मरकत सिखर लसत निहारु ॥
रुचिर उर उपबीत राजत, पदिक गजमनि हारु ।
मनहुँ सुरधनु नखतगन विच तिमिर-गंजनिहारु ॥
विमल पीत दुकूल दामिनि-दुति-विनिंदनिहारु ।
बदन सुखमासदन सोभित मदन-मोहनिहारु ॥
सकल अंग अनूप नहिँ कोउ सुकवि बरननिहारु ।
दास तुलसी निरखतहि सुख लहत निरखनिहारु ॥ ८ ॥

सखि ! रघुबीर-मुखछवि देखु ।
चित्त-भीति सुप्रीति-रंग सुरूपता अवरेखु ॥
नयन-सुखमा निरखि नागरि ! सुफल जीवन लेखु ।
मनहुँ विधि जुग जलज बिरचे ससि सुपूरन मेखु ॥
भ्रुकुटि भाल बिसाल राजत रुचिर कुंकुम-रेखु ।
भ्रमर द्वै रविकिरनि ल्याए करन जनु उनमेखु ॥
सुमुखि ! केस सुदेस सुंदर सुमन-संजुत पेखु ।
मनहुँ उडुगन-निवह आए मिलन तम तजि द्वेखु ॥
स्रवन कुंडल मनहुँ गुरु कवि करत वाद विसेषु ।
नासिका द्विज अधर जनु रह्यो मदनु करि बहु बेषु ॥
रूप बरनि न सकत नारद संभु सारद सेसु ।
कहै तुलसीदास क्यों मतिमंद-सकल-नरेसु ॥ ९ ॥

राग जयतश्री

देखौ राघव-बदन बिराजत चारु ।
जात न बरनि बिलोकत ही सुख, मुख किधौं छबि-वर नारि-सिँगार ॥
रुचिर चिबुक, रद-जोति अनूपम, अधर अरुन, सित हास निहारु ।
मनो ससिकर बरयो चहत कमल महँ प्रगटत दुरत न बनत बिचारु ॥

८—रविसुवन = अश्विनीकुमार ।
९—ससि पूरन मेखु = शरत् पूर्णिमा का चंद्रमा जो मेष राशि में होता है ।
निवह = समूह ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नासिक सुभग मनहुँ सुक सुंदर, चितवत चकित आचरज अपारु ।
कल कपोल, मृदु बोल मनोहर, रीझि चित चतुर अपनपौ वारु ।।
नयनसरोज, कुटिल कच, कुंडल भ्रुकुटि सुभाल तिलक सोभा-सारु ।
मनहुँ केतु के मकर, चाप सर गयो बिसारि भयो मोहित मारु ।।
निगम सेष सारद सुक संकर बरनत रूप न पावत पारु ।
तुलसिदास कहै कहौ धौं कौन विधि अति लघुमति जड़ कूर गँवारु ।।१०।।

राग ललित

आज रघुपति-मुख देखत लागत सुख,
सेवक सुरुख, सोभा सरद-ससि सिहाई ।
दसन-बसन लाल, बिसद हास रसाल,
मानो हिमकर-कर राखे राजीव मनाई ।।
अरुन नैन बिसाल, ललित, भ्रुकुटि भाल
तिलक, चारु कपोल, चिबुक नासा सुहाई ।
बिथुरे कुटिल कच, मानहुँ मधु लालच अलि
नलिन-जुगल उपर रहे लोभाई ।।
स्रवन सुंदर सम कुंडल कल जुगल,
तुलसिदास अनूप उपमा कही न जाई ।
मानो मरकत सीप सुंदर ससि समीप
कनक मकरजुत विधि बिरची बनाई ।।११।।

राग भैरव

प्रातकाल रघुबीर-वदन-छवि चितै चतुर चित मेरे ।
होहिं बिबेक-बिलोचन निर्मल, सुफल, सुसीतल तेरे ।।
भाल बिसाल विकट भ्रुकुटी बिच तिलक - रेख रुचि राजै ।
मनहुँ मदन तम तकि मरकत धनु जुगल कनक सर साजै ।।
रुचिर पलक-लोचन जुग तारक स्याम, अरुन सित कोए ।
जनु अलि नलिन-कोस महँ बंधुक सुमन सेज सजि सोए ।।
बिलुलित ललित कपोलनि पर कच मेचक कुटिल सुहाए ।
मनो विधु महँ बनरुह बिलोकि अलिबिपुल सकौतुक आए ।।
सोभित स्रवन कनक-कुंडल कल लंबित बिवि भुजमूले ।
मनहुँ केकि तकि गहन चहत जुग उरग इंदु प्रतिकूले ।।

११—दसन-बसन = रदच्छद = ओठ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधर अरुन-तर, दसन-पाँति बर, मधुर मनोहर हासा ।
मनहुँ सोन-सरसिज महँ कुलिसनि तड़ित सहित कृतवासा ।।
चारु चिबुक, सुकतुंड बिनिंदक सुभग सुउन्नत नासा ।
तुलसिदास छबिधाम राममुख सुखद समन भवत्रासा ।।१२।।

राग केदारा

सुमिरत श्री रघुबीर की बाहैं ।
होत सुगम भव-उदधि अगम अति, कोउ लाँघत, कोउ उतरत थाहैं ।।
सुंदर-स्याम-सरीर-सैल तें धँसि जनु जुग जमुना अवगाहैं ।
अमित अमल जल-बल परिपूरन जनु जनमी सिँगार-सबिता हैं ।।
धारैं बान, कूल धनु, भूषन जलचर, भँवर सुभग सब घाहैं ।
बिलसति बीचि बिजय-बिरुदावलि, कर-सरोज सोहत सुखमा हैं ।।
सकल-भुवन-मंगल-मंदिर के द्वार बिसाल सुहाई साहैं ।
जे पूजीं कौसिक-मख रिषियनि जनक गनप संकर गिरजा हैं ।।
भवधनु दलि जानकी बिवाही भए बिहाल नृपाल त्रपा हैं ।
परसुपानि जिन्ह किए महामुनि जे चितए कबहूँ न कृपा हैं ।।
जातुधान-तिय जानि बियोगिनि दुखई सीय सुनाइ कुचाहैं ।
जिन्ह रिपु मारि सुरारि-नारि तेइ सीस उघारि दिवाई धाहैं ।।
दसमुख-बिबस तिलोक लोकपति बिकल बिनाए नाक चना हैं ।
सुबस बसे गावत जिन्हके जस अमर-नाग-नर-सुमुखि सनाहैं ।।
जे भुज बेद पुरान सेष सुक सारद सहित सनेह सराहैं ।
कल्पलतहु की कल्पलता बर, कामदुहहु की कामदुहा हैं ।।
सरनागत आरत प्रनतनि को दै दै अभयपद ओर निबाहैं ।
करि आईं, करिहैं, करती हैं तुलसिदास दासनि पर छाहैं ।।१३।।

राग भैरव

रामचंद्र-करकंज कामतरु बामदेव-हितकारी ।
सिय सनेह-बर-बेलि-बलित बर प्रेमबंधु बर बारी ।।
मंजुल-मंगल-मूल मूलतनु करज मनोहर साखा ।।
रोम परन, नख सुमन, सुफल सब काल सुजन-अभिलाषा ।।

१३—घाहैं = दो उँगलियों के बीच की घाई (संधिस्थान) । साहैं = द्वार के ढाँचे की दोनों खड़ी लकड़ियाँ । त्रपा = लज्जा । धाहैं दिवाई = धाड़ मारकर रुलाया ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अविचल अमल अनामय अविरल ललित रहित-छल-छाया ।
समन सकल संताप-पाप-रुज-मोह-मान-मद-माया ।।
सेवहिँ सुचि मुनि-भृंग-विहग मन-मुदित मनोरथ पाए ।
सुमिरत हिय हुलसत तुलसी अनुराग उमँगि गुन गाए ।।१४।।
रामचरन अभिराम कामप्रद तीरथ-राज विराजै ।
संकर-हृदय भगति भूतल पर प्रेम-अछयवट भ्राजै ।।
स्यामवरन पद-पीठ, अरुन तल, लसति विसद नखस्रेनी ।
जनु रविसुता सारदा सुरसरि मिलि चलीं ललित त्रिबेनी ।।
अंकुस, कुलिस, कमल, धुज सुंदर भँवर, तरंग विलासा ।
मज्जहिँ सुर सज्जन मुनिजन मन मुदित मनोहर वासा ।।
बिनु विराग जप जाग जोग ब्रत, बिनु तप, बिनु तनु त्यागे ।
सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभु-पद-प्रयाग अनुरागे ।।१५।।

राग विलावल

रघुवर-रूप विलोकु नेकु मन ।
सकल लोक-लोचन-सुखदायक नखसिख सुभग स्यामसुंदर तन ।।
चारु चरन-तल-चिह्न चारि फल चारि देत पर चारि जानि जन ।
राजत नख जनु कमेल-दलनि पर अरुन-प्रभा रंजित तुषार-कन ।।
जंघा जानु आनु कदलि उर, कटि किंकिनि, पट पीत सुहावन ।
रुचिर निषंग, नाभि रोमावलि त्रिवलि-वलित, उपमा कछु आव न ।।
भृगुपद-चिह्न पदिक उर सोभित मुकुतमाल कुंकुम अनुलेपन ।
मनहुँ परस्पर मिलि पंकज रवि प्रगट्यो निज अनुराग सुजस घन ।।
बाहु विसाल ललित सायक धनु, कर कंकन केयूर महाधन ।
विमल दुकूल दलन दामिनि-दुति यज्ञोपवीत लसत अति पावन ।।
कंबुग्रीव, छविसीँव चिबुक द्विज, अधर, कपोल, बोल भय-मोचन ।
नासिक सुभग कृपा-परिपूरन, तरुन अरुन राजीव-विलोचन ।।
कुटिल भ्रुकुटिवर, भाल तिलक रुचि, सुचि सुंदरता स्रवन विभूषन ।
मनहुँ मारि मनसिज पुरारि दिय ससिहिँ चापसर मकर अदूषन ।।
कुंचित कच, कंचन-किरीट सिर जटित ज्योतिमय वहु विधि मनिगन ।
तुलसिदास रविकुल-रवि-छवि कवि कहि न सकत सुक संभु सहसफन,
।।१६।।

राग कान्हरा

देखो रघुपति-छवि अतुलित अति ।
जनु तिलोक सुखमा सकेलि विधि राखी रुचिर अंग अंगनि प्रति ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पदुमराग रुचि मृदु पदतल, धुज ग्रंकुस कुलिस कमल यहि सूरति ।
रही ग्रानि चहुँ विधि भगतनि की जनु ग्रनुराग भरी ग्रंतरगति ॥
सकल सुचिह्न सुजन सुखदायक ऊरधरेख विसेष विराजति ।
मनहुँ भानु-मंडलहि सँवारत धरचो सूत विधि-सुत विचित्र मति ॥
सुभग ग्रँगुष्ठ ग्रंगुली ग्रविरल कछुक ग्ररुन नख-ज्योति जगमगति ।
चरन पीठ उन्नत नत पालक, गूढ़ गुलुफ, जंघा कदलीजति ॥
काम-तून-तल सरिस जानु जुग, उरु करि-कर करभहि बिलखावति ।
रसना रचित रतन चामीकर, पीत बसन कटि कसे सरसावति ॥
नाभी-सर त्रिवली-निसेनिका, रोमराजि सैवल छवि पावति ।
उर मुकुतामनि-माल मनोहर मनहुँ हंस-ग्रवली उड़ि ग्रावति ॥
हृदय पदिक भृगु-चरन-चिह्न वर बाहु बिसाल जानु लगि पहुँचति ।
कल केयूर पूर-कंचन-मनि, पहुँची मंजु कंज-कर सोहति ॥
सुजस सुरेख सुनख ग्रंगुलिजुत, सुंदर पानि मुद्रिका राजति ।
ग्रंगुलित्रान कमान बानछवि सुरनि सुखद ग्रसुरनि-उर सालति ॥
स्याम सरीर सुचंदन-चर्चित, पीत दुकूल ग्रधिक छवि छाजति ।
नील जलद पर निरखि चंद्रिका दुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥
यज्ञोपवीत पुनीत बिराजत गूढ़ जत्रु बनि पीन ग्रंस तति ।
सुगढ़ पुष्ट उन्नत कृकाटिका, कंबु कंठ सोभा मन मानति ॥
सरद-समय-सरसीरुह-निंदक मुख-सुखमा कछु कहत न बानति ।
निरखत ही नयननि निरुपम सुख, रविसुत, मदन, सोम-दुति निदरति ॥
ग्ररुन ग्रधर, द्विजपाँति ग्रनूपम, ललित हँसनि जनु मन ग्राकरषति ।
बिद्रुम-रचित बिमान मध्य जनु सुरमंडली सुमन-चय बरषति ॥
मंजुल चिबुक मनोरम हनुथल, कल कपोल नासा मन मोहति ।
पंकज-मान-विमोचन लोचन, चितवनि चारु ग्रमृत-जल सींचति ॥
केस सुदेस, गँभीर वचन वर, स्रुति कुंडल-डोलनि जिय जागति ।
लखि नव नील पयोद रवित सुनि रुचिर मोर-जोरी जनु नाचति ॥
भौंहैं बंक मयंक-ग्रंक रुचि कुंकुमरेख भाल भलि भ्राजति ।
सिरसि हेम-हीरक-मानिकमय मुकुट-प्रभा सब भुवन प्रकासति ॥

१७—सूत धरचो = कारीगरों के समान सीध नापने के लिये सूत रखा । बिधिसुत = विश्वकर्मा । कदलीजति = कदलीजित । जत्रु = गले के नीचे की धन्वाकार हड्डी, जिसे हँसली कहते हैं । ग्रंस = कंध । तति = विस्तीर्ण । कृकाटिका = कंधे ग्रौर गले का जोड़ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बरनत रूप पार नहिँ पावत निगम सेष सुक संकर भारति ।
तुलसिदास केहि विधि वखानि कहै यह मन वचन अगोचर मूरति ॥१७॥

राग मलार

आली री ! राघौ के रुचिर हिँडोलना झूलन जैए ।
फटिक भीति सुचारु चहुँ दिसि, मंजु मनिमय पौँरि ।
गच काँच लखि मन नाच सिखि जनु पाँचसर सु फँसौरि ॥
तोरन वितान पताक चामर धुज सुमन फल-घौरि ।
प्रतिछाँह-छवि कवि साखि दै प्रति सों कहै गुरु हौं रि ! ॥
मदन जय के खंभ-से रचे खंभ सरल विसाल ।
पाटीर पाटि विचित्र भँवरा वलित बेलिन लाल ॥
डाँड़ो कनक कुंकुम-तिलक रेखैं-सी मनसिज-भाल ।
पटुली पदिक रति-हृदय जनु कलधौंत-कोमल-माल ॥
उनए सघन घनघोर, मृदु झरि सुखद सावन लाग ।
बगपाँति, सुरधनु, दमक दामिनि, हरित भूमि-विभाग ॥
दादुर मुदित, भरे सरित सर, महि उमँग जनु अनुराग ।
पिक मोर मधुप चकोर चातक सोर उपवन वाग ॥
सो समौ देखि सुहावनो नवसत सँवारि सँवारि ।
गुन-रूप-जोवन सीँव सुंदरि चलीं झुंडनि झारि ॥
हिंडोल-साल विलोकि सव अंचल पसारि पसारि ।
लागीं असीसन राम - सीतहिँ सुख-समाजु निहारि ॥
झूलहिँ झुलावहिँ ओसरिन्ह गावैं सुहो गौँड-मलार ।
मंजीर-नूपुर-वलय-धुनि जनु काम-करतल-तार ॥
अति चमुत स्रमकन, मुखनि विथुरे चिकुर, विलुलित हार ।
तम तड़ित उडुगन अरुन विधु जनु करत व्योम विहार ॥
हिय हरषि वरषि प्रसून निरखति विबुध-तिय तृन तूरि ।
आनंद जल लोचन, मुदित मन, पुलक तनु भरिपूरि ॥
सब कहहिँ अविचल राज नित कल्यान मंगल भूरि ।
चिरजियौ जानकिनाथ जग तुलसी सँजीवनि मूरि ॥१८॥

१८—पाँचसर सु फँसौरि = कामदेव के फंदे-सा है। फँसौरि = फंदा, पाश। प्रतिछाँह........गुरु हौं रि !—प्रतिबिंव कवियों का साक्ष्य देकर मूल प्रति या बिंब (असल वस्तु) से कहता है कि मैं तुमसे बड़ा हूँ। नवसत—सोलह शृंगार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग सूहो

कोसलपुरी सुहावनी सरि सरजू के तीर।
भूपावली-मुकुटमनि नृपति जहाँ रघुबीर॥
पुर-नर-नारि चतुर अति धरमनिपुन, रत-नीति।
सहज सुभाय सकल, उर श्रीरघुवर-पद-प्रीति॥
श्रीरामपद-जलजात सब के प्रीति अबिरल पावनी।
जो चहत सुक, सनकादि, संभु, विरंचि, मुनिमन-भावनी॥
सबही के सुंदर मंदिराजिर, राउ रंक न लखि परै।
नाकेस-दुर्लभ भोग लोग करहिँ न मन विषयनि हरै॥ १॥

सब रितु सुखप्रद सो पुरी पावस अति कमनीय।
निरखत मनहिँ हरत हठि हरित अवनि रमनीय॥
बीरबहूटि बिराजहीं, दादुर-धुनि चहुँ ओर।
मधुर गरजि घन बरषहीं, सुनि सुनि बोलत मोर॥
बोलत जो चातक मोर कोकिल कीर पारावत घने।
खग बिपुल पाले बालकनि कूजत उड़ात सुहावने॥
बकराजि राजति गगन हरिधनु तड़ित दिसि दिसि सोहहीं।
नभ नगर की सोभा अतुल अवलोकि मुनि मन-मोहहीं॥ २॥

गृह गृह रचे हिँडोलना महि गच काँच सुढार।
चित्र विचित्र चहूँ दिसि परदा फटिक पगार॥
सरल बिसाल बिराजहीँ बिद्रुम-खंभ सुजोर।
चारु पाटि पटि पुरट की झरकत मरकत भौँर॥
मरकत भँवर डाँड़ी कनक मनि-जटित दुति जगमगि रही।
पटुली मनहुँ बिधि निपुनता निज प्रगट करि राखी सही॥
वहुरंग लसत बितान मुकुतादाम सहित-मनोहरा।
नव सुमन-माल-सुगंध लोभे मंजु गुंजत मधुकरा॥ ३॥

झुंड झुंड झूलन चलीं गजगामिनि वर नारि।
कुसुँभि चीर तनु सोहहीं भूषन विविध सँवारि॥
पिकबयनी मृगलोचनी सारद ससि सम तुंड।
राम-सुजस सब गावहीं सुसुर सुसारँग गुंड॥

१९—३—भौँर = वह घूमनेवाली अँकड़ी जिसमें झूले को डोरी बँधी रहती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारंग गुंड मलार सोरठ सुहव सुघरनि बाजहीं ।
बहु भाँति तान तरंग सुनि गंधर्व किन्नर लाजहीं ।।
अति मचत छूटत कुटिल कच छवि अधिक सुंदरि पावहीं ।
पट उड़त, भूषन खसत, हँसि हँसि अपर सखी झुलावहीं ।। ४ ।।
फिरि फिरि झूलहिँ भामिनी अपनी अपनी बार ।
बिबुध-बिमान थकित भए देखत चरित अपार ।।
बरषि सुमन हरषहिँ उर बरनहिँ हरिगुन-गाथ ।
पुनि पुनि प्रभुहिँ प्रसंसहीं 'जय जय जानकिनाथ' ।।
जय जानकीपति बिसद कीरति सकल-लोक-मलापहा ।
सुरबधू देहिँ असीस चिरजिव राम सुख संपति महा ।।
पावस समय कछु अवध बरनत सुनि अघौघ नसावहीं ।
रघुबीर के गुनगन नवल नित दास तुलसी गावहीं ।। ५ ।।१९।।

राग आसावरी

साँझ समय रघुबीर पुरी की सोभा आजु बनी ।
ललित दीपमालिका बिलोकहिँ हित करि अवधधनी ।।
फटिक-भीत सिखरन पर राजति कंचन-दीप-अनी ।
जनु अहिनाथ मिलन आयो मनि-सोभित सहसफनी ।।
प्रति मंदिर कलसनि पर भ्राजहिँ मनिगन दुति अपनी ।
मानहुँ प्रगटि बिपुल लोहितपुर पठइ दिए अवनी ।।
घर घर मंगलचार एकरस हरषित रंक गनी ।
तुलसिदास कल कीरति गावहिँ जो कलिमल-समनी ।।२०।।

राग गौरी

अवध नगर अति सुंदर, बर सरिता के तीर ।
नीति-निपुन नर-तिय सबहि धरम धुरंधर धीर ।।
सकल रितुन्ह सुखदायक तामहँ अधिक बसंत ।
भूप-मौलि-मनि जहँ बस नृपति जानकीकंत ।।
बन उपवन नव किसलय कुसुमित नाना रंग ।
बोलत मधुर मुखर खग पिकबर, गुंजत भृंग ।।
समय बिचारि कृपानिधि देखि द्वार अति भीर ।
खेलहु मुदित नारि-नर बिहँसि कहेउ रघुबीर ।।

२०—लोहितपुर = मंगललोक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर नारि नर हरषित सब चले खेलन फागु ।
देखि राम-छबि अतुलित उमगत उर अनुरागु ॥
स्याम-तमाल-जलदतनु निर्मल पीत दुकूल ।
अरुन-कंज-दल-लोचन सदा दास-अनुकूल ॥
सिर किरीट, स्रुति कुंडल, तिलक मनोहर भाल ।
कुंचित केस, कुटिल भ्रू चितवनि भगत-कृपाल ॥
कल कपोल, सुक नासिक, ललित अधर द्विज-जोति ।
अरुन कंज महँ जनु जुग पाँति रुचिर गजमोति ॥
वर दर-ग्रीव, अमितबल बाहु सुपीन बिसाल ।
कंकन हार मनोहर, उरसि लसति बनमाल ॥
उर भृगु-चरन बिराजत, द्विज-प्रिय चरित पुनीत ।
भगत हेतु नर-बिग्रह सुरवर गुन गोतीत ॥
उदर त्रिरेख मनोहर सुंदर नाभि गँभीर ।
हाटक-घटित जटित मनि कटितट रट मंजीर ॥
उरु अरु जानु पीन मृदु मरकत खंभ समान ।
नूपुर मुनि-मन मोहत करत सुकोमल गान ॥
अरुन बरन पदपंकज, नखदुति इंदु-प्रकास ।
जनक-सुता-करपल्लव लालित बिपुल बिलास ॥
कंज, कुलिस, धुज, अंकुस रेख चरन सुभ चारि ।
जन-मन-मीन हरन कहँ बंसी रची सँवारि ॥
अंग अंग प्रति अतुलित सुखमा बरनि न जाइ ।
एहि सुख मगन होइ मन फिरि नहिँ अनत लोभाइ ॥
खेलत फागु अवधपति अनुज सखा सब संग ।
बरषि सुमन सुर निरखहिँ, सोभा अमित अनंग ॥
ताल, मृदंग, झाँझ, डफ बाजहिँ पनव, निसान ।
सुघर सरस सहनाइन्ह गावहिँ समय समान ॥
बीना बेनु मधुर धुनि सुनि किन्नर गंधर्व ।
निज गुन गरुअ हरुअ अति मानहिँ मन तजि गर्व ॥
निज निज अटनि मनोहर गान करहिँ पिकबैनि ।
मनहुँ हिमालय-सिखरनि लसहिँ अमर-मृगनैनि ॥
धवल धाम तें निकसहिँ जहँ तहँ नारि-बरूथ ।
मानहुँ मथत पयोनिधि बिपुल अपसरा - जूथ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किंसुक बरन सुअंसुक सुखमा सुखनि समेत।
जनु बिधु-निवह रहे करि दामिनि-निकर निकेत॥
कुंकुम सुरस अबीरनि भरहिँ चतुर वर नारि।
रितु सुभाय सुठि सोभित देहिँ विविध बिधि गारि॥
जो सुख जोग जाग जप तप तीरथ तें दूरि।
राम-कृपा तें सोइ सुख अवध गलिन्ह रह्यो पूरि॥
खेलि बसंत कियो प्रभु मज्जन सरजू-नीर।
बिबिध भाँति जाचक-जन पाए भूषन चीर॥
तुलसिदास तेहि अवसर माँगी भगति अनूप।
मृदु मुसुकाइ दीन्हि तव कृपादृष्टि रघुभूप॥ २१॥

राग वसंत

खेलत वसंत राजाधिराज। देखत नभ कौतुक सुर-समाज॥
सोहैं सखा अनुज रघुनाथ साथ। झोलिन्ह अबीर, पिचकारि हाथ॥
बाजहिँ मृदंग डफ ताल बेनु। छिरकैं सुगंध-भरे मलय-रेनु॥
उत जुवति-जूथ जानकी संग। पहिरे पट भूषन सरस रंग॥
लिए छरी बेंत सोधैं बिभाग। चाँचरि झूमक कहैं सरस राग॥
नूपुर-किंकिनि-धुनि अति सोहाइ। ललना-गन जब जेहि धरइँ धाइ॥
लोचन आँजहिँ फगुआ मनाइ। छाँड़हिँ नचाइ हाहा कराइ॥
चढ़े खरनि बिदूषक स्वाँग साजि। करैं कूटि, निपट गइ लाज भाजि॥
नर-नारि परसपर गारि देत। सुनि हँसत राम भाइन समेत॥
बरषत प्रसून बर-बिबुध-बृंद। जय जय दिनकर-कुल-कुमुद-चंद॥
ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास। गावत कल कीरति तुलसिदास॥२२।

राग केदारा

देखत अवध को आनंद।
हरषि बरषत सुमन दिन दिन देवतनि को बृंद॥
नगर-रचना सिखन को बिधि तकत बहु बिधिबंद।
निपट लागत अगम ज्यों जलचरहि गमन सुछंद॥
मुदित पुर लोगनि सराहत निरखि सुखमाकंद।
जिन्हके सुअलि-चख पियत राम-मुखारबिंद-मरंद॥

२१—अंसुक = वस्त्र। निबह = समूह।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्य ब्योम बिलंबि चलत दिनेस, उडुगन, चंद ।
रामपुरी बिलोकि तुलसी मिटत सब दुख-द्वंद ।। २३ ।।

राग सोरठ

पालत राज यों राजाराम धरमधुरीन ।
सावधान सुजान सब दिन रहत नय-लयलीन ।।
स्वान, खग, जति न्याउ देख्यो आपु बैठि प्रवीन ।
नीचु हति महिदेव बालक कियो मीचुविहीन ।।
भरत ज्यों अनुकूल जग निरुपाधि नेह नवीन ।
सकल चाहत राम ही ज्यों जल अगाधहि मीन ।।
गाइ राज-समाज जाँचत दास तुलसी दीन ।
लेहु निज करि, देहु निज पदप्रेम पावन पीन ।। २४ ।।

संकट सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ ।
सहस द्वादस पंचसत में कछुक है अब आउ ।।
भोग पुनि पितु-आयु को, सोउ किए बनै बनाउ ।
परिहरे बिनु जानकी नहिँ और अनघ उपाउ ।।
पालिबे असिधार-ब्रत प्रिय प्रेम-पाल सुभाउ ।
होइ हित केहि भाँति, नित सुबिचारु नहिँ कित चाउ ।।
निपट असमंजसहु बिलसति मुख मनोहरताउ ।
परम धीर-धुरीन हृदय कि हरष बिसमय काउ ? ।।
अनुज सेवक सचिव हैं सब सुमति साधु सखाउ ।
जान कोउ न जानकी बिनु अगम अलख लखाउ ।।
राम जोगवत सीय-मनु प्रिय मनहिँ प्रानप्रियाउ ।
परम पावन प्रेम-परमिति समुझि तुलसी गाउ ।। २५ ।।

राम बिचारि कै राखी ठीक दै मन माहिँ ।
लोक बेद सनेह पालत पल कृपालहि जाहिँ ।।

२३—बिधिबंद = बंध अर्थात् रचना के भेद ।

२५—भोग पुनि पितु-आयु को = ऐसा प्रसिद्ध है कि राजा दशरथ अपनी आयु पूरी करने के पहले ही मर गए, उनकी शेष आयु को रामचंद्र ने भोगा। अपनी आयुभर तो राम ने जानकी को साथ रखा, पर जब अपने पिता की आयु भोगने चले तब जानकी का परित्याग उन्होंने उचित बिचारा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रियतमा पति-देवता जिहि उमा रमा सिहाहिँ ।
गुरुविनी सुकुमारि सिय तियमनि समुझि सकुचाहिँ ।।
मेरेही सुख सुखी, सुख अपनो सपनहूँ नाहिँ ।
गेहिनी गुन-गेहिनी गुन सुमिरि सोच समाहिँ ।।
राम सीय सनेह वरनत अगम, सुकवि सकाहिँ ।
रामसीय-रहस्य तुलसी कहत राम कृपाहिँ ।। २६ ।।

चरचा चरनि सोँ चरची जानमनि रघुराइ ।
दूत मुख सुनि लोक-धुनि घर घरनि बूझी आइ ।।
प्रिया निज अभिलाष रुचि कहि कहति सिय सकुचाइ ।
तीय, तनय समेत तापस पूजिहौँ वन जाइ ।।
जानि करुनासिंधु भावी-विवस सकल सहाइ ।
धीर धरि रघुवीर भोरहि लिए लखन बोलाइ ।।
"तात तुरतहि साजि स्यंदन सीय लेहु चढ़ाइ ।
वालमीकि मुनीस-आस्रम आइयहु पहुँचाइ" ।।
'भलेहि नाथ' सुहाथ माथे राखि राम-रजाइ ।
चले तुलसी पालि सेवक-धरम-अवधि-अघाइ ।। २७ ।।

आए लखन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि ।
नाइ सिर रहे पाइ आसिष जोरि पंकजपानि ।।
वालमीकि विलोकि व्याकुल, लखन गरत गलानि ।
सर्बविद बूझत न विधि की वामता पहिचानि ।।
जानि जिय अनुमान ही सिय सहस विधि सनमानि ।
राम सद्गुन-धाम, परमिति भई कछुक मलानि ।।
दीनबंधु दयालु देवर देखि अति अकुलानि ।
कहति वचन उदास तुलसीदास त्रिभुवन-रानि ।। २८ ।।

तौलौं वलि आपुही कीवी विनय समुझि सुधारि ।
जौलौं हौं सिखि लेउँ वन रिषि-रीति वसि दिन चारि ।।
तापसी कहि कहा पठवति नृपनि को मनुहारि ।
बहुरि तिहि विधि आइ कहिहै साधु कोउ हितकारि ।।
लखन लाल कृपाल ! निपटहि डारिबी न विसारि ।
पालबी सब तापसनि ज्यों राजधरम विचारि ।।

२६—गुरुविनि = गुर्विणी, गर्भवती ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनत सीता-वचन मोचत सकल लोचन-वारि ।
वालमीकि न सके तुलसी सो सनेह सँभारि ।। २९ ।।

सुनि ब्याकुल भए उतरु कछु कह्यो न जाइ ।
जानि जिय विधि वाम दीन्हों मोहिँ सरुष सजाइ ।।
कहत हिय मेरी कठिनई लखि गई प्रीति लजाइ ।
आजु अवसर ऐसे हूँ जौं न चले प्रान बजाइ ।।
इतहिँ सीय-सनेह-संकट, उतहिँ राम-रजाइ ।
मौनही गहि चरन गौने सिख सुआसिष पाइ ।।
प्रेम-निधि पितु को कहे मैं परुष-वचन अघाइ ।
पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहे सिराइ ।। ३० ।।

गौने मौनही बारहि बार परि परि पाय ।
जात जनु रथ चोर कर लछिमन मगन पछिताय ।।
असन बिनु वन, बरम बिनु रन, बच्यौ कठिन कुघाय ।
दुसह साँसति सहन को हनुमान ज्यायो जाय ।।
हेतु हौं सियहरन को तब, अबहुँ भयो सहाय ।
होत हठि मोहिँ दाहिनो दिन दैव दारुन-दाय ।।
तज्यो तनु संग्राम जेहि लगि गीध जसी जटाय ।
ताहि हौं पहुँचाइ कानन चल्यों अवध सुभाय ।।
घोर हृदय कठोर करतब सृज्यो हौं विधि बायँ ।
दास तुलसी जानि राख्यो कृपानिधि रघुराय ।। ३१ ।।

पुत्रि ! न सोचिए, आई हौं जनक-गृह जिय जानि ।
कालिही कल्यान कौतुक, कुसल तव, कल्यानि ।।
राजरिषि पितु ससुर, प्रभु पति, तू सुमंगल-खानि ।
ऐसेहू थल वामता, बड़ि वाम विधि की बानि ।।
बोलि मुनि कन्या सिखाई प्रीति-गति पहिचानि ।
आलसिन्ह की देवसरि सिय सेइयहु मन मानि ।।
न्हाइ प्रातहि पूजिबो बट विटप अभिमत-दानि ।
सुवन लाहु उछाहु, दिन दिन, देवि अनहित-हानि ।।
पाप-ताप-विमोचनी कहि कथा सरस पुरानि ।
बालमीकि प्रबोधि तुलसी गई गरुइ गलानि ।। ३२ ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब तें जानकी रही रुचिर आस्रम आइ।
गगन, जल, थल विमल तब तें सकल मंगलदाइ ॥
निरस भूरुह सरस फूलत फलत अति अधिकाइ ।
कंद मूल अनेक अंकुर स्वाद सुधा लजाइ ॥
मलय मरुत, मराल-मधुकर-मोर-पिक-समुदाइ ।
मुदित-मन मृग-विहग विहरत विषम बैर बिहाइ ॥
रहत रवि अनुकूल दिन, ससि रजनि सजनि सुहाइ ।
सीय सुनि सादर सराहति सखिन्ह भलो मनाइ ॥
मोद-विपिन-विनोद चितवत लेत चितहिं चोराइ ।
राम विनु सिय सुखद वन तुलसी कहै किमि गाइ ॥ ३३ ॥

सुभ दिन, सुभ घरी, नीको नखत, लगन सुहाइ ।
पूत जाए जानकी द्वै मुनिवधू उठीं गाइ ॥
हरषि वरषत सुमन सुर गहगहे वधाए वजाइ ।
भुवन कानन आस्रमनि रहे मोद मंगल छाइ ॥
तेहि निसा तहँ सत्रुसूदन रहे विधिवस आइ ।
माँगि मुनि सों विदा गवने भोर सो सुख पाइ ॥
मातु मौसी वहिनिहूँ तें सासु तें अधिकाइ ।
करहिँ तापस-तीय-तनया सीय-हित चित लाइ ॥
किए विधि व्यवहार मुनिवर विप्रबृंद बोलाइ ।
कहत सब रिषिकृपा को फल भयो आजु अघाइ ॥
सुरुख रिषि सुख सुतनि को, सिय सुखद सकल सहाइ ।
सूल राम-सनेह को तुलसी न जिय तें जाइ ॥ ३४ ॥

मुनिवर करि छठी कीन्हीं वारहें की रीति ।
बन-वसन पहिराइ तापस, तोषि पोषे प्रीति ॥
नामकरन सुअन्नप्रासन बेदबाँधी नीति ।
समय सब रिषिराज करत समाज साज समीति ॥
वाल लालहिँ कहहिँ "करिहैं राज सब जग जीति" ।
राम-सिय-सुत गुरु अनुग्रह उचित अचल प्रतीति ॥
निरखि वाल-विनोद तुलसी जात बासर बीति ।
पिय-चरित सिय चित चितेरो लिखत नित हित-भीति ॥ ३५ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक सीय के विहरत मुदित मन दोउ भाइ ।
नाम लव कुस, राम-सिय-अनुहरति सुंदरताइ ।।
देत मुनि मुनि-सिसु खेलौना ते लै धरत दुराइ ।
खेल खेलत नृप-सिसुन्ह के वालबृंद बोलाइ ।।
भूप भूषन वसन वाहन राज-साज सजाइ ।
बरम चरम कृपान सर धनु तून लेत वनाइ ।।
दुखी सिय पिय-विरह तुलसी, सुखी सुत-सुख पाइ ।
आँच पय उफनात सींचत सलिल ज्यों सकुचाइ ।। ३६ ।।

कैकेयी जौलौं जियति रही ।
तौलों वात मातु सों मुँह भरि भरत न भूलि कही ।।
मानी राम अधिक जननी तें जननिहु गँस न गही ।
सीय लखन रिपुदमन राम-रुख लखि सब की निवही ।।
लोक-बेद- मरजाद दोष-गुन गति चित चख न चही ।
तुलसी भरत समुझि सुनि राखी राम-सनेह सही ।। ३७ ।।

राग रामकली

रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावहिँ सकल अवधवासी ।
अति उदार अवतार मनुज-वपु धरे ब्रह्म अज अविनासी ।।
प्रथम ताड़का हति, सुबाहु वधि, मख राख्यो द्विज-हितकारी ।
देखि दुखी अति सिला सापवस रघुपति विप्रनारि तारी ।।
सब भूपन को गरव हरचो हरि, भंज्यो संभु-चाप भारी ।
जनकसुता समेत आवत गृह परसुराम अति मदहारी ।।
तात-वचन तजि राज, काज सुर चित्रकूट मुनिवेष धरचो ।
एक नयन किन्हों सुरपतिसुत, वधि विराध रिषि-सोक हरचो ।।
पंचबटी पावन राघव करि सूपनखा कुरूप कीन्हीं ।
खर दूषन संहारि कपटमृग, गीधराज कहँ गति दीन्हीं ।।
हति कवंध, सुग्रीव सखा करि, बेधे ताल, वालि मारचो ।
बानर रीछ सहाय अनुज सँग सिंधु वाँधि जस विस्तारचो ।।
सकुल पुत्र दल सहित दसानन मारि अखिल सुर-दुख टारचो ।
परमसाधु जिय जानि विभीषन लंकापुरी तिलक सारचो ।।

३७—गँस = गाँस, वैरभाव ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीता अरु लछिमन सँग लीन्हें औरहुँ जिते दास आए ।
नगर निकट बिमान आए सब नर-नारी देखन धाए ।।
सिव, बिरंचि, सुक, नारदादि मुनि अस्तुति करत बिमल बानी ।
चौदह भुवन चराचर हरषित, आए राम राजधानी ।।
मिले भरत, जननी, गुरु, परिजन चाहत परम अनंद भरे ।
दुसह-बियोग-जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ।।
बेद पुरान बिचारि लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो ।
तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भगति-दान तब माँगि लियो ।।३८।।

—:o:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णगीतावली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीकृष्णगीतावली

राग विलावल

माता लै उछंग गोबिँदमुख बार बार निरखै ।
पुलकित तनु आनंदघन छन छन मन हरषै ॥
पूछत तोतरात बात मातहि जदुराई ।
अतिसय सुख जाते तोहिँ मोहि कहु समुझाई ॥
देखत तव वदन-कमल मन अनंद होई ।
कहै कौन रसन मौन जानै कोइ कोई ॥
सुंदर मुख मोहिँ देखाउ, इच्छा अति मोरे ।
मम समान पुन्यपुंज वालक नहिँ तोरे ॥
तुलसी प्रभु प्रेमवस्य मनुज-रूप - धारी ।
वालकेलि लीलारस ब्रजजन-हितकारी ॥ १ ॥

राग ललित

'छोटी मोटी मीसी रोटी चिकनी चुपरि कै तू दे री मैया'
'लै कन्हैया' 'सो कव ?' 'अवहिँ तात' ।
'सिगरियै हौं हीं खैहौं, वलदाऊ को न दैहौं',
सो क्यौं भटू तेरो कहा कहि इत उत जात ॥
वाल बोलि डहकि विरावत, चरित लखि,
गोपीगन महरि मुदित पुलकित गात ।
नूपुर की धुनि किंकिनि के कलरव सुनि,
कूदि कूदि किलकि किलकि ठाढ़े ठाढ़े खात ॥
तनियाँ ललित कटि, विचित्र टेपारी सीस,
मुनि-मन हरत वचन कहै तोतरात ।
तुलसी निरखि हरषत वरषत फूल, भूरिभागी
ब्रजवासी विबुध सिद्ध सिहात ॥ २ ॥

राग आसावरी

तोहिँ स्याम की सपथ जसोदा आइ देखु गृह मेरे !
जैसी हाल करी यहि ढोटा छोटे निपट अनेरे ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोरस-हानि सहौं न कहौं कछु यहि ब्रजवास वसेरे ।
दिनप्रति भाजन कौन बेसाहै ? घर निधि काहूके रे ।।
किए निहोरो हँसत, खिझे तें डाटत नयन तरेरे ।
अवहीं तें ये सिखे कहाधौं चरित ललित सुत तेरे ।।
बैठो सकुचि साधु भयो चाहत मातुवदन तन हेरे ।
तुलसिदास प्रभु कहौं ते बातैं जे कहि भजे सबेरे ।। ३ ।।

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिँ ।
मैया ! इन्हहिँ वानि परगृह की, नाना जुगति वनावहिँ ।
इन्हके लिये खेलिबो छाँड़्यौं तऊ न उवरन पावहिँ ।
भाजन फोरि, बोरि कर गोरस देन उरहनो आवहिँ ।।
कवहुँक वाल रोवाइ पानि गहि मिस करि उठि उठि धावहिँ ।
करहिँ आपु सिर धरहिँ आन के वचन विरंचि हरावहिँ ।।
मेरी टेव बूझि हलधर को संतत संग खेलावहिँ ।
जे अन्याउ करहिँ काहूको ते सिसु मोहिँ न भावहिँ ।।
सुनि सुनि वचन-चातुरी ग्वालिनि हँसि हँसि बदन दुरावहिँ ।
बाल गोपाल केलि-कल-कीरति तुलसिदास मुनि गावहिँ ।। ४ ।।

कवहुँ न जात पराये धामहिँ ।
खेलत ही देखौं निज आँगन सदा सहित बलरामहिँ ।
मेरे कहा थाकु गोरस को नवनिधि मंदिर यामहिँ ।
ठाढ़ी ग्वालि ओरहने के मिस आइ बकहिँ बेकामहिँ ।।
हौं वलि जाउँ जाहु कितहूँ जनि मातु सिखावति स्यामहिँ ।
बिनु कारन हठि दोष लगावति तात गए गृह तामहिँ ।।
हरिमुख निरखि परुष वानी सुनि अधिक अधिक अभिरामहिँ ।
तुलसिदास प्रभु देख्योइ चाहति श्रीउरललित-ललामहिँ ।। ५ ।।

अब सब साँची कान्ह तिहारी ।
जो हम तजे पाइ गौं मोहन गृह आए दै गारी ।।
सुसुकि सभीत सकुचि रूखे मुख बातें सकल सँवारी ।
साधु जानि हँसि हृदय लगाए परम प्रीति महतारी ।
कोटि जतन करि सपथ कहैं हम, मानै कौन हमारी ?
तुमहिँ बिलोकि आन की ऐसी क्यों कहिहैं वर नारी ।।

५—थाकु = सीमा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे हौ तैसे सुखदायक ब्रजनायक बलिहारी ।
तुलसिदास प्रभु मुखछवि निरखत मन सब जुगुति बिसारी ॥६॥

राग केदारा

महरि तिहारे पाँय परौं अपनो ब्रज लीजै ।
सहि देख्यो, तुम्हसों कह्यो, अब नाकहि आई, कौन दिनहु दिन छीजै ?
ग्वालिनि तौ गोरस सुखी ता बिनु क्यों जीजै ।
सुत समेत पाउँ धारिये, आपुहि भवन मेरे देखिये जो न पतीजै ॥
अति अनीति नीकी नहीं अजहूँ सिख दीजै ।
तुलसिदास प्रभु सों कहै उर लाइ जसोमति ऐसी बलि कबहूँ नहिँ कीजै ॥७॥

अबहिँ उरहनो दै गई, बहुरो फिरि आई ।
सुनु मैया ! तेरी सौं करौं याकी टेव लरन की, सकुच बेंचि सी खाई ॥
या ब्रज में लरिका घने, हौंही अन्याई ।
मुँह लाए मूड़हिं चढ़ी अंतहु अहिरिनि, तू सूधि करि पाई ॥
सुनि सुत की अति चातुरी जसुमति मुसुकाई ।
तुलसिदास ग्वालिनी ठगी, आयो न उतर कछु, कान्ह ठगौरी लाई ॥८॥

राग गौरी

अब ब्रजबास महरि किमि कीबो ? ।
दूध दह्योउ माखन ढारत हैं हुतो पोसात दान दिन दीबो ॥
अब तौ कठिन कान्ह के करतब, तुम्ह हौ हँसति कहा कहि लीबो ?
लीजै गाँउ, नाउँ लै रावरो है जग ठाउँ कहूँ ह्वै जीबो ॥
ग्वालिबचन सुनि कहति जसोमति 'भलो न भूमि पर बादर छीबो ।
दैअहि लागि कहौं तुलसी-प्रभु अजहुँ न तजत पयोधर पीबो' ॥ ९ ॥

जानी है ग्वालि परी फिरि फीके ।
मातुकाज लागी लखि डाँटत, 'है बायनो दियो घर नीके ॥
अब कहि देउँ', 'कहति किन', यों कहि माँगत दहिउ धर्यो जो है छीके ।
तुलसी प्रभुमुख निरखि रही चकि, रह्यो न सयानप तन मन ती के ॥१०॥

जौलों हौं कान्ह ! रहौं गुन गोए ।
तौलों तुम्हहिं पत्यात लोग सब, सुसुकि सभीत साँचु सो रोए ॥
हौ भले नग-फँग परे गढ़ीबै, अब ए गढ़त महरि-मुख जोए ।
चुपकि न रहत, कह्यो कछु चाहत, ह्वैहै कीच कोठिला धोए ॥
गरजति चहा तरजनिन्ह तरजति बरजति सैन नयन के कोए ।
तुलसी मुदित मातु सुतगति लखि बिथकी है ग्वालि मैन-मन-मोए ॥११॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूलि न जात हौं काहूके काऊ ।
साखि सखा सब सुबल, सुदामा, देखि धौं बूझि बोलि बलदाऊ ।।
यह तो मोहिँ खिझाइ कोटि विधि उलटि विवादन आइ अगाऊ ।
याहि कहा मैया मुँह लावति, गनति कि एक लँगरि झगराऊ ।।
कहति परसपर बचन जसोमति, लखि नहिँ सकति कपट सति भाऊ ।
तुलसिदास ग्वालिनि अति नागरि, नट नागरमनि नंदललाऊ ।।१२।।

छाँड़ो मेरे ललित ललन लरिकाई ।
ऐहैं सुत देखुवार कालि तेरे, बबै व्याह की बात चलाई ।।
डरिहैं सासु ससुर चोरी सुनि, हँसिहै नई दुलहिया सुहाई ।
उवटौं न्हाहु, गुहौं चोटिया, बलि, देखि भलो वर करिहिँ बड़ाई ।।
मातु कह्यो करि कहत बोलि दै, भई बड़ि बार कालि तौ न आई ।
जब सोइबो तात यों हाँकहि, नयन मीचि रहे पौढ़ि कन्हाई ।।
उठि कह्यो भोर भयो, झँगुलो दै, मुदित महरि लखि आतुरताई ।
बिहँसी ग्वालि जानि तुलसी प्रभु सकुचि लगे जननी-उर धाई ।।१३।।

राग केदारा

हरि को ललित बदन निहारु ।
निपटही डाँटति निठुर ज्यों, लकुट कर तें डारु ।।
मंजु अंजन सहित जल-कन चुवत लोचन चारु ।
स्यामसारस मग मनो ससि स्रवत सुधा-सिँगारु ।।
सुभग उर दधिबुंद सुंदर लखि अपनपौ वारु ।
मनहुँ मरकत-मृदु-सिखर पर लसत बिसद तुषारु ।।
कान्हहू पर सतर भौहैं, महरि मनहिँ विचारु ।
दास तुलसी रहति क्यों रिस निरखि नंदकुमार ।।१४।।

लेत भरि भरि नीर कान्ह कमलनैन ।
फरक अधर डर, निरखि लकुट कर, कहि न सकत कछु बैन ।।
सुसह दाँवरी छोरि, थोरी खोरि कहा कीन्हों,
चीन्हों री सुभाय तेरो आजु लगे माई मैं न ।
तुलसिदास नंदललन ललित लखि रिस क्यों रहति उर-ऐन ।।१५।।

हाहा री महरि वारो, कहा रिसवस भई, कोखि के
जाए सों रोषु केतो बड़ो कियो है ।
ढीली करि दाँवरी, बावरी साँवरेहिँ देखि,
सकुचि सहमि सिसु भारी भय भियो है ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूध दधि माखन भो, लाखन गोधन धन
जब तें जनम हलधर हरि लियो है।
खायो, कै खवायो, कै विगारचौ ढारचौ लरिका री,
ऐसे सुत पर कोह, कैसो तेरो हियो है॥
मुनि कहैं, सुकृती न नंद जसुमति सम,
न भयो, न भावी, नहिं विद्यमान वियो है।
कौन जानै कौने तप, कौने जोग जाग जप
कान्ह-सो सुवन तोको महादेव दियो है॥
इन्हहीं के आए तें बधाए ब्रज नित नए
नादत, बाढ़त सब, सब सुख जियो है।
नंदलाल-बाल-जस संत-सुर-सरवस
गाइ सो अमिय रस तुलसिहु पियो है॥१६॥
ललित लालन निहारि, महरि मन विचारि,
डारि दे घर-बसी लकुटी बेगि कर तें।
कछु न कहि सकत, सुसुकत सकुचत,
डरहूँ को डर, कान्ह डरै तेरे डर तें॥
कह्यो मेरो मानि, हित जानि तू सयानी बड़ी,
बड़े भाग पायो पूत विधि, हरि, हर तें।
ताहि बाँधिबे को धाई, ग्वालिनी गोरसहाँई,
लै लै आईं बावरी दाँवरी घर घर तें॥
कुल-गुरु-तिय के वचन कमनीय सुनि,
सुधि भए वचन जे सुने मुनिवर तें।
छोरि लिए लाय उर, वरषैं सुमन सुर,
मंगल है तिहूँ पुर हरि, हलधर तें॥
आनँद-बधावनो मुदित गोप गोपीगन
आजु परी कुसल कठिन करवर तें।
तुलसी जे तोरे तरु किए देव, दिये वरु,
कै न लह्यौ कौन फरु देव दामोदर तें॥१७॥

राग मलार

ब्रज पर घन घमंड करि आए।
अति अपमान विचारि आपनो कोपि सुरेस पठाए॥

१७—घरबसी = व्यंग्य से घर उजाड़नेवाली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दमकति दुसह दसहुँ दिसि दामिनि, भयो तम गगन गँभीर।
गरजत घोर बारिधर धावत प्रेरित प्रवल समीर ।।
वार बार पविपात, उपल घन बरषत बूंद विसाल ।
सीत-सभीत पुकारत आरत गो गोसुत गोपी ग्वाल ।।
राखहु राम कान्ह यहि अवसर दुसह दसा भइ आइ ।
नंद विरोध कियो सुरपति सों सो तुम्हरो वल पाइ ।।
सुनि हँसि उठ्यौ नंद को नाहरु, लियो कर कुधर उठाइ ।
तुलसिदास मघवा अपने सों करि गयो गर्व गँवाइ ।।१८।।

राग गौरी

टेरि कान्ह गोवर्धन चढ़ि गैया ।
मथि मथि पियो वारि चारिक में भूख न जाति अघाति न घैया ।।
सैल-सिखर चढ़ि चितै चकित चित अति हित वचन कह्यौ वलभैया ।
वाँधि लकुट पट फेरि बोलाई सुनि कल बेनु धेनु धुकि धैया ।।
वलदाऊ देखियत दूरि तें आवति छाक पठाई मेरी मैया ।
किलकि सखा सव नचत मोर ज्यों, कूदत कपि, कुरंग की नैंया ।।
खेलत खात परसपर डहकत, छीनत कहत करत रोगदैया ।
तुलसी वालकेलि-सुख निरखत वरखत सुमन सहित सुरसैया ।।१६।।

राग नट

गावत गोपाललाल नीके राग नट हैं ।
चलि री आली देखन लोयन-लाहु पेखन ठाढ़े सुरतरु-तर तटिनी के तट हैं ।।
मोरचंदा चारु सिर मंजु गुंजापुंज धरे बनि वन-धातु तन ओढ़े पीत पट हैं।
मुरली तान-तरंग मोहे कुरंग बिहंग, जोहैं मूरति त्रिभंग निपट निकट हैं ।।
अंवर अमर हरषत वरषत फूल, सनेह-सिथिल गोप गाइन्ह के ठट हैं ।
तुलसी प्रभुनिहारि जहाँ तहाँ ब्रजनारि ठगी ठाढ़ी मग लिये रीते भरे
घट हैं ।।२०।।

राग विलावल

देखु सखी हरिबदन इंदु-पर ।
चिक्कन कुटिल अलक-अवली-छवि, कहि न जाइ सोभा अनूपवर ।।
वाल-भुअंगिनि-निकर मनहुँ मिलि रहीं घेरि रस जानि सुधाकर ।
तजि न सकहिं नहिं करहिं पान कहो कारन कौन बिचारि डरहिं डर।।

१६—रोगदैया = अन्याय, बेईमानी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरुन बनज-लोचन, कपोल सुभ, स्रुति मंडित कुंडल अति सुंदर ।
मनहुँ सिंधु निज सुतहिं मनावन पठए जुगुल बसीठ बारिचर ।।
नँदनंदन मुख की सुंदरता कहि न सकत स्रुति, सेष, उमावर ।
तुलसिदास त्रैलोक्य-विमोहन रूप कपट-नर त्रिविध-सूलहर ।।२१।।

आजु उनीँदे आए मुरारी ।
आलसवंत सुभग लोचन सखि छिन मूँदत, छिन देत उघारी ।।
मनहुँ इंदु पर खंजरीट दोउ कछुक अरुन विधि रचे सँवारी ।
कुटिल अलक जनु मार फंद कर गहे सजग ह्वै रह्यो सँभारी ।।
मनहुँ उड़न चाहत अति चंचल पलक पंख छिन देत पसारी ।
नासिक कीर, बचन पिक सुनि करि संगति मनु गुनि रहति बिचारी ।।
रुचिर कपोल, चारु कुंडल वर, भ्रुकुटि सरासन की अनुहारी ।
परम चपल तेहि त्रास मनहुँ खग प्रगटत दुरत न मानत हारी ।।
जदुपति मुखछबि कलप कोटि लगि कहि न जाइ जाके मुख चारी ।
तुलसिदास जेहि निरखि ग्वालिनी भजीँ तात, पति, तनय बिसारी ।।२२।।

राग गौरी

गोपाल गोकुल-वल्लभी-प्रिय गोप-गोसुत-वल्लभं ।
चरनारविंदमहं भजे भजनीय सुर-मुनि-दुर्लभं ।।
घनस्याम काम अनेक छवि, लोकाभिराम मनोहरं ।
किंजल्क-वसन, किसोर-मूरति, भूरि गुन करुनाकरं ।।
सिर केकि-पच्छ, बिलोल कुंडल, अरुन वनरुह-लोचनं ।
गुंजावतंस विचित्र, सब अँग धातु भवभय-मोचनं ।।
कच कुटिल, सुंदर तिलक भ्रू, राका-मयंक-समाननं ।
अपहरन तुलसीदास त्रास बिहार बृंदाकाननं ।।२३।।

राग विलावल

बिछुरत श्रीव्रजराज आजु इन नयनन की परतीति गई ।
उड़ि न लगे हरि संग सहज तजि, ह्वै न गए सखि स्याममई ।।
रूपरसिक लालची कहावत, सो करनी कछु तौ न भई ।
साँचेहु क्रूर कुटिल, सित मेचक, बृथा मीनछवि छीनि लई ।।
अब काहे सोचत, मोचत जल, समय गए चित सूल नई ।
तुलसिदास तब अपहुँ से भए जड़, जब पलकनि हठि दगा दई ।।२४।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग कान्हरा

नहिँ कछु दोष स्याम को माई !
जो दुख मैं पायों सुनि सजनी सो तो सबै बन की चतुराई ।।
निज हित लागि तबहिँ ए बंचक सब अंगनि बसि प्रीति बढ़ाई ।
लियो जो सकल सुख हरि-अँग-सँग को जहँ जिहि बिधि तहँ सोइ बनाई ।।
अब नँदलाल-गवन सुनि मधुवन तनहिँ तजत नहिँ बार लगाई ।
रुचिर रूप-जल मोँ रसेस ह्वै मिलि न फिरन की बात चलाई ।।
एहि सरीर बसि सखि वा सठ कहुँ कहि न जाइ जो निधि फबि आई ।
तदपि कछू उपकार न कीन्हों निज मिलन्यौ नहिँ मोहि सिखाई ।।
आपु मिल्यो यहि भाँति जाति तजि, तन मिलयो जल-पय की नाईँ ।
ह्वै मराल आयो सुफलकसुत लै गयो छीर नीर बिलगाई ।।
मन हौं तजी, कान्ह हौं त्यागी, प्रानौ चलिहैँ परिमिति पाई ।
तुलसिदास रीतेहु तनु ऊपर नयननि की ममता अधिकाई ।।२५।।

राग धनाश्री

करी है हरि बालक की सी केलि ।
हरष न रचत, बिषाद न बिगरत, डगरि चले हँसि खेलि ।।
बई बनाइ बारि बृंदाबन प्रीति सँजीवनि-बेलि ।
सीँचि सनेहसुधा खनि काढ़ी लोक-बेद परहेलि ।।
तृन ज्यों तजी, पालितनु ज्यों हम बिधि बासव बल पेलि ।
एतेहुँ पर भावत तुलसी प्रभु गए मोहनी मेलि ।।२६।।

आली अब कहौ निज नेह निहारि ।
समुझे सहे हमारो है हित बिधि - बामता बिचारि ।।
सत्य सनेह सील सोभा सुख सब गुन - उदधि अपारि ।
देख्यो सुन्यो न कबहुँ काहु कहँ मीन-बियोगी बारि ।।
कहियत काकु कूबरी हूँ को, सो कुबानि-बस नारि ।
बिष तें बिषम बिनय अनहित की, सुधा सनेही गारि ।।
मन फेरियत कुतर्क कोटि करि कुबल भरोसे भारि ।
तुलसी जग दूजो न देखियत कान्हकुँवर अनुहारि ।।२७।।

लागियै रहति, नयननि आगे तेँ न टरति मोहन मूरति ।
नीलनलिन स्याम, सोभा अगनित काम, पावन हृदय जेहि उर फूरति ।।

२५—रसेस = लवण, नमक ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारद अमित सेष नहिँ कहि सकत अंग अँग सूरति।
तुलसिदास बड़े भाग मन लागेहु तेँ सब सुख पूरति ॥२८॥

जब तेँ ब्रज तजि गए कन्हाई।
तब तेँ बिरह-रबि उदित एकरस सखि बिछुरनि-बृष पाई॥
घटत न तेज, चलत नाहिँन रथ, रह्यो उर-नभ पर छाई।
इंद्रिय रूपरासि सोचहिँ सुठि, सुधि सब की बिसराई॥
भयो सोक-भय-कोक-कोकनद भ्रम-भ्रमरनि सुखदाई।
चित-चकोर, मन-मोर,कुमुद-मुद सकल बिकल अधिकाई॥
तनु-तड़ाग बलबारि सुखन लाग्यो परी कुरूपता-काई।
प्रान-मीन दिन दीन दूबरे, दसा दुसह अब आई॥
तुलसीदास मनोरथ-मन-मृग मरत जहाँ तहँ धाई।
राम-स्याम सावन-भादों बिनु जिय की जरनि न जाई॥२९॥

ससि तेँ सीतल मोको लागै माई री! तरनि।
याके उए बरति अधिक अँग अँग दव, वाके उए मिटति रजनि-जनित जरनि॥
सब बिपरीत भए माधव बिनु, हित जो, करत अनहित की करनि।
तुलसिदास स्यामसुंदर-बिरह की दुसह दसा सो मोपै परति नहीँ बरनि॥३०॥

संतत दुखद सखी! रजनीकर।
स्वारथरत तब, अबहुँ एकरस, मोको कबहुँ न भयो तापहर॥
निज अंसिक सुख लागि चतुर अति कीन्हीं है प्रथम निसा सुभ सुंदर।
अब बिनु मन, तन दहत दया तजि, राखत रबि ह्वै नयन बारिधर॥
जद्यपि है दारुन बड़वानल राख्यो है जलधि गँभीर धीरतर।
ताहू तेँ परम कठिन जान्यो ससि तज्यो पिता तब भयो ब्योमचर॥
सकल बिकार-कोस बिरहिनि-रिपु, काहे तेँ याहि सराहत सुर नर?
तुलसिदास त्रैलोक्य-मान्य भयो कारन इहै गह्यो गिरिजाबर॥३१॥

राग मलार

कोउ सखि नई चाह सुनि आई।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सों मदन मिलिक करि पाई॥
घन-धावन, बगपाँति पटोसिर, बैरख-तड़ित सोहाई।
बोलत पिक नकीब, गरजनि मिस मानहुँ फिरति दोहाई॥
चातक, मोर, चकोर, मधुप, सुक, सुमन, समीर सहाई।
चाहत कियो बास बृंदावन, बिधि सोँ कछु न बसाई॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीँव न चाँपि सको कोऊ तव जव हुते राम-कन्हाई ।
अव तुलसी गिरिधर विनु गोकुल कौन करिहि ठकुराई ? ॥३२॥

राग सोरठ

ऊधो या ब्रज की दसा विचारो ।
ता पाछे यह सिद्धि आपनी जोगकथा विस्तारो ॥
जा कारन पठए तुम माधव सो सोचहु मन माहीँ ।
केतिक बीच विरह-परमारथ जानत हौ किधौँ नाहीँ ? ॥
परम चतुर निज दास स्याम के संतत निकट रहत हौ ।
जल बूड़त अवलंव फेन को फिरि फिरि कहा कहत हौ ? ॥
वह अति ललित मनोहर आनन कौने जतन विसारौँ ।
जोग जुगुति अरु मुकुति विविध विधि वा मुरली पर वारौँ ॥
जेहि उर वसत स्यामसुंदर-घन तेहि निर्गुन कस आवै ।
तुलसिदास सो भजन वहाओ जाहि दूसरो भावै ॥३३॥

मधुकर कहहु कहन जो पारो ।
नाहिँन, वलि, अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ॥
नहिँ तुम ब्रज वसि नंदलाल को वालविनोद निहारो ।
नाहिँन रासरसिक रस चाख्यो, तातें डेल सो डारो ॥
तुलसी जौ न गए प्रीतम सँग प्रान त्यागि तनु न्यारो ।
तौ सुनिबो देखिबो वहुत अव, कहा करम सोँ चारो ? ॥३४॥

ऊधोजू कह्यो तिहारोइ कीबो ।
नीके जिय की जानि अपनपौ समुझि सिखावन दीबो ॥
स्यामवियोगी ब्रज के लोगनि जोग जोग जो जानो ।
तौ सकोच परिहरि पालागौँ परमारथहिँ वखानो ॥
गोपी गाय ग्वाल गोसुत सव रहत रूप-अनुरागे ।
दीन मलीन छीन तनु डोलत मीन मजा सों लागे ॥
तुलसी है सनेह सुखदायक, नहिँ जानत ऐसो को है ? ।
तऊ न होत कान्ह को सो मन, सबै साहिवहि सोहै ॥३५॥

राग बिलावल

सो कहौ मधुप जो मोहन कहि पठई ।
तुम सकुचत कत ? हौँ ही नीके जानति, नंदनंदन हो निपट करी सठई ॥

३२—चाह = चर्चा ।
३४—डेल सो डारो = पत्थर-सा मारते हो ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुतो न साँचो सनेह, मिटचो मन को संदेह, हरि परे उघरि, संदेसहु ठठई।
तुलसिदास कौन ग्रास मिलन की, कहि गए सोतौ कछु एकौ न चित ठई ॥३६॥

मेरे जान ग्रौर कछु न मन गुनिए।
कूवरीरवन कान्ह कही जो मधुप सों,
सोई सिख सजनी ! सुचित दै सुनिए॥
काहे को करति रोष, देहि धौं कौने को दोष,
निज नयननि को वयो सब लुनिए।
दारु सरीर, कीट पहिले सुख,
सुमिरि सुमिरि वासर निसि घुनिए॥
यें सनेह सुचि ग्रधिक ग्रधिक रुचि,
वरज्यो न करत कितो सिर धुनिए।
तुलसिदास ग्रब नंदसुवन - हित
विषम-वियोग-ग्रनल तनु हुनिए ॥३७॥

भली कही, ग्राली ! हमहुँ पहिचाने।
हरि निर्गुन निर्लेप निरपने निपट निठुर निज-काज सयाने॥
ब्रज को विरह, ग्ररु संग महर को, कुवरिहि वरत न नेकु लजाने।
समुझि सो प्रीति की रीति स्याम की, सोइ वावरि जो परेखो उर ग्राने॥
सुनत न सिख लालची विलोचन एतेहु पर रुचि रूप लोभाने।
तुलसिदास इहै ग्रधिक कान्ह पहिँ नीके ई लागत मन रहत समाने ॥३८॥

राग मलार

जोपै ग्रलि ! ग्रंत इहै करिबे हो।
तौ ग्रतुलित ग्रहीर ग्रबलनि को हठि न हियो हरिबे हो॥
जौ प्रपंच परिनाम प्रेम फिरि ग्रनुचित ग्राचरिबे हो।
तौ मथुराहि महामहिमा लहि सकल ढरनि ढरिबे हो॥
दै कूवरिहि रूप ब्रजसुधि भए लौकिक डर डरिबे हो।
ज्ञान विराग कालकृत करतव हमरेहि सिर धरिबे हो॥
उन्हहिँ राग रवि नीरद-जल ज्यों, प्रभु-परमिति परिबे हो।
हमहुँ निठुर-निरुपाधि-नेहनिधि निज भुजवल तरिबे हो॥

३९—उन्हहिँ राग……ज्यों = जैसे, सूर्य ही मेघ के रूप में जल को ग्राकर्षित करता है, पर उससे कोई राग या संबंध नहीं रखता। प्रभु-परमिति परिबे हो = राजा की मर्यादा के पालन में पड़ना था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भलो भयो सब भाँति हमारो एक बार मरिबे हो।
तुलसी कान्हबिरह नित नव जर जरि जीवन भरिबे हो ॥३९॥

ऊधो! यह ह्याँ न कछू कहिबे ही।
ज्ञानगिरा कूबरीरवन की सुनि विचारि गहिबे ही॥
पाइ रजाइ नाइ सिर गृह ह्वै गति परमिति लहिबे ही।
मति-मटुकी मृगजल भरि घृतहित मनहीँ मन महिबे ही॥
गाड़े भली, उखारे अनुचित, बनि आए बहिबे ही।
तुलसी प्रभुहिँ तुम्हहिँ हमहूँ हिय साँसति सी सहिबे ही ॥४०॥

मधुकर! कान्ह कहा ते न होँहीं।
कै ये नई सिखी सिखई हरि निज-अनुराग-बिछोहीं॥
राखी सचि कूबरी पीठ पर ये बातेँ बकुचौँहीं।
स्याम सो गाहक पाइ सयानी खोलि देखाई है गौं हीं॥
नागरमनि सोभासागर जेहि जग जुवती हँसि मोहीं।
लियो रूप दै ज्ञान-गाँठरी भलो ठग्यो ठगु ओही॥
है निर्गुन सारी बारिक, बलि, घरी करौ, हम जोही।
तुलसी ये नागरिन्ह जोगपट जिन्हहिँ आजु सब सोहीं ॥४१॥

मधुप, तुम्ह कान्ह ही की कही क्यों न कही है?।
यह बतकही चपल चेरी की निपट चरेरीऐ रही है॥
कब ब्रज तज्यौ, ज्ञान कब उपज्यौ? कब बिदेहता लही है।
गए बिसारि रीति गोकुल की, अब निर्गुन गति गही है॥
आयसु देहु करहिँ सोइ सिर धरि प्रीति-परमिति निरबही है।
तुलसी परमेस्वर न सहैगो, हम अबलनि सब सही है ॥४२॥

दीन्हीं हैं मधुप सबहि सिख नीकी।
सोइ आदरौ आस जाके जिय बारि बिलोवत घी की॥
बूझी बात कान्ह कुबरी की, मधुकर कछु जनि पूछौ।
ठालीँ ग्वालि जानि पठए, अलि, कह्यो है पछोरन छूछो॥
हमहूँ कछुक लखी ही तब की औरेबैँ नंदलला की।
ये अब लही चतुर चेरी पै चोखी चालि चलाकी॥

४०—बहिबे ही बनि आए=आ पड़ने पर निवाहना ही होगा।
४१—बकुचौंही = बकुचा या गठरी बाँधकर। बारिक = बारीक। घरी करो = तह लगाकर रखो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गए कर तें, घर तें, आँगन तें, ब्रजहू तें ब्रजनाथ ।
तुलसी प्रभु गयो चहत मनहुँ तें सो तो है हमारे हाथ ॥४३॥

ताकी सिख ब्रज न सुनैगो कोउ भोरे ।
जाकी कहनि रहनि अनमिल, अलि, सुनत समुझियत थोरे ॥
आपु कंज-मकरंद सुधा-ह्रद हृदय रहत नित बोरे ।
हम सों कहत विरह-स्रम जैहै गगन-कूप खनि खोरे ॥
धान को गाँव पयार तें जानिय, ज्ञान विषय मन मोरे ।
तुलसी अधिक कहे न रहै रस, गूलरि को सो फल फोरे ॥४४॥

आली ! अति अनुचित उतरु न दीजै ।
सेवक, सखा, सनेही हरि के, जो कुछ कहैं सो कीजै ॥
देसकाल उपदेस, सँदेसो, सादर सब सुनि लीजै ।
कै समुझिबो, कै ये समुझैहै, हारेहु मानि सहीजै ॥
सखि सरोष प्रियदोष विचारत प्रेम-पीन-पन छीजै ।
खग मृग मीन सलभ सरसिज गति सुनि पाहनौ पसीजै ॥
ऊधो परम हितू हित सिखवत, परमिति पहुँचि पतीजै ।
तुलसिदास अपराध आपनो, नंदलाल विनु जीजै ॥४५॥

ऊधो हैं बड़े, कहैं सोइ कीजै ।
अलि, पहिचानि प्रेम की परमिति उतरु फेरि नहिं दीजै ॥
जननी जनक जरठ जाने जन परिजन लोगु न छीजै ।
दै पठयो पहिलो बिढ़तो ब्रज सादर सिर धरि लीजै ॥
कंस मारि जदुबंस सुखी कियो, स्रवन सुजस सुनि जीजै ।
तुलसी त्यों त्यों होइगी गरुई ज्यों ज्यों कामरि भीजै ॥४६॥

कान्ह, अलि ! भए नए गुरु ज्ञानी ।
तुम्हरे कहत आपने समुझत, बात सही उर आनी ॥
लिए अपनाइ लाइ चंदन तन, कछु कटु चाह उड़ानी ।
जरी सुँघाइ कूवरी कौतुक करि जोगी बघा-जुड़ानी ॥
ब्रज बसि रास-विलास, मधुपुरी चेरी सों रति मानी ।
जोग-जोग ग्वालिनी वियोगिनि जान-सिरोमनि जानी ॥

४३—औरेबैं = टेढ़ी चालें ।
४४—खोरे = स्नान करने से ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहिबे कछू कछू कहि जैहै, रहौ, आलि ! अरगानी ।
तुलसी हाथ पराए प्रीतम, तुम्ह प्रिय-हाथ विकानी ॥४७॥
सब मिलि साहस करिय सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पाँय परि कान्ह कूवरी रानी ॥
वसैं सुवास, सुपास होहि सब फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिं सुख-जीवन खुलहि मोद-मनि-खानी ॥
तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर वानी ।
देखिबो दरस दूसरेहु चौथेहु वड़ो लाभ, लघु हानी ॥
पावक परत निषिद्ध लाकरी होति अनल जग जानी ।
तुलसी सो तिहुँभुवन गाइबी नंदसुवन सनमानी ॥४८॥
कही है भली बात सब के मनमानी ।
प्रियसम प्रिय-सनेह-भाजन, सखि! प्रीति-रीति जगजानी ॥
भूषन भूति गरल परिहरि कै हरमूरति उर आनी ? ।
मज्जन पान कियो कै सुरसरि कर्मनास-जल छानी ? ॥
पूँछ सों प्रेम, विरोध सींग सों, यहि विचार हितहानी ।
कीजै कान्ह-कूबरी सों नित नेह करम-मन-बानी ॥
तुलसी तजिय कुचालि आलि अव सुधरै सबइ नसानी ।
आगे करि मधुकर मथुरा कहँ सोधिय सुदिन सयानी ॥४९॥

राग कान्हरा

है हम समाचार सब पाए ।
अव विसेष देखे तुम्ह देखे हैं कूवरी हाँक से लाए ॥
मथुरा वड़ो नगर नागर जन जिन्ह जातहि जदुनाथ पढ़ाए ।
समुझि रहनि, सुनि कहनि विरह ब्रन अनख अमिय औषध सरुहाए ॥
मधुकर रसिक-सिरोमनि कहियत कौने यह रसरीति सिखाए ।
विनु आखर को गीत गाइ गाइ चाहत ग्वालिनि ग्वाल रिझाए ॥
फल पहिले ही लह्यो ब्रजवासिन्ह, अब साधन उपदेसन आए !
तुलसी अलि, अजहूँ नहिं बूझत, कौन हेतु नँदलाल पठाए ॥५०॥

४७—चाह उड़ानी = खबर उठी है । बघा-जुड़ानी = व्याघ्र को ठंढा अर्थात् वश में करनेवाली क्रिया ।
४९—कै = किसने ?
५०—सरुहाए = चंगा किया (?)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन सुनै अलि की चतुराई ।
अपनिहि मतिबिलास अकास महँ चाहत सियनि चलाई ।।
सरल सुलभ हरिभगति-सुधाकर निगम पुराननि गाई ।
तजि सोइ सुधा मनोरथ करि करि को मरिहै, री माई ।।
जद्यपि ताको सोइ मारग प्रिय जाहि जहाँ बनि आई ।
मैन के दसन, कुलिस के मोदक कहत सुनत बौराई ।।
सगुन छीरनिधि-तीर बसत ब्रज तिहुँ पुर बिदित बड़ाई ।
आक दुहन तुम्ह कह्यौ सो परिहरि हम यहमति नहिँ पाई ।।
जानत हैं जदुनाथ सबन की बुधि बिबेक जड़ताई ।
तुलसिदास जनि बकहि, मधुप सठ ! हठ निसि दिन अँवराई ।।५१।।

राग केदारा

गोकुल प्रीति नित नई जानि ।
जाइ अनत सुनाइ मधुकर ज्ञानगिरा पुरानि ।।
मिलहिँ जोगी जरठ तिन्हहिँ दिखाउ निरगुन-खानि ।
नवल नंदकुमार के ब्रज सगुन सुजस बखानि ।।
तू जो हम आदरयो, सो तो नव कमल की कानि ।
तजहि तुलसी समुझि यह उपदेसिबे की बानि ।।५२।।

काहे को कहत बचन सवाँरि ।
ज्ञानगाहक नाहिँनै ब्रज, मधुप अनत सिधारि ।।
जुगुति धूम बघारिबे की समुझिहैं न गँवारि ।
जोगिजन मुनिमंडली मोँ जाइ रीती ढारि ।।
सुनै तिन्ह की कौन तुलसी जिन्हहिँ जीति न हारि ।
सकति खारो कियो चाहत मेघहू को बारि ।।५३।।

ऐसे हौं हुँ जानति भृंग ।
नाहिँनै काहू लहो सुख प्रीति करि इक अंग ।।
कौन भीर जो नीरदहि जेहि लागि रटत बिहंग ?
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै, सलिल सहज असंग ।।
पीर कछू न मनिहिँ जाके बिरह-बिकल भुअंग ।
ब्याध-बिसिख बिलोक नहिँ कलगान-लुबुध कुरंग ।।
स्यामघन गुनबारि छबिमनि मुरलि-तान-तरंग ।
लग्यो मन बहु भाँति तुलसी होइ क्यों रसभंग ? ।।५४।।

५१—मैन = मोम ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊधो ! प्रीति करि निरमोहियन सों को न भयो दुखदीन ?
सुनत समुझत कहत हम सब भईं अति अप्रवीन ।।
अहि, कुरंग, पतंग, पंकज, चारु चातक, मीन ।
बैठि इनकी पाँति अब सुख चहत मन मतिहीन ।।
निठुरता अरु नेह की गति कठिन परति कही न ।
दास तुलसी सोच नित निज प्रेम जानि मलीन ।।५५।।

राग गौरी

सुनत कुलिस सम वचन तिहारे ।
चित दै मधुप सुनहु सोउ कारन जातें जात न प्रान हमारे ।।
ज्ञान कृपान समान लगत उर, विहरत छिन छिन होत निनारे ।
अवधि-जरा जोरति हठि पुनि पुनि, याते तनु रहत सहत दुख भारे ।।
पावक-विरह समीर-स्वास तनु-तूल, मिले तुम्ह जारनिहारे ।
तिन्हहिं निदरि अपने हित कारन राखत नयन निपुन रखवारे ।।
जीवन कठिन, मरन की यह गति दुसह विपति ब्रजनाथ निवारे ।
तुलसिदास यह दसा जानि जिय, उचित होइ सो कहौ अलि, प्यारे ।।५६।।

छपद ! सुनहु वर वचन हमारे ।
विनु ब्रजनाथ ताप नयनन को कौन हरै, हरि अंतर-कारे ।।
कनककुंभ भरि भरि पियूषजल वरषत सक्र कल्पसत हारे ।
कदलि सीप चातक को कारज स्वाति-बारि विनु कोउ न सँवारे ।।
सब अँग रुचिर किसोर स्यामघन जेहि हृदि-जलज बसत हरि प्यारे ।
तेहि उर क्यों समात बिराटवपु स्यों महि-सरित-सिंधु-गिरि भारे ।।
वढ़्यो अति प्रेम प्रलय के वट ज्यों विपुल जोग-जल बोरि न पारे ।
तुलसिदास ब्रज-बनितन को ब्रत समरथ को करि जतन निवारे ।।५७।।

मधुप ! समुझि देखहु मन माहीं ।
प्रेम-पियूष रूप-उडुपति विनु कैसे हो अलि ! पैयत रवि पाहीं ।।
जद्यपि तुम हित लागि कहत, सुनि स्रवन वचन नहिं हृदय समाहीं ।
मिलहिं न पावक महँ तुषार-कन जो खोजत सत कलप सिराहीं ।।
तुम कहि रहे, हमहु पचि हारी, लोचन हठी तजत हठ नाहीं ।
तुलसिदास सोइ जतन करहु कछु बारक स्याम इहाँ फिरि जाहीं ।।५८।।

५७—स्यों=सह, साथ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मोको अब नयन भए रिपु माई ।
हरि-वियोग तनु तजेहि परमसुख, ए राखहिँ सोइ है बरियाई ॥
बरु मन कियो बहुत हित मेरो बारहिँबार काम दव लाई ।
बरषि नीर ये तबहिँ बुझावहिँ स्वारथ निपुन अधिक चतुराई ॥
ज्ञानपरसु दै मधुप पठायो विरहबेलि कैसेहु कठिनाई ।
सो थाक्यो बरह्यों एकहि तक देखत इनकी सहज सिँचाई ॥
हारत हू न हारि मानत, सखि, सठ-सुभाव कंदुक की नाईं ।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे, समुझत नहिँ उन्हकी निठुराई ॥
ए हठ-निरत दरस लालचबस परे जहाँ बुधिबल न बसाई ।
तुलसिदास इन्हपर जो द्रवहिँ हरि तौ पुनि मिलौं बैरु बिसराई ॥५९॥

राग आसावरी

कहा भयो कपट जुआ जो हौं हारी ?
समरधीर महाबीर पाँचपति क्यों दैहैँ मोहिँ होन उघारी ॥
राजसमाज सभासद समरथ भीषम द्रोन धर्मधुरधारी ।
अबला अनघ अनवसर अनुचित होति, हेरि करिहैं रखवारी ॥
यों मन गुनति दुसासन दुरजन तमक्यो तकि गहि दुहुँ कर सारी ।
सकुचि गात गोवति कमठी ज्यों हहरी हृदय, विकल भइ भारी ॥
अपनेनि को अपनो बिलोकि बल, सकल आस बिस्वास बिसारी ।
हाथ उठाइ अनाथनाथ सों 'पाहि पाहि, प्रभु, पाहि !' पुकारी ॥
तुलसी परखि प्रतीति प्रीतिगति आरतपाल कृपालु मुरारी ।
बसनबेख राखी बिसेखि लखि बिरदावलि मूरति नरनारी ॥६०॥

गहगह गगन दुंदुभी बाजी ।
बरषि सुमन सुरगन गावत जस हरष-मगन मुनि, सुजन, समाजी ॥
सानुज सगन ससचिव सुजोधन भए मुख मलिन खाइ खल खाजी ।
लाज गाज उनवनि कुचाल कलि परी बजाइ कहूँ कहुँ गाजी ॥
प्रीति प्रतीति द्रुपदतनया की भली भूरि भय भभरि न भाजी ।
कहि पारथ-सारथिहि सराहत गई-बहोरि गरीब-निवाजी ॥

५९—बरह्यो = बरहे में । एकहि तक = एक ही तार, लगातार ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिथिल-सनेह मुदित मन ही मन बसन बीच बिच बधू बिराजी ।
सभासिंधु जदुपति जय जय जनु रमा प्रगटि त्रिभुवन भरि भ्राजी ।।
जुग जुग जग साके केसव के समन-कलेस कुसाज-सुसाजी ।
तुलसी को न होइ सुनि कीरति कृष्नकृपालु-भगतिपथ राजी ? ।।६१।।

—:०:—

६१—खाजी = खाद्य, अर्थात् अपने मुँह की खाकर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनयपत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनयपत्रिका

राग विलावल

गाइए गनपति जगबंदन । संकरसुवन भवानीनंदन[1] ॥
सिद्धिसदन गजवदन विनायक । कृपासिंधु सुंदर सब लायक ॥
मोदकप्रिय मुद-मंगल-दाता । विद्यावारिधि बुद्धि-विधाता ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिँ रामसिय मानस मोरे ॥१॥
दीनदयालु दिवाकर देवा । कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा ॥
हिम-तम-करि-केहरि करमाली[2] । दहन दोष-दुख-दुरित-रुजाली ॥
कोक - कोकनद - लोक - प्रकासी । तेज - प्रताप - रूप - रस - रासी ॥
सारथि पंगु, दिव्य रथ-गामी । हरि-संकर-विधि-मूरति स्वामी ॥
बेद पुरान प्रगट जस जागै । तुलसी रामभगति वर माँगै ॥२॥

को जाँचिए संभु तजि आन ?
दीनदयालु भगत-आरतिहर सब प्रकार समरथ भगवान ॥
कालकूट-जुर जरत सुरासुर, निज पन लागि कियो विषपान ।
दारुन दनुज जगत-दुखदायक जार्‌यो त्रिपुर एक ही बान ॥
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ कहत संत स्रुति सकल पुरान ।
सोइ गति मरन-काल अपने पुर देत सदासिव सबहिँ समान ॥
सेवत सुलभ उदार कलपतरु पारवती-पति परम सुजान ।
देहु कामरिपु रामचरन-रति तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥ ३ ॥

राग धनाश्री

दानी कहुँ संकर सम नाहीं ।
दीनदयालु दिबोई भावै जाचक सदा सोहाहीं ॥
मारि कै मार थप्यो जग में जाकी प्रथम रेख भट माहीं ।
ता ठाकुर को रीझि निवाजिबो कह्यो क्यों परत मो पाहीं ? ॥
जोग कोटि करि जो गति हरि सों मुनि माँगत सकुचाहीं ।
बेदविदित तेहि पद पुरारि-पुर कीट पतंग समाहीं ॥

१—नंदन = आनंद देनेवाले ।
२—करमाली = किरणों की माला धारण करनेवाले । रुजाली = रोगसमूह ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईस उदार उमापति परिहरि अनत जे जाँचन जाहीं ।
तुलसिदास ते मूढ़ माँगने कबहुँ न पेट अघाहीं ॥ ४ ॥

बावरो रावरो नाह, भवानी !
दानि बड़ो दिन, देत दए बिनु, बेद-बड़ाई भानी ॥
निज घर की घरबात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी ।
सिव की दई संपदा देखत श्री-सारदा सिहानी ॥
जिनके भाल लिखी लिपि मेरी सुख की नहीं निसानी ।
तिन रंकन को नाक सँवारत, हौं आयो नकबानी ॥
दुख दीनता दुखी इनके दुख, जाचकता अकुलानी ।
यह अधिकार सौंपिए औरहिं, भीख भली मैं जानी ॥
प्रेम-प्रसंसा-विनय-व्यंग-जुत सुनि बिधि की बर बानी ।
तुलसी मुदित महेस, मनहिं मन जगतमातु मुसुकानी ॥ ५ ॥

राग रामकली

जाँचिए गिरिजापति कासी । जासु भवन अनिमादिक दासी ॥
औढर-दानि द्रवत पुनि थोरे । सकत न देखि दीन कर जोरे ॥
सुख संपति मति सुगति सुहाई । सकल सुलभ संकर सेवकाई ॥
गए जे सरन आरति-के-लीन्हे । निरखि निहाल निमिष महँ कीन्हे ॥
तुलसिदास जाचक जस गावै । बिमल भगति रघुपति की पावै ॥६॥
कस न दीन पर द्रवहु, उमावर । दारुन-बिपति-हरन, करुनाकर ।
बेद-पुरान कहत उदार हर । हमरि बेर कस भयो कृपिनतर ॥
कवनि भगति कीन्हीं गुननिधि द्विज । ह्वै प्रसन्न दीन्हेउ सिव पद निज ॥
जो गति अगम महामुनि गावहिं । तव पुर कीट पतंगहु पावहिं ॥
देहु कामरिपु ! रामचरन-रति । तुलसिदास प्रभु हरहु भेद-मति ॥७॥

५—दिन = प्रतिदिन, सदा । सिहानी = ईर्ष्या की । नाक = स्वर्ग । नकबानी आयो = नाकों दम हो गया ।

६—औढर-दानि = मन मौजी (पात्रापात्र का विचार न करनेवाले) देनेवाले । आरति के लीन्हे = दुःखग्रस्त ।

७—गुणनिधि नामक ब्राह्मण ने शिव की मूर्ति पर चढ़कर मंदिर का घंटा चुराया था । शिव ने समझा कि और लोग तो पत्र, पुष्प आदि चढ़ाते हैं, पर इसने अपने आपको हमारे अर्पण कर दिया । अतः प्रसन्न होकर उन्होंने उसे मुक्ति दे दी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देव वड़े, दाता वड़े, संकर वड़े भोरे ।
किए दूर दुख सवनि के जिन जिन कर जोरे ॥
सेवा सुमिरन पूजिबो, पात ग्राखत थोरे ।
दियो जगत जहँ लगि सबै सुख गज रथ घोरे ॥
गाँव वसत, वामदेव, मैं कवहूँ न निहोरे ।
ग्रधिभौतिक वाधा भई, तें किंकर तोरे ॥
वेगि बोलि, वलि, वरजिए करतूति कठोरे ।
तुलसी दलि रूँध्यो चहैं सठ साखि सिहोरे ॥ ८ ॥

सिव, सिव ! होइ प्रसन्न करु दाया ।
करुनामय, उदार-कीरति, वलि जाउँ ! हरहु निज माया ॥
जलज-नयन, गुन-ग्रयन, मयन-रिपु, महिमा जान न कोई ।
विन तव कृपा रामपद-पंकज सपनेहुँ भगति न होई ॥
ऋषय सिद्ध मुनि मनुज दनुज सुर ग्रपर जीव जग माहीं ।
तव-पद विमुख न पार पाव कोउ कलप कोटि चलि जाहीं ॥
ग्रहिभूषन, दूषन - रिपु - सेवक, देव - देव, त्रिपुरारी ।
मोह - निहार - दिवाकर, संकर, सरन - सोक - भयहारी ॥
गिरिजा - मन - मानस - मराल, कासीस, मसान - निवासी ।
तुलसिदास हरिचरन-कमल, हर ! देहु भगति ग्रबिनासी ॥ ९ ॥

राग धनाश्री

देव ! मोहतम-तरणि, हर, रुद्र, शंकरशरण,
हरण-भयशोक, लोकाभिरामं ।
वालशशि-भाल, सुविशाल लोचन-कमल,
काम - शतकोटि - लावण्यधामं ॥
कंबु, कुंदेंदु - कर्पूर - विग्रह रुचिर,
तरुण-रवि-कोटि तनु तेज भ्राजै ।
भस्म सर्वांग, ग्रर्द्धांग शैलात्मजा,
ब्याल - नृकपाल - माला विराजै ॥
मौलि संकुल - जटामुकुट - विद्युच्छटा,
तटिनि वर वारि हरिचरण - पूतं ।

८—साखि = शाखी, वृक्ष । सिहोर = थूहर, सेँहुड़ ।
९—निहार = कुहरा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रवण कुंडल, गरलकंठ, करुणाकंद,
सच्चिदानंद वंदेऽवधूतं ।।
शूल-सायक-पिनाकासिकर शत्रुवन-
दहन इव धूमध्वज, वृषभ-यानं ।
व्याघ्र-गज-चर्म्म परिधान, विज्ञान-घन,
सिद्ध - सुर - मुनि - मनुज - सेव्यमानं ।।
तांडवित-नृत्य-पर, डमरु डिमडिम-प्रवर,
अशुभ इव भाति कल्याणराशी ।
महाकल्पांत ब्रह्मांडमंडल - दवन,
भवन कैलास, आसीन काशी ।।
तज्ञ, सर्वज्ञ, यज्ञेश, अच्युत, विभो,
विश्व भवदंशसंभव, पुरारी ।
ब्रह्मेंद्र-चंद्रार्क-वरुणाग्नि-वसु - मरुत - यम,
अर्चि भवदंघ्रि सर्व्वाधिकारी ।।
अकल निरुपाधि, निर्गुण, निरंजन, ब्रह्म,
कर्मपथमेकमजनिर्विकारं ।
अखिल विग्रह, उग्ररूप शिव भूपसुर,
सर्वगत, शर्व, सर्वोपकारं ।।
ज्ञान, वैराग्य, धन, धर्म, कैवल्य सुख,
सुभग सौभाग्य शिव सानुकूलं ।
तदपि नर मूढ़ आरूढ़ संसार-पथ
भ्रमत भव विमुख-तव-पादमूलं ।।
नष्टमति, दुष्ट अति, कष्टरत, खेदगत
दासतुलसी शंभु शरण आया ।
देहि कामारि श्रीरामपदपंकजे
भक्तिमनवरत गतभेदमाया ।। १० ।।

१०—विग्रह = शरीर । संकुल = भरा हुआ, छाया हुआ । पूतं = पवित्र । **पिनाकासि** = धनुष और तलवार । धूमध्वज = अग्नि । भाति = जान पड़ते हैं । **तज्ञ** = तत्व के जाननेवाले । भवदंश-संभव = तुम्हारे अंश से पैदा हुआ । **अर्चि** = पूजन करके । भवदंघ्रि = तुम्हारे चरण । निरंजन = मायारहित । **अनवरत** = सदा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीषणाकार भैरव भयंकर, भूत-प्रेत-प्रमथाधिपति विपतिहर्त्ता ।
मोह-मूषक-मार्जार, संसार-भय-हरण, तारणतरण, करण, कर्त्ता ॥
अतुल बल विपुल विस्तार विग्रह गौर, अमल अति धवल धरणीधराभं ।
शिरसि संकुलित कल कूट पिंगल जटा-पटल शतकोटिविद्युच्छटाभं ॥
भ्राज विबुधापगा-आप पावन परम मौलिमालेव शोभाविचित्रं ।
ललित लल्लाट पर राज रजनीश कल, कलाधर, नौमि हर धनद-मित्रं ॥
इंदु-पावक-भानु-नयन, मर्दनमयन, ज्ञानगुण-अयन, विज्ञानरूपं ।
रवन गिरिजा, भवन भूधराधिप सदा, श्रवणकुंडल, वदन-छवि अनूपं ॥
चर्म-असि-शूल-धर डमरु-शर-चाप-कर, यान वृषभेश, करुणानिधानं ।
जरत सुर असुर नरलोक शोकाकुलं मृदुलचित अजित कृत गरलपानं ॥
भस्मतनुभूषणं, व्याघ्रचर्म्माम्बरं, उरग-नरमौलि-उरमालधारी ।
डाकिनी-शाकिनी-खेचरं-भूचरं यंत्रमंत्र-भंजन, प्रबल कल्मषारी ॥
काल अतिकाल, कलिकाल-व्यालाद-खग, त्रिपुरमर्दन भीम-कर्म भारी ।
सकल-लोकांत-कल्पांतशूलाग्रकृत दिग्गजाव्यक्त-गुण नृत्यकारी ॥
पाप संताप घनघोर संसृति दीन भ्रमत जगयोनि नहिँ कोपि त्राता ।
पाहि भैरवरूप रामरूपी रुद्र, बंधु गुरु जनक जननी विधाता ॥
यस्य गुणगण गनति विमलमति शारदा निगम नारद प्रमुख ब्रह्मचारी ।
शेष सर्वेश आसीन आनंदवन, प्रणत तुलसीदास त्रासहारी ॥११॥
सदा शंकरं, शंप्रदं, सज्जनानंददं, शैलकन्यावरं, परम रम्यं ।
काममदमोचनं, तामरस-लोचनं वामदेवं भजे भावगम्यं ॥
कंबु-कुंदेंदु-कर्पूरगौरं, शिवं, सुंदरं, सच्चिदानंदकंदं ।
सिद्ध-सनकादि-योगींद्र-वृंदारका-विष्णु-विधि-वंद्य चरणारविंदं ॥
ब्रह्मकुलवल्लभं, सुलभमतिदुर्लभं, विकटवेषं, विभुं, वेदपारं ।
नौमि करुणाकरं गरलगंगाधरं, निर्मलं, निर्गुणं, निर्विकारं ॥
लोकनाथं, शोकशूलनिर्मूलिनं, शूलिनं मोहतम-भूरि-भानुं ।
कालकालं, कलातीतमजरं, हरं, कठिन-कलिकाल-कानन-कृशानुं ॥
तज्ञमज्ञानपाथोधि - घटसम्भवं, सर्वगं, सर्वसौभाग्य-मूलं ।
प्रचुर-भव-भंजनं, प्रणत-जन-रंजनं, दासतुलसी शरण सानुकूलं ॥१२॥

११—प्रमथ = महादेवजी के एक प्रकार के गण । अतिकाल = काल के भी परे अर्थात् उसके भी काल । व्यालाद-खग = साँप खानेवाला पक्षी, गरुड़ । आनंदवन = काशी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग वसंत

सेवहु सिवचरन-सरोज-रेनु। कल्यान-अखिलप्रद कामधेनु॥
कर्पूरगौर, करुनाउदार। संसार-सार, भुजगेंद्रहार॥
सुख-जनम-भूमि महिमा अपार। निर्गुन, गननायक, निराकार॥
त्रयनयन, मयन-मर्दन, महेस। अहँकार-निहार-उदित-दिनेस॥
बर बाल-निसाकर मौलि भ्राज। त्रैलोक्य-सोकहर, प्रमथराज॥
जिन कहँ विधि सुगति न लिखी भाल। तिनकी गति कासीपति कृपाल॥
उपकारी कोऽपर हर समान ?। सुर असुर जरत कृत गरलपान॥
बहु कल्प उपाय करिय अनेक। बिनु संभु कृपा नहिँ भव-बिबेक॥
विज्ञान-भवन, गिरिसुता-रमन। कह तुलसिदास मम त्रास-समन॥१३॥

देखो देखो वन बन्यो आजु उमाकंत। मनो देखन तुमहिँ आई रितु बसंत॥
जनु तनुदुति चंपक-कुसुममाल। बर बसन नील नूतन तमाल॥
कल कदलि जंघ, पद कमल लाल। सूचति कटि केहरि, गति मराल॥
भूषन प्रसून बहु बिबिध रंग। नूपुर किंकिनि कलरव-विहंग॥
कर नवल बकुल-पल्लव रसाल। श्रीफल कुच, कंचुकि लताजाल॥
आनन सरोज, कच मधुपपुंज। लोचन विसाल नव नीलकंज॥
पिक-वचन चरित बर बरहि कीर। सित सुमन हास, लीला समीर॥
कह तुलसिदास सुनु सिव सुजान। उर बसि प्रपंच रचै पंचबान॥
करि कृपा हरिय भ्रमफंदकाम। जेहि हृदय बसहिँ सुखरासि राम॥१४॥*

राग मारू

दुसह-दोष-दुख-दलनि करु देवि ! दाया।
बिस्वमूलासि, जन-सानुकूलासि, सरसूलधारिनि महामूल माया॥
तड़ितगर्भांग सर्वांग सुंदर लसत, दिव्य पट, भव्य भूषन बिराजै।
बालमृगमंजु-खंजन-विलोचनि, चंद्रवदनि, लखि कोटि रतिमार लाजै॥
रूप-सुख-शील-सीमासि भीमासि रामासि वामासि वर बुद्धि वानी।
छमुख-हेरंब-अम्बासि जगदम्बिके ! शंभुजायासि जय जय भवानी॥
चंड-भुजदंड-खंडनि विहंडनि, महिषमद-भंग करि अंग तोरे।
सुम्भ निःसुम्भकुम्भीस रनकेसरिनि, क्रोधबारिधि बैरिवृंद बोरे॥
निगम-आगम-अगम, गुर्वि तव गुनकथन उर्बिधर करै सहस जीहा।
देहि मा! मोहि प्रन प्रेम, यह नेम निज राम घनश्याम, तुलसी पपीहा॥१५॥

---

* इस पद में शिव के अर्द्धांग रूप पर वसंत ऋतु का रूपक घटाया है।
१५—हेरंब = गणेश।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग रामकली

जय जय जगजननि, देवि, सुर-नर-मुनि-असुर-सेवि,
भक्ति-मुक्ति-दायिनी, भयहरनि, कालिका ।
मंगल-मुद-सिद्धिसदनि, पर्वसर्वरीश-वदनि,
ताप-तिमिर-तरुनतरनि-किरनमालिका ।।
वर्मचर्म्मकर कृपान, सूल-सेल-धनुष-वान-
धरनि, दलनि दानवदल, रनकरालिका ।
पूतना पिसाच प्रेत डाकिनि साकिनि समेत,
भूत ग्रह बेताल खग मृगालि-जालिका ।।
जय महेसभामिनी, अनेकरूप-नामिनी,
समस्त लोकस्वामिनी, हिमसैलबालिका ।
रघुपति-पद परम प्रेम तुलसी चह अचल नेम,
देहि ह्वै प्रसन्न, पाहि प्रनतपालिका ! ।।१६।।

जय जय भगीरथनंदिनि, मुनिचय-चकोरचंदिनि,
नर-नाग-विबुध-बंदिनि, जय जह्नु-बालिका ।
विष्नुपदसरोजजासि, ईस-सीस पर विभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पापछालिका ।।
विमल विपुल वहसि वारि, सीतल त्रयतापहारि,
भवँर वर, विभंगतर, तरंगमालिका ।
पुरजन-पूजोपहार सोभित ससि-धवल धार,
भंजनि-भवभार, भक्तिकल्प-थालिका ।।
निजतटवासी विहंग, जल-थल-चर-पसु-पतंग,
कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका ।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस बीर
विचरत, मति देहि मोह-महिष-कालिका ! ।।१७।।

राग धनाश्री

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी ।
विष्नु-पदकंज-मकरंद-इव अंबु वर वहसि, दुख दहसि अघवृंद-विद्रावनी ।।
मिलित जलपात्र-अज-युक्त-हरिचरनरज, विरज-वरवारि-त्रिपुरारि-
सिर-धामिनी ।
जह्नु-कन्या धन्य, पुन्यकृत सगरसुत, भूधर-द्रोनि-विद्दरनि, वहुनामिनी ।।

१६—पर्व-सर्बरीस = पूर्णिमा का चंद्रमा ।
१७—चय = समूह । बिभंग = चंचल । थालिका = थाला, आलबाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यक्ष गंधर्व मुनि किन्नरोरग दनुज मनुज मज्जहिँ सुकृतपुंज जुतकामिनी ।
स्वर्गसोपान, विज्ञान-ज्ञानप्रदे ! मोहमदमदन-पाथोज-हिमजामिनी ।।
हरित गंभीर बानीर दुहुँ तीर वर, मध्य धारा विसद विस्व-अभिरामिनी ।
नील पर्यंक कृत सयन सर्पेस जनु सहससीसावली स्रोत सुरस्वामिनी ।।
अमितमहिमा अमितरूप भूपावली-मुकुटमनि-वंदिते ! लोकत्रयगामिनी ।
देहि रघुबीर-पद-प्रीति निर्भर मातु ! दासतुलसी त्रासहरनि भवभामिनी ।।१८।।

राग रामकली

हरति पाप त्रिविधताप सुमिरत सुरसरित ।
बिलसति महि कल्पबेलि मुद-मनोरथ-फरित ।।
सोहति ससिधवल-धार सुधा-सलिल-भरित ।
विमलतर तरंग लसत रघुवर के-से चरित ।।
तो बिनु जगदंब गंग ! कलिजुग का करित ?
घोर भव-अपार-सिंधु तुलसी कैसे तरित ? ।।१९।।

ईस-सीस बससि, त्रिपथ लससि नभ-पताल-धरनि ।
मुनि, सुर, नर, नाग, सिद्ध, सुजन मंगल-करनि ।।
देखत दुख-दोष-दुरित-दाह-दारिद-दरनि ।
सगरसुवन-सांसति-समनि, जलनिधि-जल-भरनि ।।
महिमा की अवधि करसि बहु विधि-हरि-हरनि ।
तुलसी करु बानि विमल विमल-बारि-बरनि ।।२०।।

राग बिलावल

जमुना ज्यों ज्यों लागी बाढ़न ।
त्यों त्यों सुकृत-सुभट कलि भूपहिँ निदरि लगे वहि काढ़न ।।
ज्यों ज्यों जल मलीन त्यों त्यों जमगन मुख मलीन लहैं आढ़ न ।
तुलसिदास जगदघ जवास ज्यों अनघ-मेघ लागे डाढ़न ।।२१।।

राग भैरव

सेइय सहित सनेह देहभरि कामधेनु कलि कासी ।
समनि-सोक-संताप-पाप-रुज, सकल-सुमंगल-रासी ।।
मरजादा चहुँ ओर चरन बर सेवत सुरपुरवासी ।
तीरथ सब सुभ अंग, रोम सिवलिंग अमित अविनासी ।।

१८—अज = ब्रह्मा । बिरज = निर्मल । द्रोनि = घाटी । निर्भर = पूर्ण ।
२१—वहि = वहिः; बाहर । आढ़ = ओट । जगदघ = जगत् + अघ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंतरअयन अयन भल, थन फल, बच्छ बेद-बिस्वासी ।
गल कंवल बरुना बिभाति, जनु लूम लसति सरिता सी ।।
दंडपानि भैरव बिषान, मलरुचि खलगन भयदा सी ।
लोलदिनेस त्रिलोचन लोचन, करनघंट घंटा सी ।।
मनिकर्निका-बदन-ससि सुंदर, सुरसरि मुख-सुखमा सी ।
स्वारथ-परमारथ-परिपूरन पंचकोस महिमा सी ।।
बिस्वनाथ पालक कृपालु चित, लालति नित गिरिजा सी ।
सिद्ध सची सारद पूजहिं, मन जोगवति रहति रमा सी ।।
पंचाच्छरी प्रान, मुद माधव, गब्य सुपंचनदा सी ।
ब्रह्म जीव सम राम नाम जुग आखर-बिस्वबिकासी ।।
चारितु चरित करम कुकरम कर मरत जीवगन घासी ।
लहत परमपद पय पावन जेहि चहत प्रपंच-उदासी ।।
कहत पुरान रची केसव निज कर-करतूति-कला सी ।
तुलसी बसि हरपुरी राम जपु जो भयो चहै सुपासी ।।२२।।

राग बसंत

सब सोचबिमोचन चित्रकूट । कलिहरन, करन कल्यान बूट ।।
सुचि अवनि सुहावनि आलबाल । कानन बिचित्र, बारी बिसाल ।।
मंदाकिनि-मालिनि सदा सींच । बर-बारि बिषम नर नारि नीच ।।
साखा, सुसृंग, भूरुह, सुपात । निरझर मधु, बर मृदु मलयबात ।।
सुक-पिक-मधुकर-मुनिबर-बिहारु। साधन-प्रसून, फलचारि चारु ।।
भव-घोरघाम-हर सुखद छाँह । थप्यो थिर प्रभाउ जानकीनाह ।।
साधक सुपथिक बड़े भाग पाइ । पावत अनेक अभिमत अघाइ ।।
रस एक, रहित - गुनकर्मकाल । सिय-राम-लखन पालक कृपाल ।।
तुलसी जो राम-पद चहिय प्रेम । सेइय गिरि करि निरुपाधि नेम ।।२३।।

राग कान्हरा

अब चित चेति चित्रकूटहि चलु ।
कोपित कलि, लोपित मंगल-मगु, बिलसत बढ़त मोह-माया-मलु ।।

२२—अंतर-अयन = अंतर्गृही । अयन = आयन, दुग्धकोश । सरितासी = सरिता + असी । लोलदिनेस = लोलार्क (एक कुंड) । त्रिलोचन=एक स्थान । करनघंट = कर्णघंटा । पंचनदा = पंचगंगा । माधव = बिंदुमाधव । चारितु = आरा
२३—बूट = वृक्ष । बारि = बारी, बगीचा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि विलोकु राम-पद-अंकित, बन विलोकु रघुबर-बिहार-थलु ।
सैलसृंग भवभंगहेतु लखु, दलन कपट-पाखंड-दंभ-दलु ॥
जहँ जनमे जग-जनक जगतपति विधि-हरि-हर परिहरि प्रपंच छलु ।
सकृत प्रबेस करत जेहि आस्रम बिगत-बिषाद भए पारथ, नलु ॥
न करु बिलंब, बिचारु चारु मति, बरष पाछिले सम अगिलो पलु ।
मंत्र सो जाइ जपहि जो जपत भे अजर अमर हर अँचइ हलाहलु ॥
राम-नाम-जप-जाग करत नित, मज्जत पय पावन, पीवत जलु ।
करिहैं राम भावतो मन को, सुख-साधन अनयास महा फलु ॥
कामदमन कामता-कल्पतरु सो जुग जुग जागत जगतीतलु ।
तुलसी तोहिँ बिसेष बूझिए एक प्रतीति, प्रीति, एकै बलु ॥२४॥

राग धनाश्री

जयति अंजनी-गर्भ-अंभोधि-संभूत-विधु विबुधकुल-कैरवानंदकारी ।
केसरी-चारु-लोचन-चकोरक-सुखद, लोकगन-सोकसंतापहारी ॥
जयति जय बालकपि-केलि-कौतुक-उदित-चंडकरमंडल-ग्रासकर्त्ता ।
राहु-रवि-सक्र-पवि-गर्ब-खर्वीकरन, सरन भयहरन, जय भुवनभर्त्ता ॥
जयति रनधीर रघुबीर-हित देवमनि रुद्र-अवतार संसारपाता ।
बिप्र-सुर-सिद्ध-मुनि-आसिषाकर-वपुष बिमल-गुन-बुद्धि-बारिधि बिधाता ॥
जयति सुग्रीव-सिच्छादि-रच्छन-निपुन, बालि-बलसालि-बध-मुख्य-हेतू ।
जलधि-लंघन-सिह, सिंहिका-मद-मथन, रजनिचर-नगर-उत्पातकेतू ॥
जयति भूनंदिनी-सोच-मोचन, बिपिनदलन, घननादवस-बिगतसंका ।
लूमलीला-अनलज्वालमालाकुलित, होलिकाकरन-लंकेस-लंका ॥
जयति सौमित्रिरघुनंदनानंदकर, रिच्छ-कपि-कटक-संघटविधाई ।
बद्ध-बारिधि-सेतु, अमरमंगलहेतु, भानुकुलकेतु-रनबिजयदाई ॥
जयति जय बज्रतनु, दसन, नख, मुख बिकट, चंड-भुजदंड, तरु-सैल-पानी ।
समर-तैलिकजंत्र तिल-तमीचर-निकर पेरि डारे सुभट घालि घानी ॥
जयति दसकंठ-घटकरन-बारिदनाद-कदन-कारन, कालनेमि-हंता ।
अघट-घटना-सुघट, सुघट-बिघटन-बिकट, भूमि-पाताल-जल-गगन-गंता ॥

२४—पय = पयस्विनी ।

२५—चंडकर मंडल = सूर्यमंडल । संसारपाता = संसार की रक्षा करनेवाला । संघट-बिधाई = एकत्र करनेवाला । घटकरन = कुंभकर्ण । कदन = मरण, विनाश ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयति विस्व-विख्यात बानैत, विरुदावली विदुष बरनत बेद बिमलबानी।
दास तुलसीत्रास-समन सीतारमन-संग सोभित राम-राजधानी ॥२५॥

जयति मर्कटाधीस मृगराज-विक्रम महादेव मुदमंगलालय कपाली।
मोह-मद-कोह-कामादि-खल-संकुल-घोरसंसार-निसि-किरनमाली॥
जयति लसदंजनादितिज कपि-केसरी-कस्यप-प्रभव-जगदार्तिहर्ता।
लोक-लोकप-कोक-कोकनद-सोकहर-हंस हनुमान कल्यानकर्ता॥
जयति सुबिसाल बिकराल-विग्रह, वज्र-सार सर्वांग भुजदंड भारी।
कुलिस नख दसन वर, लसति बालधि बृहद्बैरि-सस्त्रास्त्रधर-कुधरधारी॥
जयति जानकी-सोचसंताप-मोचन, रामलछिमनानंद वारिज-विकासी।
कीस-कौतुक-केलि-लूम-लंका-दहन, दलन-कानन-तरुन-तेजरासी॥
जयति पाथोधि पाषान-जलजान-कर जातुधान-प्रचुर-हरष-हाता।
दुष्ट-रावन-कुंभकरन-पाकारिजित्-मर्मभित्-कर्म-परिपाक-दाता॥
जयति भुवनैकभूषन, बिभीषन-बरद-विहित-कृत, रामसंग्राम-साका।
पुष्पकारूढ़-सौमित्रि-सीता-सहित-भानुकुलभानु-कीरति-पताका॥
जयति पर-जंत्रमंत्राभिचार-ग्रसन, कारमनि-कूट-कृत्यादि-हंता।
साकिनी-डाकिनी-पूतना-प्रेत-बैताल-भूत-प्रमथ-जूथ-जंता॥
जयति बेदांतविद, विविधविद्या-विशद-बेदबेदांग-विद्, ब्रह्मवादी।
ज्ञान-बैराग्य-विज्ञान-भाजन विभो! विमलगुन गनत सुक नारदादी॥
जयति काल-गुन-कर्म-माया-मथन, निश्चल-ज्ञानव्रत, सत्यरत, धर्म्मचारी।
सिद्ध-सुरबृंद-जोगींद्र-सेवित सदा दासतुलसी प्रनत-भय-तमारी ॥२६॥

जयति मंगलागार, संसारभारापहर, वानराकार, विग्रह-पुरारी।
राम-रोषानल-ज्वालमालामिस-ध्वांतचर-सलभ-संहारकारी॥
जयति मरुदंजनामोद-मंदिर, नतग्रीव-सुग्रीव-दुःखैक-बंधो।
जातुधानोद्धत-क्रुद्ध-कालाग्निहर, सिद्ध-सुर-सज्जनानंदसिंधो॥
जयति रुद्राग्रणी, विस्वविद्याग्रणी विस्वविख्यात भट-चक्रवर्ती।
सामगाताग्रणी, कामजेताग्रणी, रामहित, रामभक्तानुवर्त्ती॥
जयति संग्राम-जय, रामसंदेसहर, कोसला-कुसल-कल्यान-भाखी।
रामविरहार्कसंतप्त भरतादिनरनारि-सीतलकरन-कल्पसाखी॥

२६—हंस=सूर्य। बालधि=पूँछ। पाकारिजित्=इंद्रजीत (मेघनाद)। मर्मभित्=मर्मस्थानों को भेदनेवाले।

२७—ध्वांतचर=निशिचर। सलभ=फतिंगा। नतग्रीव=नीची गर्दनवाले कल्पसाखी=कल्पवृक्ष। निर्भर=भरा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयति सिंहासनासीनसीतारमन निरखि निर्भर-हरष-नृत्यकारी।
रामसम्राज-सोभा-सहित सर्वदा तुलसिमानस-रामपुर-विहारी ॥२७॥

जयति वातसंजात, विख्यात-विक्रम, बृहद्बाहु, वलविपुल, वालधिविसाला
जातरूपाचलाकार-विग्रह लसत-लोम विद्युल्लता-ज्वालमाला ॥
जयति वालार्क-वर-वदन, पिंगल नयन, कपिस-कर्कस-जटाजूटधारी।
विकट भ्रुकुटि, वज्र दसन नख, बैरि-मदमत्त-कुंजर-पुंज-कुंजरारी ॥
जयति भीमार्जुन-ब्यालसूदन-गर्बहर धनंजय-रथत्रानकेतू।
भीषम-द्रोन-करनादि-पालित कालदृक सुजोधन-चमू-निधनहेतू ॥
जयति गतराज-दातार, हरतार-संसार-संकट, दनुज-दर्पहारी।
ईति अति भीति-ग्रह-प्रेत-चौरानल-ब्याधि-वाधा-समन घोर मारी ॥
जयति निगमागम-ब्याकरन-करनलिपि-काब्य-कौतुक-कला-कोटि-सिंधो।
सामगायक, भक्त-काम-दायक, वामदेव-श्रीराम-प्रिय-प्रेमबंधो ॥
जयति घर्मांसु-संदग्ध-संपाति-नवपच्छ-लोचन-दिब्यदेह-दाता।
कालकलि-पाप-संताप-संकुल-सदा-प्रनत-तुलसीदास-तात-माता ॥२८॥

जयति निर्भरानंद-संदोह कपिकेसरी केसरीसुवन भुवनैकभर्त्ता।
दिव्य-भूम्यंजना-मंजुलाकर-मणे, भगत-संताप-चिंतापहर्ता ॥
जयति धर्मार्थकामापवर्गद विभो ! ब्रह्मलोकादि-बैभव-विरागी।
बचन-मानस-कर्म सत्य-धर्मब्रती जानकीनाथ-चरनानुरागी ॥
जयति विहगेस-बल-बुद्धि-बेगाति-मद-मथन, मन्मथ-मथन, ऊर्ध्वरेता।
महानाटक-निपुन, कोटि कविकुल-तिलक, गानगुन-गर्ब-गंधर्व-जेता ॥
जयति मंदोदरी-केसकर्षन विद्यमान-दसकंठ-भटमुकुट-मानी।
भूमिजा-दुःख-संजात-रोषांतकृत जातनाजंतु-कृत-जातुधानी ॥
जयति रामायन-श्रवन-संजात-रोमांच-लोचनसजल-सिथिलवानी।
रामपदपद्म-मकरंद-मधुकर पाहि ! दासतुलसी-सरन सूलपानी ॥२९॥

२८—जातरूपाचल=सोने का पर्वत। कपिस = भूरा। ब्यालसूदन = गरुड़। करनलिपि=लेखक। घर्मांशु=सूर्य्य।

२९—निर्भरानंद=पूर्णानंद। भूम्यंजनामंजुलाकरमणे (भूमि + अंजना + मंजुल + आकर + मणि)=अंजनारूपी भूमि की सुंदर खानि के रत्न। ऊर्ध्वरेता = जिसका वीर्य कभी च्युत न हुआ हो। भूमिजा = सीता। संजात = उत्पन्न। अंतकृत=यमराज। जातनाजंतु = वह जंतु जो मरणकाल का कष्ट-भोग रहा हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग सारंग

जाके गति है श्री हनुमान की ।
ताकी पैज पूजि आई यह रेखा कुलिस पषान की ।।
अघटित-घटन, सुघट-विघटन, ऐसी विरुदावली नहिँ आन की ।
सुमिरत संकट-सोच-विमोचन मूरति मोदनिधान की ।।
तापर सानुकूल गिरिजा, हर, लखन, राम अरु जानकी ।
तुलसी कपि की कृपा-विलोकनि खानि सकल कल्यान की ।।३०।।

राग गौरी

ताकिहै तमकि ताकी ओर को ?
जाके है सब भाँति भरोसो कपि केसरीकिसोर को ।।
जनरंजन, अरिगन-गंजन, मुखभंजन खल बरजोर को ।
बेद पुरान प्रगट पुरुषारथ, सकल सुभट-सिरमोर को ।।
उथपे-थपन, थपे-उथपन पन विबुधबृंद-बंदिछोर को ।
जलधि लंघि, दहि लंक प्रबल-दल-दलन निसाचर घोर को ।।
जाको बालविनोद समुझि जिय डरत दिवाकर भोर को ।
जाकी चिबुकचोट चूरन किय रद-मद कुलिस कठोर को ।।
लोकपाल अनुकूल विलोकिबो चहत विलोचन-कोर को ।
सदा अभय जय-मुद-मंगलमय जो सेवक रनरोर को ।।
भगत-कामतरु नाम राम परिपूरन चंद चकोर को ।
तुलसी फल चारो करतल, जस गावत गई-बहोर को ।।३१।।

राग बिलावल

ऐसी तोहिँ न बूझिए हनुमान हठीले ।
साहेब कहूँ न राम से, तो से न वसीले ।।
तेरे देखत सिंह को सिसु-मेढक लीले ।
जानत हौं कलि तेरेऊ मनु गुनगन कीले ।।
हाँक सुनत दसकंध के भए बंधन ढीले ।
सो बल गयो, किधौं भए अब गर्ब-गहीले ।।
सेवक को परदा फटै, तू समरथ सी ले ।

३१—उथपे-थपन=उखड़े हुए को स्थापित करनेवाले। बंदिछोर=बंदीखाने से छुड़ानेवाले। रदमद=अहंकार रूपी दाँत। रनरोर=रण में विजयी। गई-बहोर=गई हुई वस्तु को पुनः लौटानेवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक आपु तें आपनो सुनि मान सही ले ।।
साँसति तुलसीदास की सुनि सुजस तुही ले ।
तिहूँ काल तिनको भलो जे रामरँगीले ।।३२।।

समरथ सुवन समीर के रघुबीर पियारे ।
मोपर कीबे तोहि जो करि लेहि भिया, रे ।।
तेरी महिमा तें चलै चिंचिनी-चियाँ रे ।
अँधियारे मेरी बार क्यों ? त्रिभुवन-उजियारे ! ।।
केहि करनी जन जानि कै सनमान किया रे ।
केहि अघ अवगुन आपनो करि डारि दिया रे ।।
खायो खोंची माँगि मैं तेरो नाम लिया रे ।
तेरे बल, बलि, आजु लौं जग जागि जिया रे ।।
जो तोसों होतौ फिरौ मेरो हेतु हिया रे ।
तौ क्यों बदन देखावतो कहि बचन इया रे ।।
तो सो ज्ञाननिधान को सर्वज्ञ बिया रे ? ।
हौं समुझत साँई-द्रोहि की गति छार-छिया रे ।।
तेरे स्वामी राम से, स्वामिनी सिया रे ।
तहँ तुलसी के कौन को काको तकिया रे ? ।।३३।।

अति आरत, अति स्वारथी, अति दीन दुखारी ।
इनको बिलगु न मानिए बोलहिँ न विचारी ।।
लोक-रीति देखी सुनी, ब्याकुल नर नारी ।
अति वरषे अनवरषे हूँ देहिँ दैवहिँ गारी ।।
ना कहि आयो नाथ सों साँसति भय भारी ।
"कहि आयो, कीबी छमा निज ओर निहारी" ।।
समय साँकरे सुमिरिए समरथ हितकारी ।
सो सब विधि ऊपर करै अपराध बिसारी ।।

३२—बूझिए = चाहिए । वसीले = जरिये, द्वारा । गर्वगहीले = घमंडी ।
३३—कीबे = करना । भिया = भैया (संबोधन) । चिंचिनी-चियाँ = इमली का बीज । डारि दिया = त्याग दिया । खोँची = भिक्षा (बाजार की) । जागि=प्रसिद्ध होकर । इया=यह । बिया = दूसरा । छिया = गलीज । तकिया = शरण, आश्रय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विगरी सेवक की सदा साहवहिँ सुधारी।
तुलसी पर तेरी कृपा निरुपाधि निरारी ॥३४॥
कटु कहिए गाढ़े परे सुनु समुझि सुसाईं।
करहिँ अनभले को भलो आपनी भलाई ॥
समरथ सुभ जो पावई, बीर, पीर पराई।
ताहि तकैं सब ज्यों नदी वारिधि न बुलाई ॥
अपने अपने को भलो चहैं लोग लुगाई।
भावै जो जेहिँ तेहिँ भजै सुभ असुभ सगाई ॥
बाँहबोल दै थापिए जो निज वरिआईं।
बिन सेवा सों पालिए सेवक की नाईं ॥
चूक चपलता मेरियै, तू बड़ो बड़ाई।
होत आदरे ढीठ हौं अति नीच निचाई ॥
बंदिछोर बिरुदावली निगमागम गाई।
नीको तुलसीदास को तेरि ही निकाई ॥३५॥

राग गौरी

मंगलमूरति मारुतनंदन। सकल-अमंगल-मूल-निकंदन ॥
पवनतनय संतन-हितकारी। हृदय विराजत अवधविहारी ॥
मातुपिता गुरु गनपति सारद। सिवा समेत संभु सुक नारद ॥
चरन बंदि विनवौं सव काहू। देहु रामपद-नेह-निवाहू ॥
बंदौं राम लखन बैदेही। जे तुलसी के परम सनेही ॥३६॥

राग दंडक

लाल लाड़िले लखन हितु हौ जन के।
सुमिरे संकटहारी, सकल सुमंगलकारी, पालक कृपालु आपने पन के ॥
धरनी-धरनहार भंजन-भुवनभार, अवतार साहसी सहसफन के।
सत्य-संध, सत्यव्रत, परम-धरमरत, निरमल करम वचन अरु मन के ॥
रूप के निधान, धनुवान पानि, तूनकटि, महावीर-विदित, जितैया बड़े रनके।
सेवक-सुखदायक, सवल, सब लायक, गायक जानकीनाथ-गुनगन के ॥

३४—बिलग न मानिए = बुरा न मानिए। ऊपर करे=पक्ष ग्रहण करता है, सहायता करता है। निरारी = निराली, अनोखी।

३५—सगाई=संबंध। बाँहबोल = भुजबल का भरोसा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावते भरत के, सुमित्रा-सीता के दुलारे, चातक चतुर राम-स्यामघन के।
बल्लभ उर्मिला के, सुलभ सनेहवस, धनी धनु तुलसी-से निरधन के ।।३७।।

राग धनाश्री

जयति लक्ष्मनानंत भगवंत भूधर, भुजगराज, भुवनेस, भूभारहारी।
प्रलयपावक-महाज्वाल-माला-वमन , समन-संताप, लीलावतारी ।।
जयति दासरथि, समर-समरथ, सुमित्रासुवन, सत्रुसूदन-राम-भरत-बंधो।
चारु-चंपकवरन, वसन-भूषन-धरन दिव्यतर, भव्य, लावन्यसिंधो ।।
जयति गाधेय-गौतम-जनक-सुख-जनक विस्वकंटक-कुटिल-कोटिहंता ।
वचन-चय-चातुरी-परसुधर-गर्बहर, सर्बदा रामभद्रानुगंता ।।
जयति सीतेस-सेवा-सरस, विषयरस-निरस, निरुपाधि, धुरधर्मधारी ।
विपुल-वलमूल, सार्दूलविक्रम, जलदनादमर्दन, महाबीर भारी ।।
जयति संग्राम-सागर-भयंकर-तरन-रामहित-करन-वरवाहु-सेतू ।
उर्मिलारमन, कल्यानमंगलभवन, दासतुलसी-दोष-दवन-हेतू ।।३८।।

जयति भूमिजारमन-पदकंज-मकरंद-रस-रसिक-मधुकर-भरत भूरिभागी।
भुवन-भूषन-भानुबंस-भूषन, भूमिपाल-मनि-रामचंद्रानुरागी ।।
जयति विबुधेस-धनदादिदुर्लभ महाराज--सम्राज-सुखपद-विरागी ।
खड्गधाराव्रती-प्रथमरेखा प्रकट, सुद्ध-मति-युवति-वत प्रेम-पागी ।।
जयति निरुपाधि, भक्तिभावजंत्रित-हृदय, बंधुहित-चित्रकूटाद्रिचारी ।
पादुकानृपसचिव, पुहुमिपालक, परम धीर गंभीर वर बीर भारी ।।
जयति संजीवनी-समय-संकट हनूमान धनु बान महिमा बखानी ।
बाहुबल-विपुल, परमिति पराक्रम-अतुल, गूढ़गति जानकी-जानि जानी ।।
जयति रनअजिर-गंधर्बगनगर्बहर फेरि किये राम-गुनगाथ-गाता ।
मांडवी-चित्तचातक-नवांबुदवरन, सरन - तुलसीदास-अभयदाता ।।३९।।

जयति जय सत्रु-करि-केसरी सत्रुहन सत्रु-तम-तुहिनहर-किरनकेतू।
देव ! महिदेव-महि-धेनु-सेवक-सुजन-सिद्ध-मुनि सकल-कल्यान-हेतू ।।
जयति सर्वांगसुंदर सुमित्रासुवन भुवनविख्यात भरतानुगामी ।

३८--भूधर=पृथ्वी को धारण करनेवाले । ज्वालमालावमन=लपट का समूह मुँह से निकलनेवाले । गाधेय = विश्वामित्र ।

३९--बिबुधेस = इंद्र । जंत्रित = ताला लगा हुआ । परमिति = हद्द से परे, बेहद । गंधर्बगर्बहर = भरतजी के मामा युधाजित् को जब गंधर्वों ने तंग किया था तब उनको सहायता के लिए भरतजी गए थे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्म-चर्मासि-धनु-बान-तूनीरधर सत्रुसंकट समन यत्प्रनामी ॥
जयति लवनांबुनिधि-कुम्भसम्भव, महादनुज-दुर्जन-दवन, दुरितहारी।
लक्ष्मनानुज, भरत-राम-सीता-चरनरेनु-भूषित-भालतिलकधारी ॥
जयति श्रुतिकीर्ति-वल्लभ सुदुर्लभ सुलभ नमत नर्मद-भक्ति-मुक्तिदाता।
दासतुलसी चरनसरन सीदत, विभो ! पाहि ! दीनार्त्त-संताप-हाता ॥४०॥

राग केदारा

कबहुँक अंब अवसर पाइ ।
मेरिऔ सुधि द्यायबी कछु करुन-कथा चलाइ ॥

४०—किरनकेतु=सूर्य । वर्मा, चर्म, असि=कवच, ढाल और तलवार । यत्प्रनामी=जो प्रणाम करनेवाले हैं उनको । लवनांबुनिधि=लवणासुर रूपी समुद्र । कुम्भसंभव=अगस्त्य मुनि, जिन्होंने समुद्र को सोख लिया था । श्रुति-कीर्ति=शत्रुघ्न की स्त्री । नर्मद=सुखदाता । सीदत=दुःख पाता है ।

बैजनाथ की सटीक विनयपत्रिका में ४१वां पद निम्नलिखित है, जो अन्य प्रतियों में नहीं है—

जयति श्रीजानकी भानुकुल-भानु की प्रानप्रिय-वल्लभे तरनि भूपे ?
राम-आनंद-चैतन्यघन-विग्रहा-शक्ति अह्लादिनी साररूपे ॥
चित्त चरण चिंतनि जेहि धरत ही दूर हो काम भय कोह मद मोह माया।
रुद्र विधि विष्णु सुरसिद्ध-वंदित पदे जयति सर्वेश्वरी रामजाया ॥
कर्म जप जोग विज्ञान वैराग्य लहि मोक्ष हित योगि जे प्रभु मनावैं ।
जयति बैदेहि सब-शक्ति-शिरभूषणे ते न तव दृष्टि बिन कबहुँ पावैं ॥
कोटि ब्रह्मांड जगदीस को ईस जेहि निगम मुनि बुद्धि ते अगम गावैं ।
विदित यह गाथ अहदान कुलमाथ सो नाथ तव दान लै हाथ आवैं ॥
दिव्य शत वर्ष जप ध्यान जब शिव धरचो राम गुरुरूप मिलि पथ बतायो।
चितै हित लीन लखि कृपा कीनी तबै, देवि, अति दुर्लभहिं दरस पायो ॥
जयति श्री स्वामिनी सीय शुभनामिनी दामिनी कोटि निज देह दरसैं ।
इंदिरा आदि दै मत्त-गजगामिनी देव-भामिनि सबै पाँव परसैं ॥
दुखित लखि भक्त बिन दरस निज रूप जप यजन तप यतन ते सुलभ नाहीं ।
कृपा करि पूर्ण नवकंज-दल-लोचना प्रगट भइ जनकनृप-अजिर माहीं ॥
रमित तव विपिन प्रियप्रेम प्रगटन-करन लंकपति व्याज कछु खेल ठान्यो।
गोपिका कृष्ण तव तुल्य बहु यतन करि तोहिं मिलि ईश आनंद मान्यो ॥
हीन तव सुमुख के संग रहि रंक सो, विमुख जो देव नहिं नाह नेरो।
अधम उद्धरनि यह जानि गहि सरन तव दास तुलसी भयो आय चेरो॥४१॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीन सब अँगहीन छीन मलीन अघी अघाइ।
नाम लै भरैं उदर एक प्रभु-दासी-दास कहाइ ।।
बूझिहैं 'सो है कौन' ? कहिबी नाम दसा जनाइ ।
सुनत रामकृपालु के मेरी बिगारिऔ बनि जाइ ।।
जानकी जगजननि जन की किए बचन-सहाइ ।
तरै तुलसीदास भव तव-नाथ-गुनगन गाइ ।।४१।।

कबहुँ समय सुधि द्याइबी मेरी मातु जानकी ।
जन कहाइ नाम लेत हौं किए पन चातक ज्यों, प्यास प्रेम-पान की ।।
सरलप्रकृति आपु जानिए करुनानिधान की ।
निजगुन अरि-कृत अनहितो दास-दोष सुरति चित रहति न दिए दान की ।।
बानि बिसारनसील है मानद अमान की ।
तुलसिदास न बिसारिए मन-क्रम-बचन जाके सपनेहुँ गति न आन की।।४२।।

जयति सच्चिद्व्यापकानंद यद्ब्रह्म-विग्रह-व्यक्त लीलावतारी ।
विकल-ब्रह्मादि-सुर-सिद्ध-संकोचवस-विमल-गुन-गेह-नरदेह-धारी ।।
जयति कोसलाधीस-कल्यान, कोसलसुता कुसल, कैवल्यफल-चारु चारी ।।
बेदबोधित-कर्म-धर्म-धरनी-धेनु-विप्र-सेवक-साधु-मोदकारी ।।
जयति रिषि-मख-पाल, समन सज्जनसाल, सापवस-मुनिवधू-पापहारी ।
भंजि भवचाप, दलि दाप भूपावली, सहित भृगुनाथ नतमाथ भारी ।।
जयति धार्मिक-धुर धीर-रघुबीर गुरु-मातु-पितु-बंधु-वचनानुसारी ।
चित्रकूटाद्रि-विंध्याद्रि-दंडकविपिन-धन्यकृत, पुन्यकानन-विहारी ।।
जयति पाकारिसुत-काक-करतूति-फलदानि, खनि गर्त्त गोपित विराधा ।
दिव्य-देवी-वेष देखि, लखि निसिचरी जनु बिडंवित करी विस्ववाधा ।।
जयति खर-त्रिसिर-दूषन-चतुर्दससहस-सुभट-मारीच-संहारकर्त्ता ।
गृध्र-सबरी-भक्ति-विवस करुनासिंधु, चरित-निरुपाधि, त्रिविधार्ति-हर्त्ता ।।
जयति मदअंध कुकबंध बधि, बालि-बलसालि बधि, करन-सुग्रीव-राजा ।
सुभट-मर्कट-भालु-कटक-संघट सजत, नमत पद रावनानुज निवाजा ।।

४२—द्यायबी=देना, दिलाइयेगा । अघाइ=भरपेट । प्रभुदासीदास= तुलसी । बचन सहाइ किए=वचनों द्वारा की गई सहायता से ।

४२—बिसारनसील = विस्मरणशील, भूलने योग्य ।

४३—कोसलाधीस = राजा दशरथ । कोसलसुता =कौशल्या । पाकारिसुत = इंद्र का पुत्र, जयंत । गर्त्त = गड्ढा । बिडंबित करी=लज्जित की । संघट = समूह ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयति पाथोधि-कृत-सेतु-कौतुक-हेतु, काल-मन-ग्रगम लई ललकि लंका ।
सकुल सानुज सदल दलित दसकंठ रन, लोक-लोकप किए रहितसंका ।।
जयति सौमित्रि-सीता-सचिव-सहित चले पुष्पकारूढ़ निज राजधानी ।
दासतुलसी मुदित ग्रवधवासी सकल, राम भे भूप, वैदेहि रानी ।।४३।।

जयति राजराजेंद्र राजीवलोचन राम-नाम-कलिकामतरु, सामसाली ।
ग्रनय-ग्रंभोधि-कुंभज, निसाचर-निकर-तिमिर-घनघोर-खर-किरनमाली।।
जयति मुनिदेव नरदेव दसरत्थ के, देव-मुनि-बंद्य किए ग्रवधवासी ।
लोकनायक-कोक-सोक-संकट-समन, भानुकुल-कमल-कानन-विकासी ।।
जयति श्रृंगार-सर-तामरस-दाम-द्युति-देह, गुनगेह, विस्वोपकारी ।
सकल-सौभाग्य-सौंदर्य-सुखमारूप, मनोभव कोटि-गर्बापहारी ।।
जयति सुभग सारंग-सु-निखंग-सायक-सक्ति-चारु-चर्मासि-वरवर्म-धारी ।
धर्मधुर धीर रघुबीर भुजवल-ग्रतुल, हेलया दलित-भूभार भारी ।।
जयति कलधौत-मनि-मुकुट-कुंडल,तिलक-झलकझलिभाल,विधुवदन सोभा।
दिव्य-भूषन-वसन,पीत उपवीत, किए ध्यान कल्यान-भाजन न को भा।।
जयति भरत-सौमित्रि-सत्रुघ्न-सेवित सुमुख,सचिव-सेवक-सुखद-सर्बदाता
ग्रधम ग्रारत दीन पतित पातक-पीन, सकृत नतमात्र कहे पाहि, पाता ।।
जयति जय भुवन दस चारि जस जगमगत, पुन्यमय,धन्य जय राम-राजा।
चरित-सुरसरित-कवि-मुख्य-गिरि-निःसरित,पिवत मज्जत मुदित सतसमाज।
जयति वर्नाश्रमाचार-पर-नारिनर, सत्य सम-दम-दया-दान-सीला ।
विगत-दुखदोष, संतोष सुख सर्वदा, सुनत गावत राम-राजलीला ।।
जयति बैराग्य-विज्ञान-वारांनिधे, नमत नर्मद पाय-ताप-हर्ता ।
दासतुलसी चरन-सरन संसयहरन देहि ग्रवलंब वैदेहिभर्त्ता ।।४४।।

राग गौरी

श्री रामचंद्र कृपालु भजु मन हरन-भवभय-दारुनं ।
नवकंज-लोचन, कंजमुख, करकंज, पदकंजारुनं ।।
कंदर्प-ग्रगनित-ग्रमित-छवि, नवनील-नीरज सुंदरं ।
पटपीत मानहु तड़ित-रुचि सुचि नौमि जनकसुता-वरं ।।

४४—सामसाली = साम नीतिवाले । ग्रनय = ग्रनीति । किरनमाली = सूर्य । मनोगत = कामदेव । हेलया = खेल ही में, सहज ही । कलधौत = सोना । सकृत = एक बार । पाता = रक्षक । कविमुख्य = वाल्मीकि । निःसरित = निकली हुई । वारांनिधि = समुद्र । नर्मद = सुखदाता ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भजु दीनबंधु दिनेस दानव-दैत्यबंस-निकंदनं ।
रघुनंद आनंदकंद कोसलचंद दसरथ-नंदनं ॥
सिर मुकुट, कुंडल तिलक चारु, उदार अंग विभूषनं ।
आजानुभुज, सरचाप-धर, संग्रामजित-खरदूषनं ॥
इति वदत तुलसिदास संकर-सेष-मुनि-मनरंजनं ।
मम हृदयकंज निवास करु कामादि-खल-दल-गंजनं ॥४५॥

राग रामकली

सदा राम जपु, राम जपु, राम जपु, राम जपु, राम जपु, मूढ़ मनवारवारं।
सकल-सौभाग्य-सुख-खानि जिय जानि, सठ! मानि विस्वास वद बेदसारं॥
कोसलेंद्र नव-नीलकंजाभ तनु, मदनरिपु कंजहृद-चंचरीकं ।
जानकीरमन, सुखभवन, भुवनैक प्रभु, समर-भंजन, परम कारुनीकं ॥
दनुज-वन-धूमध्वज, पीन-आजानु-भुजदंड-कोदंडवर-चंड-वानं ।
अरुन कर चरन मुख, नयन राजीव, गुनअयन, बहु-मयन-सोभानिधानं॥
बासना-बृंद-कैरव-दिवाकर, काम-क्रोध-मद-कंज-कानन-तुषारं ।
लोभ-अति-मत्तनागेंद्र-पंचाननं, भवतहित-हरन-संसारभारं ॥
केसवं क्लेसहं केस-बंदित-पदद्वंद्व-मंदाकिनी मूलभूतं ।
सर्बदानंद-संदोह, मोहापहं, घोर-संसार-पाथोधि-पोतं ॥
सोक-संदेह-पाथोद-पटलानिलं, पाप-पर्वत-कठिन-कुलिस-रूपं ।
संतजन-कामधुक धेनु, विश्रामप्रद, नाम कलिकलुष-भंजन अनूपं॥
धर्म-कल्पद्रुमाराम, हरिधाम-पथि-संबलं, मूलमिदमेव एकं ।
भक्ति-बैराग्य-विज्ञान-सम-दान-दम-नाम-आधीन साधन अनेकं ॥
तेन तप्तं हुतं दत्तमेवाखिलं, तेन सर्वं कृतं कर्मजालं ।
येन श्रीराम-नामामृतं पानकृतमनिशमनवद्यमवलोक्य कालं ॥
स्वपच खल भिल्ल जवनादि हरिलोक-गत नामवल विपुलमति मलिन-परसी।
त्यागि सब आस संत्रास भवपास-असि-निसित-हरिनाम जपु दासतुलसी॥४६॥

४५—रुचि = शोभा ।

४६—धूमध्वज = अग्नि । केश = क + ईश = ब्रह्मा और महादेव । अनिल = वायु । पथि-संबल = मुसाफिरों के लिये कलेवा वा राह खर्च । मूलम् + इदम् + एव + एकम् = यही एकमात्र मूल है । तेन तप्तं हुतं . . . कालं = उसी ने तप, होम और सब दान कर लिए और उसी ने सब कर्मसमूह कर लिए, जिसने समय को देखकर रातदिन रामनाम-रूपी पवित्र अमृत का पान किया । निसित = पैनी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी आरती राम रघुबीर की करहि मन ।
हरन दुखद्वंद्व गोविंद आनंदघन ।।
अचर-चर-रूप हरि सर्वगत सर्वदा बसत, इति बासना धूप दीजै ।
दीप निज-बोध, गत-क्रोध-मद-मोह-तम, प्रौढ़ अभिमान-चितबृत्ति छीजै ।।
भाव अतिसय विसद प्रवर नैवेद्य सुभ श्रीरमन परम-संतोषकारी ।
प्रेम-तांबूल, गतसूल संसय सकल, बिपुल-भव-बासना-बीज-हारी ।।
असुभ-सुभकर्म घृत-पूर्न दस बर्तिका, त्याग पावक सतोगुन-प्रकासं ।
भगति-बैराग-बिज्ञान-दीपावली अर्पि नीराजनं जगनिवासं ।।
बिमल-हृदि-भवन कृत सांति-पर्यंक सुभसयन बिस्राम श्रीरामराया ।
छमा-करुना-प्रमुख तत्र परिचारिका, यत्र हरि तत्र नहिं भेदमाया ।।
एहिआरती निरत सनकादि-श्रुति-सेष-सिव-देव-ऋषि-अखिलमुनितत्वदरसी।
करै सोइतरै, परिहरै कामादि मल, बदति इति अमलमति दासतुलसी ।।४७।।

हरति सब आरती आरती राम की ।
दहति दुख-दोष निर्मूलिनी काम की ।।
सुभग सौरभ धूप दीप बर मालिका ।
उड़त अघ-बिहग सुनि ताल करतालिका ।।
भक्त-हृदि-भवन अज्ञान-तम-हारिनी ।
बिमल-बिज्ञानमय, तेज-बिस्तारिनी ।।
मोह-मद-कोह-कलि-कंज-हिमजामिनी ।
मुक्ति की दूतिका, देह-दुति दामिनी ।।
प्रनतजन-कुमुदवन-इंदुकर-जालिका ।
तुलसि अभिमान-महिषेस बहु कालिका ।।४८।।

दनुज-बन-दहन, गुनगहन, गोविंद, नंदादि-आनंददाताऽविनासी ।
संभु सिव रुद्र संकर भयंकर भीम घोर-तेजायतन क्रोधरासी ।।
अनंत भगवंत जगदंत-अंतक-त्रास-समन श्रीरमन भुवनाभिरामं ।
भूधराधीस जगदीस ईसान बिज्ञानघन ज्ञानकल्यान-धामं ।।
बामनाव्यक्त पावन परावर बिभो, प्रगट परमातमा प्रकृति-स्वामी ।

४७—इति बासना = इस वासना की । निजबोध = आत्मज्ञान । प्रबर = श्रेष्ठ । बर्तिका = वत्ती । नीराजन = आरती, दीपदान । प्रमुख = आदि ।

४८—आरती = आर्त्ति, दुख, पीड़ा । हिमजामिनी = जाड़े की रात । जालिका = समूह । महिषेस = महिषासुर ।

२६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चंद्रसेखर सूलपानि हर अनघ अज अमित अविछिन्न बृषभेसगामी ॥
नीलजलदाभ-तनु स्याम, वहु-काम-छवि, राम, राजीवलोचन कृपाला ।
कंबु-कर्पूर-बपु धवल निर्मल, मौलि जटा सुरतटिनि, सित सुमनमाला ॥
बसन-किंजल्क-धर चक्र-सारंग-दर-कंज-कौमोदकी अति बिसाला ।
मार-करि-मत्त-मृगराज त्रयनयन हर नौमि अपहरन-संसारज्वाला ॥

कृष्ण करुनाभवन, दवन-कालीय-खल विपुल-कंसादि-निर्बंसकारी ।
त्रिपुर-मद-भंगकर, मत्तगज-चर्म-धर, अंधकोरग-ग्रसन-पन्नगारी ॥
ब्रह्म व्यापक अकल सकलपर परम हित ज्ञानगोतीत गुन बृत्तिहर्त्ता ।
सिंधुसुत-गर्ब-गिरि-वज्र, गौरीस, भव, दक्षमख-अखिल-विध्वंसकर्त्ता ॥

भक्तिप्रिय भक्तजन-कामधुक-धेनु हरि हरन-दुर्घट-विकट-विपति-भारी ।
सुखद नर्मद वरद बिरज अनवद्यऽखिल, विपिन-आनंद-बीथिन-विहारी ॥
रुचिर हरिसंकरी-नाम मंत्रावली द्वंद्वदुख-हरनि आनंदखानी ।
विष्नु-सिव-लोक-सोपान सम सर्बदा वदति तुलसीदास विसद वानी ॥४९॥

भानुकुल-कमल-रवि, कोटि-कंदर्प-छवि, कालकलि-व्यालमिव बैनतेयं ।
प्रबल-भुजदंड, परचंड कोदंडधर, तूनवर विसिख, वलमप्रमेयं ॥
अरुन राजीवदल-नयन सुखमा-अयन स्याम-तनुकांति वर-वारिदाभं ।
तप्तकांचन-वस्त्र सस्त्रविद्या-निपुन सिद्ध-सुर-सेव्य पाथोजनाभं ॥

अखिल लावन्यगृह बिस्वविग्रह परम प्रौढ़ गुनगूढ़ महिमा उदारं ।
दुर्द्धर्ष, दुस्तर, दुर्ग, स्वर्ग-अपवर्ग-पति, भग्न-संसार-पादप-कुठारं ॥
सापवस-मुनिवधू-मुक्तकृत्, विप्रहित-जज्ञरच्छन-दच्छ पच्छकर्त्ता ।
जनकनृप-सदसि-सिवचाप-भंजन, उग्र-भार्गवागर्व-गरिमापहर्त्ता ॥

गुरुगिरा-गौरवामरसुदुस्त्यज-राज्य-त्यक्त-श्री सहित, सौमित्रि-भ्राता ।
संग जनकात्मजा, मनुजमनुसृत्य, अज, दुष्टवधनिरत, त्रैलोक्य-त्राता ॥
दंडकारन्य-कृत-पुन्य-पावनचरन, हरन-मारीच-मायाकुरंगं ।
बालिबल-मत्तगजराज-इव केसरी सुहृद-सुग्रीव-दुखरासि-भंगं ॥

यह पद रामभक्तों में हरिशंकरी के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि विष्णु और शिव के नाम साथ साथ आते गए हैं ।

४९—अंतक = यमराज । परावरबिभो = सर्वत्र व्यापक । परावर = दूर और पास, सर्वत्र । किंजल्क = कमल के केसर के समान, जो पीले रंग का होता है । अंधकोरग = अंधक दैत्य रूपी सर्प । गुनबृत्ति = त्रिगुण व्यापार । सिंधुसुत = जलंधर । बिरज = रजोगुण के प्रभाव से रहित । अनबद्य = दोष से रहित ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिच्छ मर्कट विकट सुभट, उद्भट, समर सैल-संकास रिपु-त्रासकारी ।
बद्ध पाथोधि, सुर-निकर-मोचन, सकुल-दलन-दससीस-भुजबीस-भारी ॥
दुष्टविबुधारि-संघात-महिभार-अपहरन अवतार कारन अनूपं ।
अमल अनवद्य अद्वैत निर्गुन सगुन ब्रह्म सुमिरामि नरभूपरूपं ॥
सेष स्तुति सारदा संभु नारद सनक गनत गुन, अंत नहिं तव चरित्रं ।
सोइ राम कामारिप्रिय अवधपति सर्वदा दासतुलसी-त्रासनिधि वहित्रं।५०।

जानकीनाथ रघुनाथ रागादितम-तरनि, तारुन्यतनु तेजधामं ।
सच्चिदानंद आनंदकंदाकरं विस्वविस्राम रामाभिरामं ॥
नीलनव-वारिधर सुभग-सुभ-कांतिकर पीतकौसेय-वरवसन-धारी ।
रत्नहाटक-जटित-मुकुट-मंडित-मौलि भानुसत-सदृस उद्योतकारी ॥
स्रवन कुंडल, भाल तिलक, भ्रूरुचिर अति, अरुन अंभोज लोचन विसालं ।
वक्त्र-आलोक त्रैलोक्य-सोकापहं, माररिपु-हृदय-मानस-मरालं ॥
नासिका चारु, सुकपोल, द्विज वज्रद्युति, अधर बिंबोपमा, मधुर-हासं ।
कंठ दर, चिबुक वर, वचन गंभीरतर, सत्यसंकल्प सुरत्रासनासं ॥
सुमन-सुविचित्र-नवतुलसिका-दलजुतं मृदुल वनमाल उर भ्राजमानं ।
भ्रमत आमोदवस मत्तमधुकर-निकर मधुरतर मुखर कुर्वन्ति गानं ॥
सुभग श्रीवत्स केयूर कंकन हार किंकिनी-रटनि कटितट रसालं ।
वाम दिसि जनकजासीन सिंहासनं कनक-मृदुपल्लवित तरु तमालं ॥
आजानुभुजदंड, कोदंड मंडित वाम बाहु, दच्छिन पानि वानमेकं ।
अखिल मुनिनिकर सुरसिद्ध गंधर्व वर नमत नर नाग अवनिप अनेकं ॥
अनघ अविछिन्न सर्वज्ञ सर्बेस खलु सर्बतोभद्र दाताऽसमाकं ।
प्रनतजन-खेद-विच्छेद-विद्या-निपुन नौमि श्रीराम सौमित्रि-साकं ॥
जुगल पदपद्म सुखसद्म पद्मालयं, चिह्न कुलिसादि सोभातिभारी ।
हनुमंत-हृदिविमल-कृत परममंदिर सदा दासतुलसी सरन-सोकहारी।।५१।

५०—दुर्ग = दुर्गम । सदसि = सभा में । भार्गव = परशुराम । आगर्व = पूर्णगर्व । दुस्त्यज = कठिनता से त्यागने योग्य । अनुसृत्य = अनुसार, नाईं । भंग = काटने के हेतु । बहित्र = जहाज ।

५१—कौसेय = रेशमी । वक्त्र = मुख । दर = शंख । आमोद = सुगंध । श्रीवत्स = श्री का चिह्न । केयूर = बिजायठ । अविछिन्न = पूर्ण । खलु = निश्चय करके । सर्वतोभद्र = सब प्रकार से कल्याण रूप । असमाकं = अस्माकं, हमको । साकं = सहित । सद्म = घर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोसलाधीस जगदीस जगदेकहित अमितगुन, विपुल विस्तारलीला।
गायंति तव चरित सुपवित्र श्रुति सेस सुक संभु सनकादि मुनि मननसीला ॥
बारिचर-वपुषधर, भक्त-निस्तार-पर, धरनि कृत नाव महिमातिगुर्बी।
सकल यज्ञांसमय उग्र-विग्रह क्रोड, मर्दि दनुजेस उद्धरन उर्बी ॥
कमठ अति बिकट-तनु, कठिन पृष्ठोपरि भ्रमत मंदर कंडु-सुख मुरारी।
प्रगटकृत अमृत, गो, इंदिरा, इंदु, बृंदारका-बृंद-आनंदकारी ॥
मनुज-मुनि-सिद्ध-सुर-नाग-त्रासक दुष्ट दनुज द्विजधर्म-मर्य्याद-हर्ता।
अतुल मृगराजवपु धरित, बिद्दरित अरि, भक्त-प्रहलाद-अहलादकर्ता ॥
छलन वलि कपट बटुरूप वामन ब्रह्म, भुवन-पर्य्यंत पद-तीनि-करनं।
चरन-नख-नीर त्रैलोक्यपावन परम, विबुधजननी-दुसह-सोकहरनं ॥
छत्रियाधीस-करिनिकर-बर-केसरी परसुधर विप्र-ससि-जलदरूपं।
बीस-भुजदंड-दससीसखंडन चंडवेग-सायक नौमि राम-भूपं ॥
भूमि-भर-भारहर प्रगट परमातमा ब्रह्म नररूपधर-भवतहेतू।
बृष्निकुल-कुमुद-राकेस राधारमन कंस-बंसाटवी-धूमकेतू ॥
प्रवल-पाखंड-महिमंडलाकुल देखि निंद्यकृत्-अखिल-मखकर्म-जालं।
सुद्धबोधैक घनज्ञान गुनधाम अज बुद्ध अवतार बंदे कृपालं ॥
कालकलि-जनित-मल-मलिनमन सर्बनर, मोहनिसि-निविड़-यमनांधकारं।
विष्नुजस-पुत्र कल्कीदिवाकर उदित दासतुलसी हरन विपति-भारं ॥५२॥

सर्ब-सौभाग्यप्रद, सर्बतोभद्र-निधि, सर्ब सर्बेस सर्बाभिरामं।
सर्ब-हृदि-कंज-मकरंद-मधुकर रुचिररूप भूपालमनि नौमि रामं ॥
सर्ब सुखधाम गुनग्राम विश्रामपद नाम सर्वास्पदमति पुनीतं।
निर्मलं सांत सुविसुद्ध बोधायतन क्रोध-मद-हरन करुना-निकेतं ॥
अजित निरुपाधि गोतीतमव्यक्त विभुमेकमनवद्यमजमद्वितीयं।
प्राकृतं प्रकट परमातमा परमहित प्रेरकानंत बंदे तुरीयं ॥
भूधरं सुंदरं श्रीवरं मदन-मद-मथनं, सौंदर्य-सीमातिरम्यं।
दुष्प्राप्य दुष्प्रेक्ष्य दुस्तवर्य दुष्पार संसारहर सुलभ मृदुभावगम्यं ॥
सत्यकृत सत्यरत सत्यव्रत सर्वदा पुष्ट संतुष्ट संकष्टहारी।
धर्मवर्मणि ब्रह्मकर्मबोधैक द्विजपूज्य ब्रह्मन्य जनप्रिय मुरारी ॥

५२—गुर्बी = बड़ी। क्रोड = शूकर। उर्बी = पृथ्वी। कंडुसुख = खुजलाने का सुख। विबुधजननी = अदिति। ससि = खेती। भर = भारी। अटवी = जंगल। बिष्नुजस = एक ब्राह्मण, जिसके पुत्ररूप में कल्कि अवतार होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्य निर्मम, नित्य मुक्त निर्मान हरि ज्ञानघन सच्चिदानंद मूलं ।
सर्वरक्षक सर्वभक्षकाध्यक्ष कूटस्थ गूढ़ार्चि भक्तानुकूलं ॥
सिद्धि साधक साध्य, वाच्य वाचक रूप, मंत्र-जापक जाप्य, सृष्टि स्रष्टा ।
परमकारन, कंजनाभ, जलदाभतनु, सगुन निर्गुन, सकल-दृस्य-द्रष्टा ॥
व्योम-व्यापक विरज ब्रह्म वरदेस बैकुंठ वामन विमल ब्रह्मचारी ।
सिद्ध-वृंदारकावृंद-वंदित सदा खंडि पाखंड निर्मूलकारी ॥
पूरनानंद-संदोह अपहरन-संमोह-अज्ञान-गुन-सन्निपातं ।
वचन मन कर्म गतसरन तुलसीदास, त्रास-पाथोधि-इव-कुंभजातं ॥५३॥

विस्वविख्यात विस्वेस विस्वायतन विस्वमर्याद व्यालादगामी ।
ब्रह्म वरदेश वागीस व्यापक विमल विपुल बलवान निर्बानस्वामी ॥
प्रकृति, महतत्व, सब्दादि, गुन, देवता, ब्योम मरुदग्नि, अमलांबु उर्बी ।
बुद्धि मन इंद्रिय प्रान चित्तातमा काल-परमानु चिच्छक्ति गुर्बी ॥
सर्वमेवात्र त्वद्रूप भूपालमनि व्यक्तमव्यक्त गतभेद, विष्नो ।
भुवन भवदंस कामारि-वंदित-पदद्वंद्व-मंदाकिनी-जनक जिष्नो ॥
आदिमध्यांत भगवंत त्वं सर्वगतमीस पस्यंति जे ब्रह्मवादी ।
जथा पट-तंतु, घट-मृत्तिका, सर्प-स्रग, दारु-करि, कनक-कटकांगदादी ॥
गंभीर गर्वघ्न गूढ़ार्थवित गुप्त गोतीत गुरु ज्ञान ज्ञाता ।
ज्ञेय ज्ञानप्रिय प्रचुर गरिमागार घोर-संसार-परपार-दाता ॥
सत्यसंकल्प अतिकल्प कल्पांतकृत कल्पनातीत अहि-तल्पवासी ।
वनज-लोचन, वनज-नाभ, वनदाभ-वपु वनचरध्वज-कोटि लावन्यरासी ॥

५३—सर्व = महादेव। सर्वास्पद = सब वस्तुओं का मूल स्थान। प्राकृत = प्रकृति से बद्ध, मनुष्यरूपधारी। तुरीय = मोक्षरूप। भूधरं = भूमि को धारण करनेवाले। ब्रह्मकर्म = ब्रह्म विद्या और कर्मकांड। निर्मान = बेहद, अपार। गूढ़ार्चि = गुप्त तेजवाला। वाच्य = अर्थ। वाचक = शब्द। स्रष्टा = सृष्टि का रचयिता। बिरज = रजोगुण रहित (शुद्ध सत्त्व-स्वरूप)। बरद + ईस = देवताओं के स्वामी। संमोह = भारी मोह। सन्निपात = समूह, ढेर।

५४—बिष्नो = हे जयशील। सर्पस्रग = सर्प में माला के समान अर्थात् भ्रम-रूप वस्तु में सत्य वस्तु के समान। वेदांत के अनुसार इस मिथ्या संसार की जो सत्ता प्रतीत होती है वह ब्रह्मरूप सत्व वस्तु के कारण। ज्ञानप्रिय = ज्ञाता। अतिकल्प = कल्प से परे। तल्प = शय्या। वेदगर्भ = ब्रह्मा। अर्भक = पुत्र। वेदगर्भार्भक = सनकादिक। अर्वाक पर = यह और वह अर्थात् परा अपरा विद्या। तमो = रात्रि। बंदारु = बंदना करनेवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुकर दुष्कर दुराराध्य दुर्व्यसनहर दुर्ग दुर्द्धर्ष दुर्गार्ति-हर्त्ता ।
बेदगर्भार्भकादभ्रगुन-गर्ब-अर्बापर-गर्ब-निर्बापकर्त्ता ॥
भक्त-अनुकूल, भवसूल-निर्मूलकर, तूल-अघ-नामपावक-समानं ।
तरल-तृष्ना-तमी-तरनि धरनीधरन सरन-भय-हरन करुनानिधानं ॥
बहुल बंदारु-बृंदारकाबृंद पद--द्वंद्व, मंदारमालोरधारी ।
पाहि मामीस, संतापसंकुल सदा दासतुलसी प्रनत रावनारी ॥५४॥

संत-संतापहर बिस्वबिश्रामकर राम कामारि-अभिरामकारी ।
सुद्धबोधायतन सच्चिदानंदघन सज्जनानंदवर्धन खरारी ॥
सील-समता-भवन बिषमता-मति-समन राम रमारमन रावनारी ।
खड्गकर चर्मवर-वर्मधर, रुचिर कटि तून, सर-सक्ति-सारंगधारी ॥
सत्यसंधान निर्बानप्रद सर्बहित सर्बगुन-ज्ञान-बिज्ञानसाली ।
सघन-तम-घोर-संसार-भर-सर्वरी-नामदिवसेस-खर-किरनमाली ॥
तपन तीछन तरुन, तीब्रतापघ्न तपरूप तनुभूप तमपर तपस्वी ।
मान-मद-मदन-मत्सर-मनोरथ-मथन मोह-अंभोधि-मंदर मनस्वी ॥
बेदबिख्यात बरदेस बामन बिरज बिमल बागीस बैकुंठस्वामी ।
काम-क्रोधादि-मर्दन, बिवर्धन-छमा सांतबिग्रह बिहँगराज-गामी ॥
परम पावन, पापपुंज-मुंजाटवी अनल-इव-निमिष-निर्मूलकर्त्ता ।
भुवनभूषन, दूषनारि, भुवनेस, भूनाथ, श्रुतिमाथ, जय भुवनभर्त्ता ॥
अमल अबिचल अकल सकल संतप्त-कलि-बिकलता-भंजनानंदरासी ।
उरग-नायक-सयन, तरुन-पंकज-नयन, छीरसागर-अयन, सर्बबासी ॥
सिद्ध-कबि-कोबिदानंददायक पदद्वंद्व मंदात्ममनुजैर्दुरापं ।
जत्र संभूत अति पूत जल सुरसरी दर्सनादेव अपहरति पापं ॥
नित्य निर्मुक्त संयुक्तगुन निर्गुनानंत भगवंत नियामक नियंता ।
बिस्व-पोषन-भरन बिस्वकारन-करन, सरन-तुलसीदास-त्रासहंता ॥५५॥

दनुजसूदन-दयासिंधु दंभापहन दहन-दुर्दोष दुष्पापहर्त्ता ।
दुष्टतादमन, दमभवन, दुःखौघहर दुर्ग-दुर्बासना-नासकर्त्ता ॥
भूरिभूषन भानुमंत भगवंत भवभंजनाभयद भुवनेस भारी ।

५५--अभिराम = आनंद । सत्यसंधान = सत्यप्रतिज्ञ । तपन = सूर्य । तमपर = तमोगुण के परे । श्रुतिमाथ = वेदों के मस्तक अर्थात् मुख्य तत्व । दुराप = कठिनता से मिलनेवाले । करन = सामग्री ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावनातीत भवबंद्य भव-भक्तहित भूमि-उद्धरन भूधरन-धारी ॥
वरद वनदाभ वागीस विस्वातमा बिरज बैकुंठ-मंदिर-विहारी।
व्यापकव्योम बंद्यांघ्रि वामन विभो ब्रह्मविद्-ब्रह्मचितापहारी ॥
सहज सुंदर सुमुख सुमन सुभ सर्वदा सुद्ध सर्वज्ञ स्वच्छंदचारी।
सर्वकृत सर्वभृत सर्वजित् सर्वहित सत्यसंकल्प कल्पांतकारी ॥
नित्य निर्मोह निर्गुन निरंजन निजानंद निर्बान निर्बानदाता।
निर्भरानंद निःकंप निःसीम निर्मुक्त निरुपाधि निर्मम विधाता ॥
महामंगलमूल मोद-महिमायतन मुग्ध मधु-मथन मानद अमानी।
मदनमर्दन मदातीत मायारहित मंजु मानाथ पाथोज-पानी ॥
कमललोचन, कलाकोस, कोदंडधर, कोसलाधीस, कल्यानरासी।
जातुधान-प्रचुर मत्तकरि-केसरी भक्त-मन-पुन्य-आरन्यवासी ॥
अनघ अद्वैत अनवद्य अव्यक्त अज अमित अविकार आनंदसिंधो !
अचल अनिकेत अविरल अनामय अनारंभ अंबोदनादघ्न-बंधो ॥
दासतुलसी खेदखिन्न, आपन्न, इह-सोकसंपन्न अतिसय सभीतं।
प्रनतपालक राम परम करुनाधाम पाहि मामुर्विपति दुर्विनीतं ॥५६॥

देहि सतसंग निजअंग, श्रीरंग, भवभंग-कारन, सरन-सोकहारी।
ये तु भवदंघ्रि-पल्लव-समाश्रित सदा भक्तिरत विगतसंसय मुरारी ॥
असुर-सुर-नाग-नर-जक्ष-गंधर्व-खग-रजनिचर-सिद्ध, ये चापि अन्ये।
संतसंसर्ग त्रयवर्गपर परमपद प्राप, निष्प्राप्य गति त्वयि प्रसन्ने ॥
बृत्र-बलि-बाण-प्रहलाद-मय-व्याध-गज-गृद्ध-द्विजबंधु निजधर्म-त्यागी।
साधुपद-सलिल-निर्धूत-कलमष सकल, स्वपच जवनादि कैवल्यभागी ॥
सांत निरपेक्ष निर्मम निरामय अगुन सब्द-ब्रह्मैक, पर-ब्रह्मज्ञानी।

५६—भानुमंत = सूर्य के समान प्रकाशवाले। ब्रह्मचिता = ब्राह्मणों की चिंता। निजानंद = आत्मानंद स्वरूप। मानाथ = लक्ष्मीपति। अविरल = अनवच्छिन्न। आपन्न = ग्रस्त। इहसोक = संसार का दुःख। अंबोदनादघ्न = मेघनाद + घ्न = नाशक अर्थात् लक्ष्मणजी। आपन्न = विपद्ग्रस्त। इह = संसार। उर्बिपति = पृथ्वी के मालिक। दुर्बिनीतं = नम्रतारहित।

५७—श्रीरंग = लक्ष्मीपति। ये तु = जो। भवत् + अंघ्रि = तुम्हारे चरण। त्रयवर्गपर = अर्थ, धर्म और काम से परे। प्राप = पाते हैं। द्विजबंधु = नीच ब्राह्मण। स्वदृक = अपनी ओर अर्थात् अपने दयालु स्वभाव की ओर देखनेवाले।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दक्ष, समदृक स्वदृक बिगत-अति-स्वपरमति परमरति तव विरति चक्रपानी।।
बिस्व उपकारहित ब्यग्र-चित सर्बदा, त्यक्तमदमन्यु, कृत-पुन्यरासी।
यत्र तिष्ठंति तत्रैव अज सर्ब हरि सहित गच्छंति क्षीराब्धिवासी।।
बेद-पय-सिंधु, सुबिचार-मंदर महा अखिल-मुनिबृंद निर्मथनकर्त्ता।
सार-सतसंगमुद्धृत्य इति निश्चितं वदति श्रीकृष्न बैदर्भिभर्त्ता।।
सोक संदेह भय हर्षतम तर्षगन साधु-सद्युक्ति-बिच्छेदकारी।
जथा रघुनाथ-सायक निसाचरचमू-निचय-निर्दलन-पटु बेग भारी।।
जत्रकुत्रापि मम जन्म निज कर्मबस भ्रमत जगयोनि संकट अनेकम्।
तत्र त्वद्भक्ति सज्जन-समागम सदा भवतु मे रामविश्रामभेकम्।।
प्रबल भवजनित-त्रैब्याधि-भेषज भक्ति, भक्त भैषज्यमद्वैतदरसी।
संत-भगवंत अंतर निरंतर नहीं किमपि मतिमलिन कह दासतुलसी।।५७।।

देहि अवलंब करकमल कमलारमन, दमनदुख, समन-संताप-भारी।
अज्ञान-राकेस-ग्रासन-विधुंतुद, गर्ब-काम-करिमत्त-हरि दूषनारी।।
बपुष ब्रह्मांड सो, प्रबृत्ति-लंकादुर्ग रचित मन-दनुज-मयरूपधारी।
बिबिध-कोसौघ अति रुचिर मंदिरनिकर सत्वगुन-प्रमुख त्रय-कटककारी।।
कुनप-अभिमान-सागर भयंकर घोर बिपुल अवगाह दुस्तर अपारम्।
नक्र-रागादि-संकुल मनोरथ सकल संगसंकल्प-बीची-बिकारम्।।
मोह दसमौलि, तद्भ्रात अहंकार, पाकारिजित्-काम बिश्रामहारी।
लोभ अतिकाय, मत्सर महोदर दुष्ट, क्रोध-पापिष्ट बिबुधांतकारी।।
द्वेष-दुर्मुख, दंभ-खर, अकंपन-कपट, दर्प मनुजाद-मद-सूलपानी।
अमितबल परम दुर्जय निसाचर-निकर सहित षड्वर्ग गो-यातुधानी।।
जीव भवदंघ्रि-सेवक-बिभीषन बसत मध्य दुष्टाटवी ग्रसितचिंता।
नियम जम सकल-सुरलोक-लोकेस लंकेसबस, नाथ! अत्यंत भीता।।
ज्ञान अवधेस, गृहगेहिनी भक्ति सुभ, तत्र अवतार भूभारहर्त्ता।
भक्त संकट अवलोकि पितुवाक्य-कृत गमन किय गहन बैदेहि-भर्ता।।
कैवल्य-साधन अखिल भालु मर्कट बिपुल, ज्ञान-सुग्रीव-कृत जलधिसेतू।
प्रबल बैराग्य दारुन प्रभंजनतनय बिषय-बन-दहनमिव धूमकेतू।।
दुष्ट-दनुजेस निर्बंस कृत दासहित बिस्वदुख-हरन बोधैकरासी।
अनुज निज जानकी सहित हरि सर्वदा दासतुलसी-हृदय कमलवासी।।५८।।

---

० यथा भागवत में---न रोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव! ...... यथावरुधेत्सत्संगः सर्वसंगापहो हि माम्।।

५८---कुनप = शरीर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीनउद्धरन रघुवर्य करुनाभवन समनसंताप पापौघ-हारी ।
विमल-विज्ञान-विग्रह अनुग्रहरूप भूपवर विबुध-नर्मद खरारी ॥
संसारकांतार अतिघोर गंभीर घन गहन तरुकर्म-संकुल, मुरारी ।
वासना-वल्लि खर-कंटकाकुल विपुल निविड़ विटपाटवी कठिन भारी ॥
विविधि चितबृत्ति खग-निकर सेनोलूक काक वक गृध्र आमिष-अहारी ।
अखिलखलनिपुन-छल-छिद्र निरखत सदा जीव-जन-पथिक-मन-खेदकारी।
क्रोध करि मत्त, मृगराज कंदर्प, मद-दर्प वृक-भालु अति उग्रकर्म्मा ।
महिष मत्सर क्रूर, लोभ सूकर रूप, फेरु छल, दंभ मार्जार-धर्म्मा ॥
कपट मर्कट, विकट व्याघ्र पाखंडमुख दुखद -मृगब्रात उतपातकर्त्ता ।
हृदय अवलोकि यह सोक सरनागतं, पाहि, मां पाहि, भो विश्वभर्त्ता ॥
प्रवल अहंकार दुर्घट महीधर, महामोह गिरिगुहा निविड़ांधकारम् ।
चित्त बैताल, मनुजाद मन, प्रेतगन रोग, भोगौघ बृश्चिक-विकारम् ॥
विषय-सुख-लालसा दंस-मसकादि, खल-झिल्लि, रूपादि सब सर्प, स्वामी।
तत्र आक्षिप्त तव विषम माया, नाथ ! अंध मैं मंद, ब्यालादगामी ॥
घोर अवगाह भव-आपगा, पापजल-पूर, दुष्प्रेक्ष्य, दुस्तर, अपारा ।
मकर षड्वर्ग, गो नक्र, चक्राकुला, कूल सुभ-असुभ, दुख तीव्र धारा ॥
सकल संघट पोच, सोचवस सर्बदा दासतुलसी विषय-गहन-ग्रस्तम् ।
त्राहि रघुबंसभूषन कृपाकरकठिनकाल-विकराल-कलि-त्रासत्रस्तम् ॥५९॥

नौमि नारायनं नरं करुनायनं ध्यानपारायनं ज्ञानमूलम् ।
अखिल-संसार-उपकार-कारन सदय-हृदय तपनिरत प्रनतानुकूलम् ॥
स्याम-नव-तामरस-दाम-द्युतिवपुष-छबि, कोटि-मदनार्क-अगनितप्रकासम्।
तरुन रमनीय राजीव लोचन, ललित बदन राकेस, करनिकर-हासम् ॥
सकल-सौंदर्य्य-निधि, विपुल-गुन-धाम विधि-बेद-बुध-संभु-सेवित अमानम्।
अरुन-पदकंज-मकरंद-मंदाकिनी मधुप-मुनिवृंद कुर्वन्ति पानम् ॥
सक्र-प्रेरित-घोर-मारमद-भंगकृत, क्रोधगत, बोधरत, ब्रह्मचारी ।
मारकंडेय मुनिवर्ज हित कौतुकी, विनहिं कल्पांत प्रभु प्रलयकारी ॥
पुन्यवन सैल सरि वदरिकाश्रम सदाऽसीनपद्मासनं एकरूपं ।
सिद्ध-जोगींद्र-वृंदारकानंदप्रद भद्रदायक दरस अति अनूपं ॥
मान मनभंग, चितभंग, मद, क्रोध लोभादिपर्वतदुर्ग, भुवनभर्त्ता ।

५९—कांतार = जंगल । खर = तीक्ष्ण । व्रात = झुंड । भो = है ।
चक्राकुला = भँवरवाली । संघटन = जमघट, जमावड़ा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वेष मत्सर-रागप्रबल प्रत्यूह प्रति, भूरि निर्दय, क्रूर-कर्म-कर्त्ता ॥
बिकटतर बक्र क्षुरधार प्रमदा, तीव्र-दर्प कंदर्प खर खड्गधारा ।
धीर-गंभीर-मन-पीरकारक तत्र के बराका वयं बिगतसारा ॥
परम दुर्घट पंथ, खल असंगत साथ, नाथ, नहिँ हाथ बर बिरति-जष्टी।
दरसनारत दास, त्रसित-माया-पास, त्राहि हरि त्राहि हरि ! दास कष्टी ॥
दासतुलसी दीन, धर्मसंबलहीन, श्रमित अति खेद, मति मोहनासी ।
देहि अवलंब न बिलंब अंभोजकर-चक्रधर तेज-बल-सर्म-रासी ॥६०॥

सकलसुखकंद आनंदबन-पुन्यकृत बिंदुमाधव द्वंद्व-बिपति-हारी ।
यस्यांघ्रिपाथोज अज संभु सनकादि सुक सेष मुनिबृंद-अलि निलयकारी ॥
अमल मरकत स्याम, काम-सतकोटि-छबि, पीतपट तड़ित इव जलदनीलम्
अरुन सतपत्र-लोचन, बिलोकनि चारु, प्रनतजन-सुखद, करुनार्द्रसीलम् ॥
काल-गजराज-मृगराज, दनुजेस-बन-दहन-पावक, मोह-निसि-दिनेसम् ।
चारिभुज चक्र कौमोदकी जलज दर सरसिजोपरि यथा राजहंसम् ॥
मुकुट कुंडल तिलक, अलकअलिब्रातइव, भृकुटि-द्विज-अधरबर, चारुनासा ।
रुचिर सुकपोल, दर ग्रीव सुखसीँव, हरि, इंदुकर-कुंदमिव मधुरहासा ॥
उरसि बनमाल सुबिसाल, नवमंजरी भ्राज श्रीबत्स-लांछन, उदारम् ।
परम ब्रह्मन्य, अति धन्य गतमन्यु अज, अमित बल बिपुल महिमा अपारम् ॥
हार केयूर, कर कनक-कंकन, रतनजटित मनि मेखला कटिप्रदेसम् ।
जुगल पद नूपुरा मुखर कलहंसवत, सुभग सर्बांग, सौंदर्यवेषम् ॥
सकल-सौभाग्य-संयुक्त त्रैलोक्यश्री, दक्षदिसि रुचिर बारीसकन्या ।
बसत बिबुधापगा निकट तट सदन बर, नयन निरखंति नर तेऽतिधन्या ॥
अखिल मंगल-भवन, निबिड़-संसय-समन, दमन ब्रजिनाटवी कष्टहर्त्ता ।
बिस्वधृत बिस्वहित अजित गोतीत सिव बिस्व-पालन-हरन, बिस्वकर्ता ॥
ज्ञानबिज्ञान-बैराग्य ऐस्वर्य निधि, सिद्धि अनिमानि दे भूरि दानम् ।
ग्रसित-भवब्याल अतित्रास तुलसीदास त्राहि श्रीराम उरगारियानम् ॥६१॥

६०—मारकंडेय . . . . . = मारकंडेयजी के कहने से नारायण ने उन्हें प्रलय का दृश्य दिखाया था। मनभंग, चित्तभंग, क्षुरधार, खड्गधार = बदरिकाश्रम के पर्वतों के नाम। बराका = बेचारा। जष्टी = छड़ी। कष्टी = कष्टवाला।

६१—दक्षदिशि = दक्षिण की ओर। बिंदुमाधव की मूर्ति के साथ लक्ष्मी की मूर्ति दाहिनी ओर थी। यह पुरानी मूर्ति अभी तक है। ब्रजिनाटवी = पापों का जंगल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग आसावरी

इहै परम फल परम बड़ाई ।
नखसिख रुचिर बिंदुमाधव-छवि निरखहिँ नयन अघाई ।।

बिसद किसोर पीन सुंदर बपु स्याम सुरुचि अधिकाई ।
नीलकंज बारिद तमाल मनु इन तनु तेँ दुति पाई ।।
मृदुल चरन सुभ चिन्ह पदज नख अति अदभुत उपमाई ।
अरुन नील पाथोज प्रसव जनु मनिजुत दल समुदाई ।।

जातरूप मनिजटित मनोहर नूपुर जन-सुखदाई ।
जनु हर-उर हरि बिबिधि रूप धरि रहे बर भवन बनाई ।।
कटितट रटति चारु किंकिनि-रव अनुपम बरनि न जाई ।
हेमजलज कल कलिन मध्य जनु मधुकर मुखर सोहाई ।।

उर बिसाल भृगुचरन चारु अति सूचत कोमलताई ।
कंकन चारु बिबिध भूषन बिधि रचि निज कर मन लाई ।।
गजमनि-माल बीच भ्राजत कहि जाति न पदिक-निकाई ।
जनु उडुगन-मंडल बारिद पर नवग्रह रची अथाई ।।

भुजँग-भोग भुजदंड, कंज - दर - चक्र - गदा बनि आई ।
सोभासीँव ग्रीव चिबुकाधर बदन अमित छवि छाई ।।
कुलिस-कुंदकुडमल-दामिनि-दुति दसननि देखि लजाई ।
नासा नयन कपोल ललित, श्रुतिकुंडल भ्रू मोहिँ भाई ।।

कुंचित कच सिर मुकुट भाल पर तिलक कहौं समुझाई ।
अलप तड़ित जुग रेख इंदु महँ रहि तजि चंचलताई ।।
निर्मल पीत दुकूल अनूपम उपमा हिय न समाई ।
बहु मनिजुत गिरिनील-सिखर पर कनक-बसन रुचिराई ।।

दच्छभाग अनुराग सहित इंदिरा अधिक ललिताई ।
हेमलता जनु तरु तमाल ढिग नील निचोल ओढ़ाई ।।
सत सारदा सेस स्रुति मिलि करि सोभा कहि न सिराई ।
तुलसिदास मतिमंद द्वंद्वरत कहै कौन बिधि गाई ? ।।६२।।

६२—हरि = कामदेव । पदिक = छाती पर पहिनने का भूषण विशेष । अथाई = बैठक, सभा । भुजँगभोग = भुजंग = नाग = हाथी + भोग = सूँड़, अर्थात् हाथी की सूँड़ । कुडमल = कली ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग जयतिश्री

मन, इतनोई या तनु को परम फलु ।
सब ग्रँग सुभग बिंदुमाधव-छवि, तजि सुभाउ, ग्रवलोकु एक पलु ।।
तरुन ग्ररुन-ग्रंभोज चरन मृदु, नख-दुति हृदय-तिमिरहारी ।
कुलिस-केतु-जव-जलज-रेख वर, ग्रंकुस मन-गज-वसकारी ।।
कनक-जटित मनि नूपुर, मेखल कटितट रटति मधुर वानी ।
त्रिवली उदर गँभीर नाभि-सर जहँ उपजे विरंचि ज्ञानी ।।
उर वन-माल पदिक ग्रति सोभित, विप्रचरन चित कहँ करषै ।
स्याम-तामरस-दाम-वरन वपु, पीत वसन सोभा वरषै ।।
कर कंकन केयूर मनोहर, देति मोद मुद्रिक न्यारी ।
गदा-कंज-दर-चारु-चक्रधर, नागसुंड सम भुज चारी ।।
कंबु-ग्रीव, छविसीँव चिबुक द्विज, ग्रधर ग्ररुन, उन्नत नासा ।
नव-राजीव-नयन, ससि ग्रानन, सेवक-सुखद विसद हासा ।।
रुचिर कपोल, स्रवन कुंडल, सिर मुकुट, सुतिलक भाल भ्राजै ।
ललित भ्रुकुटि, सुंदर चितवनि, कच निरखि मधुप-ग्रवली लाजै ।।
रूप-सील-गुन-खानि दच्छदिसि सिंधुसुता रत-पदसेवा ।
जाकी कृपा-कटाच्छ चहत सिव, विधि, मुनि, मनुज, दनुज, देवा ।।
तुलसिदास भवत्रास मिटै तव जव मति यहि सरूप ग्रटकै ।
नाहिँत दीन मलीन हीन-सुख कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ।।६३।।

राग वसंत

बंदौ रघुपति करुनानिधान । जाते छूटै भव-भेदज्ञान ।।
रघुबंस-कुमुद सुखप्रद निसेस । सेवित पदपंकज ग्रज महेस ।।
निज-भगत-हृदय-पाथोज-भृंग । लावन्य वपुष ग्रगनित ग्रनंग ।।
ग्रति प्रवल मोह-तम-मारतंड । ग्रज्ञान-गहन-पावक प्रचंड ।।
ग्रभिमान-सिंधु-कुंभज उदार । सुररंजन, भंजन भूमिभार ।।
रागादि-सर्पगन-पन्नगारि । कंदर्प-नाग-मृगपति मुरारि ।।
भवजलधि-पोत चरनारबिंद । जानकी-रमन ग्रानंदकंद ।।
हनुमंत-प्रेमवापी-मराल । निष्काम-कामधुक गो, दयाल ।।
त्रैलोक्य-तिलक गुनगहन राम । कह तुलसिदास विश्रामधाम ।।६४।।

राग भैरव

राम राम रमु, राम राम रटु, राम राम जपु जीहा ।
रामनाम-नव-नेह-मेह को मन, हठि होहि पपीहा ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सब साधनफल कूप-सरित-सर-सागर-सलिल निरासा ।
रामनाम-रति स्वाति-सुधा सुभ-सीकर प्रेम-पियासा ॥
गरजि तरजि पाषान बरषि पवि प्रीति परखि जिय जानै ।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै ॥
रामनाम गति, रामनाम मति, रामनाम-अनुरागी ।
ह्वै गए, हैं, जे होहिंगे आगे तेइ गनियत बड़भागी ॥
एकअंग मग अगम गवन करि, बिलमु न छिन छिन छाहैं ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि निरुपधि नेम निबाहैं ॥६५॥

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे ।
घोर भव-नीरनिधि, नाम निजु नाव रे ।
एकहि साधन सब रिधि सिधि साधि, रे !
ग्रसे कलि-रोग जोग संयम समाधि, रे !
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो बाम, रे !
रामनाम ही सों अंत सबही को काम, रे !
जग-नभबाटिका रही है फलि फूलि, रे !
धुवाँ के-से धौरहर देखि तू न भूलि, रे !
रामनाम छाँड़ि जो भरोसो करै और, रे !
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर, रे ! ॥६६॥

रामनाम जपु जिय सदा सानुराग, रे !
कलि न बिराग जोग जाग तप त्याग, रे !
राम-सुमिरन सब बिधि ही को राज, रे !
राम को बिसारिबो निषेध-सिरताज, रे !
रामनाम महामनि, फनि जगजाल, रे !
मनि बिना फनि जियै ब्याकुल बिहाल रे !
रामनाम कामतरु देत फल चारि, रे !
कहत पुरान, बेद, पंडित पुरारि, रे !
रामनाम प्रेम परमारथ को सार, रे !
रामनाम तुलसी को जीवन-अधार, रे ॥६७॥

६५—एक अंग = अनन्य, एकांगी ।

६७—बिधि को राज=वेदशास्त्र की सारी विधियों या आज्ञाओं में श्रेष्ठ । निषेध-सिरताज=सब निषिद्ध बातों से बढ़कर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम राम राम जीव जौलौं तू न जपिहै !
तौ लौं तू कहूँ जाय, तिहूँ ताप तपिहै ॥
सुरसरि-तीर बिनु नीर दुख पाइहै ।
सुरतरु-तर तोहिँ दारिद सताइहै ॥
जागत बागत सपने न सुख सोइहै ।
जनमि जनमि जुग जुग जग रोइहै ॥
छूटिबे की जतन बिसेष बाँध्यो जायगो ।
ह्वैहै विष भोजन जो सुधा सानि खायगो ॥
तुलसी तिलोक तिहूँ काल तो-से दीन को ।
रामनाम ही की गति जैसे जल मीन को ॥६८॥

सुमिरु सनेह सों तू नाम रामराय को ।
संबर निसंबर को, सखा असहाय को ।
भाग है अभागे हू को, गुन गुनहीन को ।
गाँहक गरीब को, दयालु दानि दीन को ॥
कुल अकुलीन को सुन्यो है, बेद साखि है ।
पाँगुरे को हाथ पाँय, आँधरे को आँखि है ॥
माय बाप भूखे को, अधार निराधार को ।
सेतु भवसागर को, हेतु सुखसार को ॥
पतित-पावन रामनाम सों न दूसरो ।
सुमिरि सुभूमि भयो तुलसी-सो ऊसरो ॥६९॥

भलो भली भाँति है जो मेरे कहे लागिहै ।
मन रामनाम सों स्वभाव अनुरागि है ॥
रामनाम को प्रभाव जानु जूड़ी आगि है ।
सहित सहाय कलिकाल भीरु भागि है ॥
राग रामनाम सों, बिराग जोग जागिहै ।
बाम बिधि भाल हू न कर्म-दाग दागिहै ॥
रामनाम-मोदक सनेह-सुधा पागि है ।
पाइ परितोष तू, न द्वार द्वार बागिहै ॥
कामतरु रामनाम, जोइ जोइ माँगिहै ।
तुलसिदास स्वारथ परमारथ न खाँगिहै ॥७०॥

६९—संबर = (संबल) कलेवा, राहखर्च ।
७०—खाँगिहै=कम होगा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसेउ साहव की सेवा सों होत चोर, रे ?
आपनी न बूझि, ना कहे को राढ़रोर, रे !
मुनि-मन-अगम, सुगम माइ वाप सो !
कृपासिंधु, सहज सखा, सनेही आप सो ॥
लोक-वेद-विदित वड़ो न रघुनाथ सो।
सव दिन, सव देस, सवही के साथ सो ॥
स्वामी सर्वज्ञ सों चलै न चोरी चार की।
प्रीति-पहिचानि, यह रीति दरवार की ॥
काय न कलेस लेस, लेत मानि मन की।
सुमिरे सकुचि रुचि जोगवत जन की ॥
रीझे वस होत, खीझे देत निज धाम, रे !
फलत सकल फल कामतरु-नाम, रे !
बेंचे खोटो दाम न मिलै, न राखे काम, रे।
सोउ तुलसी निवाज्यो ऐसो राजा राम, रे ! ॥७१॥

मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई।
हौं तो साईं-द्रोही, पै सेवक-हितु साँई।
राम सों वड़ो है कौन ? मोसों कौन छोटो ?
राम सों खरो है कौन ? मो सों कौन खोटो ?
लोक कहै, राम को गुलाम हौं, कहावों।
एतो वड़ो अपराध, भो न मन वाँवों ॥
पाथ-माथे चढ़ै तृन तुलसी जो नीचो।
बोरत न वारि ताहि जानि आपु सींचो ॥७२॥

जागु जागु जीव जड़ जोहै जग-जामिनी।
देह-गेह-नेह जानु जैसे घन-दामिनी ॥
सोवत सपने सहै संसृति-संताप, रे ?
बूड़ो मृगवारि, खायो जेंवरी को साँप, रे !
कहैं वेद बुध तू तौ बूझि मन माहिं रे
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिं, रे !
तुलसी जागे तें जाइ ताप तिहुँ ताय, रे !
रामनाम सुचि रुचि सहज सुभाय, रे ! ॥७३॥

७१—राढ़ + रोर=बेकाम और उद्दंड। चार=नौकर, दूत।
७२—वावों=प्रतिकूल। पाथ माथे=पानी के ऊपर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग विभास

जानकीस की कृपा जगावती, सुजान जीव !
जागि त्यागु मूढ़तानुरागु श्रीहरे ।
करु विचार, तजु विकार, भजु उदार रामचंद्र,
भद्रसिंधु दीनबंधु, बेद वदत, रे! ।।
मोहमय कुहू-निसा बिसाल काल विपुल सोयो,
खोयो सो अनूप रूप स्वप्न हू परे ।
अब प्रभात प्रगट ज्ञान-भानु के प्रकास,
वासना-सरोग-मोह-द्वेष-निबिड़-तम टरे ।।
भागे मद-मान-चोर भोर जानि जातुधान,
काम-क्रोध-लोभ-छोभ-निकर अपडरे ।
देखत रघुवर-प्रताप बीते संताप पाप,
ताप त्रिविध प्रेम-आप दूर ही करे ।।
स्रवन सुनि गिरा गँभीर जागे अति धीर,
बीर वर विराग तोष सकल संत आदरे ।
तुलसिदास प्रभु कृपालु निरखि जीवजन विहालु
भंज्यो भवजालु परम मंगलाचरे ।।७४।।

राग ललित

खोटो खरो रावरो हौं, रावरी सौं; रावरे सों
झूठ क्यों कहोंगो ? जानौ सवही के मन की ।
करम वचन हिए कहौं न कपट किए,
ऐसी हठ जैसी गाँठि पानी परे सन की ।।
दूसरो भरोसो नाहिँ, वासना उपासना को
वासव, विरंचि, सुर, नर, मुनिगन की ।
स्वारथ के साथी, मेरे हाथ सों न लेवा देई,
काहू तो न पीर रघुबीर दीनजन की ।।

७४—प्रेम-आप=प्रेम रूपी जल ।

७५—साँप सभा=दिव्य परीक्षा, जिसमें सर्प, अग्नि आदि द्वारा अभियुक्त के दोषी या निर्दोष होने का निश्चय किया जाता था । दिव्य देना=परीक्षा देना । रोटी लूगा=अन्न वस्त्र ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँप सभा सावर लवार भए देव दिव्य,
दुसह साँसति कीजै आगे दै या तन की।
साँचे परे पाऊँ पान, पंचन में पन प्रमान,
तुलसी-चातक-आस राम-स्याम-घन की ।।७५।।
राम को गुलाम नाम रामबोला राख्यो राम,
काम यहै नाम द्वै हौं कबहुँ कहत हौं।
रोटी-लूगा नीके राखैं, आगे हू को बेद भाषैं
भलो ह्वैहै तेरो, तातें आनँद लहत हौं ।।
बाँधो हौं करम जड़ गरभ गूढ़ निगड़,
सुनत दुसह हौं तो साँसति सहत हौं।
आरत-अनाथ-नाथ कोसलपाल कृपाल,
लीन्हों छीनि दीन देख्यो दुरित दहत हौं ।।
बूझ्यो ज्योंही, कह्यो "मैं हूँ चेरो ह्वैहौं रावरो जू,
मेरो कोऊ कहूँ नाहिं, चरन गहत हौं।
मीँजो गुरु पीठ, अपनाइ गहि बाँह बोलि,
सेवक-सुखद सदा बिरद बहत हौं ।।
लोग कहैं पोचु, सो न सोचु न सँकोचु,
मेरे ब्याह न बरेखी, जाति पाँति न चहत हौं ।
तुलसी अकाज-काज राम ही के रीझे-खीझे,
प्रीति की प्रतीति मन मुदित रहत हौं ।।७६।।
जानकी-जीवन, जगजीवन, जगतहित,
जगदीस, रघुनाथ, राजीव-लोचन राम ।
सरद-बिधु-बदन, सुखसील, श्रीसदन,
सहज सुंदर तनु, सोभा अनगित काम ।।
जग सुपिता, सुमातु, सुगुरु, सुहित, सुमीत,
सबको दाहिनो, दीनबंधु काहू को न बाम ।
आरतिहरन, सरनद अतुलित दानि,
प्रनतपाल, कृपालु, पतित-पावन नाम ।।
सकल-बिस्व-बंदित, सकल-सुर-सेवित,
आगम निगम कहैं रावरेई गुनग्राम ।
इहै जानिकै तुलसी तिहारो जन भयो,
न्यारो कै गनिबो जहाँ गने गरीब गुलाम ।।७७।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग टोडी

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोऊ।
जाहि दीनता कहौं, हौं दीन देखौं सोऊ॥
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तौ घनेरे।
पै तौलौं जौलौं रावरे न नेकु नयन फेरे॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित, बदत बेद चारी।
आदि, अंत, मध्य राम साहिबी तिहारी॥
तोहिं माँगि माँगनो न माँगनो कहायो।
सुनि सुभाव, सील, सुजस जाचन जन आयो॥
पाहन, पसु, बिटप, बिहँग अपने करि लीन्हें।
महाराज दसरथ के! रंक राय कीन्हें॥
तूँ गरीब को निवाज, हौं गरीब तेरो।
बारक कहिये कृपालु! तुलसिदास मेरो॥ ७८॥

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंज-हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो?
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तुही ठाकुर, हौं चेरो।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब विधि हितु मेरो॥
तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानिए जो भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु! चरन-सरन पावै॥ ७९॥

और काहि माँगिए, को माँगिबो निवारै?
अभिमतदातार कौन दुखदरिद्र दारै?॥
धरम-धाम राम काम-कोटि-रूप रूरो।
साहिब सब विधि सुजान, दान-खड्ग-सूरो॥
सुसमय दिन द्वै निसान सब के द्वार बाजै।
कुसमय दसरथ के दानि! तैं गरीब निवाजै॥
सेवा बिनु, गुन-विहीन दीनता सुनाए।
जे जे तैं निहाल किए फूले फिरत पाए॥
तुलसिदास जाचक-रुचि जानि दान दीजै।
रामचंद्र चंद्र तू! चकोर मोहिं कीजै॥ ८०॥

७८—माँगनो=मंगन, याचक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीनबंधु , सुखसिंधु, कृपाकर, कारुनीक रघुराई ।
सुनहु नाथ ! मन जरत त्रिविध ज्वर, करत फिरत बौराई ॥
कबहुँ जोगरत, भोगनिरत सठ, हठ वियोग वस होई ।
कबहुँ मोहवस द्रोह करत बहु, कबहुँ दया अति सोई ॥
कबहुँ दीन मतिहीन रंकतर, कबहुँ भूप अभिमानी ।
कबहुँ मूढ़ पंडित विडंव-रत, कबहुँ धरम-रत ज्ञानी ॥
कबहुँ देख जग धनमय, रिपुमय, कबहुँ नारिमय भासै ।
संसृति-सन्निपात दारुन दुख बिनु हरिकृपा न नासै ॥
संजम जप तप नेम धरम ब्रत बहु भेषज समुदाई ।
तुलसिदास भवरोग रामपद-प्रेमहीन नहिँ जाई ॥ ८१ ॥

मोहजनित मल लाग बिविध विधि, कोटिहु जतन न जाई ।
जनम जनम अभ्यास-निरत चित अधिक अधिक लपटाई ॥
नयन मलिन परनारि निरखि, मन मलिन विषय सँग लागे ।
हृदय मलिन वासना मान मद, जीव सहज सुख त्यागे ॥
परनिंदा सुनि स्रवन मलिन भए, वचन दोष पर गाए ।
सब प्रकार मलभार लाग निज नाथ-चरन बिसराए ॥
तुलसिदास ब्रत, दान, ज्ञान, तप सुद्धिहेतु स्रुति गावै ।
रामचरन-अनुराग-नीर बिनु मल अति नास न पावै ॥ ८२ ॥

राग जयतश्री

कछु ह्वै न आइ गयो जनम जाय ।
अति दुर्लभ तनु पाइ कपट तजि भजे न राम मन वचन काय ॥
लरिकाई बीती अचेत चित, चंचलता चौगुनी चाय ।
जोबन-जर जुवती-कुपथ्य करि भयो त्रिदोष भरि मदन बाय ॥
मध्य वयस धनहेतु गँवाई कृषी वनिज नाना उपाय ।
रामविमुख सुख लह्यो न सपनेहुँ, निसि वासर तयो तिहूँ ताय ॥
सेये नहिँ सीतापति-सेवक साधु सुमति भले भगति भाय ।
सुने न पुलकि तनु, कहे न मुदित मन, किए जे चरित रघुबंसराय ॥
अब सोचत मनि बिनु भुजंग ज्यों विकल अंग दले जरा धाय ।
सिर धुनि धुनि पछितात मीँजि कर, कोउ न मीत हितदुसह दाय ॥
जिन्ह लगि निज परलोक बिगार्‌यो ते लजात होत ठाढ़ ठायँ ।
तुलसी अजहुँ सुमिरि रघुनाथहिँ तर्‌यो गयंद जाके अर्द्ध नायँ ॥ ८३ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तौ तू पछितैहै मन मींजि हाथ ।
भयो है सुगम तो को अमर-अगम तनु समुझि धौं कत खोवत अकाथ ।।
सुखसाधन हरि बिमुख बृथा, जैसे श्रम-फल घृतहित मथे पाथ ।
यह विचारि तजि कुपथ कुसंगति, चलु सुपंथ मिलि भले साथ ।।
देखु राम-सेवक सुनु कीरति, रटहि नाम करि गान गाथ ।
हृदय आनु धनुबान-पानि प्रभु लसे मुनिपट कटि कसे भाथ ।।
तुलसिदास परिहरि प्रपंच सब नाउ रामपद-कमल माथ ।
जनि डरपहि तो से अनेक खल अपनाए जानकीनाथ ।। ८४ ।।

राग धनाश्री

मन, माधव को नेकु निहारहि ।
सुनु सठ सदा रंक के धन ज्यों छन-छन प्रभुहिँ सँभारहि ।।
सोभासील ज्ञान-गुन-मंदिर सुंदर परम उदारहि ।
रंजन-संत अखिल-अघ-गंजन, भंजन-विषय-विकारहि ।।
जौँ विनु जोग जज्ञ व्रत संजम गयो चहहि भव पारहि ।
तौ जनि तुलसिदास निसि बासर हरिपद-कमल विसारहि ।। ८५ ।।

इहै कह्यो सुत, बेद चहूँ ।
श्री रघुबीर-चरन-चिंतन तजि नाहिँन ठौर कहूँ ।।
जाके चरन विरंचि सेइ सिधि पाई संकर हूँ ।
सुक सनकादि मुक्त बिचरत तेउ भजन करत अजहूँ ।।
जद्यपि परम चपल श्री संतत, थिर न रहति कतहूँ ।
हरिपद-पंकज-पाइ अचल भइ करम-वचन-मनहूँ ।।
करुनासिंधु भगत-चिंतामनि सोभा सेवत हूँ ।
और सकल सुर असुर ईस सब खाए उरग छहूँ ।।
सुरुचि कह्यो सोइ सत्य, तात ! अति परुष वचन जवहूँ ।
तुलसिदास रघुनाथ-विमुख नहिँ मिटै विपति कबहूँ ।। ८६ ।।

सुनु मन मूढ़, सिखावन मेरो ।
हरिपद-विमुख लह्यो न काहु सुख सठ यह समुझि सबेरो ।।
बिछुरे ससि-रबि, मन-नयननि तें पावत दुख बहुतेरो ।
भ्रमत स्रमित निसि दिवस गगन महँ, तहँ रिपु राहु बड़ेरो ।।

८४—दाय=दावँ या अवसर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जद्यपि अपि पुनीत सुरसरिता तिहुँ पुर सुजस घनेरो ।
तजे चरन अजहूँ न मिटत नित बहिबो ताहू केरो ।।
छुटै न विपति भजे बिनु रघुपति स्रुति संदेह निबेरो ।
तुलसिदास सब आस छाँड़ि करि होहि राम कर चेरो ।। ८७ ।।

कबहूँ मन बिस्राम न मान्यो ।
निसि दिन भ्रमत बिसारि सहज सुख जहँ तहँ इंद्रिन-तान्यो ।।
जदपि विषय सँग सहे दुसह दुख बिषम जाल अरुझान्यो ।
तदपि न तजत मूढ़ ममतावस, जानत हूँ नहिं जान्यो ।।
जनम अनेक किए नाना विधि करम-कीच चित सान्यो ।
होइ न बिमल बिबेक-नीर बिनु, बेद पुरान बखान्यो ।।
निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों हरषि हृदय नहिं आन्यो ।
तुलसिदास कब तृषा जाइ ? सर खनतहिं जनम सिरान्यो ।।८८।।

मेरो मन हरि ! हठ न तजै ।
निसि दिन नाथ ! देउँ सिख बहु विधि, करत सुभाव निजै ।।
ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजै ।।
लोलुप भ्रम गृहपसु ज्यों जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ़ लजै ।।
हौं हारचो करि जतन बिबिध बिधि, अतिसय प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ।।८९।।

ऐसी मूढ़ता या मन की ।
परिहरि रामभगति-सुरसरिता आस करत ओसकन की ।।
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की ।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की ।।
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की ।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की ।।
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति मन की ।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की ।।९०।।

८७—उरग छहूँ=काम, क्रोध आदि षड् रिपु । सुरुचि=ध्रुव की सौतेल। माता । यह भजन ध्रुव की माता के उपदेश के रूप में हैं, जो उन्होंने ध्रुव को दिया था।

८९—गृहपशु = कुत्ता ।

९०—मति = सदृश (पूरबी-मतिन) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाचत ही निसि-दिवस मरयो ।
तव ही तें न भयो हरि ! थिर जव तें जिव नाम धरयो ।।
बहु वासना, विविध कंचुक-भूषन-लोभादि भरयो ।
चर अरु अचर गगन, जल, थल में कौन स्वाँगु न करयो ?।।
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज नहिँ जाँचत कोउ उवरयो ।
मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख काहू तो न हरयो ।।
थके नयन, पद, पानि, सुमति-बल, संग सकल विछुरयो ।
अव रघुनाथ सरन आयो जन भवभय-विकल डरयो ।।
जेहि गुन तें वस होहु रीझि करि सो मोहिँ सव विसरयो ।
तुलसिदास निज भवनद्वार प्रभु दीजै रहन परयो ।।९१।।

माधव जू मो सम मंद न कोऊ ।
जद्यपि मीन, पतंग हीनमति मोहिँ नहिँ पूजहिँ ओऊ ।।
रुचिर रूप-आहार-वस्य उन पावक, लोह न जान्यो ।
देखत विपति विषय न तजत हौं, तातेँ अधिक अजान्यो ।।
महामोह-सरिता अपार महँ संतत फिरत वह्यो ।
श्रीहरिचरन-कमल-नौका तजि फिरि फिरि फेन गह्यो ।।
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति ज्यों भरि मुख पकरयो ।
निज तालूगत रुधिर पान करि मन संतोष धरयो ।।
परम-कठिन-भवब्याल-ग्रसित हौं, त्रसित भयो अति भारी ।
चाहत अभय भेक,-सरनागत खगपति-नाथ विसारी ।।
जलचर-बृंद जाल-अंतरगत होत सिमिटि इक पासा ।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिँ देखत निज नासा ।।
मेरे अघ सारद अनेक जुग गनत पार नहिँ पावै ।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु यह भरोस जिय आवै ।।९२।।

कृपा सो धौं कहाँ विसारी राम ?
जेहि करुना सुनि श्रवन दीन-दुख धावत हौ तजि धाम ।।
नागराज निज बल विचारि हिय हारि चरन चित दीन ।
आरत गिरा सुनत खगपति तजि चलत विलंव न कीन ।।
दितिसुत त्रास त्रसित निसि-दिन प्रहलाद प्रतिज्ञा राखी ।
अतुलित वल मृगराज-मनुज तनु दनुज हत्यो श्रुति साखी ।।
भूप सदसि सव नृप विलोकि 'प्रभु राखु' कह्यो नर-नारी ।
वसन पूरि, अरि-दरप दूरि करि भूरि कृपा दनुजारी ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक एक रिपु तें त्रासित जन तुम राखे रघुबीर ।
अब मोहिं देत दुसह दुख बहु रिपु कस न हरहु भवपीर ॥
लोभ ग्राह, दनुजेस क्रोध, कुरुराज-बंधु खल मार ।
तुलसिदास प्रभु यह दारुन दुख भंजहु राम उदार ॥९३॥

काहे तें हरि मोहिं बिसारो ।
जानत निज महिमा, मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो ॥
पतितपुनीत दीनहित असरन-सरन कहत श्रुति चारो ।
हौं नहिं अधम सभीत दीन ? किधौं बेदन मृषा पुकारो ? ॥
खग-गनिका-गज-ब्याध-पाँति जहँ तहँ हौं हूँ बैठारो ।
अब केहि लाज कृपानिधान परसत पनवारो टारो ॥
जो कलिकाल प्रबल अति होतो तुव निदेस तें न्यारो ।
तौ हरि रोस भरोस दोस गुन तेहिं भजते तजि गारो ॥
मसक बिरंचि, बिरंचि मसक सम करहु प्रभाव तुम्हारो ।
यह सामर्थ्य अछत मोहिं त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो ॥
नाहिंन नरक परत मो कहँ डर, जद्यपि हौं अति हारो ।
यह बड़ि त्रास दासतुलसी प्रभु नामहु पाप न जारो ॥९४॥

तऊ न मेरे अघ अवगुन गनिहैं ।
जौ जमराज काज सब परिहरि यही ख्याल उर अनिहैं ॥
चलिहैं छूटि पुंज पापिन के असमंजस जिय जनिहैं ।
देखि खलल अधिकार प्रभू सों (मेरी) भूरि भलाई भनिहैं ॥
हँसि करिहैं परतीत भगत की, भगतसिरोमनि मनिहैं ।
ज्यों त्यों तुलसिदास कोसलपति अपनाएहि पर बनिहैं ॥९५॥

जौ पै जिय धरिहौ अवगुन जन के ।
तौ क्यों कटत सुकृत-नख तें मोपै बिटप-बृंद अघ-बन के ॥
कहिहै कौन कलुष मेरे कृत करम बचन अरु मन के ।
हारहिं अमित सेष सारद स्रुति गिनत एक एक छन के ॥
जौ चित चढ़ै नाम-महिमा निज गुन-गन पावन पन के ।
तौ तुलसिहिं तारिहौ बिप्र ज्यों दसन तोरि जमगन के ॥९६॥

९३—मृगराज-मनुज = नरसिंह । नर-नारी = अर्जुन की स्त्री द्रौपदी ।
९४—पनवारो = पत्तल । गारो = गर्व या गौरव ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पै हरि जन के अवगुन गहते ।
तौ सुरपति, कुरुराज, बालि सों कत हठि बैर बिसहते ?॥
जौ जप-जाप-जोग-ब्रत-बरजित केवल प्रेम न चहते ।
तौ कत सुर मुनिवर बिहाय ब्रज गोपगेह बसि रहते ?॥
जौ जहँ तहँ पन राखि भगत को भजन-प्रभाव न कहते ।
तौ कलि कठिन करम-मारग जड़ हम केहि भाँति निबहते ?॥
जौ सुतहित लिए नाम अजामिल के अघ अमित न दहते ।
तौ जमभट साँसति-हर हम-से बृषभ खोजि खोजि नहते ॥
जौ जग-बिदित पतित-पावन अति बाँकुर बिरद न बहते ।
तौ बहुकल्प कुटिल तुलसी-से सपनेहुँ सुगति न लहते ॥९७॥

ऐसी हरि करत दास पर प्रीति ।
निज प्रभुता बिसारि जन के बस होत सदा यह रीती ॥
जिन बाँधे सुर असुर नाग नर प्रबल करम की डोरी ।
सोइ अविछिन्न ब्रह्म जसुमति हठि बाँध्यो, सकत न छोरी ॥
जाकी मायावस बिरंचि सिव नाचत पार न पायो ।
करतल ताल बजाइ ग्वाल-जुवतिन तेहि नाच नचायो ॥
बिस्वंभर, श्रीपति, त्रिभुवन-पति बेद-बिदित यह लीख ।
बलि सों कछु न चली प्रभुता बरु ह्वै द्विज माँगी भीख ॥
जाको नाम लिए छूटत भव जनम-मरन-दुखभार ।
अंबरीष हित लागि कृपानिधि सोइ जनम्यो दस बार ॥
जोग बिराग ध्यान जप तप करि जेहि खोजत मुनि ज्ञानी ।
बानर भालु चपल पसु पाँवर, नाथ तहाँ रति मानी ॥
लोकपाल, जम, काल, पवन, रबि, ससि सब आज्ञाकारी ।
तुलसीदास प्रभु उग्रसेन के द्वार बेंत-करधारी ॥९८॥

बिरद गरीबनिवाज राम ो ।
गावत, बेद, पुरान, संभु, सुक प्रगट प्रभाव नाम को ॥
ध्रुव, प्रहलाद, बिभीषन, कपि, जदुपति, पांडव, सुदाम को ।
लोक सुजस, परलोक सुगति इनमें को हो राम काम को ॥

९७—नहते = नाधते, जोधते । ९८—लीख=लकीर, पक्की बात ।
बेंत-करधारी=छड़ीबरदार ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गनिका, कोल, किरात, आदि-कवि, इनतें अधिक वाम को ?
वाजिमेध कब कियो अजामिल, गज गायो कब साम को ?॥
छली मलीन हीन सबही सँग, तुलसी-सो छीन छाम को ?
नाम-नरेस-प्रताप प्रबल जग जुग जुग चालत चाम को ॥९९॥

सुनि सीतापति सील सुभाउ ।
मोद न मन, तन पुलक, नयन जल, सो नर खेहर खाउ ॥
सिसुपन तें पितु मातु बंधु गुरु सेवक सचिव सखाउ ।
कहत राम-विधु-बदन रिसौहैं सपनेहुँ लख्यो न काउ ॥
खेलत संग अनुज बालक नित जोगवत अनट अपाउ ।
जीति हारि चुचुकारि दुलारत, देत दिवावत दाउ ॥
सिला साप-संताप-बिगत भइ परसत पावन पाउ ।
दई सुगति सो न हेरि हरष हिय, चरन छुए पछिताउ ॥
भवधनु भंजि निदरि भूपति भृगुनाथ खाइ गए ताउ ।
छमि अपराध, छमाइ पाँइ परि, इतौ न अनत समाउ ॥
कह्यो राज, बन दियो नारिबस, गरि गलानि गयो राउ ।
ता कुमातु को मन जोगवत ज्यों निज तनु मरम कुघाउ ॥
कपि सेवाबस भए कनौड़े, कह्यो, पवनसुत आउ ।
देबे को न कछू रिनियाँ हौं, धनिक तु पत्र लिखाउ ॥
अपनाए सुग्रीव, बिभीषन, तिन न तज्यो छल-छाउ ।
भरतसभा सनमानि सराहत होत न हृदय अघाउ ॥
निज करुना करतूति भगत पर चपत चलत चरचाउ ।
सकृत प्रनाम प्रनत-जस बरनत, सुनत, कहत फिरि गाउ ॥
समुझि समुझि गुनग्राम राम के उर अनुराग बढ़ाउ ।
तुलसिदास अनयास रामपद पाइहै प्रेम-पसाउ ॥१००

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ?
काको नाम पतितपावन जग ? केहि अति दीन पियारे ?॥
कौने देव बराय बिरद-हित हठि हठि अधम उधारे ?

९९—जदुपति = उग्रसेन । सुदाम = सुदामा । चाम को चालत = चमड़े का सिक्का चलाता है ।

१००—अनट = अन्याय । अपाउ = नटखटी । समाउ = समाई, क्षमता सहन शक्ति । पसाउ = प्रसाद ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खग, मृग, ब्याध, पखान, विटप, जड़ जवन कवन सुर तारे ?॥
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज सब माया-बिवस बिचारे ।
तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु कहा अपनपौ हारे ? ॥१०१॥

हरि तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों ।
साधन-धाम बिबुध-दुर्लभ तनु मोहिँ कृपा करि दीन्हों ॥
कोटिहुँ मुख कहि जायँ न प्रभु के एक एक उपकार ।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं दीजै परम उदार ॥
विषय-वारि मन-मीन भिन्न नहिँ होत कबहुँ पल एक ।
तातें सहिय बिपति अति दारुन जनमत जोनि अनेक ॥
कृपा-डोरि, बंसी-पद-अंकुस, परम प्रेम-मृदु-चारो ।
एहि बिधि बेधि हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥
हैं श्रुति-विदित उपाय सकल, सुर केहि केहि दीन निहोरै ?
तुलसिदास यहि जीव मोह-रजु जोइ बाँध्यो सोइ छोरै ॥१०२॥

यह बिनती रघुबीर गुसाईं ।
और आस बिस्वास भरोसो हरौ जीव-जड़ताई ॥
चहौं न सुगति, सुमति, संपति, कछु रिधि सिधि, बिपुल बड़ाई ।
हेतुरहित अनुराग रामपद बढ़ौ अनुदिन अधिकाई ॥
कुटिल करम लै जाय मोहिँ जहँ जहँ अपनी बरिआई ।
तहँ तहँ जिनि छिन छोह छाँड़िए कमठ-अंड की नाईं ॥
यहि जग में जहँ लगि या तनु की प्रीति प्रतीति सगाई ।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सोँ होहु सिमिटि एक ठाँई ॥१०३॥

जानकीजीवन की बलि जैहौं ॥
चित कहै रामसीय पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहौं ॥
उपजी उर प्रतीति, सपनेहुँ सुख प्रभुपद बिमुख न पैहौं ।
मन समेत या तन के बासिन इहै सिखावन देहौं ॥
स्रवननि और कथा नहिँ सुनिहौं, रसना और न गैहौं ।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहिँ, सीस ईस ही नैहौं ॥
नातो नेह नाथ सों करि सब नातो नेह बहैहौं ।
यह छरभार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहौं ॥१०४॥

१०१—बराय=चुन चुन कर ।

१०४—छरभार=उत्तरदायित्व का बोझा; कामों की सँभाल ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब लौं नसानी अब न नसैहौं ।
रामकृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं ॥
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर तें न खसैहौं ।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं ॥
परवस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं ।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति-पद-कमल बसैहौं ॥१०५॥

राग रामकली

महाराज रामादरयो धन्य सोई ।
गरुअ, गुनरासि, सर्वज्ञ, सुकृती, सूर, सीलनिधि, साधु, तेहि सम न कोई ॥
कीस, केवट, उपल, भालु, निसिचर, सबरि, गीध सम-दम-दया-दान-हीने।
नाम लिए राम किए परम पावन सकल तरत नर तिनके गुनगान कीने ॥
ब्याध-अपराध की साध राखी कौन ? पिंगला कौन मति भक्ति भेई ?
कौन धौं सामजाजी अजामिल अधम ? कौन गजराज धौं बाजपेई ?॥
पंडुसुत, गोपिका, विदुर, कुबरी सबहिं सोध किए सुद्धता लेस कैसो ।
प्रेम लखि कृष्न किए आपने तिनहुँ को, सुजस संसार हरिहर को जैसो ॥
कोल, खस, भिल्ल, जमनादि खल राम कहि नीच ह्वै ऊँच पद को न पायो।
दीन-दुख-दमन श्रीरमन करुनाभवन पतित-पावन बिरद बेद गायो ॥
मंदमति कुटिल खल-तिलक तुलसी सरिस भो न तिहुँलोक तिहुँकाल कोऊ।
नाम की कानि पहिचानि जन आपनो
ग्रसत कलिव्याल राखो सरन सोऊ ॥१०६॥

राग विलावल

है नीको मेरो देवता कोसलपति राम ।
सुभग सरोरुह-लोचन सुठि सुंदर स्याम ॥
सिय समेत सोभित सदा, छवि अमित अनंग ।
भुज विसाल सर धनु धरे, कटि चारु निषंग ॥
बलि पूजा चाहत नहीं, चाहै एक प्रीति ।
सुमिरत ही मानै भलो, पावन सब रीति ॥
देइ सकल सुख, दुख दहै, आरतजन-बंधु ।
गुन गहि अघ अवगुन हरै, अस करुनासिंधु ॥
देस काल पूरन सदा, बद बेद पुरान ।
सब को प्रभु, सब मों बसै, सब की गति जान ॥

१०३—भेई = भिगोई, डुबाई । सोमजाजी = सोम याग करनेवाला ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को करि कोटिक कामना पूजै बहु देव ?
तुलसिदास तेहि सेइए संकर जेहि सेव ॥१०७॥
बीर महा अवराधिए साधे सिधि होय ।
सकल काम पूरन करै जानै सब कोय ॥
बेगि, बिलंब न कीजिए, लीजै उपदेस ।
बीज-मंत्र जपिए सोई जो जपत महेस ॥
प्रेमबारि तर्पन भलो, घृत सहज सनेहु ।
संसय समिधि, अगिनि छमा, ममता बलि देहु ॥
अघ उचाटि मन बस करै, मारै मद मार ।
आकरषै सुख संपदा संतोष बिचार ॥
जे यहि भाँति भजन किए मिले रघुपति ताहि ।
तुलसिदास प्रभुपथ चढ्यो, जो लेहु निबाहि ॥१०८॥
कस न करहु करुना हरे ! दुखहरन मुरारि !
त्रिविध-ताप - संदेह - सोक - संसय - भय - हारि ॥
यह कलिकाल-जनित मल मतिमंद मलिनमन ।
तेहि पर प्रभु नहिं कर सँभार, केहि भाँति जियै जन ?॥
सब प्रकार समरथ, प्रभो ! मैं सब बिधि दीन ।
यह जिय जानि द्रवहु नहीं मैं करम-बिहीन ॥
भ्रमत अनेक जोनि रघुपति ! पति आन न मोरे ।
दुख सुख सहौं, रहौं सदा सरनागत तोरे ॥
तो सम देव न कोउ कृपालु समुझौं मन माहिँ ।
तुलसिदास हरि तोषिए सो साधन नाहिँ ॥१०९॥
कहु केहि कहिए कृपानिधे ! भवजनित बिपति अति ।
इंद्रिय सकल बिकल सदा निज निज सुभाउ रति ॥
जो सुख संपति, सरग नरक संतत सँग लागी ।
हरि परिहरि सोइ जतन करत मन मोर अभागी ॥
मैं अति दीन, दयालु देव, सुनि मन अनुरागे ।
जो न द्रवहु, रघुबीर धीर ! काहे न दुख लागे ॥
जद्यपि मैं अपराध-भवन, दुखसमन मुरारे ।
तुलसिदास कहँ आस इहै बहु पतित उधारे ॥११०॥

१०८—समिधि = लकड़ी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केसव कहि न जाइ का कहिए ?
देखत तव रचना विचित्र अति समुझि मनहिँ मन रहिए ।।
सून्य भीति पर चित्र, रंग नहिँ, तनु बिनु लिखा चितेरे ।
धोए मिटै न मरै भीति, दुख पाइय यहि तनु हेरे ।।
रविकर-नीर बसै अति दारुन मकररूप तेहि माहीं ।
बदनहीन सो ग्रसै चराचर पान करन जे जाहीं ।।
कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल करि मानै ।
तुलसिदास परिहरै तीनि भ्रम सो आपन पहिचानै ।।१११।।

केसव, कारन कौन गुसाईं ।
जेहि अपराध असाधु जानि मोहि तजेहु अज्ञ की नाईं ।।
परम पुनीत संत कोमलचित तिनहिँ तुमहिँ बनि आई ।
तौ कत विप्र, ब्याध, गनिकहिँ तारेहु ? कछु रही सगाई ।।
काल-कर्म, गति-अगति जीव की सब हरि हाथ तुम्हारे ।
सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरहुँ न तुमहिँ बिसारे ।।
जौ तुम तजहु भजौं न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे ।
मन क्रम बचन नरक सुरपुर जहँ तहँ रघुबीर निहोरे ।।
जद्यपि नाथ उचित न होत अस प्रभु सों करौं ढिठाई ।
तुलसिदास सीदत निसि दिन देखत तुम्हारि निठुराई ।।११२।।

माधव ! अब न द्रवहु केहि लेखे ?
प्रनतपाल प्रन तोर, मोर प्रन जिअउँ कमलपद देखे ।।
जब लगि मैं न दीन, दयालु तें, मैं न दास, तें स्वामी ।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिँ, जद्यपि अंतरजामी ।।
तैं उदार मैं, कृपन, पतित मैं, तैं पुनीत स्रुति गावै ।
बहुत नात रघुनाथ तोहिँ मोहिँ, अब न तजे बनि आवै ।।
जनक, जननि, गुरु, बंधु, सुहृद, पति सब प्रकार हितकारी ।
द्वैतरूप तमकूप परौं नहिँ अस कछु जतन बिचारी ।।
सुनु अदभ्र-करुना, वारिज-लोचन, मोचन-भय-भारी ।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु संसय टरै न टारी ।।११३।।

१११—रविकर-नीर = मृगतृष्णा का जल । कोउ कह......मानै = न्याय, वेदांत और सांख्य के अनुसार संसार और ब्रह्म के सत्यासत्य के सिद्धांत अर्थात् नाना दार्शनिक वाद ।

११२—सीदत = दुःख पाता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माधव ! मो समान जग माहीँ ।
सब विधि हीन, मलीन, दीन अति, लीन बिषय कोउ नाहीँ ॥
तुम सम हेतु-रहित कृपालु, आरत-हित, ईसहि त्यागी ।
मैं दुख-सोक-विकल कृपालु ! केहि कारन दया न लागी ? ॥
नाहिँन कछु अवगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना ।
ज्ञानभवन तनु दिएहु, नाथ ! सोउ पाय न मैं प्रभु जाना ॥
बेनु करील, श्रीखंड वसंतहिँ दूषन मृषा लगावैँ ।
सार-रहित, हतभाग्य सुरभि, पल्लव सो कहु कहँ पावैँ ॥
सब प्रकार मैं कठिन, मृदुल हरि, दृढ़ विचार जिय मोरे ।
तुलसिदास प्रभु मोह-शृंखला छुटिहि तुम्हारे छोरे ॥११४॥

माधव ! मोह फाँस क्यों टूटै ?
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यंतर ग्रंथि न छूटै ॥
घृतपूरन कराह अंतरगत ससि प्रतिबिंब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाइ कलप सत औटत नास न पावै ॥
तरु-कोटर महँ वस विहंग, तरु काटे मरै न जैसे ।
साधन करिय विचार-हीन मन सुद्ध होइ नहिँ तैसे ॥
अंतर मलिन, विषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ।
मरै न उरग अनेक जतन वलमीक विविध विधि मारे ॥
तुलसिदास हरि-गुरु-करुना-बिनु विमल विबेक न होई ।
बिनु बिबेक संसार घोर निधि पार न पावै कोई ॥११५॥

माधव ! अस तुम्हारि यह माया ।
करि उपाय पचि मरिय, तरिय नहिँ जब लगि करहु न दाया ॥
सुनिय, गुनिय, समुझिय, समुझाइय दसा हृदय नहिँ आवै ।
जेहि अनुभव बिनु मोह-जनित दारुन भव-विपति सतावै ॥
ब्रह्म-पियूष मधुर सीतल, जौपै मन सो रस पावै ।
तौ कत मृगजल-रूप विषय कारन निसि-वासर धावै ॥
जेहि के भवन विमल चिंतामनि सो कत काँच बटोरै ।
सपने परवस परचो, जागि देखत केहि जाइ निहोरै ? ॥
ज्ञान भगति साधन अनेक सब सत्य, झूठ कछु नाहीँ ।
तुलसिदास हरिकृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मन माहीँ ॥११६॥

हे हरि ! कवन दोष तोहिँ दीजै ?
जेहि उपाय सपनेहुँ दुर्लभ गति सोइ निसि वासर कीजै ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानत अर्थ अनर्थ-रूप, तमकूप परब यहि लागे ।
तदपि न तजत स्वान, अज, खर ज्यों फिरत विषय-अनुरागे ।।
भूत-द्रोह-कृत मोह-बस्य हित आपन मैं न विचारो ।
मद, मत्सर, अभिमान, ज्ञान-रिपु इन महँ रहनि अपारो ।।
बेद पुरान सुनत समुझत, रघुनाथ सकल जगब्यापी ।
भेदत नहिँ श्रीखंड बेनु इव सारहीन मन पापी ।।
मैं अपराध-सिंधु करुनाकर ! जानत अंतरजामी ।
तुलसिदास भवब्याल-ग्रसित तव सरन उरग-रिपु-गामी ।।११७।।

हे हरि ! कवन जतन सुख मानहु ?
जिमि गज-दसन तथा मम करनी, सब प्रकार तुम जानहु ।।
जो कछु कहिय करिय भवसागर तरिय बत्सपद जैसे ।
रहनि आन बिधि, कहिय आन, हरिपद-सुख पाइय कैसे ।।
देखत चारु मयूर नयन-सुभ, बोलि सुधा इव सानी ।
सविष उरग आहार निठुर अस, यह करनी, वह बानी ।।
अखिल-जीव-वत्सल, निर्मत्सर, चरन-कमल-अनुरागी ।
ते तव प्रिय रघबीर ! धीरमति अतिसय निज-पर-त्यागी ।।
जद्यपि मम अवगुन अपार संसार-जोग्य रघुराया ।
तुलसिदास निज गुन विचारि करुना-निधान करु दाया ।।११८।

हे हरि ! कवन जतन भ्रम भागै ?
देखत सुनत विचारत यह मन निज सुभाव नहिँ त्यागै ।।
भगति, ज्ञान, बैराग्य सकल साधन यहि लागि उपाई ।
कोउ भल कहहु, देउ कछु कोऊ, असि बासना न उर तें जाई ।।
जेहि निसि सकल जीव सूतहिँ, तव कृपापात्र जन जागै ।
निज करनी विपरीत देखि मोहिँ समुझि महा भय लागै ।।
जद्यपि भगन-मनोरथ बिधि-बस सुख इच्छत दुख पावै ।
चित्रकार करहीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ।।
हृषीकेस सुनि नाउँ जाउँ बलि, अति भरोस जिय मोरे ।
तुलसिदास इंद्रिय-संभव दुख हरे बनिहि प्रभु तोरे ।।११९।।

हे हरि ! कस न हरहु भ्रम भारी ?
जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिँ कृपा तुम्हारी ।।

११७--अर्थ = इंद्रियों के विषय ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्थ अविद्यमान जानिय संसृति नहिँ जाइ गोसाईं ।
विनु बाँधे निज हठ सठ परवस परयो कीर की नाईं ॥
सपने व्याधि विविध वाधा भइ, मृत्यु उपस्थित आई ।
बैद अनेक उपाय करहिँ, जागे विनु पीर न जाई ॥
स्रुति-गुरु-साधु-सुमृति-संमत यह दृश्य सदा दुखकारी ।
तेहि विनु तजे, भजे विनु रघुपति विपति सकै को टारी ?॥
बहु उपाय संसार-तरन कहँ विमल गिरा स्रुति गावै ।
तुलसिदास 'मैं-मोर' गए विनु जिय सुख कवहुँ न पावै ॥१२०॥

हे हरि ! यह भ्रम की अधिकाई ।
देखत सुनत कहत समुझत संसय संदेह न जाई ॥
जौ जग मृषा, ताप-त्रय-अनुभव होहिँ कहहु केहि लेखे ।
कहि न जाइ मृगवारि सत्य, भ्रम तें दुख होइँ विसेखे ॥
सुभग सेज सोवत, सपने बारिधि बूड़त भय लागै ।
कोटिहुँ नाव न पार पाव कोउ जब लगि आपु न जागै ॥
अनविचार रमनीय सदा, संसार भयंकर भारी ।
सम, संतोष, दया, विबेक तेँ ब्यवहारी सुखकारी ॥
तुलसिदास सब बिधिप्रपंच जग जदपि झूठ स्रुति गावै ।
रघुपति-भगति, संत-संगति विनु को भवत्रास नसावै ॥१२१॥

मैं हरि, साधन करै न जानी ।
जस आमय भेषज न कीन्ह तस, दोस कहा दिरमानी ॥
सपने नृप कहँ घटै विप्रवध, विकल फिरै अघ लागेँ ।
बाजिमेध सत कोटि करै नहिं सुद्ध होय विनु जागेँ ॥
स्रग महँ सर्प विपुल भयदायक प्रगट होइ अबिचारे ।
बहु आयुध धरि, बल अनेक करि हारहि मरै न मारे ॥
निज भ्रम ते रविकर-संभव सागर अति भय उपजावै ।
अवगाहत बोहित, नौका चढ़ि कबहूँ पार न पावै ॥
तुलसिदास जग आपु सहित जब लगि निर्मूल न जाई ।
तब लगि कोटि कलप उपाय करि मरिय, तरिय नहिँ भाई ॥१२२॥

१२०—अर्थ = इंद्रियों के विषय ।

१२२—दिरमानी = वैद्य ।

यह शब्द फ़ारसी के 'दरमान्' से बना है, जिसका अर्थ है 'दवा' । इसे 'दिरम' से निष्पन्न होने का भ्रम नहीं होना चाहिए (संपा०) ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस कछु समुझि परत, रघुराया !
बिनु तव कृपा दयालु दासहित मोह न छूटै माया ॥
वाक्यज्ञान अत्यंत निपुन भवपार न पावै कोई ।
निसि गृह मध्य दीप की बातन तम निवृत्त नहिं होई ॥
जैसे कोउ इक दीन दुखी अति असन-हीन दुख पावै ।
चित्र कल्पतरु, कामधेनु गृह लिखे न बिपति नसावै ॥
षट रस बहु प्रकार भोजन कोउ दिन अरु रैनि बखानै ।
बिनु बोले संतोष-जनित सुख खाइ सोइ पै जानै ॥
जब लगि नहिं निज हृदि प्रकास, अरु विषय-आस मन माहीं ।
तुलसिदास तब लगि जगजोनि भ्रमत, सपनेहुँ सुख नाहीं ॥१२३॥

जौ निज मन परिहरै विकारा ।
तौ कत द्वैत-जनित संसृति-दुख, संसय, सोक अपारा ॥
सत्रु, मित्र, मध्यस्थ तीनि ये मन कीन्हे बरिआईं ।
त्यागब, गहब, उपेच्छनीय अहि, हाटक, तृन की नाईं ॥
असन, बसन, बसु, बस्तु बिबिध बिधि सब मनि महँ रह जैसे ।
सरग, नरक, चर-अचर-लोक बहु बसत मध्य मन तैसे ॥
बिटप मध्य पुत्रिका, सूत्र महँ कंचुक बिनहिं बनाए ।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाए ॥
रघुपति-भगति-बारि-छालित चित बिनु प्रयास ही सूझै ।
तुलसिदास कह चिद-बिलास जग बूझत बूझत बूझै ॥१२४॥

मैं केहि कहौं बिपति अति भारी । श्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥
मम हृदय भवन प्रभु तोरा । तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥
अति कठिन करहिं बरजोरा । मानहिं नहिं बिनय निहोरा ॥
तम, मोह, लोभ, अहँकारा । मद, क्रोध, बोध-रिपु, मारा ॥
अति करहिं उपद्रव नाथा । मरदहिं मोहिं जानि अनाथा ॥
मैं एक, अमित बटपारा । कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥
भागेहु नहिं नाथ उबारा । रघुनायक करहु सँभारा ॥
कह तुलसिदास सुनु रामा । लूटहिं तस्कर तव धामा ॥
चिंता यह मोहिं अपारा । अपजस नहिं होय तुम्हारा ॥१२५॥

१२४—बसु = धन । पुत्रिका = पुतली । छालित = प्रक्षालित, धोया हुआ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन मेरे मानहि सिख मेरी। जो निजु भगति चहै हरि केरी॥
उर आनहि प्रभु कृत हित जेते। सेवहि तजे अपनपौ, चेते॥
दुख सुख अरु अपमान बड़ाई। सब सम लेखहिँ बिपति बिहाई॥
सुनु सठ काल-ग्रसित यह देही। जनि तेहि लागि बिदूषहि केही॥
तुलसिदास बिनु असि मति आए। मिलहिँ न राम कपट लय लाए॥१२६॥
मैं जानी हरिपद-रति नाहीं। सपनेहु नहिँ बिराग मन माहीं॥
जे रघुबीर-चरन अनुरागे। तिन्ह सब भोग रोग-सम त्यागे॥
काम-भुअंग डसत जब जाही। विषय-नीँब कटु लगति न ताही॥
असमंजस अस हृदय बिचारी। बढ़त सोच नित नूतन भारी॥
जब कब रामकृपा दुख जाई। तुलसिदास नहिँ आन उपाई॥१२७॥
सुमिरु सनेह सहित सीतापति। रामचरन तजि नहिँ न आन गति॥
जप, तप, तीरथ, जोग, समाधी। कलि मति बिकल, न कछु निरुपाधी।
करतहुँ सुकृत न पाप सिराहीँ। रकतबीज जिमि बाढ़त जाहीँ॥
हरनि एक अघ-असुर-जालिका। तुलसिदास प्रभुकृपा-कालिका॥१२८॥

रुचिर रसना तू राम राम राम क्यों न रटत।
सुमिरत सुख-सुकृत बढ़त, अघ-अमंगल घटत॥
बिनु स्रम कलि-कलुष-जाल कटु कराल कटत।
दिनकर के उदय जैसे तिमिर-तोम फटत॥
जोग, जाग, जप, बिराग, तप, सुतीरथ अटत।
बाँधिबे को भवगयंद रेनु की रजु बटत॥
परिहरि सुरमनि सुनाम गुंजा लखि लटत।
लालच लघु तेरो लखि तुलसी तोहिँ हटत॥१२९॥

राम, राम, राम, राम, राम, राम जपत।
मंगल मुद उदित होत, कलिमल छल छपत॥
कहु केहि लहे फल रसाल बबुर-बीज बपत।
हारहि जनि जनम जाय गालगूल गपत॥
काल, करम, गुन, सुभाव सबके सीस तपत।
रामनाम-महिमा की चरचा चले चपत॥
साधन बिनु सिद्धि सकल बिकल लोग लपत।

१२९—लटत = ललचाता है। हटत = हटकता है, मना करता है (कि ऐसा मत कर)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलिजुग बर बनिज बिपुल नाम नगर खपत ।।
नाम सों प्रतीति प्रीति हृदय सुथिर थपत ।
पावन किय रावन-रिपु तुलसिहु-से अपत ।।१३०।।

पावन प्रेम-रामचरन जनम लाहु परम ।
राम नाम लेत होत सुलभ सकल धरम ।।
जोग, मख, बिबेक, बिरति, बेद-बिहित करम ।
करिबे कहँ कटु कठोर, सुनत मधुर नरम ।।
तुलसी सुनि जानि बूझि भूलहि जनि भरम ।
तेहि प्रभु को होहि जाहि सबही की सरम ।।१३१।।

राम से प्रीतम की प्रीति-रहित जीव जाय जियत ।
जेहि सुख सुख मानि लेत सुख सो समुझ कियत ।।
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि पताल बियत ।
तहँ तहँ तू बिषय-सुखहिं चहत, लहत नियत ।।
कत बिमोह लटचो फटचो गगन मगन सियत ।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ क्यों न सुधा पियत ।।१३२।।

तोसो हौं फिरि फिरि हित सत्य बचन कहत ।
सुनि मन गुनि समुझि क्यों न सुगम सुमग गहत ।।
छोटो बड़ो, खोटो खरो जग जो जहँ रहत ।
अपने अपने को भलो कहहु को न चहत ?।।
बिधि लगि लघु कीट अवधि सुख सुखी, दुख दहत ।
पसु लौं पसुपाल ईस बाँधत छोरत नहत ।।
बिषय मुद निहारि भार सिर ज्यों काँधे बहत ।
योंही जिय जानि मानि सठ तू साँसति सहत ।।
पायो केहि घृत बिचारु हरिनबारि महत ।
तुलसी तकु तासु सरन जाते सब लहत ।।१३३।।
ताते हौं बार बार देव ! द्वार परि पुकार करत ।
आरत नत दीनता कहे प्रभु संकट हरत ।।

१३०--गाल गूल = अनाप शनाप, व्यर्थ की बात । गपत = गप मारते हुए, बकते हुए । लपत = लपकते हैं । अपत = पति-हीन, गया बीता ।

१३२--कियत = कितना है । बियत = आकाश ।

१३३--हरिनबारि = मृगतृष्णा का जल । मथत = मथते हुए ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकपाल सोकविकल रावन-डर डरत ।
का सुनि सकुचे कृपालु नरसरीर धरत ? ॥
कौसिक, मुनितीय, जनक सोच-अनल जरत ।
साधन केहि सीतल भए सो न समुझि परत ॥
केवट, खग, सबरि सहज चरनकमल न रत ।
सनमुख तोहिँ होत नाथ! कुतरु सुफर फरत ॥
बंधुबैर कपि, बिभीषन गुरु गलानि गरत ।
सेवा केहि रीझि राम किए सरिस भरत ? ॥
सेवक भयो पवनपूत साहिब अनुहरत ।
ताको लिए नाम राम सबको सुढर ढरत ॥
जाने बिनु राम-रीति पचि पचि जग मरत ।
परिहरि छल सरन गए तुलसिहु-से तरत ॥१३४॥

राग सूहो बिलावल

राम सनेही सों तैँ न सनेह कियो ।
अगम जो अमरनि हूँ सो तनु तोहिँ दियो ॥
दियो सुकुल जनम सरीर सुंदर हेतु जो फल चारि को ।
जो पाइ पंडित परमपद पावत पुरारि मुरारि को ॥
यह भरतखंड समीप सुरसरि, थल भलो, संगति भली ।
तेरी कुमति कायर कलपबल्ली चहति बिषफल फली ॥ १ ॥

अजहूँ समुझि चित्त दै सुनु परमारथ ।
है हित सोँ जगहूँ जाहि तें स्वारथ ॥
स्वारथहि प्रिय, स्वारथ सो काते, कौन बेद बखानई ।
देखु खल अहिखेल परिहरि सो प्रभुहि पहिचानई ॥
पितु, मातु, गुरु, स्वामी, अपनपौ, तिय, तनय, सेवक, सखा ।
प्रिय लगत जाके प्रेम सों, बिनु हेतु हित, नहिँ तैं लखा ॥ २ ॥

दूरि न सो हितू हेरि हिए ही है ।
छलहिँ छाँड़ि सुमिरे छोह किए ही है ॥
किए छोह छाया कमल-कर की भगत पर भजतहि भजै ।
जगदीस जीवन जीव को जो साज सब सबको सजै ॥
हरिहिँ हरिता, बिधिहिँ बिधिता, सिवहिँ सिवता जो दई ।
सोइ जानकी-पति मधुर मूरति मोदमय मंगलमई ॥ ३ ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठाकुर अतिहि बड़ो सील सरल सुठि।
ध्यान-अगम सिव हू, भेँट्यो केवट उठि॥
भरि अंक भेँट्यो सजल नयन सनेह सिथिल सरीर सों।
सुर सिद्ध मुनि कवि कहत कोउ न प्रेमप्रिय रघुबीर सों॥
खग, सबरि, निसिचर, भालु, कपि किए आपु तें बंदित बड़े।
तापर तिनकी सेवा सुमिरि जिय जात जनु सकुचनि गड़े॥ ४॥

स्वामी को सुभाव कह्यो सो जब उर आनिहै।
सोच सकल मिटिहैँ, राम भलो मानिहै॥
भलो मानिहैँ रघुनाथ जोरि जो हाथ माथो नाइहै।
ततकाल तुलसीदास जीवन जनम को फल पाइहै॥
जपि नाम करहि प्रनाम कहि गुनग्राम रामहिँ धरि हिए।
बिचरहि अवनि अवनीस-चरन-सरोज मन मधुकर किए॥५॥१३५॥

जिय जब तेँ हरि तेँ बिलगान्यो। तब तेँ देह गेह निज जान्यो॥
मायाबस सरूप बिसरायो। तेहि भ्रम तें दारुन दुख पायो॥
पायो जो दारुन दुसह दुख सुखलेस सपनेहुँ नहिँ मिल्यो।
भवसूल सोक अनेक जेहि तेहि पंथ तू हठि हठि चल्यौ॥
बहु जोनि जन्म जरा बिपति, मतिमंद हरि जान्यो नहीं।
श्रीराम-बिनु बिश्राम मूढ़! बिचारि लखि पायो कहीं ?॥ १॥

आनँदसिंधु मध्य तब बासा। बिनु जाने कस मरसि पियासा॥
मृगभ्रम-बारि सत्य जिय जानी। तहँ तू मगन भयो सुख मानी॥
तहँ मगन मज्जसि पान करि त्रयकाल जल नाहीं जहाँ।
निज सहज अनुभव रूप तब खल भूलि चलि आयो तहाँ॥
निर्मल निरंजन निर्बिकार उदार सुख तैँ परिहर्‌यौ।
निःकाज राज बिहाय नृप इव स्वप्न-कारागृह पर्‌यो॥ २॥

तैं निज कर्मडोरि दृढ़ कीन्हीं। अपने करनि गाँठि गहि दीन्हीं॥
तातेँ परबस पर्‌यो अभागे। ता फल गर्भबास दुख आगे॥
आगे अनेक समूह संसृति, उदरगति जान्यो सोऊ।
सिर हेठ, ऊपर चरन, संकट बात नहिँ पूछै कोऊ॥
सोनित पुरीष जो मूत्र मल कृमि कर्दमावृत सोवही।
कोमल सरीर, गँभीर बेदन, सीस धुनि धुनि रोवही॥ ३॥

१३६—३—हेठ = नीचे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तू निज कर्मजाल जहँ घेरो । श्रीहरि संग तज्यो नहिं तेरो ॥
बहु विधि प्रतिपालन प्रभु कीन्हों । परम कृपालु ज्ञान तोहिं दीन्हों ॥
तोहिं दियो ज्ञान विबेक जन्म अनेक की तव सुधि भई ।
तेहि ईस की हौं सरन जाकी विषम माया गुनमई ॥
जेहि किए जीव-निकाय बस रसहीन दिन दिन अति नई ॥
सो करौ बेगि सँभार श्रीपति विपति महँ जेहि मति दई ॥ ४ ॥

पुनि वहु विधि गलानि जिय मानी । अव जग जाइ भजौं चक्रपानी ॥
ऐसेहि करि विचार चुप साधी । प्रसवपवन प्रेरेउ अपराधी ॥
प्रेरचो जो परम प्रचंड मारुत कष्ट नाना तैं सह्यो ।
सो ज्ञान ध्यान बिराग अनुभव जातना-पावक दह्यो ॥
अति खेद-ब्याकुल अल्प बल छिन एक बोलि न आवई ।
तव तीब्र कष्ट न जान कोउ सव लोग हर्षित गावई ॥ ५ ॥

बाल-दसा जेते दुख पाए । अति अनीस नहिं जायँ गनाए ॥
छुधा ब्याधि ब्याधा भइ भारी । बेदन नहिं जानै महतारी ॥
जननी न जानै पीर सो केहि हेतु सिसु रोदन करै ।
सोइ करै बिबिध उपाय जातें अधिक तुव छाती जरै ॥
कौमार, सैसव अरु किसोर अपार अघ को कहि सकै ।
ब्यतिरेक तोहिं निर्दय महा खल आन कहु को सहि सकै ? ॥ ६ ॥

जौबन जुवति-संग रँग रात्यो । तव तू महा मोह मद मात्यो ॥
तातें तजी धर्म मरजादा । बिसरे तव सव प्रथम विषादा ॥
बिसरे बिषाद निकाय-संकट समुझि नहिं फाटत हियो ।
फिरि गर्भगत-आवर्त्त संसृति-चक्र जेहि होइ सोइ कियो ॥
कृमि-भस्म-विट-परिनाम तनु तेहि लागि जगु बैरी भयो ।
परदार परधन द्रोहपर संसार बाढ़ै नित नयो ॥ ७ ॥

देखत ही आई बिरुधाई । जो तैं सपनेहुँ नाहिं बुलाई ॥
ताके गुन कछु कहे न जाहीं । सो अव प्रगट देखु तन माहीं ॥
सो प्रगट तनु जर्जर जरावस ब्याधि सूल सतावई ।
सिरकंप, इंद्रिय-सक्ति प्रतिहत, वचन काहु न भावई ॥

१३६—६—अनीस = अनाथ । ब्यतिरेक = सिवाय ।
१३६—७—विट = बिष्ठा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृहपाल हू तें अति निरादर, खान, पान न पावई।
ऐसिहु दसा न विराग, तहँ तृष्ना तरंग बढ़ावई ॥ ८ ॥
कहि को सकै महा भव तेरे। जन्म एक के कछुक गने रे ॥
खानि चारि संतत अवगाही। अजहुँ तो करु विचार मन माहीं ॥
अजहूँ विचारि बिकार तजि भजु राम जन-सुखदायकं।
भवसिंधु दुस्तर जलरथं भजु चक्रधर सुर-नायकं ॥
बिनु हेतु करुनाकर उदार अपार-माया तारनं।
कैवल्य-पति, जगपति, रमापति, प्रानपति, गतिकारनं ॥ ९ ॥
रघुपति भक्ति सुलभ सुखकारी। सो त्रयताप-सोक-भय-हारी ॥
बिनु सतसंग भगति नहिं होई। ते तब मिलैं द्रवै जब सोई ॥
जब द्रवै दीनदयालु राघव साध-संगति पाइए।
जेहि दरस परस समागमादिक पापरासि नसाइए ॥
जिन्हके मिले सुख दुख समान, अमानतादिक गुन भए।
मद मोह लोभ विषाद क्रोध सुबोध तें सहजहिं गए ॥१०॥
सेवत साधु द्वैत-भय भागे। श्रीरघुबीर-चरन लय लागे ॥
देहजनित बिकार सब त्यागै। तब फिरि निज स्वरूप अनुरागै ॥
अनुराग सो निज रूप जो जग तें बिलच्छन देखिए।
संतोष सम सीतल सदा दम देहवंत न लेखिए ॥
निर्मल निरामय एकरस, तेहि हर्ष सोक न व्यापई।
त्रैलोक्य-पावन सो सदा जाकी दसा ऐसी भई ॥११॥
जो तेहि पंथ चलै मन लाई। तौ हरि काहे न होहिं सहाई ॥
जो मारग स्रुति साधु बतावैं। तेहि पथ चलत सबै सुख पावैं ॥
पावै सदा सुख हरिकृपा, संसार-आसा तजि रहै।
सपनेहुँ नहीं दुख देत दरसन, बात कोटिक को कहै ॥
द्विज, देव, गुरु, हरि, संत बिनु संसार पार न पावई।
यह जानि तुलसीदास त्रासहरन रमापति गावई ॥१२॥१३६॥

राग बिलावल

जोपै कृपा रघुपति कृपालु की बैर और के कहा सरै ?
होइ न बाँको बार भगत को जो कोउ कोटि उपाय करै ॥

१३६—८—गृहपाल = कुत्ता।
१३६—९—भव = जन्म। खानि चारि = स्वेदज, अंडज, पिंडज, ऊष्मज—ये चार प्रकार के जीव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तकै नीच जो मीच साधु की सोइ पामर तेहि मीच मरै ।
बेद-बिदित प्रहलाद-कथा सुनि को न भगति-पथ पाउँ धरै ?।।
गज उधारि हरि थप्यो विभीषन, ध्रुव अविचल कबहूँ न टरै ।
अंबरीष की साप-सुरति करि अजहुँ महामुनि ग्लानि गरै ।।
सो न कहा जो कियो सुजोधन, अबुध आपने मान जरै ।
प्रभुप्रसाद सौभाग्य विजय-जस पांडु-तनय बरिआइँ वरै ।।
जो जो कूप खनैगो पर कहँ, सो सठ फिरि तेहि कूप परै ।
सपनेहुँ सुख न संतद्रोही कहँ, सुरतरु सोउ बिष-फरनि फरै ।।
हैं काके द्वै सीस ईस के जो हठि जन की सीम चरै ?।
तुलसिदास रघुबीर-बाहुबल सदा अभय, काहू न डरै ।।१३७।।

कबहुँ सो कर-सरोज रघुनायक धरिहौ, नाथ ! सीस मेरे ।
जेहि कर अभय किए जन आरत बारक बिवस नाम टेरे ।।
जेहि कर-कमल कठोर संभुधनु भंजि जनक-संसय मेटचो ।
जेहि कर कमल उठाइ बंधु ज्यों परम प्रीति केवट भेंटचो ।।
जेहि कर-कमल कृपालु गीध कहँ पिंडोदक दै धाम दियो ।
जेहि कर बालि बिदारि दास-हित कपिकुल-पति सुग्रीव कियो ।।
आयो सरन सभीत बिभीषन, जेहि कर-कमल तिलक कीन्हों ।
जेहि कर गहि सर-चाप असुर हति अभयदान देवन दीन्हों ।।
सीतल सुखद छाँह जेहि कर की मेटति पाप, ताप, माया ।
निसि-बासर तेहि कर-सरोज की चाहत तुलसिदास छाया ।।१३८।।

दीनदयालु दुरित दारिद दुख दुनी दुसह तिहुँ ताप तई है ।
देव-दुआर पुकारत आरत सब की सब सुखहानि भई है ।।
प्रभु के बचन बेद-बुध-सम्मत मम मूरति महिदेव-मई है ।
तिन्हकी मति रिस, राग, मोह, मद, लोभ लालची लीलि लई है ।।
राज-समाज कुसाज कोटि कटु कल्पत कलुष कुचाल नई है ।
नीति प्रतीति प्रीति परमिति पति हेतु-बाद हठि हेरि हई है ।।
आस्रम-बरन-धरम-बिरहित जग लोक-बेद-मरजाद गई है ।
प्रजा पतित पाखंड-पाप-रत, अपने अपने रंग रई है ।।

१३९—दुनी = दुनिया । हेतुवाद = तर्क । रई है = रँगी है, मग्न है। सिद्धि सई = सिद्धि और सार । बिनु टहल टई = बिना काम का काम । ढील दई है = जाने देते हैं, छोड़ देते हैं, ध्यान नहीं देते हैं, रोक टोक नहीं करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांति सत्य सुभ रीति गई घटि, बढ़ी कुरीति कपट-कलई है।
सीदत साधु, साधुता सोचति, खल बिलसत, हुलसति खलई है॥
परमारथ स्वारथ-साधन भए अफल सकल, नहिँ सिद्धि सई है।
कामधेनु-धरनी कलि-गोमर-बिवस बिकल, जामति न वई है॥
कलि करनी बरनिए कहाँ लौं करत फिरत बिनु टहल टई है।
तापर दाँत पीसि कर मींजत, को जानै चित कहा ठई है॥
त्यों त्यों नीच चढ़त सिर ऊपर ज्यों ज्यों सीलवस ढील दई है।
सरुष बरजि तरजिए तरजनी, कुम्हिलैहै कुम्हड़े की जई है॥
दीजै दादि देखि नातो बलि, मही मोद-मंगल-रितई है।
भरे भाग अनुराग लोग कहैं राम अवध चितवनि चितई है॥
विनती सुनि सानंद हेरि हँसि करुना-बारि भूमि भिजई है।
रामराज भयो काज सगुन सुभ, राजा राम जगत-बिजई है॥
समरथ बड़ो सुजान सुसाहिब सुकृत सेन हारत जितई है।
सुजन सुभाव सराहत सादर अनायास साँसति बितई है॥
उथपे-थपन, उजार-बसावन, गई-बहोर बिरद सदई है।
तुलसी प्रभु आरत-आरतिहर अभय-बाँह केहि केहि न दई है?॥१३९॥

ते नर नरकरूप जीवत जग भव-भंजन-पद-बिमुख अभागी।
निसि बासर रुचि पाप, असुचि मन, खल मति-मलिन निगमपथ-त्यागी॥
नहिँ सतसंत भजन नहिँ हरि को, स्रवन न राम-कथा अनुरागी।
सुत-बित-दार-भवन-ममता-निसि सोवत अति, न कबहुँ मति जागी॥
तुलसिदास हरि-नाम-सुधा तजि सठ हठि पियत बिषय-बिष माँगी।
सूकर स्वान सृगाल सरिस जन जनमत जगत जननि-दुख लागी॥१४०॥

रामचंद्र रघुनायक! तुम सों हौं बिनती केहि भाँति करौं?
अघ अनेक अवलोकि आपने अनघ नाम अनुमानि डरौं॥
परदुख दुखी, सुखी परसुख तें, संतसील नहिँ हृदय धरौं।
देखि आन की बिपति परम सुख, सुनि संपति बिनु आगि जरौं॥
भक्ति, बिराग, ज्ञान साधन कहि बहु बिधि डहँकत लोग फिरौं।
सिव-सर्वस सुखधाम नाम तव बेंचि नरकप्रद उदर भरौं॥

१३९—जई = फल का अंकुर। नातो बलि = बलि से आपने पृथ्वी दान में ली है, इससे उसकी देखभाल रखनी चाहिए। रितई = खाली की हुई, रहित की हुई। अवध = अबाध्य। सदई = सदैव।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानत हूँ निज पाप-जलधि जिय जल-सीकर सम सुनत लरौं ।
रज सम पर अवगुन सुमेरु करि, गुन-गिरि सम रज तें निदरौं ॥
नाना बेष बनाइ दिवस निसि परवित जेहि तेहि जुगुति हरौं ।
एकौ पल न कबहुँ अलोल-चित हिय दै पद-सरोज सुमिरौं ॥
जो आचरन विचारहु मेरो कलप कोटि लगि अवटि मरौं ।
तुलसिदास प्रभु-कृपा-विलोकनि गोपद ज्यों भवसिंधु तरौं ॥१४१॥

सकुचत हौं अति, राम कृपानिधि ! क्यों करि विनय सुनावौं ?
सकल धर्म-विपरीत करत, केहि भाँति नाथ मन भावौं ?॥
जानत हूँ हरि-रूप चराचर मैं हठि नयन न लावौं ।
अंजन-केस-सिखा जुवती तहँ लोचन-सलभ पठावौं ॥
स्रवनन को फल कथा तिहारी यह समुझौं समुझावौं ।
तिन्ह स्रवनन परदोष निरंतर सुनि सुनि भरि भरि तावौं ॥
जेहि रसना गुन गाइ तिहारे बिनु प्रयास सुख पावौं ।
तेहि मुख पर-अपवाद भेक ज्यों रटि रटि जनम नसावौं ॥
'करहु हृदय अति विमल बसहिँ हरि' कहि कहि सबहिँ सिखावौं ।
हौं निज उर अभिमान-मोह-मद-खलमंडली बसावौं ॥
जो तनु धरि हरिपद साधहिँ जन सो बिनु काज गँवावौं ।
हाटक घट भरि धरचो सुधा गृह तजि नभ कूप खनावौं ॥
मन-क्रम-बचन लाइ कीन्हें अघ ते करि जतन दुरावौं ।
पर-प्रेरित इरषा-बस कबहुँक कियो कछु सुभ, सो जनावौं ॥
विप्रद्रोह जनु बाँट परचो, हठि सब सों बैर बढ़ावौं ।
ताहू पर निज मति-विलास सब संतन माँझ गनावौं ॥
निगम, सेष, सारद निहोरि जौ अपने दोष कहावौं ।
तौ न सिराहिँ कलपसत लगि, प्रभु, कहा एक मुख गावौं ? ॥
जौ करनी आपनी विचारौं तौ कि सरन हौं आवौं ।
मृदुल सुभाव सील रघुपति को, सो बल मनहिँ दिखावौं ॥
तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिँ जेहि सपनेहुँ तुमहिँ रिझावौं ।
नाथकृपा भवसिंधु धेनुपद सम जिय जानि सिरावौं ॥१४२॥

१४१—अवटि = भरम कर, चक्कर खाकर ।

१४२—अंजन-केस = दीपक । तावौं = मूँदता हूँ, बंद करके यत्न से रखता हूँ । बाँट परचो = मेरे हिस्से में आया है । मति-विलास = मन की मौज से ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनहु राम रघुबीर गुसाईं! मन अनीति-रत मेरो।
चरन-सरोज बिसारि तिहारे निसि-दिन फिरत अनेरो॥
मानत नाहिँ निगम-अनुसासन, त्रास न काहू केरो।
भूल्यो सूल कर्म-कोल्हुन तिल ज्यों बहु बारनि पेरो॥
जहँ सतसंग कथा माधव की सपनेहुँ करत न फेरो।
लोभ-मोह-मद-काम-क्रोध-रत तिन सों प्रेम घनेरो॥
पर-गुन सुनत दाह, पर-दूषन सुनत हर्ष बहुतेरो।
आप पाप को नगर बसावत, सहि न सकत पर खेरो॥
साधन-फल, स्रुति-सार नाम तव, भव-सरिता कहँ बेरो।
सो पर-कर-काँकिनी लागि सठ बेंचि होत हठि चेरो॥
कबहुँक हौं संगति-प्रभाव तें जाउँ सुमारग नेरो।
तब करि क्रोध संग कुमनोरथ देत कठिन भट-भेरो॥
इक हौं दीन मलीन हीनमति बिपति-जाल अति घेरो।
तापर सहि न जात करुनानिधि मन को दुसह दरेरो॥
हारि परचो करि जतन बहुत बिधि, तातें कहत सबेरो।
तुलसिदास यह त्रास मिटै जब हृदय करहु तुम डेरो॥१४३॥

सो धौं को जो नाम-लाज तें नहिँ राख्यो रघुबीर ?
कारुनीक बिनु कारन ही हरि, हरी सकल भवभीर॥
बेद-बिदित जग-बिदित अजामिल बिप्रबंधु अघ-धाम।
घोर जमालय जात निवारचो सुत-हित सुमिरत नाम॥
पसु पाँवर अभिमान-सिंधु गज ग्रस्यो आइ जब ग्राह।
सुमिरत सकृत सपदि आए प्रभु हरचो दुसह उर-दाह॥
ब्याध, निषाद, गीध, गनिकादिक अगनित अवगुन-मूल।
नाम ओट तें राम सबनि की दूरि करी सब सूल॥
केहि आचरन घाटि हौं तिन्ह तें, रघुकुलभूषन भूप!
सीदत तुलसिदास निसि-बासर परचो भीम तमकूप॥१४४॥

कृपासिंधु! जन दीन दुवारे दादि न पावत काहे?।
जब जहँ तुमहिँ पुकारत आरत तब तिन्हके दुख दाहे॥
गज, प्रहलाद, पांडुसुत, कपि सब के रिपु-संकट मेटचो।
प्रनत बंधुभय-बिकल बिभीषन उठि सो भरत ज्यों भेंटचो॥

१४३—अनेरो = व्यर्थ। खेरो = खेड़ा, गाँव। काँकिनी = कौड़ी।
१४४—बिप्रबंधु = नीच ब्राह्मण।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तुम्हरो लै नाम ग्राम इक उर आपने बसावौं।
भजन, बिबेक बिराग लोग भले करम करम करि ल्यावौं ॥
सुनि रिस भरे कुटिल कामादिक करहिं जोर बरिआईं।
तिन्हहिं उजारि नारि, अरि, धन, पुर राखहिं राम गुसाईं ॥
सम, सेवा, छल, दान, दंड हौं रचि उपाय पचि हारयो।
बिनु कारन के कलह बड़ो दुख, प्रभु सों प्रगटि पुकारयो ॥
सुर स्वारथी अनीस, अलायक, निठुर, दया चित नाहीं।
जाउँ कहाँ, को बिपति-निवारक, भव-तारक जग माहीं ? ॥
तुलसी जदपि पोच तउ तुम्हरो, और न काहू केरो।
दीजै भगति बाँह बैरक ज्यों, सुबस बसै अब खेरो ॥१४५॥

हौं सब बिधि राम रावरो चाहत भयो चेरो।
ठौर ठौर साहिबी होति है ख्याल कालकलि केरो ॥
काल कर्म इंद्रिय-विषय गाहकगन घेरो।
हौं न कबूलत बाँधि कै मोल करत करेरो।
बंदि-छोर तेरो नाम है, बिरुदैत बड़ेरो।
मैं कह्यों तब छल-प्रीति कै माँगै उर डेरो ॥
नाम-ओट अब लगि बच्यो मलजुग जग जेरो।
अब गरीब जन पोषिए, पायबो न हेरो ॥
जेहि कौतुक बक, स्वान को प्रभु न्याव निबेरो।
तेहि कौतुक कहिए कृपालु तुलसी है मेरो ॥१४६॥

कृपासिंधु ताते रहौं निसि दिन मन-मारे।
महाराज लाज आपुही निज जाँघ उघारे ॥
मिले रहैं, मारयो चहैं कामादि सँघाती।
मो बिनु रहैं न, मेरियै जारैं छल छाती ॥
बसत हिए हित जानि मैं सबकी रुचि पाली।
कियो कथिक को दंड हौं जड़ कर्म कुचाली ॥

१४५—करम करम करि = क्रम क्रम से, धीरे धीरे। अनीस = अच्छे स्वामी नहीं। अलायक = (हिं० अ + फा० लायक) अयोग्य। बैरक = (अरबी) झंडा, पताका।

१४६—मलजुग = कलियुग। जेरो = जेर किया है; वशीभूत किया है, जीत लिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखी सुनी न आजु लौं अपनायत ऐसी ।
करहिँ सबै, सिर मेरे ही फिरि परै अनैसी ।।
बड़े अलेखी लखि परैं, परिहरे न जाहीं ।
असमंजस में मगन हौं, लीजै गहि बाहीं ।।
बारक बलि अवलोकिए कौतुक जन जी को ।
अनायास मिटि जाइगो संकट तुलसी को ।।१४७।।

कहौं कौन मुँह लाइ कै, रघुबीर गुसाईं ।
सकुचत समुझत आपनी सब, साइँ दोहाई !।।
सेवत बस, सुमिरत सखा, सरनागत सौँ हौं ।
गुनगन सीतानाथ के चित करत न हौं हौ ।।
कृपासिंधु, बंधु दीन के, आरत-हितकारी ।
प्रनतपाल बिरुदावली सुनि जानि बिसारी ।।
सेइ न धेइ न सुमिरि कै पदप्रीति सुधारी ।
पाइ सुसाहिब राम-सो भरि पेट बिगारी ।।
नाथ गरीबनिवाज हैं, मैं गही न गरीबी ।
तुलसी प्रभु निज ओर तेँ बनि परै सो कीबी ।।१४८।।

कहाँ जाउँ, कासों कहौं और ठौर न मेरो ?
जनम गँवायो तेरेहि द्वार, मैं किंकर तेरो ।।
मैं तो बिगारी नाथ सों आरति के लीन्हें ।
तोहिँ कृपानिधि क्यों बनै मेरी सी कीन्हें ?।।
दिन दुरदिन, दिन दुरदसा, दिन दुख, दिन दूषन ।
जब लौं तू न बिलोकिहै रघुबंस-बिभूषन ।।
दई पीठ बिनु डीठ मैं, तुम बिस्व-बिलोचन ।
तो-सो तुही न दूसरो नत-सोच-बिमोचन ।।
पराधीन देव, दीन हौं, स्वाधीन गुसाईं ।
बोलनिहारे सोँ करै, बलि, बिनय की झाईं ।।
आपु देखि मोहिँ देखिये जन मानिय साँचो ।
बड़ी ओट राम-नाम की जेहि लई सो बाँचो ।।

१४७—अलेखी = बेढब, अन्यायी ।
१४८—आपनी = अपनी करनी । धेइ=ध्याइ, ध्यान करके ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहनि रीति राम रावरी नित हिय हुलसी है।
ज्यों भावै त्यों करु कृपा तेरो तुलसी है ॥१४९॥

रामभद्र मोहिँ आपनो सोच है अरु नाहीं।
जीव सकल संताप के भाजन जग माहीं ॥
नातो बड़े समर्थ सों एक ओर किधौं हूँ।
तोको मोसे अति घने, मोको एकै तूँ ॥
बड़ी गलानि हिय हानि है, सर्बज्ञ गुसाईं !
कूर कुसेवक कहत हौं सेवक की नाईं ॥
भलो पोच राम को कहैं मोहिँ सब नर नारी।
बिगरे सेवक, स्वान ज्यों साहिब-सिर गारी ॥
असमंजस मन को मिटै, सो उपाय न सूझै।
दीनबंधु, कीजै सोई बनि परै जो बूझै ॥
बिरुदावली बिलोकिए तिन्ह में कोउ हौं हौं।
तुलसी प्रभु को परिहरचो सरनागत सो हौं ॥१५०॥

जो पै चेराई राम की करतो न लजातो।
तौ तू दाम कुदाम ज्यों कर-कर न बिकातो ॥
जपत जीह रघुनाथ को नाम नहिँ अलसातो।
बाजीगर के सूम ज्यों, खल ! खेह न खातो ॥
जौ तू मन, मेरे कहे राम-नाम कमातो।
सीतापति-सनमुख सुखी सब ठाँव समातो ॥
राम सोहाते तोहिँ जौं, तू सबहिँ सोहातो।
काल करम कुल कारनी कोऊ न कोहातो ॥
राम-नाम-अनुराग ही जिय जो रतिआतो।
स्वारथ-परमारथ-पथी तोहिँ सब पतिआतो ॥
सेइ साधु, सुनि समुझि कै पर-पीर पिरातो।
जनम कोटि को कँदैलो हृद-हृदय थिरातो ॥
भव-मग अगम अनंत है बिनु स्रमहिँ सिरातो।
महिमा उलटे नाम की मुनि कियो किरातो ॥

१४९—बोलनिहारा = बोलता शुद्ध आतमा, चैतन्य। झाईं = **प्रतिबिंब-स्वरूप जीव।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमर अगम तनु पाइ सो जड़ जाय न जातो ।
होतो मंगलमूल तू, अनुकूल विधातो ।।
जो मन प्रीति प्रतीति सों राम नामहिँ रातो ।
तुलसी रामप्रसाद सों तिहुँताप न तातो ।।१५१।।

राम भलाई आपनी भल कियो न काको ?
जुग जुग जानकि-नाथ को जग जागत साको ।।
ब्रह्मादिक विनती करी कहि दुख वसुधा को ।
रविकुल-कैरव-चंद भो आनंद सुधा को ।।
कौसिक गरत तुषार ज्यों तकि तेज तिया को ।
प्रभु अनहित-हित को दियो फल कोप-कृपा को ।।
हर्यो पाप आप जाइकै संताप सिला को ।
सोच-मगन काढ़्यो सही साहिब मिथिला को ।।
रोषरासि भृगुपति धनी अहमिति-ममता को ।
चितवत भाजन करि लियो उपसम-समता को ।।
मुदित मानि आयसु चले वन मातु पिता को ।
धरम-धुरंधर धीरधुर गुन-सील जिता को ?।।
गुह गरीब गत-ज्ञाति हूँ जेहि जिउ न भखा को ?।
पायो पावन प्रेम तेँ सनमान सखा को ।।
सदगति सबरी गिद्ध की सादर करता को ।
सोच-सीँव सुग्रीव के संकट हरता को ।।
राखि बिभीषन को सकै अस काल-गहा को ।
आज विराजत राज है दसकंठ जहाँ को ।।
बालिस बासी अवध को बूझिए न खाको ।
सो पाँवर पहुँचो तहाँ जहँ मुनि मन थाको ।।
गति न लहै रामनाम सों विधि सो सिरिजा को ?
सुमिरत कहत प्रचारि कै बल्लभ गिरिजा को ।।
अकनि अजामिल की कथा सानंद न भा को ?
नाम लेत कलिकाल हूँ हरिपुरहिँ न गा को ?।।

१५१—कुल कारनी = सब के कारण । रतिआतो = प्रीति करता । ह्रद = ताल । कंदैलो = कीचड़वाला । जाय = व्यर्थ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामनाम-महिमा करै काम-भूरुह आको।
साखी बेद पुरान हैं तुलसी तन ताको ॥१५२॥

मेरे रावरियै गति है रघुपति बलि जाउँ।
निलज, नीच, निरधन, निरगुन कहँ जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ ॥
हैं घर घर बहु भरे सुसाहिब, सूझत सबनि आपनो दाउँ।
बानर-बंधु, बिभीषन-हित बिनु कोसलपाल कहूँ न समाउँ ॥
प्रनतारति-भंजन जनरंजन सरनागत पबि-पंजर नाउँ।
कीजै दास दास तुलसी अब कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउँ ॥१५३॥

देव! दूसरो कौन दीन को दयालु?
सील-निधान, सुजान-सिरोमनि, सरनागत-प्रिय, प्रनत-पालु ॥
को समर्थ सर्बज्ञ सकल प्रभु सिव-सनेह-मानस-मरालु?।
को साहिब किए मीत प्रीतिबस खग, निसिचर, कपि, भील, भालु?॥
नाथ-हाथ माया-प्रपंच सब जीव-दोष-गुन-करम-कालु।
तुलसिदास भलो पोच रावरो, नेकु निरखि कीजै निहालु ॥१५४॥

राग सारंग

बिस्वास एक राम नाम को।
मानत नहिँ परतीति अनत, ऐसोइ सुभाव मन बाम को ॥
पढ़िबो परयो न छठी छ मत, रिगु, जजुर, अथर्बन, साम को।
ब्रत, तीरथ, तप सुनि सहमत, पचि मरै करै तन छाम को?॥
करमजाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित दाम को।
ज्ञान, बिराग, जोग, जप, तप, भय, लोभ, मोह, कोह, काम को ॥
सब दिन सब लायक भयो गायक रघुनायक-गुन-ग्राम को।
बैठे नाम-कामतरु तर डर कौन घोर घन-घाम को?॥
को जानै को जैहै जमपुर, को सुरपुर परधाम को।
तुलसिहिँ बहुत भलो लागत जग जीवन रामगुलाम को ॥१५५॥

१५२—जागत साको = साका जगता है, कीर्ति चली आती है। तिया = ताड़का। काल-गहा = कालग्रस्त। बालिस = मूर्ख। कामभूरुह = कल्पवृक्ष। आको = आक या मदार भी।

१५३—पबि-पंजर = रक्षा के लिए वज्र का पिँजरा।

१५५—छठी न परयो = भाग्य में न लिखा गया। मत = शास्त्र। दाम = धन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलि नाम कामतरु राम को।
दलनिहार दारिद, दुकाल, दुख, दोष, घोर घन, घाम को॥
नाम लेत दाहिनो होत मन वाम विधाता वाम को।
कहत मुनीस, महेस महातम उलटे सूधे नाम को॥
भलो लोक परलोक तासु जाके बल ललित-ललाम को।
तुलसी जग जानियत नाम तें सोच न कूच, मुकाम को॥१५६॥

सेइए सुसाहिब राम सो।
सुखद, सुसील, सुजान, सूर, सुचि, सुंदर कोटिक काम सो॥
सारद, सेस, साधु महिमा कहैं, गुनगन-गायक साम सो।
सुमिरि सप्रेम नाम जासों रति चाहत चंद्र-ललाम सो॥
गमन विदेस न लेस कलेस को, सकुचत सकृत प्रनाम सो।
साखी ताको बिदित बिभीषन बैठो है अविचल धाम सो॥
टहल सहज जन महल महल जागत चारो जुग जाम सो।
देखत दोष न खीझत, रीझत सुनि सेवक-गुनग्राम सो॥
जाके भजे तिलोक-तिलक भए त्रिजग-जोनि तनु तामसो।
तुलसी ऐसे प्रभुहिं भजै जो न, ताहि विधाता वाम सो॥१५७॥

राग नट

कैसे देउँ नाथहिं खोरि ?
काम-लोलुप भ्रमत मन हरि, भगति परिहरि तोरि॥
बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि।
देत सिख, सिखयो न मानत, मूढ़ता असि मोरि॥
किए सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि।
संग बस किए सुभ सुनाए सकल लोक निहोरि॥
करौं जो कछु धरौं सचि पचि सुकृत-सिला बटोरि।
पैठि उर बरबस दयानिधि दंभ लेत अँजोरि॥
लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों गरे आसा-डोरि।
बात कहौं बनाइ बुध ज्यों बर बिराग निचोरि॥
एतेहुँ पर तुम्हरो कहावत लाज अँचई घोरि।
निलजता पर रीझि रघुबर देहु तुलसिहिं छोरि॥१५८॥

१५६—ललित-ललाम = सुन्दर राम नाम।
१५७—तनु तामसो = तामस शरीर वाले (राक्षस) भी।
१५८—अँजोरि लेत = खोज लेता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है प्रभु मेरोई सब दोसु ।
सीलसिंधु, कृपालु, नाथ, अनाथ-आरत पोसु ।।
बेष, बचन, बिराग, मन, अघ-अवगुननि को कोसु ।
राम-प्रीति-प्रतीति पोली, कपट करतब ठोसु ।।
राग रंग कुसंग ही सों, साधु-संगति रोसु ।
चहत केहरि-जसहिँ सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु ।।
संभु-सिखवन रसन हूँ नित रामनामहिँ घोसु ।
दंभ हूँ कलि नाम-कुंभज सोच-सागर-सोसु ।।
मोद-मंगल-मूल अति अनुकूल निज निरजोसु ।
रामनाम-प्रभाव सुनि तुलसिहुँ परम संतोसु ।।१५९।।

मैं हरि पतितपावन सुने ।
मैं पतित, तुम पतितपावन, दोउ बानक बने ।।
ब्याध, गनिका, गज, अजामिल साखि निगमनि भने ।
और अधम अनेक तारे, जात कापै गने ?।।
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक जमपुर मने ।
दास तुलसी सरन आयो राखिए आपने ।।१६०।।

राग मलार

तोसो प्रभु जो पै कहुँ कोई होतो ।
तौ सहि निपट निरादर निसि-दिन रटि लटि ऐसो घटि को तो ।।
कृपासुधा जलदान माँगिबो कहौं सो साँच निसोतो ।
स्वाति-सनेह-सलिल सुख चाहत चित-चातक को पोतो ।।
काल-करम-बस मन कुमनोरथ कबहुँ कबहुँ कछु भो तो ।
ज्यों मुदमय बसि मीन बारि तजि उछरि भभरि लेत गोतो ।।
जितो दुराउ दास तुलसी उर क्यों कहि आवत ओतो ।
तेरे राज राय दसरथ के लयो बयो बिनु जोतो ।।१६१।।

राग सोरठ

ऐसो को उदार जग माहीं ?
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ।।

१५९—निरजोसु = निश्चय ।
१६०—मने=वर्जित हुआ, ले जाना मना किया गया ।
१६१—को तो = कौन था ? निसोतो = खरा । पोतो = बच्चा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो गति जोग विराग जतन करि नहिँ पावत मुनि ज्ञानी।
सो गति देत गीध सवरी कहँ प्रभु न बहुत जिय जानी॥
जो संपति दससीस अरपि करि रावन सिव पहँ लीन्हीं।
सो संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच सहित हरि दीन्हीं॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम काम सब पूरन करैं कृपानिधि तेरो॥१६२॥

एकै दानि-सिरोमनि साँचो।
जोइ जाँच्यो सोइ जाचकता-बस फिरि बहु नाच न नाच्यो॥
सब स्वारथी असुर, सुर, नर, मुनि, कोउ न देत बिनु पाए।
कोसलपाल कृपालु कलपतरु द्रवत सकृत सिर नाए॥
हरिहु और अवतार आपने राखी बेद-बड़ाई।
लै चिउरा निधि दई सुदामहिँ जद्यपि बाल मिताई॥
कपि, सबरी, सुग्रीव, बिभीषन को नहिँ कियो अजाची।
अब तुलसिहिँ दुख देति दयानिधि! दारुन आस-पिसाची॥१६३॥

जानत प्रीति रीति रघुराई।
नाते सब हाते करि राखत राम-सनेह-सगाई॥
नेह निबाहि देह तजि दसरथ कीरति अचल चलाई।
ऐसेहुँ पितु तेँ अधिक गीध पर ममता गुन गरुआई॥
तिय-बिरही सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई।
रन परचो बंधु, बिभीषन ही को सोच हृदय अधिकाई॥
घर, गुरुगृह, प्रियसदन, सासुरे भइ जब जहँ पहुनाई।
तब तहँ कहि सबरी के फलनि की रुचि माधुरी न पाई॥
सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुचि सिर नाई।
केवट-मीत कहे सुख मानत, बानर बंधु-बड़ाई॥
प्रेम-कनौड़ो राम सो प्रभु त्रिभुवन, तिहुँ काल न भाई।
'तेरो रिनी' कह्यो हौँ कपीस सों, ऐसी मानिहि को सेवकाई॥
तुलसी राम सनेह सील लखि जो न भगति उर आई।
तौ तोहिँ जनमि जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गँवाई॥१६४॥

१६४——हाते करि राखत = अलग रखते हैं, दूर करते हैं। जनमि = जनमा कर, जन कर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रघुवर ! रावरि यहै बड़ाई ।
निदरि गनी, ग्रादर गरीव पर करत कृपा ग्रधिकाई ।।
थके देव साधन करि सव, सपनेहुँ नहिँ देत दिखाई ।
केवट कुटिल भालु कपि कौनप कियो सकल सँग भाई ।।
मिलि मुनिबृंद फिरत दंडकवन, सो चरचौ न चलाई ।
वारहि बार गीध, सबरी की वरनत प्रीति सुहाई ।।
स्वान कहे तेँ कियो पुर वाहिर जती गयंद चढ़ाई ।
तिय-निदक मतिमंद प्रजा रज निज नय नगर बसाई ।।
यहि दरवार दीन को ग्रादर, रीति सदा चलि ग्राई ।
दीनदयालु दीन तुलसी की काहु न सुरति कराई ।।१६५।।

ऐसे राम दीनहितकारी ।
ग्रति कोमल करुनानिधान बिनु कारन पर-उपकारी ।।
साधनहीन दीन निज ग्रघवस सिला भई मुनि-नारी ।
गृह तेँ गवनि परसि पद पावन घोर साप तेँ तारी ।।
हिसारत निषाद तामस बपु पसु समान बनचारी ।
भेंटचो-हृदय लगाइ प्रेमबस नहिँ कुल जाति बिचारी ।।
जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत कहि न जाइ ग्रति भारी ।
सकल लोक ग्रवलोकि सोक-हत सरन गए भय टारी ।।
बिहँगजोनि ग्रामिष ग्रहार-पर गीध कौन व्रतधारी ।
जनक समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँति सँवारी ।।
ग्रधम जाति सबरी जोषित जड़ लोक-बेद तें न्यारी ।
जानि प्रीति दै दरस कृपानिधि सोउ रघुनाथ उधारी ।।
कपि सुग्रीव बंधुभय-ब्याकुल ग्रायो सरन पुकारी ।
सहि न सके दारुन दुख जन के हत्यो वालि सहि गारी ।।
रिपु को ग्रनुज बिभीषन निसिचर कौन भजन-ग्रधिकारी ।
सरन गए ग्रागे ह्वै लीन्हों भेँटचो भुजा पसारी ।।
ग्रसुभ होइ जिनके सुमिरे तेँ बानर, रीछ बिकारी ।
बेदबिदित पावन किए ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी ।।
कहँ लगि कहौँ दीन ग्रगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी ।
कलिमल-ग्रसित दास तुलसी पर काहे कृपा बिसारी ।।१६६।।

१६५—कौनप = पातकी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रघुपति ! भक्ति करत कठिनाई ।
कहत सुगम, करनी अपार, जानै सोइ जेहि बनि आई ॥
जो जेहि कला कुसल ता कहँ सोइ सुलभ, सदा सुखकारी ।
सफरी सनमुख जल-प्रवाह, सुरसरी बहै गज भारी ॥
ज्यों सर्करा मिलै सिकता महँ बल तें न कोउ बिलगावै ।
अति रसज्ञ सूछम पिपीलिका बिनु प्रयास ही पावै ॥
सकल दृस्य निज उदर मेलि सोवै निद्रा तजि जोगी ।
सोइ हरिपद अनुभवै परम सुख अतिसय द्वैत-बियोगी ॥
सोक, मोह, भय, हरष, दिवस, निसि, देस, काल तहँ नाहीं ।
तुलसिदास यहि दसाहीन संसय निर्मूल न जाहीं ॥१६७॥

जो पै रामचरन रति होती ।
तौ कत त्रिविध सूल निसि-बासर सहते बिपति निसोती ॥
जौ संतोष-सुधा निसि बासर सपनेहुँ कबहुँक पावै ।
तौ कत बिषय बिलोकि झूठ जल मन कुरंग ज्यों धावै ॥
जौ श्रीपति-महिमा बिचारि उर भजते भाव बढ़ाए ।
तौ कत द्वार द्वार कूकर ज्यों फिरते पेट खलाए ॥
जे लोलुप भए दास आस के, ते सबही के चेरे ।
प्रभु-बिस्वास आस जीती जिन्ह ते सेवक हरि केरे ॥
नहिँ एकौ आचरन भजन को बिनय करत हौं ताते ।
कीजै कृपा दासतुलसी पर, नाथ ! नाम के नाते ॥१६८॥

जौ मोहिँ राम लागते मीठे ।
तौ नवरस, षटरस रस, अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे, सुने अरु डीठे ।
यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे ॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहि बल बचन कहत अति ढीठे ।
नाम की लाज राम करुनाकर केहि न दिये करि चीठे ॥१६९॥

यों मन कबहूँ तुमहिँ न लाग्यो ।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरंतर रहत बिषय अनुराग्यो ॥

१६७—यहि दसा-हीन = इस दशा को प्राप्त हुए बिना ।
१६८—निसोती = शुद्ध, खालिस ।
१६९—उबीठे = ऊबे, मन हटा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर घर के ।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निर्मल गुनगन रघुवर के ।।
ज्यों नासा सुगंधरस-वस, रसना षटरस-रति मानी ।
रामप्रसाद-माल, जूँठनि लगि त्यों न ललकि ललचानी ।।
चंदन, चंद्रवदनि, भूषन, पट ज्यों चह पाँवर परस्यो ।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परस को तनु पातकी न तरस्यो ।।
ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर सेए वपु वचन हिए हूँ ।
त्यों न राम सुकृतज्ञ, जे सकुचत सकृत प्रनाम किए हूँ ।।
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप द्वार द्वार जग बागे ।
रामसीय-आस्रमनि चलत त्यों भए न श्रमित अभागे ।।
सकल अंग पद-विमुख नाथ, मुख नाम की ओट लई है ।
है तुलसिहिँ परतीति एक प्रभु-मूरति कृपामई है ।।१७०।।

कीजै मोको जमजातनामई ।
राम तुम से सुचि सुहृद साहिवहिँ मैं सठ पीठि दई ।।
गरभवास दस मास पालि पितुमातुरूप हित कीन्हों ।
जड़हिँ विवेक, सुसील खलहिँ, अपराधिहिँ आदर दीन्हों ।।
कपट करौं अंतरजामिहुँ सों, अघ व्यापकहिँ दुरावौं ।
ऐसेहु कुमति कुसेवक पर रघुपति न कियो मन बावौं ।।
उदर भरौं किंकर कहाइ, बेंच्यो विषयनि हाथ हियो है ।
मोसे बंचक को कृपालु छल छाँड़ि कै छोह कियो है ।।
पल पल के उपकार रावरे जानि बूझि सुनि नीके ।
भिद्यो न कुलिसहु तेँ कठोर चित कबहुँ प्रेम सिय-पी के ।।
स्वामी की सेवक-हितता सब, कछु निज साँइ-द्रोहाई ।
मैं मति-तुला तौलि देखी भइ मेरिहि दिसि गरुआई ।।
एतेहु पर हित करत नाथ मेरो, करि आयो अरु करिहैं ।
तुलसी अपनी ओर जानियत प्रभुहि कनौड़ो भरिहैं ।।१७१।।

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो ।
श्री रघुनाथ-कृपालु-कृपा तेँ संत सुभाव गहौंगो ।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो ।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम वचन नेम निवहौंगो ।।

१७१—साँइ द्रोहाई = स्वामी के विरुद्ध आचरण ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परुषवचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो ।
विगत मान, सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो ॥
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिचल हरिभक्ति लहौंगो ॥१७२॥

नाहिँन आवत आन भरोसो ।
यहि कलिकाल सकल साधनतरु है स्रम-फलनि फरो सो ॥
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख जेहि जो रुचै करो सो ।
पाएहि पै जानिबो करम-फल, भरि भरि बेद परोसो ॥
आगम-बिधि, जप, जाग करत नर सरत न काज खरो सो ।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि-साधन, रोग बियोग धरो सो ॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह मिलि ज्ञान, बिराग हरो सो ।
बिगरत मन संन्यास लेत जल नावत आम घरो सो ॥
बहु मत सुनि बहु पंथ पुराननि जहाँ तहाँ झगरो सो ।
गुरु कह्यो रामभजन नीको मोहिं लगत राज-डगरो सो ॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरो सो ।
रामनाम-बोहित भव-सागर, चाहै तरन तरो सो ॥१७३॥

जाके प्रिय न राम बैदेही ।
सो छाँड़िए कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही ॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज-बनितनि, भए मुदमंगलकारी ॥
नाते नेह राम के मनियत सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूज्य प्रान तें प्यारो ।
जासों होय सनेह रामपद; एतो मतो हमारो ॥१७४॥

जो पै रहनि राम सों नाहीं ।
तौ नर खर कूकर सूकर से जाय जियत जग माहीं ॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, नींद, भय, भूख, प्यास सबही के ।
मनुज देह सुर साधु सराहत सो सनेह सिय-पी के ॥
सूर, सुजान, सपूत, सुलच्छन गनियत गुन गरुआई ।

१७३—आम घरो = कच्चा घड़ा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिनु हरिभजन इँनारुन के फल, तजत नहीं करुआई ।।
कीरति, कुल, करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने ।
तुलसी प्रभु-अनुराग-रहित जस सालन साग अलोने ।।१७५।।

राख्यो राम सुस्वामी सों नीच नेह न नातो ।
एते अनादर हूँ तोहि तें न हातो ।।
जोरे नए नाते नेह फोकट फीके ।
देह के दाहक, सब गाहक जी के ।।
अपने आपने को सब चाहत नीको ।
मूल दुहूँ को दयालु दूलह सी को ।।
जीव को जीवन, प्रान को प्यारो ।
सुखहू को सुख राम सो, बिसारो ।।
कियो, करैगो तोसे खल को भलो ।
ऐसे सुसाहिब सों तू कुचाल क्यों चलो ।।
तुलसी तेरी भलाई अजहूँ बूझै ।
राढ़उ राउत होत फिरि कै जूझै ।।१७६।।

जौ तुम त्यागो राम हौं तो नहिं त्यागों ।
परिहरि पाँय काहि अनुरागों ।।
सुखद सुप्रभु तुमसो जग माहीं ।
स्रवन-नयन-मन-गोचर नाहीं ।।
हौं जड़ जीव, ईस रघुराया ।
तुम मायापति, हौं बस माया ।।
हौं तो कुजाचक, स्वामि सुदाता ।
हौं कुपूत, तुमहीं पितु माता ।।
जौ पै कहुँ कोउ बूझत बातो ।
तौ तुलसी बिनु मोल बिकातो ।।१७७।।

भए हूँ उदास राम, मेरे आस रावरी ।
आरत स्वारथी सब कहैं बात बावरी ।।
जीवन को दानी घन कहा ताहि चाहिए ।
प्रेम-नेम के निबाहे चातक सराहिए ।।

१७६—हातो = अलग, दूर । फोकट = व्यर्थ । राढ़उ = कायर भी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीन तें न लाभ-लेस पानी पुन्य-पीन को ?
जल विनु थल कहा मीच-विनु मीन को ?
बड़े ही की ओट, बलि, बाँचि आए छोटे हैं ।
चलत खरे के संग जहाँ तहाँ खोटे हैं ॥
यहि दरबार भलो दाहिनेहु-वाम को ।
मोको सुभदायक भरोसो रामनाम को ॥
कहत नसानी ह्वैहै हिये नाथ नीकी है ।
जानत कृपानिधान तुलसी के जी की है ॥१७८॥

राग बिलावल

कहाँ जाउँ ? कासों कहौं ? को सुनै दीन की ?
त्रिभुवन तुहीं गति सव अंगहीन की ॥
जग जगदीस घर घरनि घनेरे हैं ।
निराधार को अधार गुनगन तेरे हैं ॥
गजराज-काज खगराज तजि धायो को ।
मोसे दोस-कोस पोसे, तोसे माय जायो को ॥
मोसे कूर कायर कुपूत कौड़ी आध के ।
किए वहुमोल तैं करैया गीधस्राध के ॥
तुलसी की तेरे ही बनाए, बलि, वनैगी ।
प्रभु की विलंब-अंब दोष-दुख जनैगी ॥१७९॥

वारक विलोकि वलि कीजै मोहि आपनो ।
राय दसरथ के तू उथपन-थापनो ॥
साहिव सरनपाल सवल न दूसरो ।
तेरो नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो ॥
बचन करम तेरे मेरे मन गड़े हैं ।
देखे सुने जाने मैं जहान जेते वड़े हैं ॥
कौने कियो समाधान सनमान सीला को ?।
भृगुनाथ सो रिषी जितैया कौन लीला को ?॥
मातु-पितु-बंधु-हित, लोक-बेदपाल को ?।
वोल को अचल, नत करत निहाल को ?॥
संग्रही सनेहवस अधम असाधु को ?।
गीध, सबरी को, कहो, करिहै सराध को ?॥
निराधार को अधार, दीन को दयालु को ?।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीत कपि केवट, रजनिचर भालु को ।।
रंक निरगुनी नीच जितने निवाजे हैं ।
महाराज सुजन - समाज ते बिराजे हैं ।।
साँची विरुदावली न वढ़ि कहि गई है ।
सीलसिंधु, ढील तुलसी की वार भई है ।।१८०।।

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिए ।
मोको और ठौर न, सुटेक एक तेरिए ।।
सहस सिला तें अति जड़ मति भई है ।
कासों कहौं, कौने गति पाहनहिँ दई है ?।।
पद-राग-जाग चहौं, कौसिक ज्यों कियो, हौं ।
कलिमल खल देखि भारी भीति भियो हौं ।।
करम-कपीस वालि वली त्रास त्रस्यो हौं ।
चाहत अनाथ-नाथ, तेरी बाँह वस्यो हौं ।।
महामोह-रावन विभीषन ज्यों हयो हौं ।
त्राहि तुलसीस ! त्राहि, तिहुँ ताप तयो हौं ।।१८१।।

नाथ-गुनगाथ सुनि होत चित चाउ सो ।
राम रीझिबे को जानो भगति न भाउ सो ।।
करम सुभाव काल ठाकुर न ठाँउ सो ।
सुधन न, सुतन न, सुमन सुआउ सो ।।
जाँचों जल जाहि, कहै अमिय पिआउ सो ।
कासों कहौं काहू सों न वढ़त हिआउ सो ।।
वाप, वलि जाउँ आपु करिए उपाय सो ।
तेरेहि निहारे परै हारेउ सुदाउँ सो ।।
तेरेहि सुझाए सूझै असुझ सुझाउ सो ।
तेरे ही बुझाए बूझै अबुझ बुझाउ सो ।।
नाम-अवलंव-अंबु दीन मीन-राउ सो ।
प्रभु सों वनाइ कहौं जीह जरि जाउ सो ।।
सव भाँति विगरी है एक सुवनाउ सो ।
तुलसी सुसाहिवहिँ दियो है जनाउ सो ।।१८२।।

१८१—पद-राग-जाग = चरणों में स्नेहरूपी यज्ञ । भियो हौं = डरा हूँ ।
१८२—सुआउ = दीर्घायु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राग आसावरी

राम, प्रीति की रीति आप नीके जनियत है।
बड़े की बड़ाई, छोटे की छोटाई दूरि करै
ऐसी बिरुदावलि बलि बेद मनियत है॥
गीध को कियो सराध, भीलिनी को खायो फल
सोऊ साधु-सभा भली भाँति मनियत है।
रावरे आदरे लोक बेद हूँ आदरियत
जोग ज्ञान हू तें गरुआई गनियत है॥
प्रभु की कृपा कृपालु कठिन कलिहूँ काल
महिमा समुझि उरमाहि अनियत है।
तुलसी पराये बस भये रस अनरस,
दीनबंधु - द्वारे हरि, हठ ठनियत है॥१८३॥

रामनाम के जपे पै जाइ जिय की जरनि।
कलिकाल अपर उपाय ते अपाय भए
जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि॥
करम-कलाप, परिताप, पाप साने सब
ज्यों सुफूल फूलै तरु फोकट फरनि।
दंभ, लोभ, लालच उपासना बिनासि नीके
सुगति साधन भई उदर भरनि॥
जोग न समाधि निरुपाधि न बिराग, ज्ञान
बचन बिसेष बेष, कहूँ न करनि।
कपट कुपथ कोटि, कहनि रहनि खोटि
सकल सराहैं निज निज आचरनि॥
मरत महेस उपदेस हैं कहा करत
सुरसरि-तीर कासी धरम-धरनि।
रामनाम को प्रताप हर कहैं, जपैं आपु,
जुग जुग जाने जग बेदहूँ बरनि॥
मति रामनाम ही सों, रति रामनाम ही सों,
गति रामनाम ही की बिपति - हरनि।
रामनाम सों प्रतीति प्रीति राखे कबहुँक
तुलसी ढरेंगे राम आपनी ढरनि॥१८४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाज न आवत दास कहावत।
सो आचरन बिसारि सोच तजि जो हरि तुम कहँ भावत॥
सकल संग तजि भजत जाहि मुनि जप तप जाग बनावत।
मो सम मंद महा खल पाँवर कौन जतन तेहि पावत?॥
हरि निर्मल, मल-ग्रसित हृदय, असमंजस मोहिं जनावत।
जेहि सर काक, कंक, बक, सूकर क्यों मराल तहँ आवत॥
जाकी सरन जाइ कोबिद दारुन त्रयताप बुझावत।
तहूँ गए मद, मोह, लोभ अति सरगहुँ मिटति न सावत॥
भव-सरिता कहँ नाव संत यह कहि औरनि समुझावत।
हौं तिन सों करि परम बैर हरि, तुम सों भलो मनावत॥
नाहिंन और ठहर मो कहँ तातें हठि नातो लावत।
राखु सरन उदार-चूड़ामनि तुलसिदास गुन गावत॥१८५॥

कौन जतन बिनती करिए।
निज आचरन बिचारि हारि हिय मानि जानि डरिए॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन सो हठि परिहरिए।
जातें बिपति-जाल निसि-दिन दुख तेहि पथ अनुसरिए॥
जानत हूँ मन बचन कर्म पर-हित कीन्हें तरिए।
सो बिपरीत देखि परसुख बिनु कारन ही जरिए॥
स्रुति पुरान सब को मत यह, सतसंग सुदृढ़ धरिए।
निज अभिमान-मोह-ईर्षा-बस तिनहिं न आदरिए॥
संतत सोइ प्रिय मोहिं सदा जातें भव-निधि परिए।
कहो अब नाथ! कौन बल तें संसार-सोक हरिए॥
जब कब निज करुना सुभाव तें द्रवहु तो निस्तरिए।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिए॥१८६॥

ताहि तें आयो सरन सबेरे।
ज्ञान-बिराग-भगति साधन कछु सपनेहु नाथ न मेरे॥
लोभ, मोह, मद, काम, क्रोध रिपु फिरत रैन दिन घेरे।
तिनहिं मिले मन भयो कुपथ-रत फिरै तिहारेहि फेरे॥
दोष-निलय यह बिषय सोकप्रद कहत संत स्रुति टेरे।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति सो हरि, तुम्हरेहि प्रेरे॥

१८५—सावत = सवति भाव, डाह, ईर्ष्या।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिष पियूष सम करहु, अगिन हिम, तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम सम ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हेरे॥
यह जिय जानि रहौं सब तजि रघुबीर भरोसे तेरे।
तुलसिदास यह बिपति-बाँगुरो तुमहि सों बनै निबेरे॥१८७॥

मैं तोहिं अब जान्यों, संसार !
बाँधि न सकहि मोहिं हरि के बल प्रगट कपट-आगार॥
देखत ही कमनीय, कछू नाहिन पुनि किए बिचार।
ज्यों कदलीतरु मध्य निहारत कबहुँ न निकसत सार॥
तेरे लिये जनम अनेक मैं फिरत न पायों पार।
महामोह-मृगजल-सरिता महँ बोरचो हौं बारहिं बार॥
सुनु खल, छल बल कोटि किए बस होहिं न भगत उदार।
सहित सहाय तहाँ बसि अब जेहि हृदय न नंदकुमार॥
तासों करहु चातुरी जो नहिं जानै मरम तुम्हार।
सो परि डरै मरै रजु अहि तें बूझै नहिं ब्यवहार॥
निज हित सुनु सठ ! हठ न करहि जो चहहि कुसल परिवार।
तुलसिदास प्रभु के दासन तजि भजहि जहाँ मद-मार॥१८८॥

राग गौरी

राम कहत चलु, राम कहत चलु, राम कहत चलु, भाई रे।
नाहिं तौ भव बेगारि महँ परिहौ छूटत अति कठिनाई रे॥
बाँस पुरान, साज सब अटखट, सरल तिकोन खटोला रे।
हमहिं दिहल करि कुटिल करमचंद मंद मोल बिनु डोला रे !॥
बिषम कहार मार-मदमाते चलहिं न पाउँ बटोरा रे !
मंद बिलंद अभेरा दलकन पाइय दुख झकझोरा रे !॥
काँट कुराँय लपेटन लोटन ठाँवहिं ठाँउँ बझाऊ रे !
जस जस चलिय दूरि तस तस निज बास न भेंट लगाऊ रे !॥
मारग अगम, संग नहिं संबल, नाउँ गाउँ कर भूला रे !
तुलसिदास भवत्रास हरहु अब, होहु राम अनुकूला रे ! ॥१८९॥

१८७—बाँगुरो = जाल।

१८९—अटखट = गड़बड़। सरल = सड़ा हुआ। दिहल = दिया। मंद = नीचा। बिलंद = ऊँचा। अभेरा = धक्का। दलकन = झटका। कुराँय = कंकड़ी। लपेटन = पैरों में लिपटनेवाला तृण। लोटन = सरीसृप, साँप। बझाऊ = बझाव, उलझन।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सहज सनेही राम सों तैं कियो न सहज सनेह।
तातेँ भव-भाजन भयो, सुनु अजहुँ सिखावन एह॥
ज्यौँ मुख मुकुर विलोकिए अरु चित न रहै अनुहारि।
त्यों सेवतहुँ न आपने ये मातु, पिता, सुत, नारि॥
दै दै सुमन तिल वासि कै अरु खरि परिहरि रस लेत।
स्वारथ हित भूतल भरे, मन मेचक, तनु सेत॥
करि बीत्यो, अव करतु है, करिबे हित मीत अपार।
कबहुँ न कोउ रघुबीर-सो नेह निवाहनिहार॥
जासों सब नातो फुरै तासों न करी पहिचानि।
तातें कछु समझ्यो नहीं कहा लाभ कह हानि॥
साँचो जान्यो झूठ को, झूठे कहँ साँचो जानि।
को न गयो, को न जात है, को न जैहै करि हितहानि॥
बेद कह्यौ, बुध कहत हैं अरु हौंहुँ कहत हौं टेरि।
तुलसी प्रभु साँचो हितू, तू हिये की आँखिन हेरि॥१६०॥

एक सनेही साँचिलो केवल कोसलपालु।
प्रेम कनौड़ो राम-सो नहिँ दूसरो दयालु॥
तन साथी सब स्वारथी, सुर व्यवहार-सुजान।
आरत, अधम, अनाथ हित को रघुबीर समान॥
नाद निठुर, समचर सिखी, सलिल सनेह न सूर।
ससि सरोग, दिनकर बड़े, पयद प्रेमपथ कूर॥
जाको मन जासों बँध्यो ताको सुखदायक सोइ।
सरल सील साहिब सदा सीतापति सरिस न कोइ॥
सुनि सेवा सही को करै, परिहरै को दूषन देखि।
केहि दिवान दिन दीन को आदर अनुराग विसेखि॥
खग सबरी पितुमातु ज्यों माने, कपि को किए मीत।
केवट भेँटचो भरत ज्यों ऐसो को कहु पतित-पुनीत॥
देइ अभागहिँ भाग को, को राखै सरन सभीत।
बेदविदित बिरुदावली, कबि-कोबिद गावत गीत॥
कैसेउ पाँवर पातकी जेहि लई नाम की ओट।
गाँठी बाध्यो दाम सो परचो न फिरि खर खोट॥

१६०—खरि = खली, सीठी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन-मलीन, कलि किलविषी होत सुनत जासु कृत काज।
सो तुलसी कियो आपनो रघुबीर गरीबनिवाज ॥१६१॥

जो पै जानकीनाथ सों नातो नेहु न नीच।
स्वारथ परमारथ कहा? कलि कुटिल बिगोयो बीच ॥
धरम बरन आस्रमनि के पैयत पोथिही पुरान।
करतब बिनु बेष देखिए ज्यौं सरीर बिनु प्रान ॥
बेद-बिदित साधन सबै सुनियत दायक फल चारि।
राम-प्रेम बिनु जानिबो जैसे सर-सरिता बिनु बारि ॥
नाना पथ निरबान के, नाना बिधान बहु भाँति।
तुलसी तू मेरे कहे जपु रामनाम दिन-राति ॥१६२॥

अजहुँ आपने राम के करतब समुझत हित होइ।
कहँ तू कहँ कोसलधनी, तोको कहा कहत सब कोइ ॥
रीझि निवाज्यो कबहिँ तू कब खीझि दई तोहिँ गारि।
दरपन बदन निहारि कै सुबिचार मान हिय हारि ॥
बिगरी जनम अनेक की सुधरत पल लगै न आधु।
'पाहि कृपानिधि!' प्रेम सोँ कहे को न राम कियो साधु ॥
बालमीकि-केवट-कथा, कपि-भील-भालु-सनमान।
सुनि सनमुख जो न राम सोँ तिहि को उपदेसहि ज्ञान ॥
का सेवा सुग्रीव की, का प्रीति-रीति-निरबाहु?
जासु बंधु बध्यो ब्याध ज्यौँ सो सुनत सोहात न काहु ॥
भजन बिभीषन को कहा, फल कहा दियो रघुराज!
राम गरीबनिवाज के बड़ी बाँह-बोल की लाज ॥
जपहि नाम रघुनाथ को, चरचा दूसरी न चालु।
सुमुख सुखद साहिब सुधी समरथ कृपालु नतपालु ॥
सजल नयन, गदगद गिरा, गहबर मन, पुलक सरीर।
गावत गुनगन राम के केहि की न मिटी भवपीर?
प्रभु कृतज्ञ सरबज्ञ हैँ, परिहरु पाछिली गलानि।
तुलसी तोसों राम सों कछु नई न जान-पहिचानि ॥१६३॥

१६१—समचर = एक सा व्यवहार करनेवाला। सिखी = अग्नि।
दिवान = दरबार। किलविषी = दोषयुक्त, पापी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो अनुराग न राम सनेही सों। तो लह्यो लाहु कहा नर देही सों ॥
जो तनु धरि परिहरि सब सुख भए सुमति राम अनुरागी।
सो तनु पाइ अघाइ किए अघ अवगुन-उदधि अभागी॥
ज्ञान विराग जोग जप तप मख जग मुद-मग नहिँ थोरे।
राम-प्रेम बिनु नेम जाय जैसे मृग-जल-जलधि हिलोरे॥
लोक बिलोकि, पुरान बेद सुनि, समुझि बूझि गुरु ज्ञानी।
प्रीति प्रतीति रामपद-पंकज सकल सुमंगल-खानी॥
अजहुँ जानि जिय मानि हारि हिय होइ पलक महँ नीको।
सुमिरु सनेह सहित हित रामहिँ मानु मतो तुलसी को॥१९४॥

बलि जाउँ हौं राम गुसाईं। कीजै कृपा आपनी नाईं॥
परमारथ सुरपुर-साधन सब स्वारथ सुखद भलाई।
कलि सकोप लोपी सुचाल, निज कठिन कुचाल चलाई॥
जहँ जहँ चित चितवत हित तहँ नित नव बिषाद अधिकाई।
रुचि-भावती भभरि भागहि, समुहाहिँ अमित अनभाई॥
आधि-मगन मन, ब्याधि-बिकल तन, बचन मलीन झुठाई।
एतेहुँ पर तुम सों तुलसी की प्रभु सकल सनेह सगाई॥१९५॥

काहे को फिरत मन करत बहु जतन,
मिटै न दुख बिमुख रघुकुल-बीर।
कीजै जो कोटि उपाइ त्रिविध ताप न जाइ,
कह्यो जो भुज उठाइ मुनिवर-कीर॥
सहज टेव बिसारि तुहीँ धौं देखु विचारि
मिलै न मथत बारि घृत बिनु छीर।
समुझि तजहि भ्रम भजहि पद जुगम,
सेवत सुगम गुन गहन गँभीर॥
आगम निगम ग्रंथ, रिषि मुनि सुर संत
सबही को एक मत सुनु, मतिधीर।
तुलसिदास प्रभु बिनु पियास मरै पसु
जद्यपि है निकट सुरसरि-तीर॥१९६॥

१९४—मुद मग = मंगल के मार्ग।
१९६—मुनिवर कीर = शुकदेवजी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाहिँन चरन-रति ताहि तें सहौं बिपति
  कहत स्रुति, सकल मुनि मतिधीर।
बसै जो ससि-उछंग सुधा-स्वादित कुरंग
  ताहि क्यों भ्रम निरखि रबिकर-नीर ? ।।
सुनिय नाना पुरान मिटत नाहिँ अज्ञान
  पढ़िय न समुझिय जिमि खग कीर।
बझत बिनहिँ पास सेमर-सुमन-आस
  करत चरत तेइ फल बिनु हीर ।।
कछु न साधन सिधि, जानौं न निगम, बिधि
  नहिँ जप तप बस मन, न समीर।
तुलसीदास भरोस परम करुना-कोस
  प्रभु हरिहैं बिषम भवभीर ।।१६७।।

भैरवी

मन पछितैहै अवसर बीते ।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु करम बचन अरु ही ते ।।
सहसबाहु, दसवदन आदि नृप बचे न काल बली ते ।
हम हम करि धन धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते ।।
सुत, बनितादि जानि स्वारथ-रत न करु नेह सबही तें ।
अंतहुँ तोहिँ तजैंगे, पामर ! तू न तजै अबही तें ।।
अब नाथहिँ अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जी तें ।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ बिषय-भोग बहु घी तें ।।१६८।।

काहे को फिरत मूढ़ मन धायो ।
तजि हरिचरन-सरोज सुधारस रबिकर-जल लय लायो ।।
त्रिजग, देव, नर, असुर, अपर जग जोनि सकल भ्रमि आयो ।
गृह, बनिता, सुत, बंधु भए बहु मातु पिता जिन्ह जायो ।।
जातें निरय-निकाय निरंतर सोइ इन्ह तोहिँ सिखायो ।
तुव हित होइ कटै भवबंधन, सो मगु तोहिँ न बतायो ।।
अजहुँ बिषय कहँ जतन करत जद्यपि बहु बिधि डहँकायो ।
पावक-काम भोग-घृत तें सठ कैसे परत बुझायो ?।।

१६७—समीर = प्राण वायु, जिसे योगी वश में करते हैं। हीर = गूदा, सार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयहीन दुख, मिले बिपति अति, सुख सपनेहु नहिँ पायो ।
उभय प्रकार प्रेत-पावक ज्यों धन दुखप्रद स्रुति गायो ।।
छिन छिन छीन होत जीवन, दुरलभ तनु बृथा गँवायो ।
तुलसिदास हरि भजहि आस तजि, काल-उरग जग खायो ।।१९९।।

तांबे सों पीठि मनहुँ तनु पायो ।
नीच ! मीचु जानत न सीस पर, ईस निपट बिसरायो ।।
अवनि, रवनि, धन, धाम, सुहृद, सुत को न इन्हहिँ अपनायो ।
काके भए गए सँग काके सब सनेह छल-छायो ।।
जिन्ह भूपनि जग जीति, बाँधि जम अपनी बाँह बसायो ।
तेऊ काल कलेऊ कीन्हे, तू गिनती कब आयो ?।।
देखु बिचारि सार का साँचो, कहा निगम निजु गायो ।
भजहि न अजहुँ समुझि तुलसी तेहि जेहि महेस मन लायो ।।२००।।

लाभ कहा मानुष तनु पाए ।
काय, बचन, मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराए ।।
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन आवत बिनहिँ बुलाए ।
तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन, समुझत नहिँ समुझाए ।।
परदारा, परद्रोह, मोहबस किए मूढ़ मन भाए ।
गर्भवास दुखरासि जातना तीव्र बिपति बिसराए ।।
भय निद्रा मैथुन अहार सब के समान जग जाए ।
सुर-दुरलभ तनु धरि न भजे हरि, मद अभिमान गँवाए ।।
गई न निज-पर-बुद्धि, सुद्ध ह्वै रहे न राम-लय लाए ।
तुलसिदास यह अवसर बीते का पुनि के पछिताए ? ।।२०१।।

काज कहा नरतनु धरि सार्‌यो ?
पर-उपकार सार श्रुति को जो, सो धोखेहु न बिचार्‌यो ।।
द्वैत मूल, भय सूल, सोग फल, भवतरु टरै न टार्‌यो ।
राम-भजन तीछन कुठार लै सो नहिँ काटि निवार्‌यो ।।

१९९—निरय = नरक । प्रेत-पावक = दलदलों और मैदानों में रात को दिखाई देता हुआ लुक, जिसे आग समझकर लोग धोखा खाते हैं ।

२००—तांबे. . .पायो = मानो तांबे से मढ़ी पीठ लेकर आया, अर्थात् शरीर का नाश नहीं होगा । निजु = प्रधानतः, विशेष रूप से ।

२०१—घटत = काम आता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसय-सिंधु नाम-बोहित भजि निज आतमा न तारचो ।
जनम अनेक बिबेकहीन बहु जोनि भ्रमत नहिँ हारचो ॥
देखि आन की सहज संपदा द्वेष-अनल मन जारचो ।
सम दम दया दीन-पालन सीतल हिय हरि न सँभारचो ॥
प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति तैं मन क्रम बचन बिसारचो ॥
तुलसिदास एहि त्रास सरन राखिहि जेहि गीध उधारचो ॥२०२॥

श्रीहरि-गुरु-पद-कमल भजहु मन तजि अभिमान ।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख-निधान भगवान ॥
परिवा प्रथम प्रेम बिनु राम मिलन अति दूरि ।
जद्यपि निकट हृदय निज रहे सकल भरि पूरि ॥
दुइज द्वैत-मति छाँड़ि चरहि महि-मंडल धीर ।
बिगत - मोह - माया - मद - हृदय बसत रघुबीर ॥
तीज त्रिगुन-पर परम पुरुष श्रीरमन मुकुंद ।
गुन सुभाव त्यागे बिनु दुरलभ परमानंद ॥
चौथि चारि परिहरहु बुद्धि, मन, चित, अहँकार ।
बिमल बिचार परमपद निज सुख सहज उदार ॥
पाँचइँ पाँच परस, रस, सब्द, गंध अरु रूप ।
इन्ह कर कहा न कीजिए बहुरि परब भवकूप ॥
छठि षड्वर्ग करिय जय जनकसुता-पति लागि ।
रघुपति-कृपा-बारि बिनु नहिँ बुताइ लोभागि ॥
सातैँ सप्तधातु-निर्मित तनु करिय बिचार ।
तेहि तनु केर एक फल, कीजै पर-उपकार ॥
आठइँ आठ-प्रकृति-पर निर्बिकार श्रीराम ।
केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिँ बहु काम ॥
नवमी नवद्वारपुर बसि जेहि न आपु भल कीन्ह ।
ते नर जोनि अनेक भ्रमत दारुन दुख दीन्ह ॥
दसइँ दसहु कर संजम जो न करिय जिय जानि ।
साधन बृथा होइँ सब मिलहिँ न सारँगपानि ॥
एकादसी एक मन बसकै सेवहु जाइ ।
सोइ ब्रत कर फल पावै आवागमन नसाइ ॥
द्वादसि दान देहु अस अभय होइ त्रैलोक ।
परहित-निरत सो पारन बहुरि न ब्यापत सोक ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरसि तीन अवस्था तजहु, भजहु भगवंत ।
मन-क्रम-बचन-अगोचर, व्यापक, व्याप्य, अनंत ।।
चौदसि चौदह भुवन अचरचर-रूप गोपाल ।
भेद गए बिनु रघुपति अति न हरहिँ जगजाल ।।
पूनो प्रेमभगति-रस हरिरस जानहिँ दास ।
सम सीतल गत-मान ज्ञानरत बिषय उदास ।।
त्रिविध सूल होलिय जरै, खेलिय अस फागु ।
जो जिय चहसि परम सुख तौ यहि मारग लागु ।।
श्रुति-पुरान-बुध-संमत चाँचरि चरित मुरारि ।
करि बिचार भव तरिय, परिय न कबहुँ जमधारि ।।
संसय-समन दमन-दुख सुखनिधान हरि एक ।
साधुकृपा बिनु मिलहिँ न करिय उपाइ अनेक ।।
भवसागर कहँ नाव सुद्ध संतन के चरन ।
तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिँ राम दुखहरन ।।२०३।।

राग कान्हरा

जौ मन लागै रामचरन अस ।
देह, गेह, सुत, बित, कलत्र महँ मगन होत बिनु जतन किए जस ।।
द्वंद-रहित, गत-मान, ज्ञानरत, बिषय-बिरत खटाइ नाना कस ।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिँ बस ?।।
सर्ब भूतहित निर्ब्यलीक चित भगति प्रेम दृढ़ नेम एक-रस ।
तुलसिदास यह होइ तबहिँ जब द्रवै ईस जेहि हतो सीसदस ।।२०४।।

जौ मन भज्यो चहै हरि-सुरतरु ।
तौ तजि बिषय-बिकार सार भजु, अजहूँ जो मैं कहौं सोइ करु ।।
सम, संतोष, बिचार बिमल अति, सतसंगति, ए चारि दृढ़ करि धरु ।
काम, क्रोध अरु लोभ, मोह, मद, राग, द्वेष निसेष करि परिहरु ।।
स्रवन कथा, मुख नाम, हृदय हरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुसरु ।
नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि अगजग-रूप भूप सीतावरु ।।
इहै भगति, बैराग्य, ज्ञान यह हरि-तोषन यह सुभ ब्रत आचरु ।
तुलसिदास सिवमत मारग यहि चलत सदा सपनेहुँ नाहिँन डरु ।।२०५।।

२०३—चाँचरि = फाग के स्वाँग ।
२०४—खटाइ = परीक्षा में पूर्ण उतरे । कस = जाँच, परीक्षा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाहिँन और कोउ सरन लायक दूजो श्रीरघुपति सम बिपति-निवारन ।
काको सहज सुभाउ सेवक-बस, काहि प्रनत पर प्रीति अकारन ?॥
जन-गुन अलप गनत सुमेरु करि, अवगुन कोटि बिलोकि बिसारन ।
परम कृपालु, भगत-चिंतामनि, बिरद पुनीत पतितजन-तारन ॥
सुमिरत सुलभ, दास-दुख सुनि हरि चलत तुरत पट पीत सँभार न ।
साखि पुरान निगम आगम सब, जानत द्रुपदसुता अरु बारन ॥
जाको जस गावत कबि कोबिद, जिन्हके लोभ, मोह, मद, मार न ।
तुलसिदास तजि आस सकल भजु कोसलपति मुनिबधू-उधारन ॥२०६॥

भजिबे लायक सुखदायक रघुनायक सरिस सरनप्रद दूजो नाहिँन ।
आनँदभवन दुखदमन सोकसमन रमारमन गुन गनत सिराहिँ न ॥
आरत अधम कुजाति कुटिल खल पतित सभीत कहूँ जे समाहिँ न ।
सुमिरत नाम बिबस हू बारक पावत सो पद जहाँ सुर जाहिँ न ॥
जाके पद-कमल लुब्ध मुनि-मधुकर बिरत जे परम सुगतिहु लुभाहिँ न ।
तुलसिदास सठ तेहि न भजसि कस कारुनीक जो अनाथहिँ दाहिन॥२०७॥

राग कल्याण

नाथ सों कौन बिनती कहि सुनावौं ?
बिबिध अनगनित अवलोकि अघ आपने
सरन सनमुख होत सकुचि सिर नावौं ॥
बिरचि हरि-भगति को बेष बर टाटिका
कपट-दल हरित पल्लवनि छावौं ।
नाम-लगि लाइ, लासा-ललित-बचन कहि
ब्याध ज्यों बिषय-बिहँगनि बझावौं ॥
कुटिल सत कोटि मेरे रोम पर वारियहि,
साधुगनती में पहिलेहिँ गनावौं ।
परम बर्बर खर्बगर्ब-पर्वत चढ़्यो
अज्ञ सर्बज्ञ जनमनि जनावौं ॥
साँच किधौं झूठ मोको कहत कोउ
कोउ राम रावरो हौंहुँ तुम्हरो कहावौं ।
बिरद की लाज करि दासतुलसिहिँ, देव !
लेहु अपनाइ अब देहु जनि बावौं ॥२०८॥

२०८—टाटिका = टट्टी । लगि = लग्गी, बाँस की लंबी छड़ । जनमनि = मनुष्यों में श्रेष्ठ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाहिनै नाथ अवलंव मोहिँ आन की।
करम मन बचन पन सत्य, करुनानिधे!
एक गति राम भवदीय पदत्रान की ॥
कोह मद मोह ममतायतन जानि मन,
वात नहि जाति कहि ज्ञान विज्ञान की।
काम-संकल्प उर निरखि वहु वासनहिँ
आस नहिँ एक हू आँक निरवान की ॥
बेद-बोधित करम धरम विनु, अगम अति
जदपि, जिय लालसा अमरपुर जान की।
सिद्ध, सुर, मनुज, दनुजादि सेवत कठिन
द्रवहिँ हठजोग दिए भोग वलि प्रान की ॥
भगति दुरलभ परम, संभु सुक मुनि-मधुप,
प्यास पदकंज-मकरंद-मधुपान की।
पतित-पावन सुनत नाम विश्रामकृत
भ्रमत पुनि समुझि चित ग्रंथि अभिमान की ॥
नरक अधिकार मम घोर संसार-तम-कूपकहिँ,
भूप! मोहि सक्ति आपान की।
दासतुलसी सोउ त्रास नहिँ गनत मन
सुमिरि गुह, गीध, गज, ज्ञाति हनुमान की ॥२०६॥

और कहँ ठौर, रघुबंसमनि, मेरे?
पतित-पावन, प्रनत-पाल, असरन-सरन,
बाँकुरे विरद विरुदैत केहि केरे ॥
समुझि जिय दोष अति रोष करि राम कै
करत नहिँ कान विनती वदन फेरे।
तदपि ह्वै निडर हौं कहौं, करुनासिधु!
क्योंऽब रहि जात सुनि वात विन हेरे ॥
मुख्य रुचि होति वसिबे की पुर रावरे,
राम तेहि रुचिहि कामादि गन घेरे।
अगम अपबर्ग, अरु स्वर्ग सुकृतैक फल,
नाम-वल क्यों वसौं जमनगर नेरे?

२०६—एक हू आँक = सोलह आने में एक आना भी, कुछ भी। आपान की = अपनी या आपकी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कतहुँ नहिँ ठाउँ कहँ जाउँ, कोसलनाथ !
दीन बितहीन हौं बिकल बिनु डेरे।
दास तुलसिहिँ बास देहु अब करि कृपा,
बसत गज, गीध, ब्याधादि जेहि खेरे ॥२१०॥

कबहुँ रघुबंस-मनि सो कृपा करहुगे ?
जेहि कृपा ब्याध, गज, बिप्र, खल नर तरे
तिन्हहिँ सम मानि मोहिँ नाथ उद्धरहुगे ॥
जोनि बहु जनमि किए करम खल बिबिध बिधि,
अधम आचरन कछु हृदय नहिँ धरहुगे।
दीनहित, अजित, सर्वज्ञ, समरथ, प्रनतपाल,
चित-मृदुल निज गुननि अनुसरहुगे ॥
मोह, मद, मान, कामादि खल-मंडली,
सकुल निरमूल करि दुसह दुख हरहुगे।
जोग जप ज्ञान बिज्ञान तेँ अधिक अति,
अमल दृढ़ भगति दै परम सुख भरहुगे ॥
मंदजन-मौलि-मनि, सकल साधनहीन,
कुटिल-मन, मलिन-जिय जानि जो डरहुगे।
दासतुलसी बेद-बिदित बिरुदावली,
बिमल जस नाथ केहि भाँति बिस्तरहुगे ? ॥२११॥

राग केदारा

रघुपति बिपति-दवन।
परम कृपालु प्रनत-प्रतिपालक पतित-पवन ॥
कूर कुटिल कुलहीन दीन अति मलिन जवन।
सुमिरत नाम राम पठए सब अपने भवन ॥
गज, पिंगला, अजामिल-से खल गनै धौं कवन ?
तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्हि गति जानकी-रवन ॥२१२॥

हरि सम आपदाहरन।
नहिँ कोउ सहज कृपालु दुसह-दुखसागर-तरन ॥
गज निज बल अवलोकि कमल गहि गयो सरन।
दीन बचन सुनि चले गरुड़ तजि सुनाभ-धरन ॥
द्रुपदसुता को लग्यो दुसासन नगन करन।
'हा हरि पाहि !' कहत पूरे पट बिबिध बरन ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इहै जानि सुर, नर, मुनि, कोविद सेवत चरन ।
तुलसिदास प्रभु को न अभय कियो नृग-उद्धरन ॥२१३॥

राग कल्याण

ऐसी कौन प्रभु की रीति ।
विरद हेतु पुनीत परिहरि पाँवरनि पर प्रीति ॥
गई मारन पूतना कुच कालकूट लगाइ ।
मातु की गति दई ताहि कृपालु जादवराइ ॥
काम-मोहित गोपिकनि पर कृपा अतुलित कीन्ह ।
जगतपिता विरंचि जिन्हके चरन की रज लीन्ह ॥
नेम तें सिसुपाल दिन प्रति देत गनि गनि गारि ।
कियो लीन सु आपु में हरि राजसभा मँझारि ॥
ब्याध चित दै चरन मार्‍यो मूढ़मति मृग जानि ।
सो सदेह सुलोक पठयो प्रगट करि निज बानि ॥
कौन तिन्हकी कहै जिन्हके सुकृत अरु अघ दोउ ।
प्रगट पातक-रूप तुलसी सरन राख्यो सोउ ॥२१४॥

श्री रघुबीर की यह वानि ।
नीचहूँ सों करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥
परम अधम निषाद पाँवर, कौन ताकी कानि ?
लियो सो उर लाइ सुत ज्यों प्रेम की पहिचानि ॥
गीध कौन दयालु जो विधि रच्यो हिंसा सानि ?
जनक ज्यों रघुनाथ ता कहँ दियो जल निज पानि ॥
प्रकृत-मलिन कुजाति सबरी सकल अवगुन-खानि ।
खात ताके दिए फल अति रुचि बखानि बखानि ॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन सरन आयो जानि ।
भरत ज्यों उठि ताहि भेंटत देह-दसा भुलानि ॥
कौन सुभग सुसील बानर जिनहिँ सुमिरत हानि ।
किए ते सब सखा, पूजे भवन अपने आनि ॥
राम सहज कृपालु कोमल दीनहित दिन दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी कुटिल कपट न ठानि ॥२१५॥

२१३—सुनाभ = चक्र ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरि तजि और भजिए काहि ?
नाहिनै कोउ राम सो ममता प्रनत पर जाहि ।।
कनक-कसिपु विरंचि को जन करम, मन अरु बात ।
सुतहिँ दुखवत विधि न वरज्यो काल के घर जात ।।
संभु-सेवक जान जग, बहु बार दिए दस सीस ।
करत राम-विरोध सो सपनेहु न हटक्यो ईस ।।
और देवन की कहा कहौँ स्वारथहि के मीत ।
कबहुँ काहु न राखि लियो कोउ सरन गयउ सभीत ।।
को न सेवत देत संपति ? लोक हू यह रीति ।
दास तुलसी दीन पर एक राम ही की प्रीति ।।२१६।।

जो पै दूसरो कोउ होइ ।
तो हौं बारहिँ बार प्रभु कत दुख सुनावौं रोइ ?।।
काहि ममता दीन पर, को पतितपावन नाम ?।।
पापमूल अजामिलहि केहि दियो अपनो धाम ?।।
रहे संभु, विरंचि, सुरपति, लोकपाल अनेक ।
सोक-सरि बूड़त करीसहिँ दई काहु न टेक ।।
विपुल भूपति-सदसि महँ नर-नारि कह्यो 'प्रभु पाहि !'
सकल समरथ रहे काहु न वसन दीन्हों ताहि ।।
एक मुख क्यों कहौं करुना-सिंधु के गुनगाथ ?
भगतहित धरि देह काहु न कियो कोसलनाथ ।।
आप से कहुँ सौँपिए मोहिँ जौं पै अतिहि घिनात ।
दासतुलसी और विधि क्यों चरन परिहरि जात ? ।।२१७।।

कबहिँ देखाइहौ हरि चरन ?
समन सकल कलेस कलिमल, सकल-मंगल-करन ।।
सरदभव सुंदर तरुनतर अरुन वारिज-वरन ।
लच्छि लालित ललित करतल छवि अनूपम धरन ।।
गंग-जनक, अनंग-अरि-प्रिय, कपटु बटु बलि-छरन ।
बिप्रतिय, नृग, बधिक के दुख दोष दारुन दरन ।।
सिद्ध-सुर-मुनि-बृंद-बंदित सुखद सब कहँ सरन ।
सकृत उर आनत जिनहिँ जन होत तारनतरन ।।

२१७—करीस = गजराज । सदसि = सभा । नर-नारि = अर्जुन की **स्त्री, द्रौपदी ।**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृपासिंधु सुजान रघुबर प्रनत-आरति-हरन ।
दरस-आस-पियास तुलसीदास चाहत मरन ॥२१८॥

द्वार हौं भोर ही को आज ।
रटत रिरिहा, आरि और न, कौर ही तें काज ॥
कलि कराल दुकाल दारुन सब कुभाँति कुसाज ।
नीच जन, मन ऊँच, जैसी कोढ़ में की खाज ॥
हहरि हिय मैं सदय बूझ्यो जाइ साधु-समाज ।
मोहुँ से कहुँ कतहुँ कोउ तिन्ह कह्यो कोसलराज ॥
दीनता दारिद दलै को कृपा-बारिधि बाज ।
दानि दसरथ राय के तुम बानइत-सिरताज ॥
जनम को भूखो भिखारी हौं गरीबनेवाज ।
पेट भरि तुलसिहिँ जेँवाइय भगति-सुधा सुनाज ॥२१९॥

करिय सँभार, कोसलराय !
और ठौर, न और गति, अवलंब नाम बिहाय ॥
बूझि अपनी आपनौ हित आप बाप न माय ।
राम राउर नाम गुरु, सुर, स्वामि, सखा, सहाय ॥
रामराज न चलै मानस-मलिन के छल-छाय ।
कोप तेहि कलिकाल कायर मुएहि घायल घाय ॥
लेत केहरि को बयर ज्यों भेक हनि गोमाय ।
त्योंहि रामगुलाम जानि निकाम देत कुदाय ॥
अकनि याके कपट करतब अमित अनय अपाय ।
सुखी हरिपुर बसत होत परीछितहिँ पछिताय ॥
कृपासिंधु बिलोकिए जन-मन की साँसति साय ।
सरन आयो, देव दीनदयालु ! देखन पाय ॥
निकट बोलि न बरजिए बलि जाउँ हनिय न हाय ।
देखिहैं हनुमान गोमुख नाहरनि के न्याय ॥
अरुन मुख, भ्रू बिकट, पिंगल नयन रोष कषाय ।
बीर सुमिरि समीर को घटिहै चपल चित चाय ॥

२१८—लच्छि = लक्ष्मी ।

२१९—रिरिहा = रट लगाकर और गिड़गिड़ा कर माँगनेवाला । आरि = टेक, हठ । बाज = बिना, बगैर ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विनय सुनि विहँसे अनुज सों वचन के कहि भाय ।
भली कही कह्यो लषन हूँ हँसि, बने सकल बनाय ॥
दई दीनहिं दादि सो सुनि सुजन-सदन बधाय ।
मिटे संकट सोच पोच प्रपंच पाप-निकाय ॥
पेखि प्रीति प्रतीति जन पर अगुन अनघ अमाय ।
दास तुलसी कहत मुनिगन, 'जयति जय उरगाय' ॥२२०॥

नाथ-कृपा ही को पंथ चितवत दीन हौं दिन राति ।
होइ धौं केहि काल दीनदयालु जानि न जाति ॥
सुगुन, ज्ञान, विराग, भगति, सुसाधननि की पाँति ।
भजे विकल विलोकि कलि-अघ-अवगुननि की थाति ॥
अति अनीति कुरीति भइ भुइँ तरनिहूँ तें ताति ।
जाउँ कहँ वलि जाउँ ? कहूँ न ठाउँ, मति अकुलाति ॥
आप सहित न आपनो कोउ, बाप ! कठिन कुभाँति ।
स्यामघन सींचिए तुलसी सालि सफल सुखाति ॥२२१॥

वलि जाउँ, और कासों कहौं ?
सदगुन-सिंधु, स्वामि सेवक-हितु, कहुँ नकृपानिधि सो लहौं ॥
जहँ जहँ लोभ लोल लालचवस निजहित चित चाहनि चहौं ।
तहँ तहँ तरनि तकत उलूक ज्यों भटकि कुतरु-कोटर गहौं ॥
काल सुभाव करम विचित्र फलदायक सुनि सिर धुनि रहौं ।
मोको तो सकल सदा एकहि रस दुसह दाह दारुन दहौं ॥
उचित अनाथ होइ दुखभाजन, भयो नाथ किंकर न हौं ।
अब रावरो कहाय न बूझिए सरनपाल साँसति सहौं ॥
महाराज राजीव-विलोचन मगन-पाप-संताप हौं ।
तुलसी-प्रभु जव तव जेहि तेहि विधि राम विनाहे निरवहौं ॥२२२॥

आपनो कवहुँ करि जानिहौ ।
राम गरीव-निवाज राजमनि विरद-लाज उर आनिहौ ॥
सील-सिंधु सुंदर सब लायक समरथ सदगुन-खानि हौ ।
पाल्यो है, पालत, पालहुगे प्रभु प्रनत-प्रेम पहिचानिहौ ॥

२२०—गोमाय = गोमायु, गीदड़ । कुदाय देत = घात करता है । साय = जाय या शांत हो । गोमुख नाहर न्याय = ऊपर से गाय की तरह सीधा, पर असल में व्याघ्र के समान क्रूर । उरगाय = विष्णु ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेद पुरान कहत, जग जानत, दीनदयालु दिन दानि हौ ।
कहि आवत, बलि जाउँ, मनहुँ मेरी बार बिसारे बानि हौ ।।
आरत, दीन, अनाथनि के हित मानत लौकिक कानि हौ ।
है परिनाम भलो तुलसी को सरनागत-भय भानिहौ ।।२२३।।

रघुबरहिँ कबहुँ मन लागिहै ?
कुपथ, कुचाल, कुमति, कुमनोरथ, कुटिल कपट कब त्यागिहै? ।।
जानत गरल अमिय बिमोहबस, अमिय गनत करि आगि है ।
उलटी रीति प्रीति अपने की तजि प्रभुपद अनुरागिहै ।।
आखर अरथ मंजु मृदु मोदक रामप्रेम-पाग पागिहै ।
ऐसे गुन गाइ रिझाइ स्वामि सों पाइहै जो मुँह माँगिहै ।।
तू यहि बिधि सुख-सयन सोइहै जिय की जरनि भूरि भागिहै ।
राम-प्रसाद दासतुलसी-उर राम-भगति जो जागिहै ।।२२४।।

भरोसो और आइहै उर ताके ।
कै कहुँ लहै जो रामहिँ सो साहिब, कै अपनो बल जाके ।।
कै कलिकाल कराल न सूझत मोह-मार-मद-छाके ।
कै सुनि स्वामि-सुभाउ न रह्यो चित जो हित सब अँग थाके ।।
हौं जानत भलि भाँति अपनपौ, प्रभु सो सुन्यो न साके ।
उपल, भील, खग, मृग, रजनीचर भले भए करतब काके ? ।।
मोको भलो रामनाम सुरतरु सो रामप्रसाद कृपालु कृपा के ।
तुलसी सुखी निसोच राज ज्यों बालक माय बबा के ।।२२५।।

भरोसो जाहि दूसरो सो करो ।
मोको तो राम को नाम कलपतरु कलि कल्यान फरो ।।
करम, उपासन, ज्ञान बेदमत सो सब भाँति खरो ।
मोहिँ तो सावन के अंधहिँ ज्यौं सूझत रंग हरो ।।
चाटत रह्यों स्वान पातरि ज्यों कबहुँ न पेट भरो ।
सो हौं सुमिरत नाम सुधारस पेखत परुसि धरो ।।
स्वारथ औ परमारथ हू को नहिँ कुंजरो नरो ।
सुनियत सेतु पयोधि पखाननि करि कपि-कटक तरो ।।
प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ ताको काज सरो ।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर हौं सिसु-अरनि अरो ।।

२२३—भानिहौ = भंजन करोगे, नष्ट करोगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संकर साखि जो राखि कहौं कछु तौ जरि जीह गरो ।
अपनो भलो राम नामहिँ तेँ तुलसिहिँ समुझि परो ॥२२६॥

नाम राम रावरोई हित मेरे ।
स्वारथ परमारथ साथिन्ह सोँ भुज उठाइ कहौं टेरे ॥
जननी जनक तज्यो जनमि, करम विनु विधिहु सृज्यो अवडेरे ।
मोहुँ से कोउ कोउ कहत रामहि को सो प्रसंग केहि केरे ?॥
फिर्‌यौ ललात विनु नाम उदर लगि दुखउ दुखित मोहिँ हेरे ।
नाम-प्रसाद लहत रसाल-फल अव हौँ ववुर वहेरे ॥
साधत साधु लोक परलोकहि, सुनि गुनि जतन घनेरे ।
तुलसी के अवलंव नाम को एक गाँठि कई फेरे ॥२२७॥

प्रिय रामनाम तेँ जाहि न रामो ।
ताको भलो कठिन-कलिकालहुँ आदि मध्य परिनामो ॥
सकुचत समुझि नाम-महिमा मद, लोभ, मोह, कोह, कामो ।
रामनाम-जप-निरत सुजन पर करत छाँह घोर घामो ॥
नाम प्रभाउ सही, जो कहै कोउ, सिला सरोरुह जामो ।
जो सुनि सुमिरि भाग-भाजन भइ सुकृतसील भील-भामो ॥
वालमीकि अजामिल के कछु हुतो न साधन सामो ।
उलटे-पलटे नाम-महातम गुंजनि जितो ललामो ॥
राम तेँ अधिक नाम-करतव जेहि किए नगर-गत गामो ।
भए वजाइ दाहिने जो जपि तुलसिदास से वामो ॥२२८॥

गरैगी जीह जो कहौं और को हौं ।
जानकी-जीवन ! जनम-जनम जग ज्यायो तिहारेहि कौर को हौं ॥
तीनि लोक तिहुँ काल न देखत सुहृद रावरे जोर को हौं ।
तुम्हसों कपट करि कलप कलप कृमि ह्वैहौँ नरक घोर को हौं ॥
कहा भयो जो मन मिलि कलिकालहिँ कियो भौंतुवा भौंर को हौं ।
तुलसिदास सीतल नित यहि वल बड़े ठेकाने ठौर को हौं ॥२२९॥

२२६—कुंजरो नरो = नरो वा कुंजरो वा, दुविधा या संदेह ।
२२७—अवडेरे = चक्करदार, वेढव ।
२२८—भीलभामो = भील की स्त्री शबरी भी । सामो = सामग्री । ललामो = रत्नों के आभूषण ।
२२९—जोर = जोड़ । भौंतुवा = जौ के बराबर एक काला कीड़ा, जो नदियों में तैरा करता है; ये नावों के निकट झुंड के झुंड दिखाई देते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकारन को हितु और को है ?
विरद गरब-निवाज कौन की भौंह जासु जन जोहै ?॥
छोटो बड़ो चहत सब स्वारथ जो विरंचि विरचो है ।
कोल कुटिल कपि भालु पालिबो कौन कृपालुहि सोहै ?॥
काको नाम अनख आलस कहें अघ अवगुननि बिछोहै ?।
को तुलसी से कुसेवक संग्रह्यो, सठ सब दिन साईं द्रौहै ? ॥२३०॥
और मोहि को है काहि कहिहौं ?
रंकराज ज्यों मन को मनोरथ केहि सुनाइ सुख लहिहौं ?॥
जम-जातना जोनि-संकट सब सहे दुसह अरु सहिहौं ।
मोको अगम, सुगम तुम्हको प्रभु ! तउ फल चारि न चहिहौं ॥
खेलिबे को खग, मृग, तरु, किंकर ह्वै रावरो राम हौं रहिहौं ।
यहि नाते नरकहुँ सचु पैहौं, या बिनु परमपदहुँ दुख दहिहौं ॥
इतनी जिय लालसा दास के कहत पानही गहिहौं ।
दीजै बचन कि हृदय आनिए तुलसी को पन निर्बहिहौं ॥२३१॥
दीनबंधु दूसरो कहँ पावों ?
को तुम बिनु पर-पीर पाइहै ? केहि दीनता सुनावों ? ॥
प्रभु अकृपालु, कृपालु अलायक, जहँ तहँ चितहिं डोलावों ।
इहै समुझि सुनि रहों मौन ही, कहि भ्रम कहा गँवावों ?॥
गोपद बूड़िबे जोग करम करौं बातनि जलधि थहावों ।
अति लालची काम-किंकर मन, मुख रावरो कहावों ॥
तुलसी प्रभु जिय की जानत सब, अपनौ कछुक जनावों ।
सो कीजै जेहि भाँति छाँड़ि छल द्वार परो गुन गावों ॥२३२॥
मनोरथ मन को एकै भाँति ।
चाहत मुनि-मन-अगम सुकृत-फल, मनसा अघ न अघाति ॥
करमभूमि कलि-जनम, कुसंगति, मति बिमोह-मद-माति ।
करत कुजोग कोटि क्यों पैयत परमारथ-पद-साँति ॥
सेइ साधु गुरु, सुनि पुरान स्रुति बूझ्यो राग बाजी ताँति ।
तुलसी प्रभु-सुभाउ सुरतरु सो ज्यों दरपन मुखकाँति ॥२३३॥
जनम गयो बादिहिं बर बीति ।
परमारथ पाले न परचो कछु, अनुदिन अधिक अनीति ॥

२३१—पानही = जूता ।
२३२—अपनौ = आप भी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेलत खात लरिकपन गो चलि, जौवन जुवतिन लियो जीति ।
रोग-वियोग-सोक-स्रम-संकुल बड़ि वय बृथहि अतीति ।।
राग-रोष-इरषा-विमोह-बस रुची न साधु-समीति ।
कहे न सुने गुनगन रघुबर के, भइ न रामपद-प्रीति ।।
हृदय दहत पछिताय-अनल अब सुनत दुसह भवभीति ।
तुलसी प्रभु तें होइ सो कीजिय समुझि बिरद की रीति ।।२३४।।

ऐसेहि जन्म-समूह सिराने ।
प्राननाथ रघुनाथ-सो प्रभु तजि सेवत चरन बिराने ।।
जे जड़ जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल-साने ।
सूखत बदन प्रसंसत तिन्ह कहँ, हरि तें अधिक करि माने ।।
सुख हित कोटि उपाय निरंतर करत न पाँय पिराने ।
सदा मलीन पंथ के जल ज्यों कबहुँ न हृदय थिराने ।।
यह दीनता दूरि करिबे को अमित जतन उर आने ।
तुलसी चित चिंता न मिटै बिनु चिंतामनि पहिचाने ।।२३५।।

जो पै जिय जानकीनाथ न जाने ।
तौ सब करम धरम स्रमदायक, ऐसेइ कहत सयाने ।।
जे सुर, सिद्ध, मुनीस, जोगविद बेद पुरान बखाने ।
पूजा लेत देत पलटे सुख हानि-लाभ अनुमाने ।।
काको नाम धोखेहूँ सुमिरत पातक-पुंज सिराने ।
बिप्र, बधिक, गज, गीध कोटि खल कौन के पेट समाने ।।
मेरु-से दोष दूरि करि जन के, रेनु-से गुन उर आने ।
तुलसिदास तेहि सकल आस तजि भजहि न अजहुँ अयाने ।।२३६।।

काहे न रसना रामहिं गावहि ?
निसि दिन पर-अपवाद बृथा कत रटि रटि राग बढ़ावहि ।।
नरमुख सुंदर मंदिर पावन बसि जनि ताहि लजावहि ।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत रविकर-जल कहँ धावहि ।
काम-कथा कलि-कैरव-चंदिनि सुनत स्रवन दै भावहि ।
तिनहिं हटकि कहि हरि-कल-कीरति करन-कलंक नसावहि ।।
जातरूप मति, जुगुति रुचिर मनि, रचि रचि हार बनावहि ।
सरन-सुखद रविकुल-सरोज-रवि राम नृपहिं पहिरावहि ।।

२३४—अतीति = बीत गई । समीति = समिति, समाज ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद-विवाद-स्वाद तजि भजि हरि सरस चरित चित लावहि ।
तुलसिदास भव तरहि, तिहूँ पुर तू पुनीत जस पावहि ।।२३७।।

आपनो हित रावरे सों जो पै सूझै ।
तौ जनु तनु पर अछत सीस सुधि क्यों कबंध ज्यों जूझै ।।
निज अवगुन, गुन राम रावरे लखि सुनि मति मन रूझै ।
रहनि, कहनि, समुझनि तुलसी की को कृपालु बिनु बूझै ? ।।२३८।।

जाको हरि दृढ़ करि अंग करयो ।
सोइ सुसील, पुनीत, बेदविद, बिद्या-गुननि-भरयो ।।
उतपति, पांडुतनय की करनी सुनि सतपंथ डरयो ।
ते त्रैलोक्य-पूज्य, पावन जस सुनि सुनि लोक तरयो ।।
जो निज धर्म बेद-बोधित सो करत न कछु बिसरयो ।
बिनु अवगुन कृकलास कूप-मज्जित कर गहि उधरयो ।।
ब्रह्म बिसिख ब्रह्मांड-दहन-छम गर्भ न नृपति जरयो* ।
अजर अमर कुलिसहुँ नाहिंन वध सो पुनि फेन मरयो † ।।
बिप्र अजामिल अरु सुरपति तें कहा जो नहिँ बिगरयो ?
उनको कियो सहाय बहुत, उर को संताप हरयो ।।
गनिका अरु कदर्य तें जग महँ अघ न करत उबरयो ।
तिनको चरित पवित्र जानि हरि निज हृदि-भवन धरयो ।।
केहि आचरन भलो मानै प्रभु सो तो न जानि परयो ।
तुलसिदास रघुनाथ-कृपा को जोवत पंथ खरयो ।।२३९।।

सोइ सुकृती सोई सुचि साँचो जाहि राम तुम रीझे ।
गनिका, गीध, बधिक हरिपुर गए लै करसी प्रयाग कब सीझे ?।।
कबहुँ न डग्यो निगम-मग तें पग नृग जग जान जिते दुख पाए ।
गज धौं कौन दिछित जाके सुमिरत लै सुनाभ वाहन तजि धाए ।।
सुर, मुनि, बिप्र बिहाय बड़े कुल गोकुल जनम गोपगृह लीन्हो ।
बायों दियो बिभव कुरुपति को, भोजन जाइ बिदुर घर कीन्हो ।।

२३८—रूझै = रुद्ध होता है, रुकता है ।

२३९—अंग करयो = अंगीकार किया । कृकलास = गिरगिट । कूप-मज्जित = कूएँ में पड़ा हुआ (राजा नृग)। उधरयो = उद्धार किया। ब्रह्मबिसिख = ब्रह्मास्त्र । * राजा परीक्षित । † नमुचि दैत्य को इंद्र ने समुद्र के फेन से मारा था । खरयो=खड़ा खड़ा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानत भलहि भलो भगतनि तें, कछुक रीति पारथहिं जनाई ।
तुलसी सहज सनेह राम बस, और सबै जल की चिकनाई ॥२४०॥

तब तुम मोहूँ से सठनि को हठि गति देते ।
कैसेहुँ नाम लेहि कोउ पामर सुनि सादर आगे ह्वै लेते ॥
पाप-खानि जिय जानि अजामिल जमगन तमकि तये ताको भे ते ।
लियो छुड़ाइ, चले कर मींजत, पीसत दाँत गए रिसरेते ॥
गौतम-तिय, गज, गीध, विटप, कपि हैं नाथहिं नीके मालुम जेते ।
तिन्ह के काज समाज साधु तजि कृपासिंधु तब तब उठि गे ते ॥
अजहुँ अधिक आदर यहि द्वारे, पतित पुनीत होत नहि केते ?
मेरे पासंगहु न पूजिहैं, ह्वै गए, हैं, होने खल जेते ॥
हौं अबलौं करतूति तिहारिय चितवत हुतो न रावरे चेते ।
अब तुलसी पूतरो बाँधिहै सहि न जात मोपै परिहास एते ॥२४१॥

तुम सम दीनबंधु न दीन कोउ मो सम, सुनहु नृपति रघुराई !
मो सम कुटिल-मौलिमनि नहिं जग, तुम सम हरि न हरन कुटिलाई ॥
हौं मन वचन कर्म पातक-रत, तुम कृपालु पतितनि-गतिदाई ।
हौं अनाथ प्रभु, तुम अनाथहित, चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥
हौं आरत, आरति-नासक तुम, कीरति निगम-पुराननि गाई ।
हौं सभीत, तुम हरन सकल भय, कारन कौन कृपा बिसराई ? ॥
तुम सुखधाम राम स्रमभंजन, हौं अति दुखित त्रिविध स्रम पाई ।
यह जिय जानि दासतुलसी कहँ राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥२४२॥

यहै जानि चरनन्हि चित लायो ।
नाहिंन नाथ अकारन को हितु तुम समान पुरान स्रुति गायो ॥
जननि, जनक, सुत, दार, बंधुजन भए बहुत जहँ जहँ हौं जायो ।
सब स्वारथ हित प्रीति कपट चित, काहू नहिं हरिभजन सिखायो ॥
सुर, मुनि, मनुज, दनुज, अहि, किन्नर मैं तनु धरि सिर काहि न नायो ।
जरत फिरत त्रयताप-पापबस काहु न हरि ! करि कृपा जुड़ायो ॥

२४०—करसी = कंडे की आग । जंगली कंडों की आग में जलकर मरना बड़ा भारी तप माना जाता है । बायों दियो = किनारा खींचा, छोड़ दिया ।

२४२—भे = भय । गे ते = गए थे । पूतरो बाँधिहै = भाट लोग जिससे कुछ न पाकर अप्रसन्न होते हैं उसके नाम का पुतला बनाकर उनकी निंदा करते हुए लिए फिरते हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जतन अनेक किए सुख-कारन हरिपद-बिमुख सदा दुख पायो ।
अब थाक्यो जलहीन नाव ज्यों देखत बिपतिजाल जग छायो ।।
मो कहँ नाथ ! बूझिए यह गति सुख-निधान निज पति बिसरायो ।
अब तजि रोष करहु करुना हरि तुलसिदास सरनागत आयो ।।२४३।।

याहि तें मैं हरि ! ज्ञान गँवायो ।
परिहरि हृदय-कमल-रघुनाथहिँ बाहर फिरत बिकल भयो धायो ।।
ज्यों कुरंग निज अंग रुचिर मद अति मतिहीन मरमनहिँ पायो ।
खोजत गिरि, तरु, लता, भूमि, बिल, परम सुगंभ कहाँ धौं आयो ।।
ज्यों सर बिमल बारि परिपूरन ऊपर कछु सिवार तृन छायो ।
जारत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत यहि बिधि तृषा बुझायो।।
ब्यापत त्रिबिध ताप तनु दारुन तापर दुसह दरिद्र सतायो ।
अपनेहिं धाम नाम-सुरतरु तजि बिषय-बबूर-बाग मन लायो ।।
तुम सम ज्ञाननिधान, मोहि सम मूढ़ न आन पुराननि गायो ।
तुलसिदास प्रभु यह बिचारि जिय कीजै नाथ उचित मन भायो ।।२४४।।

मोहिं मूढ़ मन बहुत बिगोयो ।
याके लिये सुनहु करुनामय मैं जग जनमि जनमि दुख रोयो ।।
सीतल मधुर पियूष सहज सुख निकटहिं रहत दूरि जनु खोयो ।
बहु भाँतिन स्रम करत मोहबस बृथहिं मंदमति बारि बिलोयो ।।
करम-कीच जिय जानि सानि चित चाहत कुटिल मलहिं मल धोयो ।
तृषावंत सुरसरि बिहाय सठ फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ।।
तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब मैं निज दोष कछू नहिं गोयो ।
डासत ही गई बीति निसा सब, कबहुँ न नाथ ! नींद भरि सोयो ।।२४५।।

लोक बेदहूँ बिदित बात सुनि समुझि
मोह-मोहित बिकल मति थिति न लहति ।
छोटे बड़े, खोटे खरे, मोटेऊ दूबरे
राम ! रावरे निबाहे सबही की निबहति ।।
होती जो आपने बस रहती एकही रस
दुनी न हरख सोक साँसति सहति ।
चहतो जो जोई जोई लहतो सो सोई सोई
केहू भाँति काहू की न लालसा रहति ।।

२४५--बिगोयो = बिगाड़ा, नष्ट किया । बिलोयो = मथा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करम काल सुभाव गुन दोष जीव-जग-माया
तेँ सो सभय भौंह चकित चहति।
ईसनि, दिगीसनि, जोगीसनि, मनीसनिहूँ
छोड़ति छोड़ाए तेँ, गहाए तेँ गहति॥
सतरंज को सो राज, काठ को सब समाज
महाराज वाजी रची प्रथम न हति।
तुलसी प्रभु हाथ हारिबो जीतिबो नाथ !
वहु बेष वहु मख सारदा कहति॥२४६॥

राम जपु, जीह ! जानि, प्रीति सों प्रतीति मानि,
राम नाम जपे जैहै जिय की जरनि।
रामनाम सों रहनि, रामनाम की कहनि,
कुटिल-कलिमल-सोक - संकट-हरनि॥
रामनाम को प्रभाउ पूजियत गनराउ,
कियो न दुराउ कही आपनी करनि।
भवसागर को सेतु, कासी हूँ सुगति हेतु,
जपति सादर संभु सहित घरनि॥
वालमीकि ब्याध हे अगाध-अपराध-निधि,
मरा मरा जपे पूजे मुनि अमरनि।
रोक्यो विंध्य, सोख्यो सिंधु घटजहुँ नाम-वल,
हारयो हिय, खारो भयो भूसुर-डरनि॥
नाम-महिमा अपार सेष सुक वार वार
मति-अनुसार बुध बेदहूँ वरनि।
नामरति-कामधेनु तुलसी को कामतरु
रामनाम है विमोह-तिमिर-तरनि॥२४७॥

पाहि पाहि ! राम पाहि ! रामभद्र रामचंद्र,
सुजस स्रवन सुनि आयो हौं सरन।
दीनबंधु ! दीनता-दरिद्र-दाह-दोष-दुख
दारुन - दुसह - दर - दरप - हरन॥
जब जब जगजाल-ब्याकुल करम काल
सब खल भूप भए भूतल-भरन।

२४६—राज = राजा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब तब तनु धरि, भूमि-भार दूरि करि
थापे मुनि, सुर, साधु, आस्रम, बरन ।।
बेद लोक सब साखी, काहू की रती न राखी,
रावन की बंदि लागे अमर मरन।
ओक दै बिसोक किए लोकपति लोकनाथ
रामराज भयो धरम चारिहु चरन।।
सिला, गुह, गीध, कपि, भील, भालु, रातिचर
ख्याल ही कृपालु कीन्हें तारन-तरन।
पील-उद्धरन सीलसिंधु ढील देखियत
तुलसी पै चाहत गलानि ही गरन ।।२४८।।

भली भाँति पहिचाने जाने साहिब जहाँ लौं जग
जूड़े होत थोरे ही, थोरे ही गरम।
प्रीति न प्रवीन, नीतिहीन, रीति के मलीन,
मायाधीन सब किए कालहू करम।।
दानव दनुज बड़े महामूढ़ मूड़ चढ़े
जीते लोकनाथ नाथबल निभरम।
रीझि रीझि दिए वर, खीझि खीझि घाले घर,
आपने निवाजे की न काहू को सरम।।
सेवा सावधान तू सुजान समरथ साँचो
सदगुन - धाम राम पावन परम।
सुरुख सुमुख एकरस एकरूप तोहिं
बिदित बिसेषि घट-घट के मरम।।
तो सो नतपाल न कृपाल, न कँगाल मो सो,
दया में बसत देव सकल धरम।
राम कामतरु-छाँह चाहै रुचि मन माहँ
तुलसी बिकल बलि कलि कुधरम ।।२४९।।

तौ हौं बारबार प्रभुहिं पुकारिकै खिझावतो न
जोपै मोको होतो कहूँ ठाकुर ठहरु।

२४८—दर = डर। भूतल-भरन = पृथ्वी के भार। रती = तेज, कांति।
२४९—निभरम = निःशंक।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलसी अभागे मोसे तैं कृपालु पाले पोसे
राजा मेरे राजाराम, अवध सहरु ॥
सेए न दिगीस, न दिनेस, न गनेस, गौरी
हित कै न माने विधि, हरिउ न हरु।
रामनाम ही सों जोग छेम, नेम प्रेम-पन
सुधा सो भरोसो एहु, दूसरो जहरु ॥
समाचार साथ के अनाथ-नाथ! कासों कहौं?
नाथ ही के हाथ सब चोरऊ-पहरु।
निज काज, सुरकाज, आरत के काज राज!
बूझिए विलंब कहा कहूँ न गहरु ॥
रीति सुनि रावरी प्रतीति प्रीति रावरे सों
डरत हौं देखि कलिकाल को कहरु।
कहेही बनैगी, कै कहाए, बलि जाउँ, राम!
'तुलसी तू मेरो, हारि हिये न हहरु' ॥२५०॥

राम रावरो सुभाउ, गुनसील, महिमा, प्रभाउ
जान्यो हर, हनुमान, लखन, भरत।
जिन्हके हिए-सुथल राम-प्रेम-सुरतरु
लसत, सरस सुख फूलत फरत ॥
आप माने स्वामी, कै सखा सुभाय, भाइ, पति
ते सनेह-सावधान रहत, डरत।
साहिब-सेवक-रीति, प्रीति-परमिति, नीति,
नेम को निबाह, एक टेक न टरत ॥
सुक, सनकादि, प्रहलाद, नारदादि कहैं
राम की भगति बड़ी विरति-निरत।
जाने बिनु भगति न, जानिबो तिहारे हाथ
समुझि सयाने नाथ! पगनि परत ॥
छ-मत बिमत, न पुरान मत एक मत,
नेति नेति नेति नित निगम करत।

२५०—जोग छेम = योग क्षेम, प्राप्ति और रक्षा। गहरु = विलंब, देर।
२५१—बिरति-निरत = विषयों से विरक्ति में तत्पर होने से। छ,मत = छह दर्शनों के मत। बिमत = विरुद्ध मत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औरनि की कहा चली ? एकै बात भले भली
रामनाम लिए तुलसीहू से तरत ॥२५१॥

बाप आपने करत मेरी घनी घटि गई।
लालची लवार की सुधारिए बारक, बलि,
रावरी भलाई सबही की भली भई ॥
रोगबस तनु, कुमनोरथ मलिन मन,
पर-अपवाद मिथ्या-वाद बानी हई।
साधन की ऐसी विधि, साधन बिना न सिधि;
बिगरी बनावै कृपानिधि की कृपा नई ॥
पतित पावन, हित आरत अनाथनि को,
निराधार को अधार, दीनबंधु दई।
इन्हमें न एकौ भयो, बूझि न जूझ्यो न जयो,
ताहि तें त्रिताप तयो लुनियत बई ॥
स्वाँग सूधो साधु को, कुचालि कलि तें अधिक,
परलोक-फीकी मति लोकरंग-रई।
बड़े कुसमाज राज आजुलौं जो पाए दिन
महराज केहूँ भाँति नाम-ओट लई ॥
रामनाम को प्रताप जानियत नीके आप,
मोको गति दूसरी न विधि निरमई।
खीझिबे लायक करतब कोटि कोटि कटु,
रीझिबे लायक तुलसी की निलजई ॥२५२॥

राम ! राखिए सरन, राखि आए सब दिन।
बिदित त्रिलोक तिहुँ काल न दयालु दूजो,
आरत-प्रनत-पाल को है प्रभु बिन ? ॥
लाले पाले पोषे तोषे आलसी अभागी अघी
नाथ पै अनाथनि सों भए न उरिन।
स्वामी समरथ ऐसो हौं तिहारो जैसो तैसो,
काल-चाल हेरि होति हिए घनी घिन ॥
खीझि, रीझि, बिहँसि, अनख क्यों हूँ एक बार
'तुलसी तू मेरो' बलि, कहियत किन ?
जाहि सूल निरमूल होहिं सुख अनुकूल,
महाराज राम रावरी सौं तेहि छिन ॥२५३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राम रावरो नाम मेरो मातु-पितु है।
सुजन, सनेही, गुरु, साहब, सखा, सुहृद
रामनाम-प्रेम-पन अविचल वितु है॥
सतकोटि चरित अपार दयानिधि! मथि
लियो काढ़ि वामदेव नाम-घृतु है।
नाम को भरोसो बल, चारिहूँ फल को फल,
सुमिरिए छाँड़ि छल, भलो क्रतु है॥
स्वारथ-साधक, परमारथ-दायक नाम
रामनाम सारिखो न और हितु है।
तुलसी सुभाय कही, साँचियै परैगी सही
सीतानाथ-नाम चित हूँ को चितु है॥२५४॥

राम! रावरो नाम साधु-सुरतरु है।
सुमिरे त्रिविध घाम डरत, पूरत काम
सकल-सुकृत-सरसिज को सरु है॥
लाभहू को लाभ, सुखहू को सुख सरवस,
पतित-पावन, डरहू को डरु है।
नीचे हू को, ऊँचे हू को, रंक हू को, राव हू को
सुलभ सुखद आपनो सो घरु है॥
बेद हू, पुरान हू, पुरारि हू पुकारि कह्यो
नाम-प्रेम चारि फलहू को फरु है।
ऐसे रामनाम सों न प्रीति न प्रतीति मन
मेरे जान जानिबो सोइ नर खरु है॥
नाम सो न मातु, पितु, मीत, हित, बंधु, गुरु,
साहिब सुधी सुसील-सुधाकरु है।
नाम सों निबाहु नेहु दीन को दयालु देहु
दास तुलसी को, बलि, बड़ो वरु है॥२५५॥

कहे बिनु रह्यो न परत, कहे राम! रस न रहत।
तुम-से सुसाहिब की ओट जन खोटो खरो
काल की, करम की कुसाँसति सहत॥

२५४—क्रतु = यज्ञ।
२५५—बरु = बल।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करत विचार सार पैयत न कहूँ कछु,
सकल बड़ाई सब कहाँ तेँ लहत ?
नाथ की महिमा सुनि समुझि, आपनी ओर
हेरि, हारि कै हहरि हृदय दहत ॥
सखा न, सुसेवक न, सुतिय न, प्रभु, आप,
माय, बाप तुही, साँचो तुलसी कहत ।
मेरी तो थोरी ही है, सुधरैगी बिगरियो,
बलि, राम रावरी सौं रही रावरी चहत ॥२५६॥

दीनबंधु, दूरि किए दीन को न दूसरी सरन ।
आपको भले हैं सब, आपने को कोऊ कहूँ,
सबको भलो है, राम ! रावरो चरन ॥
पाहन, पसू, पतंग, कोल, भील, निसिचर
काँच तेँ कृपानिधान किए सुवरन ।
दंडक-पुहुमि पाँय-परस पुनीत भई,
उकठे बिटप लागे फूलन फरन ॥
पतित-पावन नाम, बाम हू दाहिनो, देव
दुनी न दुसह-दुख-दूषन-दरन ।
सीलसिंधु ! तोसों ऊँची नीचियौ कहत सोभा,
तोसो तुही तुलसी को आरतिहरन ॥२५७॥

जानि पहिचानि मैं बिसारे हौं कृपानिधान,
एतो मान ढीठ हौं उलटि देत खोरि हौं ।
करत जतन जासों जोरिबे को जोगीजन
तासों क्योंहू जुरी, सो अभागो बैठो तोरि हौं ॥
मोसे दोस-कोस को भुवन-कोस दूसरो न,
आपनी समुझि सूझि आयो टकटोरि हौं ।
गाड़ी के स्वान की नाईं माया मोह की बड़ाई
छिनहि तजत, छिन भजत बहोरि हौं ॥

२५६—सखा न, सुसेवक न = सखा कहिए तो. . .सेवक कहिए तो आप ही हैं । सौं = कसम । रही रावरी चहत = आपकी बात (साख, मर्यादा) रहे, यही चाहता हूँ ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ो साँइद्रोही, न बराबरी मेरी को कोऊ,
नाथ की सपथ किए कहत करोरि हौं।
दूरि कीजै द्वार तें लबार, लालची, प्रपंची,
सुधा सो सलिल सूकरी ज्यों गहडोरिहौं॥
राखिए नीके सुधारि, नीच को डारिए मारि,
दुहुँ ओर की विचारि अब न निहोरिहौं।
तुलसी कही है साँची रेख बार बार खाँची,
ढील किए नाम-महिमा की नाव बोरिहौं॥२५८॥

रावरी सुधारी जो बिगारी बिगरैगी मेरी,
कहौं, बलि, बेद की न, लोकु कहा कहैगो।
प्रभु को उदास-भाव, जन को पाप-प्रभाव
दुहू भाँति दीनबंधु! दीन दुख दहैगो!
मैं तो दियो छाती पवि, लयो कलिकाल दवि,
साँसति सहत परबस को न सहैगो?
बाँकी बिरदावली बनैगी पाले ही कृपालु!
अंत मेरो हाल हेरि यौं न मन रहैगो॥
करमी, धरमी, साधु, सेवक, बिरत, रत
आपनी भलाई थल कहाँ को न लहैगो?
तेरे मुँह फेरे मोसे कायर कपूत कूर,
लटे लटपटेनि को कौन परिगहैगो?॥
काल पाय फिरत दसा दयालु! सब ही की,
तोहिं बिनु मोहिं कबहूँ न कोऊ चहैगो।
बचन करम हिए कहौं राम सौंह किए
तुलसी पै नाथ के निबाहे निबहैगो॥२५९॥

साहिब उदास भए, दास खास खीस होत,
मेरी कहा चली? हौं बजाइ जाइ रह्यो हौं।
लोक में न ठाउँ, परलोक को भरोसो कौन?
हौं तो बलि जाउँ रामनाम ही ते लह्यो हौं॥

२५८—गहडोरिहौं = मथ कर गँदला कर दूँगा।
२५९—लटे = शिथिल, नीचे गिरे, पतित। लटपटे = गिरते पड़ते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करम, सुभाव, काल, काम, कोह, लोभ, मोह
ग्राह, अति गहनि गरीबी गाढ़े गह्यो हौं।
छोरिबे को महाराज, बाँधिबे को कोटि भट,
पाहि! प्रभु पाहि! तिहुँ ताप पाप दह्यो हौं॥
रीझि बूझि सबकी, प्रतीति प्रीति एही द्वार,
दूध को जर्यो पियत फूँकि फूँकि मह्यो हौं।
रटत रटत लट्यो, जाति पाँति भाँति घट्यो,
जूठनि को लालची चहौं न दूध नह्यो हौं॥
अनत चह्यो न भलो, सुपथ सुचाल चल्यो,
नीके जिय जानि इहाँ भलो अनचह्यो हौं।
तुलसी समुझि समुझायो मन बार बार
अपनो सो नाथ हूँ सों कहि निरबह्यो हौं॥२६०॥
मेरी न बनै बनाए मेरे कोटि कलप लौं
राम! रावरे बनाए बनै पल पाउ मैं।
निपट सयाने हौ कृपानिधान! कहा कहौं?
लिये बेर बदलि अमोल-मनि-आउ मैं॥
मानस मलीन, करतब कलिमल-पीन,
जीह हू न जप्यो नाम, बक्यो आउ बाउ मैं।
कुपथ कुचाल चल्यो, भयो न भूलि हूँ भलो,
बाल-दसा हूँ न खेल्यो खेलत सुदाँउ मैं॥
देखा-देखी दंभ तें, कि संग तें भई भलाई,
प्रगटि जनाई, कियो दुरित दुराउ मैं।
राग, रोष, द्वेष पोषे, गोगन समेत मन,
इनकी भगति कीन्हीं इनहीं को भाउ मैं॥
आगिली पाछिली, अबहूँ की अनुमान ही तें
बूझियत गति, कछु कीन्हों तो न काउ मैं।
जग कहै राम की प्रतीति प्रीति तुलसी हूँ,
झूठे साँचे आसरो साहिब रघुराउ मैं॥२६१॥

२६०—खीस होत = नष्ट होते हैं। जाइ रह्यो हौं = नष्ट हो रहा हूँ। मह्यो = मट्ठा। भाँति = मर्यादा, चाल। नह्यो न चहौं = सहाना नहीं चाहता।
२६१—काउ = कभी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कह्यो न परत, बिनु कहे न रह्यो परत,
बड़ो सुख कहत बड़े सों, बलि, दीनता।
प्रभु की बड़ाई बड़ी, आपनी छोटाई छोटी,
प्रभु की पुनीतता, आपनी पाप-पीनता॥
दुहूँ ओर समुझि सकुचि सहमत मन,
सनमुख होत सुनि स्वामी समीचीनता।
नाथ-गुनगाथ गाए, हाथ जोरि माथ नाए
नीचऊ निवाजे प्रीति-रीति की प्रबीनता॥
एही दरबार है गरब तें सरब-हानि,
लाभ-जोग छेम को गरीबी मिसकीनता।
मोटो दसकंध सो न दूबरो बिभीषन सो,
बूझि परी रावरे की प्रेम-पराधीनता॥
यहाँ को सयानप अयानप सहस सम,
सूधौ सत भाय कहे मिटति मलीनता।
गीध, सिला, सबरी की सुधि सब दिन किए
होइगी न साईं सों सनेह-हित-हीनता॥
सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु,
सुमिरत होत कलिमल-छल-छीनता।
करुनानिधान बरदान तुलसी चहत,
सीतापति-भक्ति-सुरसरि-नीर-मीनता ॥२६२॥

नाथ नीके कै जानिबी ठीक जन-जीय की।
रावरो भरोसो नाह कैसो प्रेमनेम लियो
रुचिर रहनि रुचि, मति, गति तीय की॥
दुकृत सुकृत बस सबही सों संग परचो
परखी पराई गति, आपने हूँ कीय की।
मेरें भले को गोसाईं, पोच को न सोच संक
हौं किए कहौं सौंह साँची सीयपीय की॥
ज्ञानहूँ गिरा के स्वामी बाहर-भीतर-जामी
यहाँ क्यों दुरैगी बात मुख की औ हीय की।

२६२—मिसकीनता = (अ० मिसकीन) नम्रता।
२६३—कीय की = किए की, करनी की।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुलसी तिहारो, तुमहीं तें तुलसी को हित,
राखि कहौं हौं जो पै तो ह्वैहौं माखी घीय की ।।२६३।।

मेरो कह्यौ सुनि, पुनि भावै तोहि करि सो ।
चारिहूँ त्रिलोचन बिलोकु तू तिलोक महँ
तेरो तिहुँ काल कहु को है हितु हरि सो ।।
नए नए नेह अनुभए देह-गेह बसि
परखे प्रपंची प्रेम परत उघरि सो ।
सुहृद-समाज दगाबाजि ही को सौदा सूत
जब जाको काज तब मिलै पाँय परि सो ।।
बिबुध सयाने पहिचाने कैधौं नाहीं नीके
देत एकगुन, लेत कोटिगुन भरि सो ।
करम धरम स्रम-फल रघुबर बिनु
राख को सो होम है, ऊसर कैसो बरिसो ।।
आदि अंत बीच भलो, भलो करै सबही को
जाको जस लोक-बेद रह्यो है बगरि सो ।
सीतापति सारिखो न साहिब सील-निधान
कैसे कल परै सठ बैठो सो बिसरि सो ।।
जीव को जीवन-प्रान, प्रान को परम हित
प्रीतम पुनीत कृत नीचन निदरि सो ।
तुलसी तोको कृपालु जो कियो कोसलपाल
चित्रकूट को चरित्र चेतु चित करि सो ।।२६४।।

तन सुचि, मन रुचि, मुख कहौं, जन हौं सिय-पी को ।
केहि अभाग जान्यो नहीं, जो न होइ नाथ सों नातो नेह न नीको ।।
जल चाहत पावक लहौं, बिष होत अमी को ।
कलि-कुचाल संतनि कही सोइ सही, मोहिँ कछु फहम न तरनि-तमी को ।।
जानि अंध अंजन कहै बन-बाघिनि-घी को ।
सुनि उपचार बिकार को सुबिचार करौं जब, तब बुधि-बल हरै ही को ।।
प्रभु सों कहत सकुचत हौं, परौं जनि फिरि फीको ।
निकट बोलि बलि बरजिए, परिहरै ख्याल अब तुलसिदास जड़ जीको ।।२६५।।

२६५—तरनि = सूर्य । तमी = रात्रि ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्यों ज्यों निकट भयो चहौं कृपालु त्यों त्यों दूरि परचो हौं।
तुम चहुँ जुग रस एक राम, हौंहूँ रावरो जदपि अघ अवगुननि भरचो हौं ॥
बीच पाइ नीच बीच ही नल-छरनि छरचो हौं।
हौं सुवरन कुवरन कियो, नृप तें भिखार करि, सुमति तें कुमति करचो हौं ॥
अगनित गिरि-कानन फिरचों, विनु आगि जरचो हौं।
चित्रकूट गए मैं लखी कलि की कुचाल सव, अव अपडरनि डरचो हौं ॥
माथ नाइ नाथ सों कहौं हाथ जोरि खरचो हौं।
चीन्हों चोर जिय मारिहै तुलसी सो कथा सुनि,
प्रभु सों गुदरि निवरचो हौं ॥२६६॥

प्रन करि हौं हठि आजु तें राम द्वार परचो हौं।
'तू मेरो' यह विन कहे उठिहौं न जनम भरि, प्रभु की सौं करि निवरचो हौं॥
दै दै धक्का जमभट थके, टारे न टरचो हौं।
उदर दुसह साँसति सही वहु वार जनमि जग नरक निदरि निकरचो हौं ॥
हौं मचला, लै छाँड़िहौं जेहि लागि अरचो हौं।
तुम दयालु वनिहै दिए वलि, विलंव न कीजिए जात गलानि गरचो हौं ॥
प्रगट कहत जो सकुचिए, अपराध भरचो हौं।
तौ मन में अपनाइए तुलसिहिं कृपा करि, कलि विलोकि हहरचो हौं॥२६७॥

तुम अपनायो तव जानिहौं जव मन फिरि परिहै।
जेहि सुभाव विषयनि लग्यो तेहि सहज नाथ सों नेह, छाँड़ि छल, करिहै॥
सुत की प्रीति, प्रतीति मीत की, नृप ज्यों डर डरि है।
अपनो सो स्वारथ स्वामी सों चहुँ विधि चातक ज्यों एक टेक तें नहिं टरिहै॥
हरषिहै न अति आदरे, निदरे न जरि मरिहै।
हानि लाभ, दुख सुख, सबै सम चित, हित अनहित, कलिकुचाल परिहरिहै ॥
प्रभु-गुन सुनि मन हरषिहै, नीर नयननि ढरिहै।
तुलसी भयो राम को विस्वास, प्रेम लखि आनंद उमगि उर भरिहै॥२६८॥
राम कवहुँ प्रिय लागिहौ जैसे नीर मीन को।
सुख जीवन ज्यों जीव को, मनि ज्यों फनि को, हित ज्यों धन लोभ-लीन को ॥
ज्यों सुभाय प्रिय लगति नागरी नागर नबीन को।
त्यों मेरे मन लालसा करिए करुनाकर पावन प्रेम पीन को।

२६७—मचला = मचलनेवाला, हठी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनसा को दाता कहैं स्रुति प्रभु प्रवीन को।
तुलसिदास को भावतो, वलि जाउँ, दयानिधि दीजै दान दीन को ।।२६९।।

कवहुँ कृपा करि रघुबीर ! मोहूँ चितैहो।
भलो बुरो जन आपनो जिय जानि दयानिधि ! अवगुन अमित वितैहो ।।
जनम जनम हौं मन जित्यो, अव मोहिँ जितैहो।
हौं सनाथ ह्वैहों सही, तुमहूँ अनाथपति, जो लघुतहि न भितैहो ।।
विनय करौं अपभयहुँ ते तुम्ह परम हितै हौ।
तुलसिदास कासों कहै तुमहीं सव मेरे प्रभु, गुरु, मातु, पितै हौ ।।२७०।।

जैसो हौं तैसो हौं राम ! रावरो जन, जनि परिहरिए।
कृपासिंधु, कोसलधनी, सरनागत-पालक, ढरनि आपनी ढ़रिए ।।
हौं तो विगरायल ओर को, विगरो न विगरिए।
तुम सुधारि आए सदा सवकी सव विधि, अव मेरीयो सुधरिए ।।
जग हँसिहै मेरे संग्रहे, कत एहि डर डरिए ?
कपि, केवट कीन्हें सखा जेहि सील, सरलचित, तेहि सुभाव अनुसरिए ।।
अपराधी तउ आपनो तुलसी न विसरिए।
टूटियो वाँह गरे परै, फूटेहूँ विलोचन पीर होति हित करिए ।।२७१।।

तुम जनि मन मैलो करो लोचन जनि फेरो।
सुनहु राम ! विनु रावरे लोकहुँ परलोकहुँ कोउ न कहूँ हित मेरो ।।
अगुन अलायकु आलसी जानि अधम अनेरो।
स्वारथ के साथिन तज्यो तिजरा कोसो टोटक, औचट उलटि न हेरो ।।
भगतिहीन, वेद-वाहिरो लखि कलिमल घेरो।
देवनि हूँ देव, परिहर्‌यो, अन्याव न तिनको, हौं अपराधी सव केरो ।।
नाम की ओट लै पेट भरत हौं पै कहावत चेरो।
जगत-विदित वात ह्वै परी समुझिए धौं अपने, लोक कि वेद वड़ेरो ।।
ह्वैहै जव तव तुम्हहिँ तें तुलसी को भलेरो।
देव ! दिनहूँ दिन विगरिहै वलि जाउँ, विलंव किए अपनाइए सवेरो।।२७२।।

तुम तजि हौं कासों कहौं और को हितु मेरे ?
दीनबंधु, सेवक-सखा, आरत अनाथ पर सहज छोहु केहि केरे ?।।

२७०—भितैहो = डरोगे। अपभयहुँ तें = अपने ही डर से।
२७१—ओर को = हद दरजे का। विगरिए = विगाड़िए। सुधरिए = सुधारिए।
२७२—अनेरो = व्यर्थ का, निकम्मा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत पतित भवनिधि तरे बिनु तरि बिनु बेरे।
कृपा, कोप, सति भायहूँ, धोखेहुँ तिरछेहुँ, राम तिहारेहि हेरे ॥
जौं चितवनि सौंधी लगै चितइए सबेरे।
तुलसिदास अपनाइए, कीजै न ढील, अब जीवन-अवधि अति नेरे ॥२७३॥

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ देव ! दुखित दीन को ?
को कृपालु स्वामी सारिखो, राखै सरनागत सब अंग बल-बिहीन को ?
गनिहिँ गुनिहिँ साहिब लहै सेवा समीचीन को।
अधन, अगुन, आलसिन को पालिबो फबि आयो रघुनायक नबीन को ॥
मुख कै कहा कहौं ? बिदित है जी की प्रभु प्रबीन को।
तिहूँ काल, तिहुँ लोक में, एक टेक रावरी तुलसी-से मनमलीन को ॥२७४॥

द्वार द्वार दीनता कही काढ़ि रद, परि पाहूँ।
हैं दयालु दुनी दस दिसा दुख-दोष-दलन-छम, कियो न संभाषन काहू ॥
तनु-जन्यो कुटिल कीट ज्यों तज्यो मातु पिता हूँ।
काहे को रोस,दोस काहि,धौं मेरे ही अभाग मोसों सकुचत छुइ सब छाहूँ ॥
दुखित देखि संतन कह्यो, सोचै जनि मन माहूँ।
तोसे पसु पाँवर पातकी परिहरे न सरन गए रघुबर ओर-निबाहूँ ॥
तुलसी तिहारो भए भयो सुखी प्रीति प्रतीति बिना हूँ।
नाम की महिमा, सील नाथ को, मेरो भलो
बिलोकि अब तें सकुचाहु सिहाहूँ ॥२७५॥

कहा न कियो, कहाँ न गयो, सीस काहि न नायो ?
राम रावरे बिन भए जन, जनमि जनमि जग, दुख दसहूँ दिसि पायो ॥
आस-बिबस खास दास ह्वै नीच प्रभुनि जनायो।
हाहा करि दीनता कही द्वार द्वार बार बार, परी न छार मुँह बायो॥
असन बसन बिन बावरो जहँ तहँ उठि धायो।
महिमा मान प्रिय प्रान तें तजि खोलि खलनि आगे खिनु खिनु पेट खलायो॥
नाथ, हाथ कछु नाहिँ लग्यो लालच ललचायो।
साँच कहौं नाच कौन सो जो न मोहिँ लोभ लघु निलज नचायो ॥
स्रवन नयन मन मग लगे सब थलपति तायो।

२७३—सौंधी = रुचिर, अच्छी।
२७५—दुनी = दुनियाँ। ओर-निबाहू = अंत तक निर्वाह करनेवाला।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूढ़ मारि हिय हारि कै हित हेरि हहरि अव चरन-सरन तकि आयो ।।
दसरथ के समरथ तुही त्रिभुवन जस गायो ।
तुलसी नमत अवलोकिए वलि, वाँह-बोल दै विरदावली बुलायो ।।२७६।।
रामराय विनु रावरे मेरे को हितु साँचो ?
स्वामि सहित सब सों कहों सुनि गुनि विसेषि कोउ रेख दूसरी खाँचो ।।
देह-जीव-जोग के सखा मृषा टाँचन टाँचो ।
किए विचार सार कदली ज्यों मनि कनक संग लघु लसत बीच विच काँचो।
विनयपत्रिका दीन की, वापु ! आपु ही वाँचो ।
हिये हेरि तुलसी लिखी, सो सुभाय सही करि, वहुरि पूँछिए पाँचो ।।२७७।।
पवन-सुवन, रिपुदवन, भरत लाल, लखन दीन की ।
निज निज अवसर सुधि किए वलि जाउँ, दास आस पूजिहै खास खीन की।।
राजद्वार भली सब कहैं साधु समीचीन की ।
सुकृत सुजस साहिव कृपा स्वारथ परमारथ गति भए गति-विहीन की ।।
समय सँभारि सुधारिबी तुलसी मलीन की ।
प्रीति रीति समुझाइबी नतपाल कृपालुहिँ परमिति पराधीन की ।।२७८।।
मारुति-मन, रुचि भरत की लखि, लखन कही है ।
कलि-कालहुँ नाथ नाम सों प्रतीति प्रीति एक किंकर की निवही है।।
सकल सभा सुनि लै उठी, जानी रीति रही है ।
कृपा गरीवनिवाज की, देखत गरीव को साहव वाँह गही है ।।
विहँसि राम कह्यो सत्य है, सुधि मैंहूँ लही है ।
मुदित माथ नावत वनी तुलसी अनाथ की, परी रघुनाथ सही है ।।२७९।।

109273

पुस्तकालय
कन्या महाविद्यालय हरिद्वार

२७६—थलपति = राजा । तायो = जाँचा ।
२७७—टाँचन = टाँकों या डोभों से । टाँचो = टँके हुए ।
२७९—लै उठी = वही बात कहने लगी ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY
Signature Date
Access No.
Class No. Sanjeev
Cat. in Sanjeev 9/9/94
Tag etc. Sanjeev
Filing 29/9/94
E A R
Any other 12-1-94
Checked

Recommended By

COMPILED

ARCHIVES DATA BASE
2011 - 12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar